बे बोल.

" ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्ष " ए मोक्षमार्गनुं दृष्टिबिंदु छे तथापि घणा जैनो तेना खरा रहस्यने नहि जाणतां एक तरफ वधु वलणतो बीजा तरफ न्युन एटलुंज नहि पण अपेक्षा समजवाना ज्ञाननी खामीए घणी वखत डाबो हाथ जमणाने दबावे छे तेवी स्थिति जोवाय छे. आनुं कारण पूर्वाचार्योए द्रव्य गुण पर्याय आदीनुं जे सुक्ष्मज्ञान प्रकास्युं छे ते ज्ञानने समय अनुसारनां मनुष्यो समजी शके तेवी उत्तम शैलीथी सरळ भाषामां ग्रंथो तैयार करी जनसमाज आगळ जोइता प्रमाणमां रजु नहि थवानुं छे.

अमारुं चोकस मानवुं छे के जैनधर्मनां सिद्धांतो प्रमाण अने युक्तिओथी एवां तो प्रबळ अने न्यायप्रयुक्त छे के जेम जेम ते तत्वो वधु फेलावो पामशे तेम तेम प्राचिन दृष्टि वधु खीली नीकळशे, अने जैनधर्मनुं क्षेत्र वहोळुं थशे.

आ माटे मात्र जैनोज नहि पण सर्व लोकोना बोधार्थे जैनधर्मनां पुस्तको रचाववाथी अने सारी रीते वंचाववाथी अन्य लोको पण जैनतत्वनो लाभ मेळवशे केमके जैनधर्म मात्र जैनो माटेज नथी. गमे ते ज्ञाति होय पण तेनां सिद्धांतो अनुसार वर्त्तन राखनार जैन होइ शके छे. आवी भाव उपकारनी दृष्टि ध्यानमां राखी, काळने अनुसरी, तथाप्रकारनो प्रयत्न करी परमपूज्य गुरुवर्य श्रीमद् बुद्धिसागरजीए आवा तत्वमय ग्रंथो रच्या छे जे पैकीनो आ " परमात्मदर्शन " ग्रंथ छे.

आ ग्रंथ अमे उपर जणाव्युं तेवा प्रकारनी खामीने दुर करनार छे, एम कहीए तो अतिस्योक्ति नहि कहेवाय.

आ ग्रंथमां बीजा अनेक विषयो साथे ज्ञान अने क्रिया बंनेनी यथास्थित साबीती करी बताबा छे केमके बंनेना संमेलन विना आत्मकल्याण दुर छे. षटद्रव्य, षटकारक, पंचसमवाय, नय निक्षेपा वीगेरेथी द्रव्य, क्षेत्र, काळ, भावने, अनुसरीने आ ग्रंथ लखायो

छे, जे अभ्यासीओने माटे आशिर्वादरुप छे. बलके आत्माभीमुख लइ जनार छे. आखो ग्रंथ वांचनार पोतेज कबूल करशे के गुरुवर्य श्रीमद् बुद्धिसागरजीए आ प्रकारना प्रयासे करी जैनसमाज उपर महान उपकार कीधोछे. तेओनो आ रीते जैनकोम उपरज उपकार थाय छे, एम नहि पण तेओना ग्रंथोनी लेखन, अने काव्य शैली, एवी तो प्रेम उपजावनारी छे के सर्व दर्शनवाळाओ तेओश्री रचीत ग्रंथो होंसथी वांचे छे एम अनुभव कही आपे छे. एटलुंज नहि पण तेओश्रीनां भजनपदो तो तेओश्री ज्यां ज्यां विचर्या छे, त्यां त्यां कोइपण रीतना तफावत विना हमेशना माटे गवातांज रहे छे. आथी अन्य दर्शनीओ पण जैनधर्मने जाणता अने प्रीति करता थया छे. आ शुं जनसमाज उपर जेवो तेवो उपकार छे ?

तेओश्री तरफना अंकुशना आधिने तेओश्री विषे हमारे जणाववुं जोइए छे ते जणावी शकता नथी, पण समाज तो कबूल करती जोवाय छे के, भेदाभेद अने मारामारीनी कोइपण चर्चामां न उतरतां पोते अने अन्य जीवो पोताना आत्मानुं कल्याण कइ रीते करी शके तेज मार्ग तरफ तेओश्रीनुं प्रयाण छे अने ते दिवसे दिवसे चढतुं अने वधतुं जाय छे.

तेओश्रीना ग्रंथो संबंधी वधु विवेचनमां नथी उतरी शकता कारण तेओश्रीनुं मानवुं एम छे के दुनियां दर्पणरुपे वस्तुने वस्तुरुपे केम नहि जोइ शके ? (बेशक गुणानुं रागनी दृष्टि तेमां मुख्य भाग भजवे छे.) तेथी अमो तेवा प्रकारनी तजवीजमां न उतरतां तेओश्रीनी कृतिना ग्रंथो जेम बने तेम समाज आगळ सारा स्वरुपमां (ओछी किंमते) रजु करवा एज कर्त्तव्य समजी आगळ वधीए छीए अने गुरु कृपाथी मंडळ पोताना नामे १ वर्षमां ११ पुस्तको वहार पाडी शक्युं छे.

आ रीते मंडळ आगळ वधवामां जे फतेह पाम्युं छे तेमां गुरुश्री उपरांत मंडळने पुस्तको प्रगट करवाने द्रव्यनी मदद करनारा गृहस्थोनो पण हिस्सो छे. जे अमो जणाववा चुकी जवुं योग्य धारता नथी.

-अगाऊना ग्रंथोना सहायकोना नामो तेते ग्रंथो साथे मुद्रित

थयेल छे. जेओ उपरांत मजकुर " परमात्मदर्शन " ग्रंथने प्रगट करवामां नीचे मुजब सहाय मळी छे.

१५०) शेठ मोतीजी जेताजी पुनावालानी विधवा बाइ नाजुबाइ
७५) शेठ मोहनलाल ताराचंद. विजापुरवाळा.
५०) शेठ रायचंदभाइ रवचंद. साणंदवाळा.
५०) शेठ वाडीलाल मगनलाल. अमदावाद.
५१) शेठ अमृतलाल केशवलाल वाडी सद्गत भाइ अमृतलालना स्मणार्थे तेमनी मातुश्री चंचळ ब्हेने अमदावाद.
५०) बाइ हरकोरब्हेन श्री अमदावाद.
३१) वकील मोहनलाल हेमचंद तेओना ची. भाइ सवाइना पुण्यार्थे. श्रीपादरा.
२५) शेठ हाथीभाइ मुलचंद. श्री माणसा.
३०) शेठ माधवलाल अमथालाल. श्री माणसा.
३१) शेठ मोहनलाल करमचंद अमदावाद.

आवी रीते सहाय करनाराओनो तथा बीजा मददगार ग्रहस्थोनो मंडळ आभार माने छे. अने तेओने पोताना द्रव्यनो आ रीते सदुपयोग करवा माटे धन्यवाद आपे छे.

मंडळनो उद्देश उपर जणाव्युं तेम जनसमाजमां तेओश्री रचित पुस्तको वधु वंचाय ते माटे सस्ती किंमते प्रगट करवानो छे, ते बजावे जाय छे. ते समाज पण जोइ शकी छे के बीजी कोइपण संस्थाओ करतां मंडळ पुस्तकोनी घणीज ओछी किंमत राखे छे, ते पण बीजां पुस्तको प्रगट थवाने उपयोगार्थे तेमज थोडीपण किंमत आपी पुस्तक खरीदतां ते उपर बहु भाव रहे छे ते अर्थे.

मंडळ आशा राखे छे के गुरुवर्य पुस्तको तैयार करता रहे छे तेज प्रकारे प्रगट करावबाने सहायको वधता जशे.

छेवटमां ध्यान खेंचवाने रजा लइए छीए के मंडळ मारफते आ रीते पुस्तक प्रगट करावबाने जरूर विचारशो.

मुंबाइ चंपागली
वीर संवत २४३९
पोस सुदी १०. गुरु

ली.
श्री अध्यात्मज्ञान प्रसारक मंडळ.

परमात्मदर्शनग्रंथः
प्रस्तावना.

जगत्‌मां प्रत्येक मनुष्यो धर्मनुं आराधन करे छे. प्रत्येक मनुष्यो धर्मना माटे इच्छा राखे छे. प्रत्येक मनुष्योने अनंत सुख प्राप्त करवानी तीव्र जिज्ञासा वर्ते छे. जन्म, जरा, मरणना दुःखमांथी बचाव थाय ते माटे प्रत्येक मनुष्यो बुद्धयनुसार उपायो शोधे छे. अमर थवुं ते माटे अनेक प्रकारनी शोधो करे छे. आवी अमूल्य शोध करवानी कोने जिज्ञासा नहि होय ? अलबत सर्वने होय छे. आवी शोध माटे ज्ञानदृष्टिनी जरुर छे अने ते पण सर्वज्ञ दृष्टि होवी जोइए. आवी सर्वज्ञ दृष्टिवाळा तीर्थंकरो प्रथम थइ गया छे. आ क्षेत्रमां चरम तीर्थंकर त्रिशलातनय श्री महावीरस्वामी २४३६ वर्ष उपर थइ गया छे. तेमणे केवलज्ञानथी सर्व पदार्थो जाण्या तथा देख्या. मनुष्यो नित्य सुख प्राप्त करे तथा जन्म जरा अने मृत्युना दुःखमांथी छूटे ते माटे तेओश्रीए आत्मज्ञान बताव्युं छे. सर्व प्रकारना जीव अने अजीव पदार्थोनुं स्वरुप बताव्युं छे. ज्ञानदर्शन अने चारित्ररुप मोक्ष मार्ग बताव्यो छे. नात जातनो भेद राख्या विना आत्मतत्त्वनी शक्तियो खीलववाना उपायो बताव्या छे. साधु धर्म अने गृहस्थ धर्म एम बे प्रकारना धर्म बताव्या छे. अमर थवाने माटे आत्मधर्मनुं यथार्थ स्वरुप बताव्युं छे. समवसरणमां बेसी देशना देइ चतुर्विध संघनी स्थापना करी छे तेमना गणधरोए द्वादशांगीनी रचना करी, पश्चात् स्थविरोए उपांगनी रचना करी. तेमनी पाटे जे जे आचार्यो थया. गीतार्थो थया. तेओए प्रकरणो ग्रंथो आदिनी रचना करी. प्रत्येक आचार्योनो मुख्य उद्देश जमानाने अनुसरी गमे ते भाषामां सहेलाइथी मनुष्यो तत्त्व मार्ग समजी शके तेवा ग्रंथो अने तेवा प्रकारनो उपदेश आ-

पवानो हतो, ते रीतिने अनुसरी उमास्वाति वाचक, सिद्धसेन दिवाकरसूरि, हरिभद्रसूरि, श्री हेमचंद्र आचार्य श्री अभयदेवसूरि, यशोविजय उपाध्याय, आदि धर्मधुरंधर आचार्योए. अनेक मनुष्योना उपकारार्थे. संस्कृत भाषामां तथा मागधी प्राकृतादि भाषामां उपदेश दीधो छे तथा तेवा ग्रंथो बनाव्या छे. पूर्वोक्त आचार्योना ग्रंथो सूत्रोनी पेठे माननीय पूजनीय गणाय छे. श्री हेमचंद्र पश्चात् लोकोनी स्थिति विद्या संबंधी घटवा लागी. लोको मागधी अने संस्कृतमां पण अल्प समजवा लाग्या. त्यारे आचार्योए जमानाने अनुसरी चालती गुर्जर भाषा आदिमां रासो वगेरे बनाववा लाग्या सं १३२७ नी सालमां सात क्षेत्रनो रास बन्यो छे. आ सात क्षेत्रनो गुर्जर भाषानो रास छपावी सिद्ध कर्युं छे के जैनोमांथी गुर्जर भाषा मुख्यताए प्रकाशी छे आ रास भजन संग्रह चोथा भागमां छपाव्यो छे. ते पहेलां पण गुर्जर भाषामां जैनाचार्योए काव्य लख्यां होय एम संभव थाय छे अने ते माटे शोध चालेछे. प्रथम तो गुर्जर भाषामां पद्य तरीके रचना करी उपदेश आप्यो पश्चात् गद्यमां पण ग्रंथ बनावी उपदेश देवा प्रारंभ कर्यो. श्रीवीरे प्ररूपेलां तत्त्वोनो संस्कृत, प्राकृत, मागधी, गुजराती, हिंदुस्थानी वगेरे अनेक भाषामां हाल अवतार थएलो अनुभवाय छे. श्री वीरप्रभु मुक्तिमां गया तो पण गंगाना प्रवाहनी पेठे तेमनी पाछळ तेमनो उपदेशेलो तत्त्वमार्ग पुरुष परंपरा अखंड वहेवा लाग्यो. हाल पण ते प्रमाणे जोवामां आवे छे.

संस्कृत भाषामां तथा मागधी भाषामां हाल ग्रंथो बनाववामां आवे तो प्रायः दश हजारमां पांच माणस पण भाग्येज समजी शके. संस्कृत तथा मागधीमां बनावेला ग्रंथोने पण गुर्जर भाषामां समजाववामां आवे त्यारेज लोकोना समजवामां आवे त्यारे गुर्जर भाषामां ग्रंथो बनाववामां आवे तो घणा लोको समजी शके एम

कहेवुं निर्विवादछे. गुजरातमां रहेनार पुरुषो तथा स्त्रीओ भले संस्कृतनो अभ्यास करे. इंग्लीश भाषानो अभ्यास करे तोपण २४ कलाको पैकी सर्व कलाकोमां गुर्जर भाषामां बोलीनेज सर्वने पोतानुं कार्य करवुं पडेछे. मातृभाषामां जे उपदेश आपवामां आवेछे ते सहेजे समजायछे. आम कहेवाथी कंइ संस्कृत अने मागधी भाषानी हलकाइ देखाडवामां आवती नथी. कहेवानुं तात्पर्यार्थ ए छे के गुजरातीओने माटे गुर्जर भाषामां लेख लखी समजाववामां आवे तो विशेष उपकार थाय. आ न्यायने अनुसरी गुर्जर भाषामां लेख लख्योछे.

आत्मतत्त्व संबंधी मान्यता दरेक दर्शनवाळाओनी भिन्न भिन्न छे. आर्यभूमिमां जैन, वेद अने बौद्ध आ त्रणनां पुस्तको विशेष जोवामां आवेछे. मुसलमान अने ख्रीस्ति लोकोतो ज्यारे आ देशमां आव्या त्यारे तेमना धर्मना पन्थोनां पुस्तको लेइ आव्या. दरेक दर्शनवाळा ईश्वर, कर्म अने आत्मादि तत्त्वो संबंधी भिन्न भिन्न मत जणावेछे. अने ते माटे पोतपोतानी युक्तियो जणावेछे.

षड्दर्शनमांथी कयुं तत्त्व खरुछे. ते युक्ति अने प्रमाणथी स-मजी शकायछे. श्री वीरप्रभुए आत्म तत्त्व एवुं सरस बताव्युंछे के ते माध्यस्थ अने ज्ञान दृष्टिवाळाने रुच्या विना रहे नहि. देवगुरु अने धर्म तत्त्वनुं स्वरूप सर्वज्ञ दृष्टिथी बताव्युंछे, आ ग्रंथमां श्रीवीरप्रभुए कहेलुं आत्मतत्त्व सूत्रानुसारे लख्युं छे. जिनागमोनुं दोहन करी देवगुरु धर्म तत्त्वादिनुं यथार्थ वर्णन करवामां आव्युंछे.

प्रथम आद्यमां सद्गुरुनुं मंगलाचरण कर्युंछे. पश्चात् गुरुनी केवी शक्तिछे ते जणाववा प्रदेशी राजा अने केशी कुमारनो संवाद देखाडी आत्मानी अस्तिता सिद्ध करीछे. पश्चात् ज्ञान अने क्रियानो संवाद प्रसंगानुसारे जणाव्योछे. पश्चात् योग्य अयोग्य श्रोतानां लक्षण जणाव्यांछे. पश्चात् ६८ मा पानाथी षड्द्रव्यनुं स्वरूप सं-मजाव्युंछे. पश्चात् आत्मधर्म महत्ता दर्शावीछे. पश्चात् आत्म

धर्मनी महत्ता माटे क्षमा निष्कपटपणुं आदि सद्गुणोनी जरुरीयात बतावीछे पश्चात् पत्र १३३ माथी आत्मानी शोध कोइ विरला करेछे ते संबंधी एक बादशाह अने फकीरनी वार्ता आपी बागनुं दृष्टांत जणाव्युंछे. पश्चात् पत्र १४६ माथी मतिश्रुत आदि पंचज्ञाननुं स्वरूप दर्शाव्युंछे.

पश्चात् साधुनी आत्मध्यानादि क्रिया दर्शावीछे. पश्चात् आत्म स्वरूप दर्शाव्युंछे. पश्चात् अनुक्रमे पत्र १९० माथी भव्यात्माए दश प्रश्न संबंधी विचार करवो जोइए. तेनां नाम जणावी अनुक्रमे वर्णन कर्युंछे. ते प्रश्नोना सातमा प्रश्नना विषयमांज पत्र १७५ माथी कर्मराजा अने धर्मराजानुं युद्ध वर्णन कर्युंछे. ते स्थिर चित्तथी वांचवानी जरुरछे. पत्र २०३ थी आठमा प्रश्ननो विषय शरु थाय छे तेनुं पूर्णप्रेमे मनन करवुं जोइए. पत्र ३१५ माथी नवमा प्रश्ननो विषय शरु थायछे. पत्र ३३१ माथी आत्मा, कर्मनो तथा भोक्ता केवी रीतेछे तेनुं वर्णन कर्युंछे. पश्चात् सिद्धस्वरूप दर्शाव्युंछे. पश्चात् पत्र ३५७ थी ईश्वर जगत् कर्त्ता नथी. तेम संबंधीनुं व्याख्यान कर्युंछे. पश्चात् षट्स्थानकनी सिद्धि करी बतावीछे. आत्मसिद्धि करवामां अनेक जिनागमोना अनुसारे युक्तियो दर्शावीछे. ते युक्तियोने जो मुखे करवामां आवे तो जैन धर्म तत्त्वोनी पूर्ण श्रद्धा थाय. आत्मा कर्मनो नाश करी अनंत सुख प्राप्त करी अमर थाय छे तेज मुख्य मुद्दो ध्यानमां राखी तेना उपायो दर्शाव्याछे तेथी प्रत्येक मनुष्योनुं आ ग्रंथ वांचतां कल्याण थाय एमां कांइ संदेह नथी. परमात्मदर्शन ग्रंथ वांचनार अवश्य ज्ञान दर्शन चारित्र पामी मुक्तिमार्ग पामेछे. जे भव्य जीवो होय त्हेने आ ग्रन्थमां लखेलां तत्त्वानी श्रद्धा थायछे.

आ ग्रन्थना प्रत्येक पानाना मुखपर मुख्य हेडींग छे तेथी वांचनारने प्रत्येक विषयनी सरलता थशे. आ ग्रन्थमां छेल्ला दुहा तथा चोपाइयोनो अर्थ लख्यो नथी. पण कोइ भक्त पंडित पुरुष

अवशेष दुहा तथा चोपाइयो उपर अर्थ पुरशे तो धर्मलाभ प्राप्त करशे. समयना अभावे अवशेष दुहा आदि उपर विवेचन थयुं नथी. ते दुहाओ वगेरे सद्गुरुना पासे जे वांचशे ते विशेषतः अर्थ प्राप्त करी शकशे. जडवादियोनी सामे रक्षण तरीके आ ग्रन्थ उपयोगी थशे. आ ग्रन्थने माध्यस्थ दृष्टिथी वांचशे. ते सद्गुण रागथी तेमो यथार्थ तत्त्व रहस्य मेळवी शकशे.

आ ग्रंथ मूळ तरीके-श्री लोदरा गाममां आरंभ्यो हतो त्यांथी मेसाणे जई त्यां सं. १९६० नुं चोमासु कर्युं. त्यां अशाड सुदी ५ ना रोज आ ग्रंथ पूर्ण कर्यो. पश्चात् तेज चोमासामां विवेचन जेटलुं लखायुं छे तेटलुं अत्र दाखल कर्युं छेः बाकीना दुहानुं विवेचन, कोई भक्त शिष्य पूर्ण करशे.

आ ग्रन्थमां जे कंइ जिनाज्ञा विरुद्ध लखायुं होय ते संबंधी मिथ्यादुष्कृत हो. सज्जन दृष्टिथी जे कोइ आ ग्रन्थ वांचशे तेने अत्यंत लाभ प्राप्त थशे. ज्ञानिने आश्रवनां कारण ते संवररूपे परिणमेछे.अने अज्ञानिने संवरनां कारण ते आश्रवरूपे परिणमेछे तेम योग्य जीवने आ ग्रन्थ सम्यग्पणे परिणमशे. अने अयोग्य कुपात्र मत्सरी दुर्गुणग्राहीने आ ग्रन्थनुं वांचन, विपरीतपणे परिणमशे. तेमां तेनी दृष्टि तेज मुख्य कारणछे.

प्रत्येक भव्यजीवो आ ग्रन्थ वांची अध्यात्मस्वरूपमां रमणता करी परमात्म स्वरूप प्राप्त करो. परमार्थ प्रति सर्वेनी रुचि थाओ. परमानंदने सर्व जीवो प्राप्त करो. सर्व जीवो मंगलमाला प्राप्त करो.

एजशुभाशीः ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

मुकाम-अमदावाद-झवेरीवाडो.

संवत १९६६ कार्तक वदी ८

लि. मुनि. बुद्धिसागर.

आंबली पोळनो उपाश्रय.

॥ अथ परमात्मदर्शन ॥

पंचशती प्रारभ्यते.

श्री संखेश्वरपार्श्वनाथाय नमः

मंगलम्.

गुरु स्तुति, दुहा.

सुरतरु जंगम तीर्थरूप, सद्गुरु साचा देव;
त्रिकरण योगे तेह्नी, भावे कीजे सेव. १

श्री सद्गुरुनी स्तुति कराय छे. अनादि काळथी जीव अज्ञान (अविद्या) थी वहिर् वस्तुमां आत्मपणाथी बुद्धि धारण करी अनंतशः दुःखराशि भोक्ता थयो अने वहिरात्मभावे परवस्तुने पोतानी मानी स्वस्वरुप भूल्यो एवा मूढ आ जीवने शुद्ध स्वरूप ओळखावनार श्री गुरुमहाराज सत्य देवरूपे छे. मिथ्यात्व अने सम्यक्त्व स्वरूप समजावी शुद्ध मोक्षमार्ग योजक श्रीगुरुना समान वीजा देव नथी. मुक्ति रूप फल देवामां श्रीगुरु कल्पवृक्ष छे. अन्य कल्पवृक्षो पौद्गलिक सुखदाता छे. अने गुरुरूप कल्पवृक्ष तो अनंत आत्मिक शाश्वत सुख समर्पे छे. जो के उपादान कारणरूप गुरु महाराज नथी तो पण उपादान कारणनी शुद्धिकारक तथा सहायभूत निमित्त कारणरूप श्रीगुरुराज छे, ए कल्पवृक्षनी प्राप्ति महा पुण्योदये थाय छे. गुरु जंगम तीर्थ छे, अन्यत्र के ज्यां श्री तीर्थंकरादिनां कल्याणक थयां छे, ते तीर्थ स्थावर तरीके कहेवाय

छे, ते तीर्थोनी यात्रा सेवा भक्ति करवाथी सम्यक्त्व निर्मल थाय छे. किंतु ते स्थावर तीर्थनी श्रद्धा ओळखाणकारक पृथ्वीतळ गमनकर्ता श्री सद्गुरु प्रत्यक्ष महाउपकारी छे. येनालंबनेनजीवो। भवांभोधितरतीति तीर्थः जेना आलंबने जीव संसार समुद्रने तरे छे ते तीर्थछे, श्री गुरु महाराजना आलंबने जीव संसार समुद्र तरे छे, माटे गुरु तेज तीर्थ छे, गुरुरूप तीर्थनी सेवाभक्ति झटिति प्रत्यक्ष फलदा छे. श्री गुरुनी वाणीरूप गंगामां जे स्नान करे छे ते पोते उपार्जनकृत कल्मपोने गमावे छे. चक्षुनी विद्यमानताए पण अन्य पदार्थोना निरीक्षणमां सूर्य चंद्र दीपकनी जरुर पडे छे. तेम भव्यात्माओने पोतानुं आत्मिक शुद्धस्वरुप अवलोकनार्थे गुरु सूर्य समान छे तेथी तेनी जरुर पडे छे, विशेष ए छे के, सूर्य अंतरनो प्रकाश करी शकतो नथी. अने गुरु महाराज अंतरना प्रकाशकारक छे. माटे आ सूर्य करतां पण विलक्षण अलौकिक गुरुरूप सूर्य छे, पूर्वोक्त सद्गुरुनी त्रिकरणयोगे अत्यंत भावे सेवा करवी, सेवा कीजीए ए कहेवाथी एम सूचव्युं के जेने मुक्ति पदनी इच्छा होय तेने सद्गुरुनो बहुमानथी विनय करवो. कारण के धर्मनुं मूळ विनय छे. अने विनय विना धर्मनी प्राप्ति थती नथी, अने धर्मनी प्राप्ति गुरु विना थाय नही माटे श्रद्धा भक्ति बहुमान पूर्वक गुरुराजनो विनय करवो.

सुरतरुनी उपमाथी समजवुं के—गुरु अनंत आत्मधर्मना दानी छे.

आत्मधर्मनुं दान ते भाव अभयदान छे. पंचधादान छे. १ अभयदान, २ सुपात्रदान, ३ अनुकंपादान, ४ उचितदान, ५ कीर्त्तिदान, ए पांचमां महाउपकारक अभयदान मुख्य छे, द्विधा अभयदानं द्रव्यतो भावतश्च. अभयदान बे प्रकारे छे. १ द्रव्य अभयदान. २ भाव अभयदान. एकेंद्रियादिथी ते पंचेन्द्रिय पर्यंत जी-

वोना प्राणोनुं रक्षण करवुं तेमनो कोइ घात करतुं होय तो बचाववा तेने द्रव्य अभयदान कहे छे, दरेक जीवने जीववुं प्रिय लागे छे. कोइने मरण शरण थवुं प्रिय लागतुं नथी. कह्युं छे के. मरण समो नत्थि भयं: मरण समान कोइ भय नथी, माटे प्राणीओने कोइ मारतुं होय तो अनेकरीत्या तेमनुं रक्षण करवुं. जीवनी दयाथी जीव तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन करे छे, नरस्त्रर्गादि सुखसंपत्तिनो भोक्ता थाय छे. एक राजानी अणमानीती स्त्रीए चोरने फांसीनी शिक्षा थती अटकावी अने अन्य राणीओए लक्ष रुपैया खरची तेने मिष्टान्न जमाड्यां, किंतु चोरे अणमानीती स्त्रीनो अत्यंत उपकार मान्यो. अने तेणीए छोडाव्यो त्यारे सुखी थयो, श्री शान्तिनाथना जीवें पूर्व भवमां एक पारेवानो जीव बचाव्यो तेथी अत्यंत पुण्य उपार्जन कर्युं, तेम भव्यत्माओए प्रत्येक जीवोनी दया करवी, कोइ जीवनी हिंसा करवी नहीं, मिथ्यात्वे पाप बुद्धिरूप पिशाचिकाना प्रेर्या केटलाक जीवो मत्स्य अज पशुपंखीनां मांस भक्षण करे छे, मांस वेचे छे, मांस भक्षकनी अनुमोदना करे छे ते जीवो घोरकर्म ग्रही अति दारुण दुःखालय अधोगतिभाक् थाय छे अने आ भवमां पण कर्मोदये दुःखनी झाळमां फसाय छे, माटे मन वचन कायाए करी जीवनी हिंसा वर्जवी.

२ भावअभयदान–भव्य जीवात्माओने तेना शुद्ध गुणोनुं दान आपवुं तेने भाव अभयदान कहे छे तद्द्विविधं=भाव अभयदान बे प्रकारे छे. १. स्वभाव अभयदान २. परजीवधर्म अभयदान. पोतानो आत्मा असंख्यातप्रदेशी छे अने ते प्रदशो अरूपी छे, कोइ काळे पण उत्पन्न थया नथी माटे अज छे, वर्तमान, भूत अने भविष्यत् कालमां प्रदशो जेवा छे तेवा ने तेवा रहे छे, माटे शाश्वता छे, ए असंख्यात आत्माना प्रदेशो वाळ्या वळता

मथी, गाळ्या गळता नथी, एक प्रदेशे आत्मा कहेवाय नहीं, बे प्रदेशे आत्मा कहेवाय नहीं, असंख्यात प्रदेशमयी आत्मा कहेवाय छे, जडरूप पुद्गळथकी आत्मानुं स्वरूप न्यारुंछे, अनंतज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र, अनंत वीर्य, इत्यादि आत्माना अनंत गुणो छे, आत्माना एकेक प्रदेशमां अनंत धर्म रह्या छे, आत्मामां अनंत सुख अस्तिभावे रह्युंछे.

किंतु अनादि कालथी जीव पोतानास्वरुपनाअज्ञानथी परवस्तुमां अहंभाव धारण करी, मिथ्यात्व, अविरति, कषाय अने योगथी पुद्गल स्कंधोने अष्टकर्मनी वर्गणा तरीके परिणमावी विचित्र शरीरोने धारण करे छे, जीवनी अनादिकाल मूळ वसति निगोद छे, निगोदना जीव बे प्रकारे छे. १ सूक्ष्मनिगोद २ बादरनिगोद. अनंत जीवो वचे एक शरीर होय छे अने चतुर्दश रज्वात्मक (चउदराज) लोकोने काजलनी कुंपलीनी पेरे व्यापीने रह्या छे, तेने सूक्ष्म निगोदीया जीव कहे छे.

ए सूक्ष्म निगोदीया जीवने मिथ्यात्व, अविरति, कषाय; अने योग रह्या छे. सदाकाल ते दुःखना भोक्ता छे. त्रण प्रकारनां जे अज्ञान छे, तेमांथी एक पण अज्ञान टळ्युं नथी, तेनामां समजवानी कंइ पण शक्ति नथी. ए सूक्ष्म निगोदना जीवोमां केटलाक भव्य जीवो अने केटलाक अभव्यजीवो छे. साधारण वनस्पतिना जीवोने बादर निगोदीया जीव जाणवा, द्विप्रकारे निगोदमां अनंतशः जन्म मृत्युना चक्रवेगे जीव भम्यो, त्यांथी भवितव्यतायोगे पृथिवी, जल, ज्वलन, वायु, प्रत्येक वनस्पतिनां शरीरो धारण करी भवभ्रमण कर्युं, पण आत्मस्वरूपनो अवबोध थयो नहीं. दान एवी वस्तु छे तेटलुं पण जाणवामां आव्युं नहीं अने ते कर्युं नहीं.

प्रश्न—जल सरोवरमां भर्युं होय छे त्यारे हजारो पशु पंखी मनुष्यादि तेमांथी जलपान करे छे, त्यारे जले पोतानुं दान बीजाना अर्थे शुं कर्युं ना कहेवाय ?

उत्तर—अन्य जीवो जलपान करे छे ते पोतानी सत्ताथी करे छे, जलपान अन्य जीवो करे तेमां जलना जीवो राजी नथी, जलपान करवाथी जलना जीवोनो नाश थाय छे तेमां पोते राजी नथी, माटे ते दान कहेवाय नहीं. द्वीन्द्रियथी ते चतुरिन्द्रिय पर्यंत जीवो अभयदान पोते करी शकता नथी. पंचेंद्रियना चार प्रकार छे. १ देवता. २ मनुष्य. ३ तिर्यंच. अने ४ नारकी. भुवनपति, व्यंतर, ज्योतिष्क अने वैमानिक ए चार प्रकारना देवो द्रव्य तथा भाव अभयदान करी शके छे. सम्यक्त्वधारकदेवो समकितनी अपेक्षाए भाव अभयदान करी शके छे, कारणके समकित पामेला देवताओ पोताना आत्मानुं स्वरूप समजे छे, पोताना आत्माने पोताना समकित गुणनुं दान आपे छे तथा अन्यदेवो तथा मनुष्योने धर्मनी श्रद्धा करावे छे, माटे बीजाने भाव अभयदान अर्पे छे. सर्व जातना देवताओनो मिथ्यात्व गुणस्थानकथी ते समकित गुणस्थानकनी अंदरमां समावेश थाय छे. बहु देवताओ धर्मभ्रष्टोने धर्ममां स्थिर करे छे, पण देवताओना करतां मनुष्यो अभयदानमां विशेष छे, कारणके मनुष्यने चउद (चतुर्दश) गुण स्थानक छे, जे दान पामवाथी आत्माने कोइनो भय रहे नहीं एवुं भाव-अभयदान संपूर्ण मनुष्य पामेछे, अज्ञानी जीवने सत्यासत्यनी समजण पडती नथी तेने सद्गुरु त्रिजगद् दुःख दावानल मेघ समान धर्म देशनाथी आत्मस्वरुप समजावे छे, जड वस्तुनुं स्वरूप समजावे छे, देवगुरु धर्मनुं स्वरूप समजावे छे, नवतत्त्वनुं विशेषरीत्या स्वरूप समजावे छे, अने अज्ञानी जीवने समजावे छे के—

अरे पुद्गलऐंठना भिक्षुक तारी भूख पुद्गलऐंठथी कदी भागवानी नथी, तुं परवस्तुनुं ग्रहण करी सुखी थवानो नथी. पोताना घरमां अनंत धन छतां केम परगृहे भीक्षा मागे छे. तारुं घर ओळख, तारो अखूट खजानो ताराथी दूर नथी, पर पुद्गल चुंथतां तने लज्जा शुं नथी आवती ? तारी ऋद्धि तारी अन्तर भरी छे. अने तेना अज्ञाने तुं दरिद्री थयो छतो अनंत दुःखने पामे छे, माटे तुं तारा आत्माने तारी ऋद्धिनुं दान आप, परमां केम फांफां मारे छे ? हे पामर प्राणी ! तें असत् वस्तुने सत् तरीके जाणी, अने सत् वस्तुने असत् तरीके जाणी तेथी भ्रांत थयो माटे हवे काया मायाथी तुं भिन्न छे. तारुं कोइ नथी कोइनो तुं नथी, तुं सर्वथी न्यारो छे एम अवबोध, ज्यां कोइनो संचार नथी एवो तुं आत्मा छे जो तुं तारा स्वरूपे रमे तो तृष्णा, काम, क्रोध, मोह स्वतः नाश पामे. मलीन जलमां जेम चंद्रनुं प्रतिबिंब बराबर पडतुं नथी तेम तारुं मनरुप जल ज्यां सुधी विकल्प अने संकल्प वडे मलीन छे तावत् तेमां आत्मरूपी चंद्रनुं प्रतिबिंब बराबर पडी शकतुं नथी, तुं अज्ञाने पोताने भिक्षुक माने छे, पण हे आत्मा तुं तो त्रिभुवनपति छो. हे पामर प्राणी ! तारामां त्रण रत्न छे ते प्राप्त कर अने जो ते आत्माने मळ्यां तो तुं सर्वोत्कृष्ट बने. जोने सिद्ध परमात्माओ, तेमने समये समये अनंत सुख छे तादृश अनंत सुख तारामां छे तेनुं दान तुं तारा आत्माने आप के जेथी कोइनो भय रहे नहीं. एम सद्गुरु महाराज पामर प्राणीने उपदेशद्वारा भाव अभयदान अर्पे छे. ए दान पाम्याथी कोइवार जन्म जरा मरण प्राप्त थतु नथी. शुद्ध सच्चिदानंदनी लहेरीयो आत्मामां प्रगट छे. ए भावदान पामेला जीवो अनंत सुखने पाम्या, पामेछे, अने पामशे. अहो ! सद्गुरुना समान जगत्मां मोटा कोइ दानेश्वरी नथी.

जेणे मिथ्यात्वनो नाश करी सम्यक्त्वनुं दान आप्युं. एवा सद्गुरुनो कदापि काल उपकार वाळवा कोइ समर्थ नथी, धर्मनी श्रद्धा करावनार धर्मगुरुए अनंत जन्म मरणनां दुःख टाळ्यां, तेमनो उपकार क्षण पण वीसराय तेम नथी.

श्री प्रदेशी राजाने प्रतिबोधक केशी गणधर सदृश सद्गुरु जाणवा. प्रदेशी राजा बिलकुल नास्तिक हतो तेनुं वृत्तांत कथेछे.

श्वेतांबिका नाम्नी नगरीमां प्रदेशीराजा राज्य करतो हतो ते नगरीना मृगवन नामना उद्यानमां केशीकुमार साधु परिवारे परिवर्या, समवसर्या, धार्मिक नागरिक जनो भगवान्ने वंदनार्थे आववा लाग्या, गुरुए देशना आरंभी, ते अवसरे कांबोज देशथी अश्वो आव्या छे तेनी परीक्षाने माटे चित्र सारथीए राजाने विनव्यो, चित्रे रथ जोड्यो, लांबा वखत सुधी अश्वो दोडाव्या. अश्वो थाक्या त्यारे समयसूचक चित्रे राजाने विनव्युं के स्वामिन् अश्वोने विश्रांति माटे वृक्षनी छायामां बेसाडवा जोइए एम कही राजा सह चित्रसारथि मृगवनमां आव्यो, त्यां आचार्य देशना देता हता त्यां जेम आचार्यनी शब्दध्वनि संभळाय तेम आसन्न मुकाम कर्यो. प्रदेशी राजाए भव्य जनोने उपदेश देता एवा केशी गणधरने दीठा.

राजाए मनमां चिंतव्युं के अरे आ मूढ शुं बोलतो हशे, अने अग्रस्थित एवा मूढ मनुष्यो शुं सांभळता हशे अहो खरेखर वक्ता अने श्रोताओ जड छे, एम मनमां विचारी राजाए चित्रसारथी प्रति कह्युं–

प्रदेशी–अरे सारथी! आ जगत्थी विचित्र वेषधारक कोण हशे? अने ते शुं बके छे?

चित्र–हे महाराज श्री पार्श्वनाथ नामना त्रेवीशमा तीर्थंकरना परंपरागत शिष्यो छे अने ते देहथी जीव पृथक् कहे छे.

प्रदेशी–हे चित्र ! ते केवा प्रकारनी युक्तिओथी शरीरथी भिन्न जीवनी अस्तिता कथे छे ?

चित्र–हे नरपते ! एनी मने मालुम नथी तेमनी पासे गमन करी श्रवण करीए तो मालुम पडे.

राजाए कह्युं "चालो त्यारे तेमनी पासे, एम कही आचार्य पासे जइ स्थाणुनी पेठे विनयरहीत नास्तिक शिरोमणि बेठो.

प्रदेशी–तमो कइ कइ युक्तिओथी शरीरथी भिन्न आत्मा मानो छो?

केशी गणधर–हे राजन् ! ए प्रमाणे प्रश्न पुछवाने इच्छा राखे छे तो केम विनयनो भंग करे छे ?

प्रदेशी–शुं में असमंजस कर्युं ?

केशीसूरि–दूरस्थ एवा तें अमोने देखी मनमां एवुं चिंतव्युं के आ मूढो मूर्खाओनी आगळ शुं असत्य वकेछे तें मनमां विकल्प कर्यो ते सत्य के असत्य ए प्रमाणे सूरिनुं वचन सांभळी राजा चमत्कार पाम्यो.

प्रदेशी–पराभिप्रायने तमोए शाथी जाण्यो ?

सूरी–पांच ज्ञानमांथी मारा विषे चार ज्ञान छे. तत्र प्रथमं मतिज्ञानं इंद्रियप्रणोदनोद्भूतं,। द्वितीयं श्रुतज्ञानं तच्च श्रवणगृहीत पदवाक्यैरर्थावबोधरूपं। तृतीयं अवधिज्ञानं तच्चेन्द्रियकज्ञानव्यतिरिक्तमात्मनैव प्रत्यक्षकृतं रूपि द्रव्यगोचरं । चतुर्थंमनःपर्यायज्ञानं तच्च मनुष्यलोकवर्तिनां संज्ञिजीवानां ये मनः

पर्यायान् विचित्रमनोऽवस्थाः ताश्चात्मनैव प्रत्यक्षीकृत्य ततोर्थापत्यातश्चिंतितज्ञानं । एतानि चत्वारि ज्ञानानि मम संति तेन परंमनोविकल्पितं अहंजानामि । यत्तु पंचमं केवलज्ञानं तत्र सर्वाण्येतानि चत्त्वारि ज्ञानानि लीयंते सूर्यप्रकाशदन्यताराप्रकाशवत् तच्च ज्ञानं मम नास्ति ॥

मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, अने मनः पर्यायज्ञान ए चार मने वर्त्ते छे. तेथी मनः पर्यवज्ञाने अन्य जनोना अभिप्रायने हुं जाणुं छुं.

प्रदेशी—पोताना मनमां विचार करवा लाग्यो के अहो आ महापुरुष छे, ज्ञानी छे, तेमनी साथे संभाषण लाभार्थे छे एम चिंती बेसवानी इच्छावाळा राजाए सूरिने कह्युं, हे स्वामिन् तमारी आज्ञा होय तो हुं बेसुं. सूरिए कह्युं, तमारी पृथ्वी छे जेम सुख थाय तेम करवुं.

राजा बेसी बोल्यो—देह अने जीवनुं भिन्नत्व तमो कथो छो ते घटतुं नथी. आत्माने सुख दुःखनी अवस्थाना भेदो माटे पुण्य पापनी कल्पना करवी अने पश्चात् पुण्य पाप भोगार्थे प्रति परलोक गत्यागतिनी कल्पना करवी ते प्रत्यक्ष प्रमाणथी विरुद्ध छे. कारण के—मारो पितामह अत्यंत पापी हतो, तेनो मारा उपर अत्यंत स्नेह हतो, जो ते कहेवा प्रमाणे नरकमां गयो होय तो तेणे अत्र आवी केम पापनो निषेध कर्यो नहीं ? कारण के त्यां अत्यंत दुःख मारे भोगववुं पडे माटे, हे पुत्र तुं पाप मा कर हुं तो पापार्जनथी दुःखी थयो छुं एवो

जवाप नरकमांथी आवी मारा पिताए केम कह्यो नही ? माटे एवा व्यतिकरना अभावे हुं एम स्वीकारुं छुं के जीव देहनुं ऐक्य छे, कोइनुं पण परलोकगमन नथी.

केशी गणधर–हे राजन्! जो कोइ पुरुष तारी राणीने भोगवे अने ते तें जाण्युं तो तुं तेने कोइक दंड आपे वा नहीं ?

प्रदेशी–तेने हुं घणी विडंबनाओ करी मारुं.

केशी०–ते पुरुष जो एम कहे के मने क्षणवार मूको तो हुं मारा कुटुंबने शिक्षा आपी आवुं के हुं अकृत्य करवाथी अत्यंत दुःखी थयो छुं माटे तमारे कोइए अकृत्य करवुं नहीं तो तुं तेनु वचन अंगीकार करे ?

प्र०–कदी तेनुं वचन मानी छोडुं नहीं.

केशी०–त्यारे ए प्रमाजे तमारा पितामह पण नरकमांथी आवी शके नहीं, ए प्रथम प्रश्नोत्तर.

प्रदेशी–मारा पितामह कदापि आवी शके नहीं तेथी मारी प्रतिज्ञा असत्य ठरती नथी; मारी पितामही तमारा शाशननी अनुरागिणी हती ने धर्म कर्ममां सदा आसक्त हती तो ते तमारी युक्तिए देवलोकमां गइ तेनो मारा उपर अत्यंत स्नेह हतो तो तेणीए अत्रे आवीने केम प्रतिबोध कर्यो नहीं! अरे पौत्र तुं धर्म आचर, हुं धर्म प्रसादथी स्वर्गमां गइ छुं, अने तारा पितामहे तो पापना संचयथी नरक गति पामी एम तेणीए केम कह्युं नही, तेने तो अहीं आवतां कोइ अटकावी शकतुं नथी, तो तेना व्यतिकरना अभावे मारी प्रतिज्ञा सत्यज छे. देहथी जीव भिन्न नथी. एतादृशी प्रतिज्ञा मम सत्या.

केशीगणधर–ज्यारे तें स्नान करी सुगंधिद्रव्यनुं शरीरे विलेपन

कर्युं होय अने अलंकार वस्त्रोथी शरीर अलंकर्युं होय ते वखते चंडाल आवीने कहे के स्वामिन् मारा विष्ठाना घरमां क्षणवार आवी बेसो. एम कहे त्यारे तेनुं वचन तुं स्वीकारे के नहीं ?

प्रदेशी–त्यां जवुं तो दूर रह्युं पण तेनो संबंध पण हुं करुं नहीं ?

केशी–देवताओ निर्मल पवित्र वैक्रियशरीर धारण करी अत्यंत- सुख भोगवे छे, मनुष्यो सात धातुथी निष्पन्न औदारिक शरीरने धारण करनारा छे, मनुष्य लोकनो गंध पंचशत योजन उर्ध्व उछळे छे, मरकयादि अभावे चतुःशत योजन दुर्गंध प्रसरे छे. यतः

चत्तारिपंच जोयण सयाइं! गंधोय मणुय लोयस्स॥
उढ्ढं वच्चइ जेणं। नहु देवा तेण आवंति॥ १॥
संकंति दिव्वपेमा। विसय पसत्ता समत्तकत्तव्वा॥
अणहीण मणुअकज्जा। नरभवमसुहं न इंति सुरा॥१॥

इत्यादि विचारी जोतां तारी पितामहीनुं आवागमन असंभवित छे, मनुष्यभव संबंधी मोहना अभावे अने दुर्गंधिस्थान- पणाथी तेनुं आवागमन थतुं नथी.

प्रदेशी–मारी पितामहीनुं अनागम हेतु तमोए बुद्धिथी सिद्ध कर्युं किंतु में जीव देहनी ऐक्यता घणी युक्तिथी साधी छे. माटे मारो पक्ष सत्य छे, में एक जीवता चोरने निःछिद्र कोठीमां घाली उपर ढांकणुं दीधुं. पुनर् मृत्तिकादि द्रव्योथी लिंपी. केटलाक दिन पश्चात् ते उघाडी मृत चोर देख्यो, किंतु तेना जीवने निस्सरवानो निर्गमन मार्ग कोइए देख्यो नहीं, त्यारे में जाण्युं आनी चैतन्य शक्ति आ देहमां लय पामी अने जो

विलय ना पामी होय तो जीव अन्यत्र जात, तो तेनो नीक-ळवानो मार्ग पण थएलो जणात, तेना जीवने नीकळवाना मार्गना अभावे मारी प्रतिज्ञा सत्य छे.

केशी–हे राजन् कश्चित् दुंदुभिवादक भूमीगृह (भोंयरा) मां प्रवेशे अने पश्चात् भोंयरानुं मुख बंध करे, जरा पण छिद्र रहेवा दे नहीं, त्यां दुंदुभि वगाडे तो तेनो शब्द बाहिरना लोको सांभळे के नहीं ?

प्रदेशी–बाहिरना लोकोथी शब्द संभळाय.

केशी–ए दुंदुभिना शब्दने निस्सरवानो क्यांय मार्ग जणाय छे ?

प्रदेशी–कोइ स्थाने जणातो नथी.

केशी–श्रोत्रथी ग्रहण थाय एवां शब्द पुद्गलोने निःसरवानो मार्ग जणातो नथी तो आकाशनी इव अरुपी आत्मानुं निर्ग-मनद्वार कथंरीत्यां पामी शकाय? गमे त्यां थइ आत्मा अरुपी माटे नीकळी शके छे. ते स्थूळदृष्टिथी अवलोकाय नहीं. इति तृतीय प्रश्नोत्तर.

प्रदेशी–हे भगवन्! आपनी बुद्धिनी युक्तिथी ए वात साधी पण निश्चयसाध्य थती नथी. चोरना कलेवरमां कृमीयो उत्पन्न थया ते जीवो अछिद्रवाळी कुंभीना कया द्वारथी प्रवेश्या ? चोरने कंइ छिद्र नहोतां तेथी प्रतिज्ञा करुं छुं के विकारवाळुं चोरनुं शरीर तद्रूपताने पाम्युं माटे मारी प्रतिज्ञा सत्यज छे.

केशी–हे राजन् भृशंवन्हितप्तायोगोलकमां वन्हि प्रवेश छे के नही?

प्रदेशी–अयोगोलकमां वन्हि प्रवेशे छे.

केशी–त्यां छिद्रना अभावे अयोगोलकमां वन्हि प्रवेशनी उपलब्धि छे तद्वत् जीव पण द्वार विना पेसतो छतो केम अश्रद्धेयक

थाय ? किंतु द्वार विना पण अरूपी आत्मानो प्रवेश थाय छे एम सद्दहवुं जोइए. (इति चतुर्थ प्रश्नोत्तरं).

प्रदेशी–हे भगवन् तमारी युक्ति प्रमाणे तो समलक्षणयुक्त सर्व जीवो छे ते घटतुं नथी लक्षणनी साम्यताए सर्वमां सरखुं बल होवुं जोइए ? ते प्रत्यक्ष प्रमाण विरुद्ध छे जे कारण माटे बालके छोडेलो बाण नजीक पडे छे, अने तरुणे छोडेलो बाण दूर पडे छे. ए सर्व जीव देहनी ऐक्यताए घटे छे, लघु शरीरे लघुबल, मोटा शरीरे बल पण महत् माटे सर्व जीवोमां लक्षण साम्यताए समबलत्व अयुक्त छे माटे मारी प्रतिज्ञा सत्या समजवी.

केशी–कोइ बलवान् तरूण पुरुष प्रत्यंचा चढावी बाण फेंके ते ज्यां सुधी भूमि उल्लंघे. ते ज धनुष्य चढावी बालक बाण फेंके ते युवान पुरुषे फेंकेला बाणे जेटली भूमि उल्लंघन करी छे तेटली भूमि आ उल्लंघन करे के नही ?

प्रदेशी–ते बाण आसन्न भूमीमां पडे पण पूर्वोक्त पुरुषें फेंकेलुं बाण तेना जेटली भूमी अवगाही शके नही ?

केशी–भला तेमां शो हेतु ?

प्रदेशी–साधन वैकल्य तेमां हेतु छे.

केशी–बालनुं शरीर निर्बल साधन छे धातुओना अपुष्टपणाथी, पुष्ट शरीर सबल साधन छे ते माटे सर्व जीवोमां लक्षणनी साम्यता अंगीकार कर. (इति पंचम प्रश्नोत्तरं).

प्रदेशी–तमोए जीवोमां समलक्षणपणुं कह्युं ते असत् छे, कारण के युवान अने बालकनी शक्तिनी (पराक्रम) भिन्नता छे. बालकनी शक्ति अल्प छे, युवाननी विशेष छे. जो जीव एक

सरखो होय तो पराक्रम पण एक सरखुं होवुं जोइए, पराक्रममां भिन्नता छे माटे समलक्षणयुक्त जीवो कहेवाय नहीं अने ते विरोध प्राप्त थतां शरीरथी जीव भिन्न सिद्ध थतो नथी.

केशीकुमार—एक पुष्ट अने मोटुं पंखी होय ते जेटला भारनुं उद्वहन करे तेटलो भार दुर्बल नाना पंखीथी उपडातो नथी. त्यां शरीर शक्तिरूप साधननो अभाव हेतु छे. मोटा पंखीमां शरीरशक्ति विशेष, नाना पंखीमां शरीरशक्ति अल्प तेथी तेना जेटलो भार उपाडी शकातो नथी. किंतु जीवो तो सर्व समलक्षणवंत छे, माटे समलक्षण जीवोनुं छे एम हे राजन् तुं जाण.

प्रदेशी—हे भगवन् में जीवता चोरने तुलामां जोख्यो, पश्चात् गळे पाशथी मारी नाख्यो, मरेलाने पश्चात् तुलामां आरोही जोख्यो तो पण प्रथम जेटला भारनो हतो तेटलोज रह्यो, टंक प्रमाण पण हीन थयो नहीं, तेथी में विचार्युं के जो देहथी जीव भिन्न होय तो जीवनो अपगम थतां मृतक चोर शरीर करी हीन थवुं जोइए पण थयुं नहीं, तेथी सिद्ध ठर्युं के—जीव देहनी ऐक्यता छे.

केशी—चामडानी धमणमां वायु पुरीने जोखवी, अने पश्चात् वायु काढी नांखी जोखवी, वायु पुरीने जोखेली धमण करतां वायु काढी नांखी जोखेली धमणमां वारु भारनी न्यूनता थाय छे ?

प्रदेशी—हे भगवन् ना भारमां कंइ न्यूनता थती नथी.

केशी—जो त्यां भार वधतो नथी तेम घटतो नथी तो अमूर्त्त आत्मानो देहमां शो भार होय ? के जेथी जीव नीकळ्या पश्चात्

चोरनुं शरीर भारमां घटे ? वायुरूपी छे, शरीरी छे, आत्मा अरूपी, अशरीरी छे, अन्यत्र गतिमां गमनकर्ता आत्मा सूक्ष्म शरीरी जाणवो. (इति षष्ठं प्रश्नोत्तरं).

प्रदेशी–एक चोरने में ककडे ककडा करीने जोयो, त्वचादि सप्त धातुओनुं निरीक्षण कर्युं मल मूत्र पण अवलोक्युं पण क्यांय जीव देखायो नहीं, माटे जीव देहनी ऐक्यता सिद्ध ठरी.

केशी–हे राजन् वनोपजीवि जनवत् तुं मूढ छे.

प्रदेशी–कोण ते वनोपजीवि. दृष्टान्त.

केशी–जे काष्ठ छेदन विक्रयथी स्वआजीविका निर्वहे छे, ते वनोपजीवि पुरुषो कुहाडी करवतादि उपकरणो लेइ तथा पकाववानां अन्न लेइ वनमां गया, त्यां तेओए एक पुरुषने कह्युं के अमो काष्ठार्थे आगळ जइशुं, तुं आ सूकुं अरणिनुं काष्ठ अने आकडानुं काष्ठ बेमांथी अग्नि उत्पन्न करी रसोइ पकावजे, एम कही ते वनमां गया, पेलो पुरुष केटलोक वखत निद्राधीन थइ पश्चात् अरणीना काष्ठना खंडोखंड करी अग्नि जोयो पण देखायो नहीं, तेम आकडाना लाकडाना खंडोखंड करी जोयुं पण अग्नि दीठो नहीं, तेथी त्रिलखो थयो, चरम प्रहरे ते पुरुषो आव्या, अने आने कहेवा लाग्या के– रसोइ तइयार थइ छे ? त्यारे मूढ पुरुषे कह्युं के अग्नि विना शी रीते रसोइ करूं ? त्यारे तेओए कह्युं आ अरणि अने आकडाना लाकडामां अने अग्नि छे तेम कह्युं हतुं. तेनु केम? त्यारे तेने कह्युं के–बन्ने जातिना काष्ठना खंडोखंड करी जोयुं पण अग्नि दीठो नहीं, त्यारे तेओए जाण्युं के, आ महा मूर्ख छे, पश्चात् तेओए अरणिकना काष्ठने नीचे मूकी, उपर सूकुं छाणुं मूकी आकडाना काष्ठथी मथन करी अग्नि उत्पन्न

करी ते वडे रसोइ पकावी. सर्वेए खाधुं, पश्चात् सर्वे पोताने घेर गया, आ दृष्टांतनी पेठे हे राजन्! तुं पण मूर्ख छे.

प्रदेशी–तमो निपुण, बहुविद् छो तो सभा समक्ष तुं मूर्ख छे एम केम मने कह्युं ? ए केहेवुं तमने अनुचित छे.

केशी–मनुष्य लोकमां हे राजन् केटली सभाओ छे ?

प्रदेशी–राजसभा, गाथापति सभा, ब्राह्मण सभा, अने चोथी रूषिसभा जाणवी.

केशी–ते सभाओमां अपराध करे तेने दंड शो आपवो ?

प्रदेशी–राजसभा, गाथापति सभा, अने ब्राह्मण सभामां अपराध करनारने अनुक्रमे मोटी लघु शिक्षा करवामां आवे छे अने ऋषिसभामां अपराध करनारने वाणीवडे तर्जना कराय छे.

केशी–हे राजन्! तुं जाणतो छतो मने केम उपालंभ आपे छे कारण के तुं कुयुक्तिवडे वारंवार मारी प्रतिज्ञा सत्य छे एम कही वक्रपणुं धारण करे छे. माटे तुं अपराधी अमारो करेलो दंड युक्त छे (इति सप्तम प्रश्नोत्तरं).

" वृक्षनी शाखाओ कंपवा लागी ते देखीने सूरि कहे छे.

केशी–आ वृक्षनां पांदडां डाळीओ कोण हलावतुं हशे ?

प्रदेशी–वायु हलावे छे, त्यां शो संदेह छे ?

केशी–हे राजन् तुं वायु देखे छे ?

प्रदेशी–ना किंतु वायु स्पर्श वडे प्रत्यक्ष देखाय छे पंण चक्षुथी देखातो नथी.

केशी–वायु जेम त्वाय प्रत्यक्ष छे, तेम ज्ञान गुणवान् जीव मानस प्रत्यक्ष छे, एम निश्चय जाण.

प्रदेशी—कुंथुओमां अने हस्तिमां शी रीते समपरिणामी जीव होय? शी रीते ते साचुं मानवुं, लघु स्थानमां लघुं वस्तुनुं अवस्थान युक्त छे, मोटी वस्तुनुं मोटा स्थानमां अवस्थान युक्त छे

केशी—हे आयुष्मन्—प्रदीप प्रभानो दृष्टांत अत्र जण, दीपक मोटी शाळामां मूक्यो छतां तेंटली सर्व शाळाने तेनो प्रकाश व्यापीने रहे छे, तेम-कुंभमां मूक्यो छतां ते कुंभनो ज उद्योत करेछे, तेम आत्मा जेवडा शरीरने अवगाही रह्यो होय छे तेटला शरीरनेज चेतना गुणवडे द्योतन करे छे त्यां जरा पण शंसय नथी. इति.

प्रदेशी—हे भगवन् आपे अनादि कालथी लागेली एवी मिथ्यादेव मारी आज टाळी आपना सद्ज्ञानरूप सूर्यथी मिथ्यात्व अंधकार दूर टळ्युं. हे भगवन् मारो उद्धार करनार आप छो, इत्यादि स्तुति करी व्रत ग्रही पोताना घेर गयो. वीजा दिवसे अत्यंत आडंवर सहीत भाव अभयदानरूप समकित दाता गुरूने वंदन कर्युं, विशेष अधिकार रायपसेणी सूत्रमां छे. श्री महावीर प्रभुए श्रेणिकराजाने भाव अभयदान अर्प्युं, श्री नेमिनाथप्रभुए श्री कृष्णमहाराजने भाव अभयदान अर्प्युं, तेना जेवो अन्य कोइ जगत्मां उपकार नथी, माटे सद्गुरू भाव कल्पवृक्ष दृष्टांतने सार्थक छे, सुरनरनी उपमाथी दानगुण सर्वमां श्रेष्ट छे, अने तेथी धर्मोत्पत्ति छे, एम जणाव्युं, गुरूश्रीरूप जंगम तीर्थनी प्राप्ति दुर्लभ छे, ग्रामानुग्राम विचरंता सद्गुरूनी प्राप्ति दुर्लभ छे, स्थावर तीर्थ पण भूत तीर्थंकरादिनुं स्मरण करावे छे, स्थावर तीर्थ उपर जेवी भाव भक्ति श्रद्धा होय छे तादृशी श्रद्धा भाव भक्ति जो सद्गुरू

उपर थाय तो आत्मा शिघ्र परमात्मपद पामे, भाव तीर्थ पोतानो आत्मा समजवो, अनंत गुण तेमां भर्या छे, जो तेनी यात्रा कोइ मुमुक्षु धारे तो अवश्य मुक्ति पद पामे. आत्मारूप प्रभुना दर्शनार्थम् जतां प्रथम चतुर्दश पगथीयांरूप चौद गुण स्थानक उल्लंघतां क्षपक श्रेणिरूप दोरी झाली आगळ चढतां वारमा गुणठाणे चारघातीयां कर्मना संक्षयथी आत्माना असंख्यातप्रदेशरूप महेलमां जवाय छे, अने तेमां विराजित परमात्मानां साक्षात् कैवल्यचक्षुथी दर्शन थाय छे, पश्चात् आत्मा परमात्मप्रभुनो दर्शन करे छे, त्यारे अलौकिक स्वरूपवाळो वने छे, अने त्यांने त्यां रहे छे. पश्चात् अघातिक कर्म क्षपणथी परमात्मस्वरूप वनी स्वयमेव प्रकाशे छे.

यावत् भावतीर्थनी यात्रा थइ नथी तावत् सांसारिक भ्रमणप्रपंचमूलभूतरागद्वेषनी ग्रंथि छेदानी नथी माटे तेनी प्राप्तिनां हेतु स्थावरतीर्थ अने जंगमतीर्थ छे. जंगमतीर्थनी सेवा भक्ति श्रद्धा, नमन, स्तुत्यादिद्वारा भावतीर्थ दर्शन थाय छे, यथा पोतानो आकार जेवो होय तेवो आदर्शमां जोवाथी भासे छे तथा जंगमतीर्थ स्वरूपगुरूमहाराजना आलंबनथी यादृक् आत्मानुं स्वरूप होय तादृक देखाय छे.

आत्मानो प्रकाश सूर्य तथा चंद्रथी थतो नथी, किंतु स्वीय आत्मानो प्रकाश सद्गुरुद्वारा थाय छे, परपुद्गळसंगी आत्मा परभावी थइ भवभ्रमणामां भूल्यो, मोह मायामां झूल्यो, आत्मानी अनंत ऋद्धि डूल्यो, पण गुरुनी यात्रा करतां पोतानुं स्वरूप समजायुं, माटे गुरु समान अन्य तीर्थ स्वात्म निर्मळकारक नथी, गुरु तेज परम जंगमतीर्थ छे, गुरुनी सेवा तेज गंगा नदी जाणवी, गुरुनी कृपादृष्टि तेज मारी

शुभ गति छे, ए प्रमाणे गुरु महाराज तीर्थरूप जाणवा, तीर्थ
बे प्रकारनां छे. १ लौकिक तीर्थ, २ लोकोत्तर तीर्थ. वळी
लोकोत्तर तीर्थ द्विधा छे, वळी तीर्थ बे भेदे छे, स्वतीर्थ
अने परतीर्थ, वळी तीर्थ बे प्रकारनुं छे, द्रव्यतीर्थ अने
भावतीर्थ. वळी शुद्ध अने अशुद्ध, ए बे प्रकारे तीर्थ छे.
स्थावरतीर्थ करतां पण सद्गुरू विषे अधिक श्रद्धा भक्तिभाव
जागशे, त्यारे नक्की समजवुं, के आत्मानुं कल्याण थशे, धर्म-
प्रद धर्मगुरुनी स्तुति पोताना आत्माने निर्मळ करे छे, गुरुनो
राग, भवभ्रमण त्याग करावे छे, गुरुने तीर्थनी उपमा आ-
पवानो हेतु ए छे के गुरुराज संसार समुद्रमांथी भव्य जीवने
तारे छे, एवा धर्म गुरुराजनुं शरण मन वचन अने कायावडे
थाओ, गुरुराजने सत्य देवनी उपमा आपवामां आवे छे,
गुरु रूप देव तो पुण्य अने पापकृत्य स्वरुपने अवबोधे छे, अने
भव्यात्माओ उपर गुरु देव सदा काल कृपादृष्टि फेंके छे,
अज्ञानरुप अंधकार कोइनाथी नाश पामे नहीं तेवा मिथ्यात्व
अंधकारनो नाश गुरुमहाराज उपदेशद्वारा करे छे, गुरु तेज
देव छे, श्री गौतम स्वामीना मनमां विप्रानो अहंकार हतो
अने आत्मा छे के नहीं तेनी शंका हती, तेमनुं पण श्री महा-
वीर गुरुए शंका टाळी चारित्र अर्पी हित कर्युं, देवताओ
पण पंचमहाव्रत धारी ध्याननिष्ठ महामुनि गुरुने नमस्कार
करी स्तवे छे, माटे गुरु तेज सापेक्षतः देव जाणवा, आत्मा-
नी सिद्धि गुरुथी थाय छे सर्व शाश्वत सुखरुप मांगल्यप्रद
गुरुराज छे, माटे आद्यमां स्तुतिरूप गुरुनुं मंगळ कर्युं, आत्मा
पोताने स्वयमेव जाणे छे ते दर्शावे छे.

"दुहा."

तेने तेहिज ओळखे, अवर न ज्ञाता कोय,
ज्ञाता तेहिज आतमा, नित्यपणे जग जोय. २

भावार्थ—आत्मा पोते पोताने ओळखे छे, आत्मा विना अन्य कोइ आत्मानो ज्ञाता नथी, सर्व पदार्थ ज्ञानवडे जे ज्ञाता छे, ते आत्मा जाणवो, आत्मानुं स्वरूप अन्यथा थतुं नथी, एज अद्भूत आश्चर्य छे. जगत् अवस्थितसर्व पदार्थो ज्ञानथी जणाय छे, अने स्वकीय शुद्ध स्वरूप पण ज्ञानथी जणाय छे, स्व परने ज्ञानमां विषयभूत करनार तेज आत्मा छे, आत्माथी भिन्न जड वस्तुमां ज्ञान गुण नथी, ज्ञान गुण शक्ति अलौकिक छे, निगोदीया जीवोने पण आत्माना आठ रुचक प्रदेश निर्मला छे, ज्ञान त्यां चेतन अने चेतन त्यां ज्ञान सदा रहुं छे, निमित्तना योगे आत्मा पोताने स्वयमेव अनायासे ज्ञानथी निहाळे छे, कोइ सिंहनुं बच्चुं नानुं धावणुं कोइ भरवाड पकडी लाव्यो. पेलुं सिंहनुं बच्चुं बकराना टोळा भेगुं रमता फरवा लाग्युं, अने मनमां समजे छे के हुं पण बकरांना जेवुं छुं, मारी जाति अने बकरांनी जाति जुदी नथी, एम समजतुं हतुं, प्रतिदिन ते सिंहबाल मोटुं थवा लाग्युं, एक दिवस बकरां सहित वाडामां ते बच्चुं बेठुं हतुं त्यारे एक सिंह आव्यो, पेलुं सिंहनुं बच्चुं मनमां विचारवा लाग्युं के—अहो आ सामुं प्राणी देखाय छे ते विचित्र छे, तेनुं शरीर अने मारुं शरीर मळतुं आवे छे हुं जे टोळामां रहुं छुं तेना शरीरनां लक्षण अने मारा शरीरनां लक्षण भिन्न भिन्न छे, आ सामुं जे प्राणी देखाय छे तेना सरखो हुं छुं, एम ज्ञान थतां एकदम वाडामांथी बहार नीकळी गयो अने सिंह समुदायमां भळ्यो, तेम आत्मा पोतानुं

स्वरूप स्वयमेव आलंबन योगे पामी परमात्मस्वरूपमय बने छे कह्युं छे के—

अज कुल गति केसरी लहेरे, निज पद सिंह निहाळ;
तिम प्रभुभक्तें भवि लहेरे, आतमशक्ति संभाळ.अजित.

परमात्म स्वरूप ओळखी तेनुं ध्यान करतां पोतानो आत्मा पण परमात्म रूप भासे छे, परमात्मा अने मारामां भेदभाव नथी, मलीन सुवर्ण समान संसारी भव्यात्माओनी स्थीति छे, अने शुद्ध कंचन समान सिद्धात्मानी दशा छे, मलीनतानो अपगम ध्यान-योगे थतां परमात्मरूप बनी त्रिभुवन पदार्थ गुण पर्याय ज्ञाता बने छे, ज्ञातृत्वशक्ति आत्मामां रही छे, जडमां ज्ञातृत्वशक्ति नथी, जड पदार्थ ज्ञेय छे, जेटला ज्ञेय पदार्थ तेटलुं ज्ञान समजवुं, ज्ञेय पदार्थ अनंत छे, तेथी ज्ञान पण अनंत कहेवाय छे, अने ते प्रमाणे अनु-भवमां आवे छे, ज्ञातृशक्तिनो आधार चेतन (आत्मा) छे, आ-त्मानो कदी नाश थतो नथी, माटे नित्य छे, यद्यपि अविद्याना योगे अनेक शरीरो धारण करे छे तो पण पोताना स्वरूपने त्य-जतो नथी, अज्ञानी जीव एम जो कहेवा लागे के आत्मा नथी पण तेना वचनथीज सिद्ध थाय छे के आत्मानी अस्तिता छे तो ते जीव नास्ति एम कहे छे, अविद्यानो नाश थतां अवश्य यथात-थ्य सहेजे आत्मतत्त्व भासे छे, आत्मा अनंत सुखनो धणी छे, सुख दुःखनी चेष्टा आत्मानी प्रेरणाए थाय छे, इष्टानिष्ट ज्ञाता आत्मा छे, जो ए आत्मतत्त्व सम्यक् रीत्या ओळखाय अने तेनुं ज्ञान थाय तो स्वप्नानी पेठे सर्व जगत् देखाय, आत्मामां जे चित्तवृत्ति राखी चिंतवन करे छे ते पुरुषो आत्माने सहेजे ओळखे छे अने अखंड सुख भोक्ता बने छे.

"दुहा."

समाय तुं तारा विषे, तारु ताहरी पास;
मारु मारु क्यां करे, धरतो परनी आश. ३

हे आत्मा तुं तारा स्वरूपमां समाय छे, तारी गति सर्वना करतां न्यारी अने अनंत आनंद आपनारी छे, तुं कोइ अन्य पदार्थमां रहेतो नथी, प्रकाशथी तमः समूह यथा सर्वथा न्यारुं छे, तेम अनंत शक्तिधारक चेतनथी सांसारिक स्वरूप सर्वथा न्यारु छे. अवळी परिणतियोगे परवस्तुने पोतानी मानी ममताना पासमां पडे छे पण सहजानंदी आत्मा विवेकथी तुं विचार के—स्वप्नामां भासेलुं जगत् जेम मिथ्या छे, तेम बाह्यवस्तु पण तारी नथी, चेतन तारी ऋद्धि ताराथी जरा मात्र भिन्न नथी, जेम मृगथी कस्तुरी भिन्न नथी तेनी दुंटीमांज रहेली छे, तेम आत्मानी ऋद्धि पोतानामां भरी छे; परमात्मपद आत्मामां छे, आचार्यपणुं पण आत्मामां छे, तेम उपाध्याय, साधुपणुं पण आत्मामां छे, ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने तप वीर्य आदि गुणो पण आत्मामां रह्या छे, अनंत सुख पण आत्मामां छे, तो बहिरात्मभावे हे चेतन परनी आशाथी मूढ बनी मारु मारु एम शुं चिंतवे छे? परवस्तु तारी कदी थवानी नथी. एम निश्चय जाण, तारी ऋद्धि ताराथी न्यारी नथी, खोजे सो पावे. आ कहेवत आत्मामां योजवी, अनादि कालथी चेतन मिथ्यात्वयोगे स्वस्वरूपना अनुपयोगे परवस्तुने पोतानी मानी जन्म जरा मरण उपाधि पामी, किंतु हवे निर्णयपूर्वक जाणवामां आव्युं के—परवस्तु अचेतन जड विशिष्ट छे, हुं एनो नथी, ए मारु नथी, हुं मारा स्वरूपे समायो छुं, हुं जे जे वस्तुओ चक्षुथी देखुं छुं, घ्राणे सुंघुं छुं, जिव्हाए स्वादुं छुं, ते ते वस्तुओमां

हुं नथी माराथी सर्व पदार्थ जणाय छे, तो पण ते पदार्थोमां हुं नथी. सर्व पदार्थो प्रकाश्य छे, अने हुं प्रकाशक छुं, मारी जे वस्तु नथी तेनी ममता हुं केम राखुं ? पुद्गलनी एंठ आ जीवे बहिरात्मभावे वा क्षुधावेदनीना उदये भक्षण करी पण ते पुद्गल अंते मारुं नथी, एम निश्चय करी स्वस्वभावे स्थिर रहेवुं एवं हिताकांक्षा.

"दुहा."

देखी आत्मस्वरूपने, जाण्यो पुद्गल खेल;
न्यारो तेथी आतमा, चिदानंद गुणरेल ॥ ४ ॥

भावार्थ-परोपकृतिमान् श्री सद्गुरुद्वारा ध्याननी एकाग्रताए आत्मस्वरूप भास्युं त्यारे आ सांसारिक प्रपंच सर्व पुद्गल खेल जाण्यो, ते खेलथी आत्मा न्यारो छे अहो शुं आश्चर्य, सर्व सांसारिक पदार्थो नाशवंत छे. अने आत्मा अविनाशी छे, आनंद, अने ज्ञाननो धारक आत्मा छे, आत्मस्वरूप बतावे छे.

पद.

चेते तो चेतावुं तनेरे, पामर प्राणी-ए राग.

आतम रूप देखुं आजेरे सकल सुख,
अचल अखंड योगी, अभोगी अशोगी भोगी;
स्वभावे ते नहीं रोगीरे-सकल सु० आत० १
देहमांहीं वसनारो, देहातीत मन धारो;
रूप रंग थकी न्यारो रे-सकल. आत० २
जाणे सुख दुःख सहु, चेतन छे जग बहु;
व्यापी घट घट बहुरे-सकल० आत० ३
नाम ठाम जेने नहीं, नहीं जाति भाति कही;
पोतानामां व्यापी रही रे-सकल० आत० ४

निरंजन निराकार, ज्ञानदृष्टि आरपार;
बुद्धिसागर सुखकार रे—सकल० आत० ५

परिपूर्णसुखरूप आत्मानुं स्वरूप—निर्विकार अखंड छे, आत्मतत्त्वप्रापक जीवोने कोइनी स्पृहा रहेती नथी. कोइ निंदा करे वा स्तुति करे तोपण हर्ष शोक रहित आत्मज्ञानी विचरे छे, राग द्वेषनी परिणति मंद पडे छे, समये समये आत्मिक सुख संतति वृद्धि पामे छे, तृष्णानुं मूळ छेदाय छे, परस्वभाव प्रवृत्ति स्वयमेव विरमे छे, अने आत्मस्वभावप्रवृत्तिद्वारा निवृत्ति सुखोद्‌भव थाय छे, देहमां वसतां देहातीत अवस्थानो भोगी आत्मा बने छे, काकविष्टा सम पौद्‌गलिक विषय सुख लागे छे, परनिंदातो आत्मज्ञानीने गमती नथी, आत्मस्वरूपना ध्यानी पुरुषने जे सुख थाय छे ते अवाच्य छे, आनंदनो समुद्रज जाणे होयनी एवो अध्यात्म ज्ञानीनो आत्मा बने छे, आत्मज्ञानीनी दशा प्राप्त थया विना आत्मिक सुखनो अनुभव पमातो नथी, आत्मा परम पूज्य छे अंतरात्मयोगी थइ परमात्मपदमय ध्यानथी थता अनहद सुख भोगी आत्मा स्वयमेव स्वस्वरूपी थइ रहे छे.

"दुहा."

ध्यानथी दृष्टि फेंकुं ज्यां, त्यां सहु स्वरूपे स्थिर;
शत्रु मित्र स्वप्नु भयुं, गइ अनादिकु पीर ॥५॥

भावार्थ—मन, वचन, कायानी एकाग्र आत्म स्वरूपे थतां जगत् विचित्र देखायुं, प्रथम ध्याननी पूर्वे सर्व जगत् हस्तिना कर्णनी पेठे चंचल उन्मत्त लागतुं हतुं, ते हवे ध्याननी एकाग्रताए स्वस्वरूपे स्थिर थतां सर्व जगत् पोताना स्वरूपे स्थिर देखायुं, मारुं मन चंचल तो सर्व वस्तु चंचल अने मारुं मन स्थिर तो सर्व

वस्तु स्थिर एम देखायुं तेथी सार लीधो के–मन जो आत्मामां रमे तो मोक्ष अने मनः परभावमां रमे तो भवभ्रमणता, एनो निश्चय थयो, आत्मज्ञान विशेष थतां स्थिरता सर्वत्र भासे छे, कह्युं छे के–

भासे आतम ज्ञान धुरि, जग उन्मत्त समान;
आगे दृढ अभ्याससे, पत्थर तृण अनुमान ॥५॥

सारमां सार ग्राह्य, आराध्य आत्मा छे, ध्यानथी आत्मामां रमतां शत्रु मित्र स्वमनी पेठे भासे छे, अर्थात् शत्रु मित्र आत्म ज्ञानीनो कोइ नथी. अनादि कालनी लागेली कुटेव तो नाशी गइ अने शुद्ध चेतना प्रगट थइ, मिथ्यात्वपणुं टळ्युं, आत्मानुं शुद्ध स्वरूप प्रगट थतां सहजानंद प्रगटे छे, आत्मज्ञानीओ एवी दशामां रमे छे, तेमने पुनः पुनः नमस्कार थाओ.

" दुहा. "

अहं बुद्धि परमां धरी, परमांही बंधाउं;
अहं बुद्धि जो आतममां, तो हुं क्यां रंगाउं.॥६॥

परवस्तुमां अहंपणानी बुद्धि धारण करी कर्मरूप परवस्तुमां बंधाउं छुं, पण जो आत्मामां अहंपणानी बुद्धि थइ एटले आत्मा पोते हुंछुं अन्यमां हुं नथी, आवी बुद्धि थतां हुं आत्मा कोइथी क्यांय रंगातो नथी. अर्थात् कर्मे करी लेपातो नथी, जे महात्माओ आत्मामांज वृत्ति राखे छे ते आत्मानी ऋद्धि पामे छे, परमां चित्तवृत्ति राखवाथी अमुक दुष्ट अमुक लंपट अमुक वैरी इत्यादि बुद्धि थाय छे पण पोताना आत्मानी सत्तानु चिंतवन कर्याथी पोतानुं स्वरूप प्राप्त थाय छे.

" दुहा. "

काल अनादि परिणम्यो, आतम जडने संग;
अशुद्ध परिणामे करी, करतो नाटारंग. ॥७॥
पोताना अज्ञानथी, पाम्यो दुःख अनंत;
स्वपदज्ञानाप्ति ग्रही, थयो सिद्ध भगवंत, ॥८॥

भावार्थ—अनादि कालथी जीव कर्माष्टक ग्रही औदारिकादि शरीर ग्रही जड संगे दुग्धपयोवत् परिणम्यो छतो अने ते कर्मना योगे पोताना आत्माना थयेला अशुद्ध परिणामे करी चतुर्गति रूप संसारमां जन्म जरा मरणनां दुःख ग्रही नाटारंग करतो फर्या करे छे, आत्मानो शुद्ध परिणाम थतां भव प्रपंचनी बाजी नाश पामे छे, पोताना एटले आत्माना अज्ञानथी जीव अनंत दुःख पाम्यो. शरीरने आत्मा मानी बहिरात्मभावे रमतो फरतो पोतानुं स्वरूप भूल्यो, दुःखनो समुह पोताना अज्ञानथीज प्राप्त थाय छे. पण सद्गुरु समागमे आत्मस्वरूप जाण्युं तेमां रमणता करी कर्मनो नाश कर्यो. अने मोक्ष स्थाननी प्राप्ति करी सिद्ध भगवंत थयो ए सर्व आत्मज्ञाननुं फल छे.

" दुहा "

जेनाथी निज आतमा, समजायो सुखकंद;
त्रिकरण योगे भावथी, नमुं गुरू क्रमद्वंद्व. ॥ ९ ॥

सुखकंद अनंतगुणविशिष्टआत्मस्वरूप जे गुरुना बोधथी समजायुं ते सद्गुरु महाराजना चरण कमलद्वयने भावथी मन वचन अने कायाए करी नमस्कार करुछुं, आत्माने ओळखावनार गुरु छे, गुरु पण आत्मा छे अने श्रोता पण आत्मा छे, किंतु

गुरुनो आत्मा ज्ञानवंत छे अने सेवक श्रोताजननो आत्मा निर्मल नथी तेने जणावनार गुरु छे, उपदेशक धर्मतीर्थ छे, माटे गुरुनेज मोटुं तीर्थ जाणवुं, सुदर्शना चरित्रमां चारण मुनिए चंद्रगुप्तराजाने महाफळ जाणी उपदेश आप्यो छे, सद्गुरु समान त्रिभुवनमां मोटुं कोइ तीर्थ नथी. सद्गुरु मोटुं तीर्थ छे एम मनमां श्रद्धा थतां सम्यक्त्वनी प्राप्ति थशे, हृदयमां गुरुनी मूर्त्ति स्थापन करी तेनुं एकाग्रचित्तथी भक्ति पूजन ध्यान करवाथी आत्माने अलौकित शांति थशे, अने दररोज एम ध्यान धरवाथी पोताने साक्षात् सद्गुरु जाणे होयनी एम साक्षात् भासे थशे, अने गुरु माहात्म्यथी अनुभव ज्ञाननो प्रवाह वहन थशे, अने दुर्गुणोनो अवश्य नाश थतां मन प्रसन्न थशे, अने आत्मा सद्गुणधाम थशे.

" दुहा. "

सद्गुरु वण भव दुःखनो, परिहारक नहि कोय ॥
ते सद्गुरु नित्य वंदीए, जन्म सफलता होय ॥१०॥

भावार्थ—भव दुःख अंतकारक सद्गुरु विना अन्य कोइ नथी, ते सद्गुरुने प्रतिदिन वंदन करवाथी जन्मनी सार्थकता छे, घोर कर्म करनारा दुष्टजनो पण गुरुना उपदेशथी गुरुता पामी शारीरिक मानसिक दुःख संक्षय करी पंचमीगतिने पाम्या छे, पामे छे, अने पामशे.

" दुहा. "

साधन साध्यापेक्षथी, जे पाळे आचार;
राग रोष मद जीतता, सफलो तस अवतार॥११॥

रागादिक त्यागी शमे, करशे आतम ध्यान;
सम्यग् ज्ञान क्रिया थकी, थाशे ते भगवान्.॥१२॥

भावार्थ—जे भव्यात्माओ पंच महाव्रतादिनो आचार साधन साध्यनी सापेक्ष बुद्धिथी पाळे छे, अने राग रोषने जीते छे, तेनो आचार सफळ छे, अने ते दुनियामां जन्म्यो सफळ छे, क्रोध, मान, माया, लोभ, निंदादिनो जय करी शमभावे जे मुमुक्षुओ आत्मध्यान करशे, अने सम्यग्ज्ञान अने सम्यग्क्रियानुं अवलंबन करशे ते पोते भगवान् थशे, कर्ममळना नाशथी आत्मा ते सिद्धात्मा थइ शके छे, किंतु अभव्यजीव मुक्तिपद पामी शकता नथी, कारणके अभव्यजीवोमां मुक्ति पामवानो स्वभाव नथी. अभव्य जीवोनुं उपादानकारण शुद्ध थइ शकतुं नथी, भव्यजीवोनुं उपादानकारण शुद्धसामग्री योगे थइ शके छे, संसारमां परिभ्रमण करवानुं मुख्यकारणराग अने द्वेषभावकर्म छे, नोकषायसहचारि भावकर्ममां छे, क्रोध, मान, माया, अने लोभनो राग द्वेषमां अंतर्भाव छे, सिद्ध थता जीवोने राग द्वेष अनादि सान्त भांगे छे, अभव्यजीवने रागद्वेष अनादि अनंत भांगे छे, रागअने द्वेषनो क्षय संवरथी सर्वथा थाय छे, बहिरात्मभावे राग द्वेषनो क्षय थतो नथी, ज्यारे अंतरात्मपणुं प्राप्त थाय छे, त्यारे राग द्वेषनो क्षय थइ शके छे. कह्युं छे के—

राग द्वेष के त्याग बिन, मुक्तिको पद नांहि;
कोटि कोटि जप तप करे, सबे अकारज थाय॥१॥

रागद्वेषना क्षय विना मुक्तिपद प्राप्त थतुं नथी, राग द्वेषना त्याग विना कोटि कोटि जप तप करे तो पण लेखे थतुं नथी, प्रथम आत्मस्वरूप गुरुसमक्ष जाणवापां आवे, जडनुं यथातथ्य

स्वरूप जाणवामां आवे पश्चात् जड अने आत्मानी भिन्नता मालुम पडतां विवेक प्रगटे, विवेकथी आत्मतत्त्वआदेय लक्ष्यमां ग्रहे, अने अजीवतत्त्व हेय जाणे पश्चात् आत्मा विचारे के–मारामां अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत क्षायिक चारित्र, अनंत वीर्य छे, हुं स्वतंत्र छुं, किंतु अनादिकाळथी राग द्वेषना योगे परतंत्र छुं, राग द्वेष ए मारुं आत्मस्वरूप नथी, एम विचारतां सर्वत्र सर्व प्राणी उपर तथा वस्तुओ उपर समभाव प्रगटे, दुनीयानी सर्व वस्तुने शमभावे निरखे, राग द्वेषनो क्षय शमभावे आत्मध्याने प्रवर्तता थाय अने सम्यग्ज्ञान अने क्रियाथी मुक्तिपद मळे माटे जे मुनिवरो रागादिकनो त्याग करी वायुनी पेठे अप्रतिबद्धताए विचरी स्वआत्महितमां लीन रहेशे, ते क्षणिक आयुष्यनी सफलता करे छे.

" दुहा. "

को किरिया जड बोलता, तरशुं अम संसार;
कर्मनाश किरिया थकी, सफलो अम आचार ॥१३॥
बहिर् क्रियामां राचता, अंतर्तत्त्व न भान;
भूल्या भवमां भटकता, क्रियाजडी अज्ञान. ॥१४॥

भावार्थ–कोइक क्रियारुचिजीवो एम माने छे के–अमो क्रिया करवाथी संसार समुद्र तरीशुं, अमो जे क्रियाकांडनो आचार आदरीये छीए ते कर्म नाश करशे, माटे क्रिया सफल छे, जे जे क्रिया छे ते सफळ छे, यथा दोहन, भक्षणक्रिया, ते प्रमाणे पडिलेहण (प्रतिलेखन) आदि क्रियाओ पण कर्म नाश करवाथी सफल छे, ए प्रमाणे साध्य आत्मतत्त्वना अजाणपणे अंतर्क्रिया जे ध्यानादिकनुं स्वरूप नहीं जाणवाथी क्रियाजड पुरुषो भवमां

भटक्या, भटके छे, अने भटकशे, अने परमात्मपद केम पामी शके, साध्य सापेक्षताए क्रिया सफल छे, एम एकांते बाह्यक्रियाथी जडात्माओ इष्टफल जे मोक्ष ते पामी शकता नथी.

"दुहा."

कोइ ज्ञानने मानता, ज्ञान सत्य जग सार;
विना ज्ञान क्यां मुक्तिफल, ज्ञाने भवजल पार॥१५॥
एकांते एम जे ग्रहे, करे कदाग्रह चित्त;
आत्मतत्त्व पाम्या विना, होय न तत्त्व प्रतीत॥१६॥

केटलाक भव्यात्माओ ज्ञानने मुक्तिप्रद माने छे, आत्मतत्त्वना ज्ञान विना मुक्ति नथी, ज्ञानथी संसार समुद्र तरी शकायछे, आत्मतत्त्वना बोध विना जे भव्यो एकांते हृदयमां हठ कदाग्रह धारण करी स्वेच्छाए प्रवर्ते छे, ते परमात्मपद पामी शकता नथी, आत्मतत्त्व पाम्या विना मोक्षनी प्राप्ति थती नथी.

"दुहा"

युवत्यंग निरख्या थकी, विषय तृप्ति नहि थाय;
भोजनज्ञान थया थकी, भूख न भागे भाय ॥१७॥

भावार्थ—युवतिना अंगनुं निरीक्षण करवाथी विषयिपुरुषोने विषयनी तृप्ति थती नथी, तेमज बरफी, दूधपाक, मिष्टान्न भोजननुं जाणपणुं मात्र थवाथी, उदरपूर्ति थती नथी, माटे तेनी क्रिया कराय तो इष्ट फलनी सिद्धि थाय छे, माटे क्रियानी मुख्यताए फल सिद्धि छे.

ज्ञानवादी—हे क्रियावादी! तमो क्रियाने फलदायक कहोछो ते युक्त नथी, क्रिया करवाथी संसारनी वृद्धि थाय छे, रांधवुं,

युद्ध करवुं, ए आदि क्रिया छे तो तेथी मुक्ति नथी, किंतु कर्मबंध छे, माटे क्रिया संसारवृद्धिहेतुभूत छे, माटे ज्ञान तेज सार छे, कर्मक्षय ज्ञानथी थाय छे.

क्रियावादी—क्रिया थकीज मोक्ष छे, क्रिया बे प्रकारनी छे, १ कर्मक्रिया. २ धर्मक्रिया, जे क्रियाथी संसारमां परिभ्रमण करवुं पडे अने आश्रवनुं ग्रहण थाय ते कर्मक्रिया जाणवी, तेनो तो त्याग करवो योग्य छे. पण जेनाथी जन्म जरा मृत्युनां दुःख नाश पामे एवी धर्म क्रियाओ कही छे, ते करवी जोइए, कारण के तेनाथी कर्मनो नाश थाय छे, किंतु ज्ञान थकी थतो नथी माटे क्रिया तेज मोक्ष मार्ग छे.

ज्ञानवादी—धर्मने माटे क्रियानी जरुर नथी, आत्मानी मुक्ति तो ज्ञानथी थाय छे, शरीरनी क्रिया, वचननी क्रिया शुं मोक्ष आपी शके ? ना नहीं. मननी क्रिया विकल्परूप मोक्ष आपी शकती नथी, किंतु आत्मानुं ज्ञान थवाथी मुक्ति प्राप्ति छे, ज्यां ज्यां क्रिया त्यां कर्मनो बंध समजवो, कारण के क्रिया जड छे तो तेथी उत्पन्न थनार फळ पण कर्म जडछे, तो मुक्ति क्यांथी मळे ? माटे ज्ञानथी मुक्तिनी सिद्धता छे.

क्रियावादी—क्रियाने जड कहो किंतु क्रियाथी जडनो नाश थाय छे, कारण के सजातियथकी सजातियनो नाश थायछे, ईंटनो नाश मोगरथी थायछे, तेम कर्मछे ते जडछे तो तेनो नाश क्रियाथी थायछे माटे क्रियाथी नाश थवो तेज मोक्ष जाणवुं, ज्ञानथी कर्मनो नाश शी रीते थाय ? माटे कर्म नाशिका क्रिया जाणवी, मानसिक, वाचिक, कायिक क्रिया करवाथी कर्म नाश थायछे, माटे ते करवी जोइए अने क्रियाज मोक्ष फळदाछे.

ज्ञानवादी—तमोए जड थकी जडनो नाश थयो एम कह्युं, ते युक्त नथी तमारा मत प्रमाणे तो एमज सिद्ध थायछे के पाप करवांथी पण कर्म नाश थाय, कारण के पाप पण जड छे अने कर्म पण जडछे माटे पापथी कर्मनो नाश थाय तो पश्चात् दया, सत्य, तप करवानी शी जरुर होवी जोइए ? अने जो एम होय तो पापी जीवोनी शीघ्र मुक्ति थवी जोइए अने धर्मी अने पापी एवो भेद भाव पण असत्य थाय किंतु शास्त्रमां वीतराग भगवंते तो एम कह्युंछे के पाप कृत्यथी कदापि मुक्ति मळती नथी, माटे ज्ञानने सत्य मानो. अने तेनाथी मुक्ति थायछे.

क्रियावादी—हे ज्ञानवादी ! तुं मारुं कथन समजी शक्यो नहीं, प्रतिपक्षी जडथकी प्रतिपक्षी जडनो नाश थायछे, कर्मनुं प्रतिपक्षी पाप नथी माटे पापथी कर्मनो नाश थतो नथी, पुण्य अने पाप ए बे परस्पर प्रतिपक्षीछे माटे पुण्यथी पापनो नाश थायछे. पुण्यनी क्रिया दुःखनाशक छे माटे धर्मनी क्रिया अवश्य करवी जोइए.

ज्ञानवादी—पुण्यनी क्रियाथी कंइ कर्मनो नाश थतो नथी, कारण के पुण्य पण कर्मस्वरूपछे, तो पुण्यथी कर्मनी वृद्धि थाय पण कर्मनो नाश तो थतो नथी, माटे ज्ञानथीज मुक्ति थायछे एम मानवुं जोइए.

क्रियावादी—भला ठीक पुण्यथकी कर्मनो नाश न थाय तोपण शातावेदनीयकर्म बंधाय अने तेथी उत्तम कूळमां जन्म थाय धन, पुत्रादि ऋद्धि प्राप्त थाय तेथी सुख मळे ते पण क्रियानुं फल छे, अने तेथी अनुक्रमे कर्मनो नाश थाय माटे क्रियाकांडनी साफल्यताछे.

ज्ञानवादी—पुण्यथी शातावेदनीयकर्म बंधायछे अने तेनो भोग

भोगववा अवतार धारण करतां जन्म जरा मरणनां दुःख प्राप्त थायछे, अने अवतार धारण करतां पश्चात् ते भवमां वळी नवां कर्म बंधाय पण कर्म बंधनो पार आवे नहीं, ज्ञानथी कर्मनो नाश थायछे माटे तेनो स्वीकार करवो योग्यछे.

क्रियावादी—अमो क्रियाथी कर्मनो नाश मानीये छीए ते सयुक्त छे, उत्तम अवतार आव्या विना धर्मनां कार्य थइ शकतां नथी, पडिलेहण, प्रतिक्रमण, प्रभुपूजा, इत्यादि क्रियाओ पापनो नाश करे छे, अने नवीन कर्म प्रतिबंधकद्वारा आत्मा निर्मळ थतां मुक्तिनी प्राप्ति थायछे माटे क्रिया सफलछे.

ज्ञानवादी—धर्मनी क्रिया उत्तम कुळजन्म धनसंपत्ति आपनारीछे, पण तेथी कर्मनी वृद्धिछे. पडिलेहण, प्रतिक्रमण, प्रभुपूजा, पण कर्मनो नाश करी शकती नथी, जरा सूक्ष्मदृष्टिथी विचारो के—ज्ञान विना क्रिया करवाथी शुं फल थइ शके? **ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि, भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन** ज्ञान अग्नि सर्व कर्म बाळीने भस्मीभूत करे छे, माटे हठ कदाग्रह त्यागी, ज्ञान मुक्तिप्रद मानवुं ते योग्यछे.

क्रियावादी—क्रिया विना ज्ञाननी उत्पत्ति थती नथी, ज्ञाननो अभ्यास ज्ञानने उत्पन्न करेछे, प्रथमथी कंइ ज्ञान होतुं नथी. विद्याभ्यास करतां करतां ज्ञाननो प्रकाश थायछे, सारमां समजवानुं के ज्ञानाभ्यासरूप क्रियाथी ज्ञान उत्पन्न थायछे तो क्रियाथी कर्मनो नाश थाय एमां कंइ शंका नथी, माटे क्रियाथी कर्मनाश मानवो योग्यछे.

ज्ञानवादी—ज्ञान विना सर्वत्र अंधारुं, जे कर्मनो नाश करवानोछे ते कर्मनुं स्वरूप जाण्या विना कर्मनो नाश शी रीते थाय? चैत्रने मैत्र नामना पुरुषे कह्युं के, तारो चक्रवेग नामनो शत्रु

छे ते तने मारवा धारेछे, हवे जो चैत्रने चक्रवेग ओळखतो होय तो चैत्रनो घात करे, अन्यथा तेनो नाश करी शके नहीं. तेम दृष्टांतथी समजवानुं के–कर्मनो नाश करवो ते कर्मनुं ज्ञान थया विना वनतो नथी माटे ज्ञानथी कर्मनो नाश मानवो जोइए.

क्रियावादी–फक्त वस्तुनु ज्ञान थवा मात्रथी फलनी सिद्धि थती नथी, एक माणसने भोजन करवानुं ज्ञान थयुं पण भोजननो मुखमां प्रक्षेप करे चावे त्यारे तेनी उदरपूर्त्ति थाय अने क्षुधा मटे, माटे क्रियाज फलप्रद छे. ज्ञान तो जाणवा मात्रछे, जेम कोइ तारु (तरनार) जळमां तरवानुं जाणेछे किंतु जलमां प्रवेश करी हाथ पग हलावे नहीं तो वुडी जाय तेम कर्मनुं ज्ञान थतां कर्म नाशकारक क्रिया नहीं कराय तो कर्मनो नाश थतो नथी, परंतु क्रियाकरणथी कर्म नाश थायछे.

ज्ञानवादी–तमारुं कथन ठीकछे, किंतु ज्ञान विना वस्तुनुं यथातथ्य स्वरूप जाणी शकातुं नथी, तो पश्चात् ते आदरी शकातुं नथी, मोदक वनाववानुं जाणे अने ते भक्षण कर्याथी अमुक फायदो थायछे ते जाणी शकाय तो त्यार वाद करी शकाय, जे वस्तुनुं ज्ञान नथी ते वस्तुनी क्रिया शी रीते करी शकाय ?–दृष्टांत तरीके जाणो के–कोइ मनुष्यने वीजा मनुष्ये कह्युं के शास्त्रमां आकाशगामिनी विद्या कहीछे, तेनुं ज्ञान थाय तो आकाशमां उडी शकाय, त्यारे पेला मनुष्ये शास्त्रनी शोध करी आकाशगामिनी विद्या जाणी, त्यार वाद क्रिया करी आकाशमां गमन करवा लाग्यो. अत्र समजवानुं के आकाशगामिनी विद्यानुं ज्ञान थतां तेनी क्रिया थइ शके, माटे ज्ञाननी मुख्यताछे, ज्ञान विना कोइ क्रिया थइ शकती नथी

क्रियावादी—हे ज्ञानवादी ! तमो मूळ हेतुथी विरुद्ध उतरोछो, तमारे विचारवुं के—ज्यां ज्यां क्रियाछे त्यां अवश्य ज्ञान रहुं होयछे, ज्यां साकर त्यां साकरनो रस, ज्यां केरी त्यां तेनो रस अवश्य होयछे, तेम ज्यां क्रिया होयछे त्यां अवश्य ज्ञाननी अस्तिताछे, माटे ज्ञाने जाणतां क्रिया करती वखत पण गौणभावे ज्ञान होयछे, मुख्यरूपे क्रियाछे, अने क्रियाथी कर्मनो नाश थायछे माटे क्रिया तेज कर्मनाशकछे.

ज्ञानवादी—हे क्रियावादी तारुं वचन अयुक्तछे, ज्यां क्रिया होय त्यां ज्ञान होय एवी व्याप्ति नथी, फोनोग्राफ वाजींत्रमां क्रिया बोलवानीछे, पण ज्ञान नथी, आगगाडी (अग्निरथ) मां गमननी क्रियाछे पण ज्ञान नथी, माटे तारुं कथन असत्यछे, वळी जेना माटे तुं क्रिया करवानुं कहेछे ते आत्मा तो अंते सिद्धपणुं पामी अक्रिय थायछे, अने सिद्धमां क्रिया नथी, अक्रियछे, आतमाना घरनी क्रिया नथी, तो ते क्रिया निष्फलछे, सिद्धमां ज्ञानछे, अने ते तो आत्मानो गुणछे माटे ज्ञानथी मुक्तिछे एम जाण.

क्रियावादी—क्रिया आत्मा करेछे, माटे आत्मानीछे, शरीर कंइ क्रिया करतुं नथी माटे क्रिया प्रमाणीभूता कर्मक्षये जाणवी.

ज्ञानवादी—आत्मा कंइ फक्त एकलो क्रियाने करतो नथी, शरीरधारी आत्मा क्रिया करेछे, अने ज्यारे शरीरनो त्याग करी सिद्धपद पामेछे त्यारे क्रियापणुं टळेछे, आत्मा संसारमां कर्मयोगे सुख दुःख योगे त्रण प्रकारनी क्रिया करी शकेछे, व्यवहार नये क्रियानो कर्त्ता आत्माछे, निश्चयनयथी जोतां क्रियाकारक आत्मा नथी माटे आत्मानी क्रिया कही शकाय नहीं.

क्रियावादी—अग्नि लाकडाने बाळी भस्मीभूत करी स्वयमेव शान्त

(ओळखाइ) जायछे, तेम क्रिया पण कर्मने बाळी पोतानी मेळे नाश पामेछे, माटे क्रियाथी मुक्तिछे.

ज्ञानवादी—हे प्रियतम, जरा विचारशो तो मालुम पडशे के-क्रियाथी मुक्तिछे एवुं शाथी जाण्युं. उत्तरमां कहेवुं पडशे के ज्ञानथी, ज्ञान न होय तो क्रियाने जाणी शकाय नहीं, तो पछी शी रीते करी शकाय ? तमोए कह्युं के क्रियाथी मुक्ति छे आ वचन प्रलाप मात्रछे, देखो. प्रसन्नचंद्र राजर्षि ज्यारे सूर्यना सामी दृष्टि राखी ध्यान करता हता त्यारे ते कोइ क्रिया करता नहोता, अने ज्ञान ध्यानथी केवलज्ञान पाम्या, विचारो के त्यां कइ क्रिया करता हता, कंइ नहीं, भरतराजाए आरीसा (आदर्श) भुवनमां भावना भावतां भावतां केवलज्ञान उत्पन्न कर्युं, मरुदेवा माताए हस्ति उपर भावना भावतां केवलज्ञान उत्पन्न कर्युं त्यां कंइ क्रिया करी नथी, फक्त ज्ञानवडे कर्म खपावी केवलज्ञान पाम्या जीवो देखायछे, माटे ज्ञानछे तेज सत्यछे.

क्रियावादी—हे ज्ञानवादी तमोए प्रसन्नचंद्र राजर्षिनुं दृष्टान्त ज्ञाननी सिद्धिने अर्थे आप्युं, ते ज्ञानने सिद्ध नहीं करतां क्रियाने सिद्ध करेछे, प्रथम समजवुं के ध्यानछे ते क्रियारूपछे, ध्यानना चार प्रकारछे, आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान, ए चारमांथी प्रथमनां बे ध्यान दुर्गति अर्पेछे, काउस्सग्गमां प्रसन्नचंद्र ऋषिए प्रथम दुर्ध्यान ध्यातां नरक गति उपार्जन करी पश्चात् पश्चात्ताप पामी धर्मध्यानादि ध्यावतां कर्म खपावी केवलज्ञान पाम्या तेनुं कारण धर्मध्यान अने शुक्लध्यानरूप क्रियाछे, बार भावनाओ पण धर्मध्यानमां आवी; मरुदेवी माता अने भरतराजाए धर्मध्यानादि ध्यातां

केवलज्ञान पाम्युं, माटे ते पण क्रियाथीज, केवलज्ञान, मुक्ति आदि पाम्यांछे. श्री विजयलक्ष्मीसूरीजीए पण कह्युंछे के ध्यानक्रिया मनमां आणीजे, धर्म शुक्ल ध्यायीजेरे; इत्यादि, माटे क्रिया कर्म क्षय करीछे.

ज्ञानवादी–हे क्रियामां राचनार, हजी तुं पोतानो मत छोडतो नथी, मारा वचन उपर लक्ष आप, ज्ञान विना ध्यान थइ शकतुं नथी जेनामां ज्ञान छे ते ध्यान करी शके छे, जुओ भरतराजा. जेनामां ज्ञाननो सर्वथा अभावछे त्यां ध्याननो अभावछे, जुओ, घट जडछे तेमां ज्ञान नथी, जो, ध्याननुं ज्ञान न होय तो ध्यान शी रीते शके ? प्रथम ज्ञान अने पश्चात् क्रिया, वळी समजवुं के ज्ञान विना जरा पण क्रिया थइ शकती नथी, एक दिवसना जन्मेला वालकने पण स्तन पान प्रवृत्तिमां संस्कार बुद्धि कारण छे, सुख दुःखने पण जगावनार ज्ञानछे, ज्ञान रुपराजानी क्रिया दासीछे, माटे ज्ञानना हुकम प्रमाणे क्रिया थइ शकेछे, ज्ञानरूप राजाना करतां क्रिया दासी मोटी कहेवाय नहीं. ज्ञान देखतुंछे, अने क्रिया आंधळी छे, ज्ञान विना चारित्र नथी, ज्ञान विना वैराग्य थतो नथी, ज्ञान विना देव गुरु धर्मने ओळखी शकाता नथी, अरे विचारो तो खरा, ज्ञानथीज आत्मा पण ओळखाय छे, पण क्रिया ओळखी शकती नथी. ज्ञानथी बीजाना मननी वात जाणी शकाय छे, कोइ अंध पुरुष वनमां फरतो फरे किंतु अंधपणाथी–खाडामां चालतां पण पडी जाय, तेना सामो वाघ आवे तो कइ दिशा तरफ जवुं ते देखी शके नहीं, अने जो देखतो होत तो दुःखथी बचे माटे ज्ञान ते देखता पुरुष समान छे अने क्रिया आंधळा पुरुष समान छे.

कह्युं छे के-

ज्ञानी श्वासोश्वासमे, करे कर्मनो खेह;
पूर्वक्रोड वर्षां लगे, अज्ञाने करे तेह;
देश आराधक क्रिया कही, सर्व आराधक ज्ञान.

इत्यादि विचारी जोतां ज्ञानथी कर्म नाश पामे छे, वळी समकित पण ज्ञानथी उत्पन्न थाय छे, माटे ज्ञानना समान कोइ नथी. ज्ञान बे प्रकारे छे, १ व्यवहार ज्ञान, २ निश्चय ज्ञान. गणीत, व्याकरण,ज्योतिष्य, वैदक, नाटक सायन्स आदिनुं ज्ञान व्यवहार ज्ञानछे, एनाथी आत्मानुं हित एकांते थइ शकतुं नथी. षड्द्रव्य तेना द्रव्य गुण पर्याय सात नय,सप्तभंगी, स्याद्वादरीत्या आत्मानुं स्वरूप उपयोगे जाणवुं ते निश्चय ज्ञान छे,आत्मानुं स्वरूप ध्यावुं,व्यवहार अने निश्चयनयथी आत्मानुं स्वरूप जाणी आत्म स्वभावमां रमवुं तेनुं नाम निश्चय ज्ञान छे, ए ज्ञाननी प्राप्तिथी क्रोटी भवनां कर्म नाश पामे छे, माटे ते ज्ञान आदरणीय छे, ए ज्ञाननी प्राप्ति थतां पश्चात् राग द्वेषनो क्षय थाय छे, जे ज्ञानथी आत्मा परमात्म पद पामे ते ज्ञाननी प्राप्ति पूर्व पुण्ययोगे थाय छे, तेनुं नाम सम्यग् ज्ञान छे, ए निश्चय ज्ञाननुं सद्हेतु श्री सद्गुरु महाराज छे, तथा वीतराग शास्त्र छे, एनुं अवलंबन करवुं. वीतराग शास्त्र कथित सम्यग् क्रियानुं अवलंबन करवाथी कर्म क्षय थाय छे, क्रिया बे प्रकारनी छे १ शुभ क्रिया २ अशुभ क्रिया, जे क्रियाथी पुण्य थाय छे, ते शुभ क्रिया, व्यवहार नयथी आदरवा योग्य छे, जे क्रिया करवाथी पापार्जन थाय छे ते अशुभ क्रिया जाणवी. वीतराग भगवंते सम्यग् क्रिया शास्त्रमां प्ररुपी छे, ते सम्यग् क्रिया जाणवी.

सद्गुरु-सम्यग् ज्ञानथी सम्यग् क्रिया जाणी शकाय छे माटे

ज्ञान पूर्वक क्रिया लेखे छे, ज्ञान क्रिया विना पांगळुं छे, अने क्रिया आंधळी छे, ए बेनो संगम थतां मुक्ति पामी शकाय छे. श्री तीर्थंकर महाराजा त्रण ज्ञानना स्वामी छतां चारित्र अंगीकार करे छे, तपश्चर्या अंगीकार करे छे माटे क्रियानी जरुर छे, ज्ञान अने क्रियाथी मुक्ति छे, माटे शास्त्रमां कह्युं छे के–ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः ए सिद्धान्त वाक्यानुसार प्रवृत्ति करवी. मोक्षाभिलाषी भव्यात्माओने द्रव्यानुयोग ज्ञान अत्यंत उपकारी छे, सम्यग् ज्ञानथी बलिहारी छे. ज्ञानरूप सूर्योदय थतां मिथ्यात्व अंधकारनो नाश थाय छे. जेम जेम आत्म स्वरूपनुं विशेष ज्ञान थतुं जाय छे, तेम तेम क्रोध, मान, माया, लोभनी मंदता थती जाय छे. ज्ञानदशा थया विना जीवनी मुक्ति थती नथी, आत्मज्ञानथी मुक्ति थाय छे.

शुष्कज्ञानीनां लक्षण कहे छे.

" दुहा. "

वाक् पटुताए विद्वता, जन मन रंजन हेत;
पोथी पुस्तक वांचतो, शाश्वत पद क्युं लेत ॥१८॥
अहं बुद्धि अभिमानथी, यावत् परमां थाय ॥
तावत् ज्ञानी को नहीं, पामे नहि शिव ठाय ॥१९॥

भावार्थ–मनुष्योनां मन खुशी करवाने माटे वाणीना वाचाल पणामां जेनी विद्वता समायी छे, एवो शुष्क ज्ञानी पोथी पुस्तक वांचतो छतो अने परने उपदेश आपतो छतो मुक्ति पद पामे नहीं, लोकोमां मारी विद्वत्ता दर्शाववी, लोको मारी प्रशंसा करे अने हुं जगत्मां प्रसिद्ध थाउं आ प्रकारनी इच्छाथी जे ज्ञाननां पुस्तको भणे छे, व्याख्यान वांचे छे, तेवा पुरुषो मुक्तिपद पामी शकता नथी, आत्मभावे ज्ञान परिणमतां परमात्मपदमय आत्मा बने छे.

श्रावकथी व्याख्यान वांची शकाय नहीं, कारण के ते संसारमां राची माची विषयसुख भोगवतो संसार असार जाणीने पण पडी रह्यो छे, अहंकारबुद्धिथी परमां अहंपणानी बुद्धि थायछे, हुं मोटो आ सर्व मारुं, मारा समान दुनियामां कोण विद्वान छे ? एवा विचार थायछे त्यां सुधी निश्चयज्ञानीपणुं नथी, शुष्क ज्ञानीपणुं जाणवुं, एवा शुष्कज्ञानी परमात्मस्वरूप तरफ लक्ष आपता नथी अने बहिरात्मपणुं धारी मुक्ति स्थान पामता नथी.

आत्मज्ञानीनुं लक्षण कहे छे.

" दुहा. "

वैराग्यादिक गुण वृंद, आतममां प्रगटाय;
समभावे निरखे सदा, परमातम पद पाय. ॥२०॥

भावार्थ—वैराग्य, संवेग, समता, सहनशीलता, निर्लोभता, आदि गुण समूह आत्मामां प्रगटावे अने गुणधारकआत्मा, शमभावे शत्रुमित्र, कंचन, उपल, निंदक, वंदकादिने देखे, त्यारे परमात्म पदनी प्राप्ति थायछे.

" दुहा. "

त्याग विराग विना कदी, थाय न आतम ज्ञान;
आतम ज्ञान विना कदी, पामें नहि शिव ठाण ॥२१॥

भावार्थ—संसारबंधनभूतपुत्रस्त्रीधनादिकना ममत्वरूप त्याग विना अने वैराग्य विना आत्मज्ञान थतुं नथी, अने आत्मज्ञान विना शिवस्थाननी प्राप्ति नथी, सारांशके—संसारनी मोहजालनो त्याग अने तिव्रस्थिरज्ञान वैराग्यथी सद्गुरु उपदेशद्वारा आत्मस्वरूप समजी आत्मस्वरूपमां लीन थायछे, आत्मज्ञानीओने अमुकमां अमुक दोषछे, अमुक क्रोधीछे, अमुक मारो शत्रुछे, आवी

भावना थती नथी, ते तो एमज विचारेछे के जीवनो कोइ शत्रु मित्र नथी, तेम संबंधी पण नथी, पारकी निंदा करवी तेमां मने कंइ फायदो नथी, आत्मज्ञानीओ तो एम विचारेछे के–सर्व जीव कर्मना वशे जुदी जुदी सारी नठारी आचरणा करेछे, तेमां हुं सर्वना आत्मानी निंदा करुं के शरीरोनी निंदा करुं, अलबत विवेकथी विचारतां कोइ पण निंदाने पात्र नथी, ज्यां सुधी मनमां निंदा करवानी बुद्धि थायछे त्यां सुधी कोइ अपेक्षाए धर्मी नथी, तेम परनी निंदा करतो साधु वा श्रावक होय तो पण ते चंडाल समान मनोवृत्तिथी जाणवो, शुष्कज्ञानी मुखथी आ संसार असारछे एम मुखथी पोकारेछे, पण संसारमां आसक्ति राखी भवभ्रमण करेछे, शुष्कज्ञानी चारित्र अंगीकार करी शकतो नथी, केटलाक श्रावको उपरथी त्याग विराग देखाडी संसारमां शुकरनी पेठे आसक्ति धारण करेछे तेम ज्ञाननुं फल विरति पाम्या विना स्वजन्म निष्फल गुमावेछे. केटलाक जीवो उपरचोटीया वैराग्यथी दीक्षा अंगीकार करी पूजा माननी लालचे गच्छमतना कदाग्रहे नड्या छता आत्मस्वरूपना ज्ञान विना वहिरात्मपद पामता परस्पर एक बीजानी निंदा करी टोळुं भेगुं करवानी बुद्धिथी, व्याकरण, न्याय आदि अभ्यास करी एक बीजानुं खंडन मंडन करेछे तेवा साधुओ आत्मज्ञान पामी शकता नथी पण जे साधुओना हृदयमां संसारनी असारता वसी रहेलीछे, अने शांत मुखाकृतिथी विचरेछे, सद्गुरुनुं तथा गीतार्थ साधुनी संगति करेछे ते आत्मज्ञान पामी कर्म क्षय करी मुक्तिपद पामेछे, संसारमां वसतां त्याग विरागपणुं पामवुं मुश्केलछे, त्यागी अने वैरागीपणुं अध्यात्म दशावाळा मुनिवरो पामी शकेछे, अने आत्मामां अनंत सुख अनादि कालथी तिरोभावे रह्युंछे, ते पण आत्मानुभवी भव्यो जाणेछे, काया मा-

याने आत्माथकी भिन्न जाणे ते पुरुषो तेनो त्याग करी शकेछे, संसार बळता अग्नि समान छे, संसारनां दरेक कार्यो उपाधिमय छे, संसारनी उपाधिमां वसतां आत्मानुं ध्यान थइ शकतुं नथी, माटे संसारी उपाधि त्यागी सद्गुरु उपदेश सांभळवो के जेथी वैराग्य प्राप्त थाय, अने वैराग्य प्राप्त थतां गुरु महाराजने पूछी आत्मानुं स्वरूप ओळखवुं, अने ते आत्मस्वरूप जाणतां तेनुं ध्यान धरतां कर्मनो नाश थायछे, माटे आत्मस्वरूपाभिलाषिओए त्याग अने वैराग्यनी प्राप्ति माटे प्रयत्न करवो.

" दुहा "

योग्य होय ते आदरे, हठ कदाग्रह त्याग;
वैराग्ये मन वासियुं, तस परमातम राग. ॥२२॥

भावार्थ—आत्मतत्त्व तथा तेनी प्राप्तिना अव्यभिचारी हेतुओने भव्यात्मा अंगीकार करे आत्मतत्त्व जेनाथी पामी शकाय नहीं एवां साधनोमां हठ कदाग्रहपणानी बुद्धिनो त्याग होय, सद्गुरु महाराजा भव्यात्माओनी विचित्र प्रकृति जोइ जे साधनथी जेने फायदो थाय ते साधन व्रतादि तेने अंगीकार करावे, त्यारे अतिशय प्रेमभक्तिथी गुरु वाक्यने शिष्य अंगीकार करे, आत्मार्थी जीव भवभयथी बीक पामतो विचारे के—जो दुर्लभ मनुष्यावतार पामी स्वछंदाचारीपणे वर्तीश तो अनंत भवभ्रमण करवां पडशे माटे गुरुनी आज्ञा मस्तके धारी मत कदाग्रहनो त्याग करे अने संसारनी अनित्यता विचारे—कर्मनुं स्वरूप सूक्ष्मदृष्टिथी विचारी सारांश ग्रहे के—आ जगत्मां सम्यग्धर्मथी आत्महित छे, एम चिंतन करी जळपंकजवत् संसारभावथी न्यारो रहे, तेवा भव्यात्माओने परमात्मपदनो राग थाय किंतु संसारमां विष्टा शुकरवत् अहर्निश

विवेकथी शून्य हृदयवाळा, अने परवस्तुने पोतानी मानी हर्ष शोक धारण करनारा रागांधबहिरात्मीयोने परमात्मपदनो राग थतो नथी, वैरागी, त्यागी, मत कदाग्रहवर्जित जीवो परमात्मपदपामी शके छे. आ आत्मार्थीनुं लक्षण छे.

" दुहा. "

समकित जेणे अर्पियुं, ते मोटा गुरु देव;
निमित्त गुरु ते आतमना, कीजे तेहनी सेव. ॥२३॥
त्यां त्यां गुरुनी बुद्धिथी, भटके जाणे रोझ;
गुरु गुरु शी वस्तु छे, नहीं करतो तस खोज ॥२४॥
धोळुं तेटलुं दुध एम, तेवी गुरुमां बुद्धि;
गुरुबुद्धि सर्वत्र जास; तस नहि आतम शुद्धि ॥२५॥
सेवे सद्गुरु प्रेमथी, चरणकमल आधीन;
पामे ते परमार्थने, थावे शिवसुखलीन. ॥२६॥
सद्गुरु सम कोनो नही, भवमांहि उपकार;
कामकुंभश्रीसद्गुरु, भवजल तारण हार ॥२७॥
प्रत्यक्ष उपकारी गुरु, परोक्ष जिनवर होय;
एहवी बुद्धि प्रगटतां, धर्म योग्यता सोय. ॥२८॥
गुरुश्रद्धाभक्ति विना, लागे नहीं उपदेश;
भणवुं सुणवुं शास्त्रनुं, ते पण हेतु क्लेश. ॥२९॥
सद्गुरु वचनामृत विना, तत्त्वस्वरूप न पाय;
सद्गुरु सेवंतां थकां, समकितरत्न ग्रहाय. ॥३०॥

तारक बुध्धिथी गुरु, कथन करे उपदेश;
श्रध्धा भक्तिथी सुणी, आदर करो विशेष. ॥३१॥

भावार्थ—अनंतकरूणायोगे केवलपरमार्थबुद्धिथी अनंत भव दुःखवल्लिछेदककुठारसदृश धर्ममूलभूतसमकित रूप रत्न जे सद्गुरुए अर्पण कर्युं ते गुरु मोटा देव समानछे, देव गुरु धर्मनी श्रद्धाथी समकित आत्मामां उत्पन्न थायछे, देव वीतराग अष्टादश दूषण रहीत होय तेने स्वीकारवा.

यतः जिनेन्द्रो देवता स्तत्र, राग द्वेष विवर्जितः
हतमोहमहामल्लः, केवलज्ञानदर्शनः ॥१॥
सुरासुरेंद्रसंपूज्य, सद्भूतार्थप्रकाशकः
कृत्स्नकर्मक्षयं कृत्वा, संप्राप्तं परमं पदं ॥२॥
जीवाजीवौ तथा पुण्यं, पापमाश्रवसंवरौ;
बंधोविनिर्जरामोक्षौ, नवतत्त्वानि तन्मते. ॥३॥
तत्र ज्ञानादिधर्मेभ्यो, भिन्नाभिन्नविवर्त्तिमान्
कर्म शुभाशुभं कर्त्ता, भोक्ता कर्मफलस्य च ॥४॥
चैतन्यलक्षणो जीवो, यश्चैतद्र विपरीतवान् ॥
अजीवःसः समाख्यातः पुण्यं सत्कर्मपुद्गलाः ॥५॥

इत्यादि

वीतराग शासनमां जिनेन्द्र भगवान् देवछे, ते राग द्वेष रहित छे, जेणे मोहरुप महामल्लनो सर्वथा नाश कर्योछे, अने जेमने केवल ज्ञान अने केवलदर्शन साकार निराकार उपयोग तरीके भास्यांछे, वैमानिक अने भूवनपति आदिना चोसठ इंद्रोवडे जेनां चरण कमळ

जायांछे, एवा वीतराग देव जाणवा, वळी तीर्थंकर देव त्रिभुव-
नवर्त्ति धर्मास्तिकायादिक षड्द्रव्योना गुण पर्याय आदि सत्य प-
दार्थोना प्रकाशकछे, जेवुं जगत्नुं स्वरूपछे तेवुं तेमणे केवलज्ञाने
प्रकाश्युंछे. असत्य जल्पननुं तेमने कंइ प्रयोजन नथी, दयालु अने
उपकारीपणाने लीधे सत्य तत्त्वनी प्ररुपणा करीछे, भरत, ऐरवत
अने महाविदेह क्षेत्रमां तीर्थंकरोनी उत्पत्ति थायछे वीश स्थानक-
मांनुं गमे ते स्थानक उत्कृष्ट परिणामयोगे आराधवाथी त्रिभुवन
आराध्य तीर्थंकरनामकर्म बंधायछे, अनादिकालसंगी रागद्वेष
स्वरूप महामल्ल शत्रुनो जेणे सर्वथा नाश, स्वशुद्धआत्मिकपरि-
णामथी कर्योछे. एवा तीर्थंकर महाराजाने चोत्रीश अतिशय अनु-
क्रमे उत्पन्न थायछे, स्वआचार कल्प अने भक्तिभरथी गमन करी
प्रभुनी प्रभुता दर्शाववा माटे चतुर्निकायना देवता देवीओ प्रभुने
लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान अने केवलदर्शन उत्पन्न थतां अ-
लौकिक विचित्र मनहर देवताइ अष्टमहाप्रातिहार्य युक्त समवसरण
नी रचना करेछे ते उपर बाह्य अने अंतर्लक्ष्मीवडे सुशोभीत त्रिज-
गतारक तरणि, पांत्रीस वाणीगुणधारक, परमपूज्य परमपवित्र
त्रयोदश गुणस्थानवर्ति श्री देवाधिदेव तीर्थंकर महाराजा वचना-
तिशये युक्त देवता मनुष्यतिर्यंचोत्पन्न वार पर्षद अग्रे मधुर ध्वनि-
थी बहिरात्मा, अंतरात्मा, परमात्मास्वरूप तेमज देवगुरू धर्म अने
नवतत्त्व, षड्द्रव्यनुं स्वरूप, भव्योना कल्याणार्थे प्रकाशेछे, अने
देशनान्ते साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूपचतुर्विधसंघनी
स्थापना करेछे, तेमां सर्वथी मुख्य चतुर्विध संघमां मुनिराज छे,
धर्मनी अपेक्षाए संघछे, वीतराग आज्ञा मुजब ज्यां प्रवर्तन नथी,
ते संघ कहेवाय नहीं, मोहजनितभ्रमणाए केटलाक श्रावकना कू-
ळमां उत्पन्न थइ श्रावको साधु साध्वी विना श्रावक वर्गनेज संघ

तरीके अज्ञानथी गणेछे, ए वर्तन वीतरागशास्त्रथकी विरुद्धछे, साधुना सत्तावीस अने श्रावकना एकवीस गुण मळी अडताळीश गुणयुक्त संघ कहेवाय छे. ज्ञान दर्शन चारित्रथी भिन्नाभिन्न अने व्यवहारनयथी शुभाशुभ कर्मनो कर्ता तथा भोक्ता, चैतन्यलक्षण युक्तजीवतत्त्वनी प्ररुपणा तीर्थंकरे करीछे. जीवथी विपरीत अजीवतत्त्वनु प्ररूपण तेमने कर्युंछे, एम नव तत्त्वनुं प्ररूपण कर्त्ता वीतराग देवछे, आयुष्य मर्यादा पर्यंत पृथ्वीतल पावन करी अघातीयां कर्म खपावी अशरीरी अनामी थइ सिद्धस्थानमां पहोंची सादि अनंति स्थिति अजरामर पद भोगवेछे, एवा देवने देव तरीके मानवा, वीतराग आज्ञाधारक पंचाचार, पंचमहाव्रत आराधक गुरुने गुरु तरीके स्वीकारवा, वीतरागकथीतमोक्षमार्ग स्वरूप धर्मने धर्मरुपे स्वीकारवो, आ त्रण तत्त्वनी श्रद्धा गुरु महाराजना उपदेशथी थायछे, माटे गुरु महाराज समकितदायक प्रबल निमित्त कारणछे, तेमनेज गुरु तरीके सदा स्वीकारी तेमनी आज्ञानुसार चालवुं. विवेकशून्य अज्ञानवासीत चित्तवाळो मूढपुरुष परमार्थबुद्धिहीन जेटलुं प्रवाही धोळुं तेटलुं दुग्ध एवी अज्ञानताथी रोज पशुनी पेठे सर्व मुंडोमां, सर्व धर्मोपदेशकोमां गुरुबुद्धि धारण करेछे ते अज्ञानी स्वआत्मशुद्धि करी शकतो नथी अने भविष्यत् काले सद्गुरुश्रद्धा विना करशे पण नहीं, आत्मतत्त्वज्ञ, अध्यात्मोपयोगी गुरुनुं आलंबन अनादिकालसंलग्नअज्ञाननो नाश करेछे, सहजानंदी आत्मानुभव मंदिरमां म्हालनार गुरु महाराज प्रत्यक्ष मारा उपकारीछे, अने जिनेश्वर परोक्ष उपकारीछे, एम विवेकदृष्टि जेने प्रत्यक्ष थइ छे ते धर्म पामी शकेछे, गुरु श्रद्धा अने शुद्धान्तःकरणथी गुरु भक्ति करवाथी तेमनो उपकार भव्यात्माने लागेछे, अने श्रद्धा भक्ति विना उपदेश लागतो नथी, गुरुनी आज्ञा

विना स्वयमेव शास्त्र वांचे तो पण यथायोग्य तत्व तेना हृदयमां परिणमे नहीं, अने विपरीत परिणमे तो अपथ्यसेवननी इव उपदेश निष्फल थाय.

परमार्थथी जोतां तारक बुद्धिथी गुरुराज उपदेश अर्पेछे, ते उपदेश विनयथी अति हर्षे श्रवण करी आदरवा योग्य आदरो, अने त्याज्यने त्यागो. सुगुरुमां गुरुबुद्धि थया विना उपदेश कंइ असर करी शकशे नहीं, ए निश्चय जाणवुं. अने गुरुए जिज्ञासु अने श्रद्धालुने उपदेश आपवो, पात्र विना उपदेश लागतो नथी.

अज्ञानी मूढ मत कदाग्रही कुगुरुओनी संगतिथी जे लोकोनी बुद्धि विपरीतपणे परिणमीछे, तेमने उपदेशथी असर क्वचित् थाय छे, खारी भूमिमां पतितजलनी जेम निष्फलताछे, तेम खल भवाभिनंदी जीवोने उपदेशनी पण निष्फळताछे, जेनां नीचे लख्या प्रमाणे लक्षण होय तेने उपदेश देवो योग्यछे.

१ संसारनी अनित्यताए वासित चित्त होय.

२ हुं कोणछुं? क्याथी आव्यो? क्यां जइश? शुं मारे कर्तव्यछे?

३ हुं ते कोण ? हुं अने मारुं ते शुं ? ए जाणतो होय अथवा जाणवानी जिज्ञासा होय.

४ भवनो भय लागे एटले जन्म जरा मृत्युथी व्याप्तसंसार बळताअग्नि समान छे तेमां पडीश तो वळी मरीश एवो जेने भय होय.

५ गुरु महाराजनी वाणी उपर पूर्ण विश्वास होय तेम प्रीति होय.

६ सत्य अने असत्यने समजी शकतो होय अने कदाग्रही न होय.

७ गुरु महाराजना कथनानुसार प्रवर्तनार होय.

८ कपट वृत्ति जेने होय नहीं, अने सदाचार प्रवृत्तियुक्त होय.

९ लोकविरुद्धनो त्याग करनार होय.

१० विनेय होय अने गुरुनी श्रद्धा सहीत सेवामां तत्पर होय.

इत्यादि लक्षणो जेनामां होय ते उपदेश ग्रहनार उत्तम पात्रभूत श्रावक वा मुनिपणे पण शिष्यो जाणवा.

नीचेनां लक्षणवाळाओने उपदेश लागी शकतो नथी.

गाथा.

रत्तो दुठो मूढो--पुव्विवुग्गाहिओअ चत्तारि
उवएसस्स अणरिहा अहवासएहिं परिभुज्जंति ॥१॥

१ संसारनेज सार मानी तेमां अत्यासक्ति धरनार.

२ हुं कोण छुं ? मारे शुं कर्तव्य छे ? तेनो पण जेने विचार थाय नहीं.

३ पापनां कार्यो करतां भय पामे नहीं,

४ जीवोनो घात करनार धूर्त शठ मूर्खपणुं जेनामां होय,

५ गुरुना दोषो जोनार, तेमनी निंदा करनार अने गुरुनी श्रद्धा तथा गुरुनो विनय बहुमानरहीत होय.

६ गुरुमहाराजनी वाणी उपर विश्वास, श्रद्धा, तेमज तेमना उपर प्रीतिरहीत होय.

७ कुगुरु अने सुगुरुनी परीक्षा करवानी जेनामां बुद्धि न होय.

८ कपटी, व्यसनी, तेमज निंदक होय,

९ कुगुरुना फंदामां फसाएल होय अने दृष्टिरागी होय.

१० जेनुं स्थिर चित्त न होय, जेम भमावे तेम भमे, विवेकशून्य हृदय होय.

११ गुरु करतां पोताने मोटो माननार, अने पोतानो कक्को खरो माननार होय.

१२ उपदेश समजे नहीं अने गुरु उपर द्वेष करे.

१३ अविनयी होय.

इत्यादि लक्षणयुक्त जीवो होय ते उपदेश देवाने योग्य नथी, तथापि गुरुसंगतिथी तेवा जीवोने पण लाभ मळे, एकांत नथी, आत्मज्ञानी गुरु महाराज अवसरना जाणछे, माटे स्वपर लाभार्थे प्रवृत्ति करेछे, योग्य लागे तो उपदेश आपे अने अयोग्य लागे तो उपदेश आपे नहीं, मौन धारण करे, ज्ञान, दर्शन, चारित्र वीर्यादि गुणोमां ध्यानथी प्रवर्ते, सद्गुरु महाराजा सदा स्वतंत्र आत्मोपयोगपणे वर्तेछे, धर्मध्यान अने शुक्लध्यानना योगे आत्मा परमानंद स्वरूपमां रमण करी तत्पद प्राप्त करे एम गुरुनी प्रवृत्तिछे, एवा गुरुनी आज्ञासह वर्तवुं.

" दुहा. "

त्याज्यने त्यागी ज्ञानथी, उपादेयशुं हेत;
करता हरता कर्मने, शाश्वत पद झट लेत. ३२

द्रव्यकर्म ने भावकर्म, तेनो करी परिहार;
समता संगे झीलतां, लहीए भवजल पार. ३३

स्वच्छंदाचारीपणुं, रोकी सद्गुरु सेव;
गुर्वाधीन मनडुं करी, पामो शाश्वत मेव. ३४

धन्वंतरिसमसद्गुरु, कर्ता कर्मनो नाश;
उत्तम वैद्यनी उपमा, तेना थइए दास. ३५

मूळ विना नहि वृक्ष जग, गुरुगम वण क्यां ज्ञान;
वांचो पोथी पत्र पण, नहीं टळे अज्ञान. ३६
भणवुं गणवुं मानथी, जन मन रंजन काज;
आत्मलक्ष्यना ध्यान विण, लहे न शिव साम्राज्य. ३७
क्रिया कांड कपटे करी, करतो रंजे लोक;
शुष्कज्ञान पण एकलुं, जाणो भविजन फोक. ३८
लाभालाभे सुख दुःख, शत्रु मित्र सम भाव;
उदासीनता चित्तमां, भवसागरमां नाव. ३९
निंदो निंदक नेहथी, पूजो पूजक कोइ;
धूर्तो कहेशे ढोंगीए, समभावे सब जोइ. ४०
अंतर्दृष्टिगुणतणी, आतममांही अनुप;
बांठा बहु बोले सुणी, मनमां राखी चुप. ४१

भावार्थ-ज्ञानथी त्याज्य वस्तुने त्यागी आदरवा योग्य वस्तु स्वरूपज्ञानाधार आत्मा प्रति प्रीति अंतरात्मायोगे उत्पन्न थइ छे एवा मुनिवरो आत्मानी साथे एकतानथी प्रीति करता छता कर्मनो नाश करी झटिति सिद्धि सौधमां प्रवेशे छे, हे आत्मा जेना योगे तारी अशुद्ध परिणति थइछे, एवुं द्रव्यकर्म अने भावकर्मने स्वतः शुद्धपरिणतिथी असंख्यातप्रदेशथी दूरकर, समताश्रीनी साथे ध्यान रूप सरोवरमां क्रीडा करतां तुं भवपाथोधि सहेजे उतरी मुक्तिनगर प्राप्त करीश, एम मुनिराज ध्यानमां भावे, अष्टकर्मनो आत्मानी साथे जे बंध तेने द्रव्यकर्म कहे छे, अने राग द्वेषनी परिणातिने भावकर्म कहेछे, आत्मस्वरूपमां रमणता करवाथी द्रव्य-

कर्म अने भावकर्मनो नाश थायछे.

हे शिष्य तुं परमात्मपदनी अभिलाषा राखतो होय तो स्व-च्छंदताचारीयपणुं टाळी गुरुना आधीन मन करी सद्गुरुनुं सेवन कर के जेथी शाश्वतपद पामीश, कर्मरोगनो नाश करणार्थम् गुरु धन्वंतरी वैद्य समान छे, तेमना दास थइएतो कर्मनो नाश थाय, वैद्य विना दवाओ पोताने फायदाकारक थती नथी, तेम गुरुनी आज्ञा प्रीति विना गमे तेटलां सद्व्रतो धारण करीए तो पण यथा-योग्य आत्महित थतुं नथी.

मूळ विन वृक्ष क्यां ? अने गुरुगम वण आत्मज्ञान क्यां ? श्रावक वर्ग अविद्या तथा अविनयना योगे स्वयंगुरु बनी ज्ञानी गुरुनी अपेक्षा राख्या विना पोथी पुस्तक वांचे पण ते ज्ञान सत्य-ज्ञान तरीके थशे नहीं, पोतानी मेळे वांचेला ज्ञानथी वैराग्यादि गुणो जोइएतेवा प्राप्त थशे नहीं अने शंकादि दोषोनुं निराकरण थशे नहीं. मुनिवर्गने पण गुरुगमद्वारा विनयभक्ति बहु मानथी ज्ञान ग्रहवुं योग्य छे, अने तदर्थम् योगवहनादिनुं शास्त्रमां अनंत ज्ञानी वीतराग भदंते भव्यात्माओना हितार्थे प्ररूपण कर्युं छे.

मानथी पूजावाना अर्थे जनमन रंजनार्थम् विद्याभ्यास करवो, शास्त्र वांचवां इत्यादि सर्व मोक्षहेतुभूत कार्य नथी, आत्माना हितने माटे भणवुं, गणवुं, वांचवुं, इत्यादि शुद्ध परिणाम थयो नथी त्यां सुधी शिव साम्राज्य पामी शकातुं नथी. बाह्याडंबरी क्रिया-कांडना कपटथी देशोदेश विचरतो छतो मनुष्योने रंजे ते पण आत्मलक्ष्यना उपयोग विना व्यर्थ छे तेमज क्रियाने नहीं मान-नार, व्रतादिनो खप नहीं करनार जेने सत्यज्ञान थयुं नथी एवा वाक्पटुताथीज पंडित पद धारण करनार शुष्कज्ञानीनुं एकलुं ज्ञान पण आत्महित प्रति थतुं नथी.

लाभ, अलाभ, सुख, दुःख, शत्रु, मित्र, जीवितव्य, मरण आदि प्राप्त थतां जेनुं समचित्त छे अने सांसारिक पदार्थो प्रति उदासीनता जेना हृदयमां वर्तेछे एवा सद्गुरुमुनिवर संसारुप समुद्रमां नाव समानछे.

निंदक खुशीथी (वेलाशक) एवा मुनिवरनी निंदा करो, अने पूजक भावथी भले पूजो, धूर्त्तो भले ढोंगी कहे, पण एवा महात्मा सर्वने समभावे निरखे छे. बीजाना भला भुंडा कहे तेमां पोताने शुं ?

ज्ञानिगुरुमहाराजा आत्मानी गुणसृष्टि अंतर्दृष्टि योगे नीहाळी प्रमुदित थायछे, आत्माना असंख्यातप्रदेशोछे, एकेक प्रदेशे अनंत ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्यादि गुणो सदा शाश्वत भावे रह्याछे, वळी आत्मा पोताना स्वरूपे रूपीछे, पुद्गलनी अपेक्षाए अरूपीछे, ज्ञानरूप उपयोगनी अपेक्षाए साकारछे, दर्शनरूप उपयोगनी अपेक्षाए निराकारछे, वळी शाश्वत आत्मामां उत्पादव्यय अने ध्रुव समये समये वर्तेछे, वळी आत्मामां स्थित अगुरुलघु षड्गुणहानि वृद्धि करेछे, ए आत्मा पुद्गल द्रव्य साथे मिलेछे तोपण ते थकी न्यारोछे, अनंत ऋद्धिनो भोक्ता मारा आत्मा विना परद्रव्यनी साथे मारे कंइ संबंध नथी, मारो आत्मा कर्मे अवरायोछे, पण ते गुणो मारा नष्ट थया नथी, मारा आत्माना गुणोने उपमा आपवी व्यर्थछे, अहो हुं आत्मा अखंडछुं, सर्व पदार्थनो हुं समये समये ज्ञाता छुं, त्रण भुवनमां एवो कोइ पदार्थ नथी के माराथी अजाण्यो होय, हुं प्रकाशकछुं, अन्य द्रव्य प्रकाश्यछे, ज्ञाता अज्ञाता ए हुं जाणुंछुं, पण तेथी हुं न्यारो छुं, मारुं स्वरूप वाच्यावाच्य वैखरी भाषाथी छे, मारा अनंता गुणोछे तो हवे मारे परभावमां रमणता केम करवी ? एम विचारी आत्माना गुणो तरफ

पोतानी दृष्टि दीधीछे, जेणे एवा मुनिश्वरनुं शरण थाओ. एवा मुनिवरो आत्मध्यान ध्याता आपस्वभावमां विचरेछे, बकवादीओना धतींगो सांभळी मौन धारण करी सद्गुरुओ विचरे छे, कुगुरुरूप विषधरोनी कुदेशनारुप विषज्वालाथी अज्ञान सर्व मनुष्यो प्रायः मुंझाइ गयाछे, कोइ विरला आसन्न कालमां सिद्धिपद पामनारा महात्मओ वा तेमना अनुयायी शिष्यो सम्यग्मार्गे गमन करेछे.

" दुहा. "

नाटकियानी पेठ ज्यां, धर्मतणो उपदेश;
अंतर्दृष्टि ज्यां नहीं, तेनो मिथ्या वेष. ४२

अहो दुःषम कलिकालमां, विरला सुभगुरु जोय;
बाकी फुट्यो राफडो, सर्पतणो अवलोय; ४३

द्वेष गच्छ ममता ग्रही, वळी कदाग्रह चित्त;
मतमतांतरमां पड्या, दुर्गतिनारीमित्त. ४४

भावार्थ—अंतर्दृष्टिना उपयोग विना नाटकीयानी पेठे ज्यां धर्मनो उपदेश साधुनाम धरावी आपेछे तेनो वेष मिथ्याछे.

पंचविष ज्यां भेगां मळ्यांछे एवा आ कलिकालमां विरला शुद्ध मुनियो होयछे, बाकी लौकिक अने लोकोत्तर कुगुरुओनो जाणे राफडो फुट्यो होय अने सर्पो फाटी नीकळे तेनी पेठे फाटी नीकळ्याछे.

वेषनी ममता, गच्छनी ममता वळी कोइ प्रकारनो मनमां कदाग्रह राखी जे साधु राग द्वेषना उदये मतमतांतरमां रक्त थया छता, शुद्ध प्ररुपणा भूली पोतानी पुष्टिने माटे मोहांध बनी आत्मस्वरूपनुं भान भूली परभावमां राचेछे, माचेछे तेवा कुगुरुओ दुर्गति नारीना मित्र जाणवा.

"दुहा."

जलधि भरती ओटमांही, मत्स्यो आकुल थाय;
तीरे आवे प्राण नाश, गच्छतणो ए न्याय. ४५
शरीरपर ममता नहीं, करे शुं तेने देह;
गच्छ वस्यो व्यवहारथी, अंतर्गुण गण गेह. ४६

भावार्थ—समुद्रमां ज्यारे भरती ओट आवेछे, त्यारे जलप्रवाहना जोरथी मत्स्यो आकुल व्याकुल थायछे, तेमांथी कोइ कंटालीने कांठे आवेछे, भरती उतरी जातां जल विना तरफडी मरण पामेछे, वा धीवरो तेने पकडी लेछे, अने दुःखभागी थायछे, तेम गच्छ सिंघाडामां वसतो कोइ मुनि, आवी केवल आत्मनी वात सांभळी एकाकी विचरेछे, तो ते आत्महित करी शकतो नथी, माटे गच्छमांहीं वसीने आत्मसाधन करवुं, वैरागी, त्यागी गीतार्थ ज्ञानी पोतानी योग्यताथी आत्मस्वरूपना ध्यान माटे एकल विहारी थाय तेनो एकांत निषेध नथी.

जे मुनिवरोने शरीरपरथी आत्मज्ञानना बलवडे ममताभाव उठी गयोछे, तो ते मुनिवरोने शरीर राग द्वेषनुं कारण थतुं नथी. तो पश्चात् व्यवहारथी गच्छमां वसेला तथा वसता एवा मुनियोने गच्छ उपर केम ममता थाय. अने केम गच्छ राग द्वेषनुं कारण थाय ? अलबत थाय नहीं. गच्छ एटले साधुनो समुदाय, समूह, तेमां ज्ञानीने केम मोह थाय ? अने अज्ञानी तो गच्छनो स्वीकार करे नहीं, तो पण शरीरपर ममता धारण करे. ज्ञानना अभावे संवरनां कारणो पण अज्ञानीने आश्रवरूपे परिणमेछे. जेनाथी बंधायछे, तेनाथी ज्ञानी छुटेछे, माटे ज्ञानी गुरु महाराजा अंतरमांथी संसार खेलथकी न्यारा रही वर्तेछे, ज्ञानिको भोग

सवी निर्जराको हेतुहे—ज्ञानी भोग करे तो पण तेथी निर्जरा थायछे. ज्ञानीने कोइना प्रतिबंध नथी, राग द्वेषनुं जे कारण लागे तेनाथी दूर रही आत्मध्यान करेछे. श्री यशोविजयजी प्रमुख सुगुरुओ जाणवा.

कपटी मुनिनुं लक्षण कहे छे.

" दुहा. "

मनभीतरनी ओरने, वर्ते बाहिर ओर;
कहेणी रेहेणी सम नहीं, ए पण चउटा चोर. ४७

मनमां कंइ अने बाहिर आचरण कंइ कहेणी प्रमाणे रेहेणी न होय, श्रावनी आजीजी करनार होय, कपटपणाथी वर्ते ते पण चउटानो चोर जाणवो, कदापि व्रतादि पाळी शकतो होय नहीं पण प्ररूपणा वीतरागमार्गना अनुसारे करे ते आराधक छे, पण कपटी तो विराधक छे.

" दुहा "

योग्य जाणतां खोलता, पेटी धर्म विशाल;
सेवो साचा दीलथी, सदगुरु महा कृपाल. ॥४८॥

ज्ञानी गुरु महाराजा योग्य जीव जाणीने धर्म रत्ननी पेटी मनोहर विशाळ खोले छे अने तेना आत्मानुं कल्याण करे छे, भव्योने उपदेश द्वारा मोक्ष मार्ग दर्शावे छे, अयोग्य मनुष्यनी आगळ मौन धारण करे छे, जे दृष्टिरागी न होय अने विनयी होय तेनी आगळ योग्यता प्रमाणे अवसरे उपदेश आपेछे, एक सरखो उपदेश प्रत्येक मनुष्यने परिणमतो नथी, माटे योग्यनेज उपदेश देवो, मेघनुं जल, सीप, झाड, सर्प आदिना मुखमां पड्युं

पतुं भिन्न भिन्न परिणमे छे तेम अत्र पण दृष्टांत जाणवुं.

कोइ एम कहेशे के-मुनिओए सर्वने उपदेश आपवो अने उपदेश आपवा माटे तो साधुपणुं अंगीकार कर्युं छे, अने न आपे तो अन्य कोण आपे ? तेने प्रत्युत्तरमां कहेवानुं के-जेम सेनापति लश्करी सिपाइने तरवार खेलतां मारतां शीखवे छे, पण जेनी योग्यता थइ नथी तेवां लघु बालकने कंइ हाथमां तरवार (खड्ग) आपतो नथी, ने आपे तो बाळकनो नाश थाय तेम ज्ञानी गुरु योग्यता जेने प्राप्त थइ छे तेने उपदेश आपे छे. उपदेशमां पण पात्रना आधारे फेरफार रहे छे, केटलाक स्थाने संसारमां राचेला माचेला श्रावको विरति धर्मना भाषणरूपे उपदेश आपे छे, पण तेमनुं वैराग्य त्याग विना सर्व अलेखे जाणवुं. गुरुना उपदेशथी जे वैराग्य थाय छे ते अन्यथी थतो नथी. पंचमारकमां श्री तीर्थंकरादिना अभावे तथा पंचविषना योगे योग्य जीवो अल्प जाणवा माटे हे भव्यात्माओ मोक्षनी प्राप्ति माटे निर्मळ मनथी सद्गुरुनुं शरण करो, अने ते फरमावे तेज श्रद्धाथी अंगीकार करशो तो परमपद पामशो.

"दुहा."

वने वने नहीं हस्तियो, युगे युगे नहि देव;
मुंड मुंड नाहि गुरुपणुं, जाणी सद्गुरु सेव. ४९

विषय भीख भोगी नहीं, ब्रह्मचारि गुणवंत;
कपट वृत्ति त्यागी सदा, नमुं सद्गुरु महंत. ५०

वन वन प्रति हस्तियो होता नथी, अने भरत ऐरवतनो प्रत्येक आरकमां कंइ तीर्थंकरोनी उत्पत्ति थती नथी, ते प्रमाणे मस्तक

मुंडावी रजोहरण मुहपत्ति झाली लीधेला गृहस्थ जेवामां सर्वमां कंइ गुरुपणुं होतुं नथी, जीव अजीवनुं स्वरूप जाणे नहीं अने दुःख-गर्भित वैराग्यथी साधुवेष ग्रहण करी राग द्वेषना फंदमां फसाय, हसे, तोफान करे, क्लेश करे ते सर्व कुगुरुओ जाणवा, जे महात्माओ विषयभिक्षाना भोगी नथी, ब्रह्मचारीछे, क्षमादि गुणवंतछे, अने कपटवृत्तिनो जेणे त्याग कर्योछे अने जे गाडरीयानी पेठे चालता नथी तेवा सद्गुरुने हुं पुनः पुनः नमस्कार करुंछुं, बाकी वेष धरवा मात्रथी शुं ? माटे परीक्षा करी आत्मतत्त्वना उपयोगी गुरुनुं शरण करवुं, एकगुरुनी आज्ञा प्रमाणे वर्त्तवुं, पतिव्रतानी पेठे माथे एक धर्मप्रद गुरु होय, एक गुरुनी भक्ति श्रद्धाथी शिष्यश्रावक सद्गुणधाम बनेछे, अनुभवथी जोतां एम जो न वर्त्ताय तो संपूर्ण धर्म पामी शकाय नहीं, कोइ गुरु कंइ कहे अने कोइ गुरु कंइ कहे, हवे बेमांथी कोनी आज्ञा मानवी, जेवो जोइए तेवो एकथी अधिक गुरुओपर भक्तिभाव, रहे नहीं, घणा पक्का अनुभवीओने आ वाक्य सत्य लागशे, नहीं लागे तेनुं भाग्य, बाकी अन्य सुसाधुओ मानवा पूजवा योग्यछे. तेमनी भक्ति करवी अने सदुपदेश सांभळवो. आ वात गुरुव्रत ग्रहणनी अपेक्षाएछे.

" दुहा "

धर्मरत्न जेथी मुदा, लहीयुं गुरु रसाळ;
शरण शरण तेनुं सदा, अवर म झंखो आळ ॥५१॥
भटकी गुरु गुरु वंदीया, शिर पटक्युं सोवार;
ज्यां त्यां माथुं नामियुं, लह्यो न किंचित् सार ॥५२॥

भावार्थ—जेनी पासेथी धर्मरत्न समजी समकित ग्रहण कर्युं, हर्षवडे ते गुरुनुं सदा मन वचन अने कायाए करी शरण अंगी-

कार करुंछुं, अने भव्यात्माओ करो, अन्य आळ पंपाळ झंखो नहीं.

कुगुरुओमां गुरुनी बुद्धि धारण करी वांद्या, तेमना चरणे शतवार शिश पटक्युं अने हराया ढोरनी पेठें ज्यां त्यां माथुं घाल्युं अने माथुं नमाव्युं पण सार कंइ पाम्यो नहीं, अने ते प्रमाणे वर्तवाथी आत्महित थवानुं नथी.

यतः

अगीयथ्थ कुसीलेहिं, संगं तिविहेण वोसिरे ॥
मुख्खमग्गंसिमे विग्घं, पहंमि तेणगे जहा ॥१॥

अगीतार्थ अने कुशीलियानो संग त्रिविधे वोसिराववो, पंथमां चोरनी पेठे मोक्ष मार्गमां विघ्न करनाराछे.

" दुहा. "

एम अनंता भव भमी, पाम्यां दुःख अपार;
सद्गुरु स्हेजे ओळख्या, तार तार मुज तार ॥५३॥

भावार्थ—एम अनादिकालथी कुगुरुनी संगतियोगे आत्माना अशुद्ध परिणामे, चतुर्गत्यात्मक संसारमां अनंतिवार भ्रमण करी विचित्र शरीर धारण करी ताडन तर्जन, क्षुधा, तृषा, रोग, शोक, वियोगादिथी अनंत दुःख लह्युं, हवे भवितव्यतायोगे सद्गुरुने ओळख्या, जीव आनंद पामी, गुरु विश्वासथी कहेछे के हे गुरु तुं मने तार तार, तार तार ए शब्द पुनः पुनः कथनथी संसार भय साथे मुक्ति मार्गनी अति आकांक्षा जणावी, आत्मार्थी ध्यानी समकित दाता धर्मगुरुनी आज्ञा प्रमाणे वर्तवुं.

" परमात्मार्थि गुरुभक्त शिष्योनुं लक्षण कहेछे. "

" दुहा. "

गुरु विनयी भक्ति घणी, श्रद्धा ए मन स्थिर;
शिवपद अर्थी साहसी, मनमां आति गंभीर ॥५४॥

गुरुनो विनय मन वचन अने कायाथी करवामां तत्पर होय, यथाशक्ति भावथी अत्यंत भक्ति गुरुनी करनार होय, गुरुक्त तत्त्वने विषे जेनी श्रद्धा स्थिरपणे होय वा गुरुना द्वेषीला इर्ष्यावाळा तथा तेमना प्रतिपक्षी कुगुरुओ तथा कुभक्तो आहुं अवळुं समजावे, गुरुना दोषो देखाडे कुयुक्तिथी गुरु महाराजे कहेलां तत्त्वनुं खंडन करे, वळी एम कहे के-एनामां शो भलीवार छे, एतो कंइ जाणतो नथी. कपटीछे, एम पोतानी मरजीमां आवे तेम बोले पण तेथी सुशिष्योनी गुरु उपरनी श्रद्धा जरा मात्र पण कमी थाय नहिं, उलटुं सुवर्णने जेम जेम गाळीए तेम तेम दिसिमंत थाय तेम गुरु भक्त शिष्योनी श्रद्धा उलटी वधती जाय, अने गुरुओनी संगतिथी श्रद्धा उठे तो पीतळ समान भक्तो जाणवा, एवा भक्तो ४ चार गतिमां भटक्या, भटकेछे, अने भटकशे, श्रद्धा वे प्रकारनी छे, हळदरना रंग समान अने अन्य मजीठ समान, हळदर समान श्रद्धानो कारण पाम्याथी नाश थायछे, माटे गुरु उपर मजीठना रंग समान श्रद्धा थवी जोइए वळी श्रद्धाना वे भेदछे. १ प्रशस्य श्रद्धा, अने २. अप्रशस्य श्रद्धा ते प्रत्येकना पण वे भेद छे, हळदर रंग समान, मजीठ रंग समान, वळी लौकिक गुरु अने लोकोत्तर गुरुनी श्रद्धा जाणवी.

वळी श्रद्धा वे प्रकारनी छे, व्यवहार नय गुरु श्रद्धा,-व्यवहार नयथी गुरु अनेक प्रकारनाछे, पापनी विद्या शिखवे ते पाप

गुरु, आजीविकानी विद्या शिखवे ते आजीविका गुरु, पण ए गुरुओ व्यवहारथी छे, धर्मनुं स्वरूप समजावे ते व्यवहारथी शुद्ध गुरु जाणवा, अस्ति नास्ति भेदोवडे करी आत्मानुं स्वरूप समजावनार धर्मगुरु समान अन्य कोइ गुरु नथी. बीजा गुरुओने तो अनंतिवार जीव पाम्यो, पण तेथी आत्महित थयुं नहीं, अने समकित प्रगटयुं नहीं, पण धर्मगुरुयोगे समकितनी श्रद्धा थइ, माटे धर्मगुरु समान कोइ गुरु नथी, व्यवहारनयथी सत्यप्रशस्य धर्मगुरु श्रद्धा जाणवी. आदरवा लायक छे. निश्चय नयथी पोतानो आत्मा गुरु जाणवो, गुरुनी श्रद्धा भक्तिमां खामी तेटलीज धर्ममां खामी समजवी.

मोक्ष जिज्ञासु अने ते माटे उद्यम करनार शिष्य होय, धर्मकार्यमां साहसिक विक्रमराजानी पेठे होय, बीकण ना होय तेमज कोइथी दबाय नहीं, कोइना तेजमां अंजाइ जाय नहीं. वळी मनमां अति गंभीर होय, एटले गुरुए कहेल वातो हित वचनो पोताना मनमां राखे अने गुरुना दोष अन्य आगळ बोले नहीं, गुरुनो विश्वासी होय, श्रद्धा अने विश्वास ए बे मोटा गुणछे, गाडरीया प्रवाहथी गुरुनाम धरावनाराओ कूळाचारमां आसक्त जीवो गुरुनी गुरुता जाणी शकता नथी. एवं शिष्यनुं लक्षण कह्युं.

गुरुभक्त शिष्योनुं लक्षण.

" दुहा. "

वैराग्ये मन वाळीयुं, वार्या विषय कषाय;
धीरज जस सुरगिरिसमी, वश जश मन वच्च काय ५५

भावार्थ—संसारनी अनित्यता भावी मन जेनुं वैराग्यरंगमां भव्युंछे, अने जेणे विषय कषायने यथाशक्तिए वार्याछे अर्थात्

विषय कषायनी परिणति जेनी मंद थइछे, आत्मामां रहेल धर्ममां जेनु मन वळ्युंछे, बाकी सांसारिक कार्यमां जेनुं चित्त लागतुं नथी, अने सांसारिक कार्य करेछे तोपण ते थकी न्यारो रही लुखा परिणामे करेछे, मेरुपर्वत सम जेने धैर्यता प्रगट थइछे, देववाथी पण डगायो डगे नहीं, एवो धैर्यवंत होय, मन वचन अने कायाना योग जेना वशवर्ति थयाछे, एवा गुरुभक्तशिष्यो भवनो पार पामशे.

"दुहा."

समता चित्त अंगी करी, अदेखाइनो नाश;
करता गुरु भक्तो सदा, पामे शिवपुर वास ॥५६॥
गुरु आज्ञाए चालतो, करे न आज्ञालोप;
शिक्षा गुरु देतां सदा, कदी करे नहि कोप ॥५७॥
गुरु सेवामां रत सदा, गुरु गुण करे प्रकाश;
गुरु अवगुण दाखे नहीं, ते गुरु भक्तो खास ॥५८॥

भावार्थ—जे शिष्योए समता पोताना मनमां अंगीकार करीछे, क्रोधादिक अवगुणोनी मंदता थइछे, अने अदेखाइनो नाश जेणे कर्योछे, गुणिनी अभिवृद्धिथी जेना मनमां इर्ष्या थती नथी, अथवा गुरुमहाराज कोइ शिष्य उपर विशेष प्रीति राखे पण तेथी अन्य शिष्यनी अदेखाइ करे नहीं, गुरुमहाराजना जेटला भक्तो होय तेटला उपर पोताना प्राण पाथरे, एवा गुरु भक्तो आ तोफानी दुनियामां रह्या छता पण अंतरंगथी न्यारा रह्या छता गुरुनी भक्ति द्वारा ज्ञान पामी अनंत सुखमय सिद्धि सौध पामे. मुमुक्षु शिष्य गुरु आज्ञामां धर्म मानतो गुरुनी मरजी प्रमाणे चाले, मन, वचन

अने कायाने गुरुनी आज्ञा मरजी अनुसार प्रवर्तावे, कदी गुरुनी आज्ञानो लोप करे नहीं, विपरीत मार्गमां अज्ञान, प्रमाद, मतिभ्रमथी चालतां गुरु भक्तोने गुरु महाराज शीखामण आपतां क्रोध थाय नहीं, गुरु प्रत्यक्ष होय वा परोक्ष होय तो पण देवनी पेठे तेनुं सदा ध्यान करे, परोपकारनी स्मृति लावे. अने गुरुनी भक्तिमां शिष्य सदा आसक्त रहे, अने गुरुना गुणोनो सर्वनी आगळ प्रकाश करे, कोइ गुरुनी निंदा सांभळवाना करतां पृथ्वीमां पेसी जवुं सारुं, कोइ एम कहेशे के गुरुमां दोषो होय तो केम गुरुने मानवा ? अत्र समजवानु के अन्यना कहेवाथी दोषोनी शंका लाववी नहीं, दोषो होय तो पण ढांकवा, उपकारीना उपकारनुं लक्षण ए छे के कोइ कर्म उदयनी प्रबळताथी गुरु अवळा मार्गे चाले तो गुरुभक्त बुद्धियुक्तिप्रयत्नथी ठेकाणे लावे. पण प्राण जतां तेमनी अन्यना आगळ निंदा करे नहीं, निंदा करवाथी कंइ फायदो थतो नथी माटे परोपकारज्ञशिष्य, गुरुना अवगुण प्रकाशे नहीं, गुरुद्रोही गुरुनिंदक कुशिष्यने आत्मज्ञान सवळुं परिणमतुं नथी, अरिहंतनी स्तुतिथी जेटलो लाभछे, तेटलो गुरुनी स्तुतियी लाभ जाणवो. दीक्षादायक पण धर्मगुरु होयछे, उपर कहेलां लक्षणो जेनामां होय तेने गुरुभक्तो जाणवा, एवा गुरुभक्तो संसार समुद्रनो पार पामी शकेछे, सत्य असत्य धर्मनी परीक्षा करनार पण शिष्य होवा जोइए, तेम देवनुं लक्षण पण जाणनार अने कुदेवने परिहरनार शिष्य होवा जोइए, अन्यथा कुगुरुमां गुरुनी बुद्धि धारण करी भवपाशमां सपडाय माटे शिष्य सुगुरुना परीक्षक होय ते मुक्तिपद पामे.

" दुहा. "

विधिए सदगुरु वंदता, निंदे अवगु[illegible]

क्षणे क्षणे गुरु देखतां, राखे मनमां रीज ॥५९॥
अनुभव पच्चिशी कह्यो, विनय तणो अधिकार;

गुरुभक्तो विधि पूर्वक त्रिकाल सद्गुरु वंदन करे, अने पोतानामां रहेला दोषो गुरु आगळ निंदे, के जेथी ते दोषोनो झटिति नाश थइ शके. जेटलीवार गुरुने देखे तेटलीवार मनमां आनंद पामे.

विनयनो विशेष अधिकार अस्मदीयकृतअनुभवपंचविंशति नामक ग्रंथमां कह्यो छे.

ते रीते जे चालशे, ते लेशे भवपार ॥ ६० ॥

ते क्रम प्रमाणे जे चालशे ते भव्यात्मा संसार समुद्रनो पार पामशे, अमुक मारुं कल्याण करशे के अमुक एवुं जेनुं अस्थिर चित्त छे, ते गुरुनो विश्वास पात्र थतो नथी.

" दोहा. "

रमणिक रामा देखतां, प्रेमी मनमां प्यार;
तेहथी अधिको सद्गुरु, शिष्य तणो निर्धार ॥६१ ॥

शोळ शणगारे अलंकृत नवयौवना सुंदर अंगवाळी स्त्री उपर तरुण प्रेमी पुरुषनो जेटलो राग होयछे, ते थकी अधिक सद्गुरु उपर प्यार शिष्यनो होय तो शिष्यनुं कल्याण थाय. अने गुरु भक्तोनुं कल्याण थाय, अन्यथा आत्महित थवुं मुश्केलछे, आ रहस्य अनुभवथी अवबोधवा योग्यछे, मूर्खात्माओने माटे आ लखाण नथी, दुःखाब्धिभवनो नाश करवाने जे तत्पर थयाछे, अने जेमने तत्त्व रहस्य प्राप्त करवुंछे तेने माटे आ लखाणछे. वंचक, अस्थिरचित्तवाळा प्रपंची, कृतगुणने नहीं जाणनारने सद्गुरु तत्त्वरहस्य बतावता नथी. रासभने शर्करा अवगुणकारीछे, सर्पने

दुग्धपानसदृश अयोग्यने तत्त्वोपदेशछे, योग्य अने अयोग्यनी प-रीक्षा करवी गुरुमहाराजना हस्तमांछे, बिडालना उदरमां खीर टकती नथी तद्वत् अयोग्यना हृदयेधर्मतत्त्व टकतुं न थी. अविनयीने गुप्तधर्मतत्त्वरहस्य आपवुं आत्महितकर थतुं नथी.

संप्रति काले धर्मतत्त्वनो उपदेश शाक भाजीपालानी पेठे योग्य अयोग्यनी परीक्षारहीत दृष्टिगोचर थायछे, तेथी वाक्क्लेश वा अल्पफळनी प्राप्ति थायछे, खेडुत पण भूमीनी परीक्षा करी वाववा योग्य धान्यकाळे वावेछे, तो धर्मरुप बीज योग्यायोग्यनी परीक्षा कर्या विना काळविना कोइपण मनुष्यना हृदयमां रोपवुं, ते अनुचित्त, चिंतनीयछे. जगत्मां मनावा पूजावानी लालचे जगत्ना प्रवाहमां पडेला गुरुनाम धरावनाराओ गमे तेम उपदेशआपी भोळा जीवोने फसावी पोताना वशमां करी लेइ राचेछे, माचेछे, ते पोतानुं तथा अन्यनुं यथायोग्य भलुं करी शकता नथी. सद्गुरु स्वतंत्रछे, योग्य होय तेहने उपदेश आपे, अन्यथा मौन रहेछे.

कुयुक्ति करनारा अने पोतानी पंडिताइ जणावनारने सद्गुरु अंतकरणथी उपदेश आपता नथी, तेमज गुरुना वचन उपर वि-श्वास नथी तेनी साथे गुरुजी माथाकूट करता नथी. पत्थर उपर कमल उगे तो अविश्वासीने गुरुनो उपदेश लागे. गुरुना उपदेशथी वच्चमां पोतानु डहापण चलावनार गुरुभक्त कही शकाय नहीं, हालना काळमां गुरुभक्त थवुं मुश्केलछे, केटलाक पत्थर समान कुगुरुओछे, पोते संसार समुद्रमां बूडे अने स्वआश्रितोने बुडाडे, संसार समुद्र तरवामां केटलाक पांदडा समान गुरुओछे, अने केटलाक वहाण समान छे, एमजाणी सद्गुरुनुं अवलंबन करवुं ए परमार्थ छे.

" दुहा "

समकितदायक सद्गुरु, तेनुं नहिं मन भान;
परोपकारी बुद्धि वण, ते भटके अज्ञान. ॥ ६२ ॥

समकित दायक सद्गुरुना उपकारनुं जेने भान नथी ते परोपकृतिथी अजाण सम्यक्त्वनो सार फल पामी शके नहीं, उपकार बुद्धिनी विकलताए गुरुना विनयना अभावे राखमां घी होम्या जेवुं थाय ते संसार समुद्रनो पार पामी शके नहीं.

" दुहा. "

समकितदायक गुरु अने, दीक्षा गुरुमां भेद;
अंतर रवि खजुआ समो, सुशिष्य मनमां वेद. ६३
दीक्षा दायक महामुनि, धर्मगुरु जग जोय;
समजे समजु सानमां, करो न संशय कोय ६४

भावार्थ—सम्यक्त्व दायक धर्मगुरु अने दीक्षा गुरुमां घणो भेद छे क्यां, रवि अने क्यां खद्योत एटलो अंतर् हे सुशिष्य मनमां जाण. दीक्षा प्रदायक गुरु बाहुलताथी धर्मगुरु होइ शके छे. कारण के—धमप्राप्ति जेनाथी थइ होय ते दीक्षा आपे तो ते होइ शकेछे, समजु सानमां समजशे शंसयनुं कंइ प्रयोजन नथी. धर्मगुरुनो उपकार कोइ पण रीते वळे तेम नथी.

" दुहा. "

एवा गुरुने सेविए, थइए सद्गुण धाम;
गुण धारी शिष्यो लहे, शिवपुरनो विश्राम. ६५

सद्गुणधाम भूत गुरुपद्पंकज सेवतां अनेक गुणधाम भू

शिष्यो थाय, अने गुणधारी शिष्यो शिवपुरनो विश्राम लइ शके छे, सद्गुणी थनारने प्रथम गुरुनी आवश्यकताछे, दुष्पंथथी सुपंथे लावनार गुरुमहाराजछे, जेने गुरु नथी ते पोते गुरु थइ शकतो नथी.

" दुहा. "

सहस्र सूर्योदय हुवे, चंद्र उगे शतवार;
दीपक करो हजार पण, अंध न जुवे लगार. ६६
ज्ञानी सद्गुरु जो मले, अतिशय दे उपदेश;
मूरखने लागे नहीं, उलटो थावे क्लेश. ६७

भावार्थ—सहस्रगमे सूर्यो प्रकाशे, हजारवार चंद्रनो उदय थाय, हजार दीपक सळगावो, पण जे अंधपुरुषछे ते जरा मात्र पण देखी शकतो नथी. तेम मूर्खात्मा मोहांध जडपुरुषने ज्ञानी सद्गुरु मळे अने अतिशय उपदेश आपे तोपण मगशैलीया पाषाणनी पेठे जरा मात्र असर थती नथी. उलटो मूर्खने क्लेश थायछे, अने सद्गुरुने पण वाक्क्लेश अवशेष फल जाणवुं.

" दुहा. "

जडताए जड थइ रहे, गुरुमां कुगुरु बुद्धि;
रासभपुच्छ ग्रही इव, करे न आतम शुद्धि. ६८
सद्गुरुनो विश्वास नहि, कुगुरुनो विश्वास;
अज्ञानी पशु आतमा, सर्व दुःखनो वास. ६९

भावार्थ—आतमस्वरुपनी अज्ञानताए जड जेवो थइ जड दृष्टिरागथी तथा मोहांधपणाथी गुरुस्वरुप समज्या विना कुलनी मर्यादाए गुरुपणु मानतो अज्ञानी जीव गुरुमां अगुरुपणुं मानेछे,

अने अवळी परिणतियोगे कुगुरुमां गुरु बुद्धि धारण करेछे, ते पोतानी कुटेवने गद्धापुच्छ ग्रहनारनी इव भवभ्रमण दुःख राशि पामतां सद्गुरुनो उपदेश लागतां पण पोतानी हठ मुकतो नथी. तेवो अज्ञानी जीव पोताना आत्मानी शुद्धि करी शकतो नथी. जेने सद्गुरुनो विश्वास नथी अने कुगुरुना वचननो विश्वासछे, ते अज्ञानी पशु आतमा सर्व दुःखनुं पात्र बनेछे, अवळी परिणतियोगे अवळा मार्गे भवितव्यतायोगे गमन करेछे. तेवा जीवने योग्यतानी प्राप्ति विना उपदेश पण क्लेशभूत थायछे, राजा, दीवान, शेठ, लक्षाधिपति होय पण योग्यता विना सद्गुरुनो उपदेश असर करतो नथी.

" दुहा. "

तर्कशक्ति जेनी घणी, वाणी जस गंभीर;
मोक्षाशा मनमां वशी, धर्मकार्यमां धीर. ७०
एवा शिष्यो पामशे, अनेकान्त सुपंथ;
गुरुगम ग्रंथो वांचीने, थाशे महानिर्ग्रंथ. ७१

भावार्थ—जेनी तर्कशक्ति घणी होय, अने वाणी गंभीर होय, खप पडे तेटलुं बोले, मोक्षाशा जेना मनमां वशी होय. अने धर्मकृत्यमां मेरुवत् अडगवृत्ति होय, गुरुनां वचनो वज्रना टांकणानी पेठेज जेम जेना हृदयमां कोतरातां होय, एवा सद्गुणी शिष्यो स्याद्वाद अनेकांत मार्ग पामशे. अने स्वच्छंदाचारीपणुं तथा अहंपणुं त्यागीने गुरुगम ग्रंथोने वांची धारी श्रावकपणुं अंगीकार करशे. अथवा शक्ति परिणामयोगे निर्ग्रंथ अवस्था ग्रहण करशे, योग्यता पोतानी केटलीछे अने कया ग्रंथो वांचवा योग्यछे. ते गुरुमहाराज जाणेछे माटे तेमना फरमावेला ग्रंथो वांचवा

एवी हिताकांक्षा धारवी.

"दुहा."

सदा महानिर्ग्रंथथइ, पाळे पंचाचार;
पंचमहाव्रत पाळता. शुद्ध धरे व्यवहार. ७२
निश्चय आत्मस्वरुपमां, रमता रहे निशदीन;
गुणपर्याय विचारने, करवामां लयलीन. ७३

भावार्थ—द्रव्यथी धन धान्यादि नवविध परिग्रह त्यागी भावथी राग द्वेषनो त्याग करी निर्ममत्त्वपणे वायुवत् अप्रतिवद्धपणे सदा विचरे, व्यवहारथी पंचमहाव्रत. अने ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपःआचार अने वीर्याचारने पाळे, आदरे, निश्चयनयथी पोताना आत्मस्वरुपमां निशदिन मुनिवर रमे हवे प्रसंगतः प्रथम षड्द्रव्यनुं स्वरुप बतावेछे.

१ धर्मास्तिकाय द्रव्य—चलण सहावो धम्मो,=चालताने सहाय आपवानो गुण धर्मास्तिकायनोछे, ते अजीवद्रव्यछे, अरुपी, अचेतन, अक्रिय, चलनसाह्यगुण तेनो जाणवो. माछलुं पाणीमां तरेछे तेनो ए स्वभावछे, पण पाणी तेने साह्यकारकछे. धर्मास्तिकायना असंख्याता प्रदेशोछे, प्रत्येक प्रदेशमां उत्पातव्यय थया करेछे, द्रव्य स्वरूपथी ध्रुवपणुं असंख्याता प्रदेशोमां अनादि अनंतमे भागेछे. अगुरु लघुथी प्रत्येक प्रदेशमां षड्गुण हानि वृद्धि थया करेछे. धर्मास्तिकायद्रव्य अन्यद्रव्यमां परिणमतुं नथी. अने अन्य द्रव्यना गुणोनुं घातक नथी, केवलज्ञानवडे धर्मास्तिकाय द्रव्य देखी शकायछे. अन्य जीवोने केवलीना वचननी श्रद्धा गम्य छे, धर्मास्तिकायना कोइपण प्रदेशनो नाश थतो नथी, एक ठेकाणेथी अन्य स्थाने तेना प्रदेशो जता नथी, लोकाकाशमां व्यापीने

रहेछे, धर्मास्तिकायने कोइ उत्पन्न करनार नथी, जलमां थलमां ज्यां त्यां धर्मास्तिकाय व्यापी रह्युंछे, तेनामां वर्ण गंध रस अने स्पर्श नथी. समये समये अनंता जीवोने तथा अनंत पुद्गलमय परमाणुओने गमनमां साहाय्य आपेछे. प्रदेशे प्रदेशे अनंता गुण अने अनंता पर्यायछे. पोताना स्वरूपे धर्मास्तिकाय अस्तिरूपेछे. अने परस्वरूपे नास्तिछे. प्रदेशे प्रदेशे अनंत स्वगुणनी अस्तिता समये समये परिणमी रहीछे, तेमज धर्मास्तिकायना प्रत्येक प्रदेशे अनंत परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल, अने परभावनी नास्तिता परिणमीछे, तेमज प्रदेशे प्रदेशे अनंत पर्यायनी समये समये अस्तिता जाणवी. तेमज धर्मास्तिकायना असंख्यात प्रदेशमांसमये समये परद्रव्यना अनंत पर्यायनी नास्तिता परिणमी रहीछे, जे समयमां अनंत निजगुणनी अस्तिता तेज समयमां अनंत परगुणनी नास्तिता जाणवी. जो धर्मास्तिकायमां परद्रव्य, गुणपर्यायनी नास्तिता न रहे तो अन्य द्रव्यरूपे धर्मास्तिकाय परिणमे अने द्रव्य द्रव्यनो भेद रही शके नहीं, माटे स्वगुण स्वद्रव्यनी अस्तिताना समयमां परद्रव्यनी नास्तिता मानवाथी प्रत्येक द्रव्य पोताना स्वरूपे परिणमे, अस्तिपणुं धर्मास्तिकायमां रह्युंछे, ते पण अवक्तव्यछे, अने अनंत नास्तिपणुं रह्युंछे, ते पण अवक्तव्यछे, एक शब्दनो उच्चार करतां असंख्याता समय व्यतीत थायछे, तो एक समयमां स्थित अस्तिता अने नास्तितानुं कथन अशक्यछे, ज्ञानवडे जाणी वैखरी भाषाथी तेनुं स्वरूप कही शकातुं नथी, थोडुं कही शकाय छे, जेटलुं जाणवामां आवे तेटलुं वैखरी वाणीथी कही शकातुं नथी. माटे वक्तव्यावक्तव्यपणुं तेमां जाणवुं. इत्यादि विचारतां सप्तभंगी उत्पन्न थायछे, वळी धर्मास्तिकाय छे ते द्रव्यपणे नित्यछे,

अने उत्पाद, व्ययनी अपेक्षाए अनित्य छे, द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए धर्मास्तिकाय शाश्वतछे, अने पर्यायास्तिकनयनी अपेक्षाए धर्मास्तिकाय अशाश्वतछे, धर्मास्तिकाय ज्ञेयछे, पण तेनामां ज्ञातापणुं नथी, जड छे माटे.

२ अधर्मास्तिकाय–स्थिर रहेवामां साहाय्यदायक गुण अधर्मास्तिकायनो छे, मनुष्य मार्गमां चालतां थाके छे, त्यारे झाड जेम तेने वेसवामां सहाय्यकारक छे, तेम अधर्मास्तिकायनी साहाय्यथी जीव पुद्गल स्थिर थायछे, ए द्रव्यना चारगुण छे, अमूर्त, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श थकी राहित, जीवत्वथी रहीत माटे अचेतन, विभाविक क्रिया राहित माटे अक्रिय, निश्चयनयनी अपेक्षाएतो सक्रिय छे, स्थिर पदार्थने साहाय्य करे छे, माटे स्थिर साहाय्यगुण अधर्मास्तिकाय असंख्यात प्रदेशमयी छे, लोकाकाशमां व्यापीने रह्युंछे, अनादि कालथी छे, माटे तेनो उत्पन्न कर्ता कोइ नथी, कोइ पण काले तेनो अंत नथी, माटे अनंत छे, अधर्मास्तिकायना प्रत्येक प्रदेशमां अगुरु लघुथी समये समये षड्गुण हानि वृद्धि परिणमी रही छे, अधर्मास्तिकाय चर्म चक्षुथी देखी शकातुं नथी. अधर्मास्तिकायना चार गुण छे, रुप राहित माटे अमूर्त्त, अचेतन एटले जीव रहीत, अक्रिय एटले विभाविक क्रिया रहीत, अने स्थिर सहायगुण ए चारगुण अनादि अनंतमे भांगे अधर्मास्तिकायमांछे, समये समये अनंत जीवोने तथा पुद्गलोने स्थिति सहाय आपे छे, एकेक प्रदेश अनंता गुण पर्याय रह्या छे. अधर्मास्तिकायद्रव्यमां स्वगुण पर्यायनी अस्तिताछे, परगुण पर्यायनी नास्तिता छे, द्रव्यत्वनी अपेक्षाए दरेक अधर्मास्तिकायना प्रदेशो एक सरखा छे, कारण के दरेक प्रदेशमां द्रव्यत्वपणुं रह्युं छे, किंतु अगुरुलघुथी थतीषड्गुणहानिवृद्धि प्रदेश प्रदेश प्रति भिन्न भिन्न परिणमी

रही छे. ते अधर्मास्तिकायना प्रदेशमां अनंतगुणनी हानी छे, त्यां अनंत गुणहानी मटीने असंख्यात गुणहानि थाय छे, संख्यात गुणहानि होयछे, त्यां अनंतगुण हानि थायछे, एम असंख्याता प्रदेशोमां षड्गुण हानिवृद्धि समये समये भिन्न भिन्न परिणमवाथी सर्व प्रदेशो अपेक्षाए एक सरखा नथी, एक स्थानथी बीजे ठेकाणे प्रदेशो गमन करता नथी. माटे प्रदेशो अचल छे, वळी प्रदेशना कडका थता नथी, माटे अखंडछे. अधर्मास्तिकायमां जाणवानो गुण नथी माटे जडछे, पोताना स्वरूपे अधर्मास्तिकायमां अनंत शक्तिछे, तेनी केवली भगवान्ना वचनथी श्रद्धा करवी. आ द्रव्य लोकाकाशमां व्यापक छतां कोइ द्रव्यना गुणनुं घातक नथी. अने ते अन्य द्रव्यमां परिणमतुं नथी, पोताना स्वभावनो त्याग करतुं नथी. अधर्मास्तिकायने पुण्य पाप लागी शकतुं नथी, परद्रव्यनी साथे परिणम स्वभाववाळा जीवद्रव्यने पुण्य पाप लागी शकेछे. अधर्मास्तिकाय द्रव्य जाणी शकायछे, माटे अधर्मास्तिकाय प्रकाश्यछे, अने ज्ञान प्रकाशक छे, अधर्मास्तिकाय ज्ञेयछे, अने जीव ज्ञाताछे, द्रव्यार्थिक नयापेक्षया अधर्मास्तिकाय शाश्वत छे. पर्यायार्थिक नयापेक्षया अधर्मास्तिकाय अशाश्वत छे, अन्य द्रव्य साथे परिणमतुं नथी. माटे अधर्मास्तिकाय अपरिणामीछे, अधर्मास्तिकाय द्रव्यरूपे नित्य छे. अने पर्यायरूपे अनित्य छे, अनंत अस्तित्व धर्मथी युक्त अधर्मास्तिकायछे. आ द्रव्य जाणवा योग्यछे, अने ते आदरवा योग्य नथी फक्त ते द्रव्यनुं स्वरूप ज्ञानदृष्टिथी जणायछे, आत्मानी साथे तेने कंइ संबंध नथी. एकेक प्रदेशे अनंत धर्म अनंतगुण अनंतपर्यायनी अस्तिता छे, अने अधर्मास्तिकायना एकेक प्रदेशमां परद्रव्यना अनंतधर्म अनंतगुण अने अनंतपर्यायनी नास्तिता व्यापी रहीछे, प्रत्येक प्रदेशमां रहेला धर्मनी अस्तिता

तथा परधर्मनी नास्तितानी अपेक्षाए सप्तभंगी उत्पन्न थायछे, जेम जेम सम्यग् ज्ञान थतुं जायछे, तेम तेम उपयोगनी एकाग्रताए विशेष ज्ञान थतुं जायछे.

३ आकाशास्तिकाय–अधर्मास्तिकायादिकने अवगाहना आपवानो स्वभाव आकाशनोछे, आकाशना बे भेदछे, १ लोकाकाश अने २ अलोकाकाश, जेमां छ द्रव्यनी स्थीति छे, ते लोकाकाश जाणवुं, जेमां आकाश सिवाय अन्य पदार्थनी स्थीति नथी तेने अलोकाकाश कहेछे. तेना चार गुण छे, अरूपी एटले रूपरहीत, आकाशनुं काळुं, पीळुं, धोळुं, नीलुं, श्वेतआदि रूप नथी.

प्रश्न–आकाशनुं चक्षुथी जोतां काळुं रूप देखायछे, अने तमे केम ना कहोछो ?

उत्तर–आकाश सामुं देखतां जे कालीमा देखाय छे ते कंइ आकाशनी कालीमा नथी. किंतु पुद्गलद्रव्यनी कालीमाछे, माटे आकाशनुं रूप नथी.

प्रश्न–निर्मळ जलथी परिपूर्ण स्थिर सरोवरमां आकाशनुं प्रतिबिंब पडेछे, देखो, सरोवर माटे आकाशनुं रूप मानवुं जोइए.

उत्तर–विशेष सूक्ष्मबुद्धिद्वारा परीक्षा करतां अवबोधाशे के आकाशनुं प्रतिबिंब सरोवरमां पडतुं नथी, अने सरोवरमां जेनुं प्रतिबिंब पडेछे ते पुद्गलद्रव्यछे, तेमां जोतां मालुम पडेछे के–बादळां विगेरेनुं प्रतिबिंब सरोवरमां देखायछे, साकारनुं प्रतिबिंब पडेछे, निराकारनुं प्रतिबिंब पडतुं नथी, छ द्रव्यमां एक पुद्गल द्रव्य साकारछे, बाकीनां पांच द्रव्य निराकारछे, साकारनुं साकारने विषेज प्रतिबिंब पडेछे, आकाश निराकारछे माटे तेनुं प्रतिबिंब पडी शकतुं नथी.

प्रश्न–आत्माने विषे अन्य द्रव्य भासेछे, त्यारे आत्मामां अन्य द्रव्यनुं प्रतिबिंब पड्या विना केम भासे ?

उत्तर–दर्पणमां मुखनुं प्रतिबिंब जेम भासेछे, तेम आत्मामां अन्य पदार्थोनां प्रतिबिंब पडतां नथी, ज्ञान गुण पोतानी शक्तिथी सर्व पदार्थोने जाणेछे, तेथी सर्व पदार्थोनां प्रतिबिंब आत्मामां पडतां नथी. ए उपरथी सिद्ध थायछे के–आकाश अरुपी छे, अचेतन एटले जीवरहित, विभाविक क्रियारहीत आकाश जाणवुं. केटलाक मतवादी एम मानेछे के–आकाशथी जळनी उत्पत्ति थइ पण ते मंतव्य नथी. कारण के–आकाश निराकार अक्रियछे अने तेनाथी कोइ पण पदार्थनी उत्पत्ति थती नथी, जळादिक साकारछे, अने आकाश निराकारछे, माटे निराकारथी साकार वस्तुनी उत्पत्ति थइ शके नहीं, वळी आकाश अनादि काळनुं छे, अने कदी तेनो अंत आववानो नथी माटे अनंत छे, माटे आकाशनो बनावनार कोइ नथी, वळी आकाशनो उत्पन्न करनार कोइ होवो जोइए, एम कोइ कहे तो विकल्प के–आकाशरूप कार्यनुं उपादान कारण कोण ? अने निमित्त कारण कोण ? प्रथम पक्ष–आकाशनुं उपादान कारण इश्वर जो कहेशो तो ते संभवतो नथी, कारण के इश्वर ज्ञानवान् छे, अने आकाश जडछे, इश्वरनो ज्ञान गुण आकाशरूप कार्यमां आववो जोइए, पण तेम नथी. माटे इश्वर आकाशनुं उपादान कारण कहेवाय नहीं, अलबत आकाशनुं उपादान कारण कोइ नथी. जेने उपादान कारण नथी तेने निमित्त कारण पण नथी. इश्वर आकाशनुं निमित्त कारण नथी. आकाश अनादि काळथी स्वयंसिद्ध छे, आकाशमां अवगाहना गुणछे. तेथी अन्य द्रव्योने रहेवा माटे

अवकाश आपेछे. आकाशना एकेक प्रदेशे अनंता धर्म, अनंता पर्याय रह्या छे. आकाश द्रव्यना प्रत्येक प्रदेशो द्रव्यत्व पणाथी एक सरखाछे, अने प्रत्येक प्रदेशमां अगुरु लघुथी षड्गुण हानि वृद्धि समये समये थइ रहीछे तेनी अपेक्षाए एक सरखा नथी. आकाशमां स्वद्रव्य स्वक्षेत्र, स्वकाळ, अने स्वभावनी अपेक्षाए अस्तिपणुं छे. अने परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाळ अने परभावनी अपेक्षाए नास्तिपणुं छे. आकाशमां परद्रव्यनी जे नास्तिता ते पण अस्तिपणे छे. परद्रव्यनी नास्तिता अस्तिपणे आकाशद्रव्यमां न रहे तो अन्यद्रव्यनी अस्तितानो नाश थाय अने अन्यद्रव्य कहेवाय नहीं, जे समयमां स्वद्रव्यादिकनी अस्तिता छे तेज समयमां परद्रव्यादिकनी नास्तिता छे, अस्तिता अने नास्तिता वैखरी वाणीथी कही शकाय सर्वथा माटे अवक्तव्य छे. इत्यादि विचारतां सप्तभंगी उत्पन्न थायछे. आकाशमां जाणवानो स्वभाव नथी. माटे जडछे. वळी तेना प्रदेशना कडका थता नथी माटे अखंडछे. ज्ञानगुणे जणायछे माटे ज्ञेयछे. लोकालोक व्यापी आकाशद्रव्य छे. जळमां थळमां ज्यां त्यां अरुपीपणे आकाशद्रव्य व्यापीने रह्युंछे, आत्मगुणोनुं घातक आकाशद्रव्य नथी. अने ते अन्य द्रव्यमां संयोगपणे परिणमतुं नथी. अन्य द्रव्यो तेनामां रहेछे. माटे अन्य द्रव्य आधेय छे. आकाश द्रव्य आधार छे. आकाशद्रव्यना स्कंध, देश, प्रदेश, केवलज्ञानथी जाणी शकायछे, आत्माना एक प्रदेशमां ज्ञाननी एवी शक्ति छे के—आकाशद्रव्यना अनंता गुण—अनंता पर्याय, अनंत धर्म एक समयमां जाणी शकेछे.

४ पुद्गलास्तिकाय—वर्ण, गंध, रस अने स्पर्श थकी युक्त पु-

पुद्गलद्रव्यछे, तेना चारगुणछे. मूर्त्त अचेतन जीवपणाथकी
रहीत. सक्रिय एटले मळवा विखरवारूप क्रिया करेछे,
पुद्गलपरमाणु अनंतछे. परमाणु वाळयो वळे नहीं, भेद्यो
भेदाय नहीं, परमाणु दर्शन चक्षु अगोचर जाणवुं. द्विपरमाणुं
संयोगी स्कंधने द्विप्रदेशी स्कंध कहेछे. अनंत परमाणुं संयोगी स्कंध
दृष्टिगोचर थायछे, ते व्यवहार परमाणु कहेवायछे. निश्चयनये तो
स्कंधकथायछे. एक परमाणुमां एक वर्ण एक गंध एक रस अने
बे स्पर्श रह्याछे, परमाणुथी बनेला केटलाक स्कंधो चक्षुथी देखाय
पण हाथमां पकडाय नहीं, केटलाक स्कंधोनो स्पर्श ग्रहाय किंतु
चक्षुथी देखाय नहीं जेम वायु. केटलाकनो गंधग्रहाय पण चक्षुग्राह्य
थइ शकतां नथी जेम कस्तुरीना पुद्गल स्कंधो विगेरे. एम विचित्र
स्वभावयुक्त पुद्गलस्कंधो थायछे. अने विचित्र पदार्थ बनेछे. प-
श्चात् विखरी जायछे. यावन्त पदार्थो चर्मचक्षुथी ग्राह्यछे ते सर्व
पुद्गल छे. केटलाक पुद्गल स्कंधो चर्मचक्षुथी पण अग्राह्य छे,
अंधकार तथा प्रकाश पण पुद्गल द्रव्यछे. कर्म पण पुद्गल
द्रव्यछे, पंचधा औदारिकादि शरीर पण पुद्गल द्रव्यछे.
बादर पदार्थना ज्ञानथी सूक्ष्म पदार्थ स्वरूप अनुमाने जणायछे,
पत्थर मृत्तिका आदि सर्व पुद्गल द्रव्य जाणवां. एकेंद्रियथी
यावत् पंचिद्रि जीवोए पुद्गल स्कंधोने शरीरपणे ग्रही स्व-
सत्तामां लीधाछे, ते सर्वपुद्गलद्रव्यछे, पुद्गलद्रव्य जीवद्रव्यना
गुणोने आच्छादन करेछे. पुद्गलद्रव्यरूपी छतां जीवद्रव्यने
बाधा करेछे.

प्रश्न—जीवनी अनंति शक्ति छे, तेने पुद्गल द्रव्य शुं करी शके ?

उत्तर—अधुना कर्मधारक जीवोनी अनंति शक्ति तिरोभावे सत्तामां
वर्त्ते छे, किंतु आविर्भावे शक्तिं प्रगट थइ नथी अनादि का

ळथी आत्माने कर्म लाग्युंछे, तेथी अनादिकाळथी आत्मानी शक्ति तिरोभावे वर्तेछे. जो आविर्भावरूपे शक्ति थइ होय तो कर्मनुं कंइ जोरि नथी, माटे कर्मना योगे जीवनी शक्ति अवराइछे, जेम सूर्यने वादळां आच्छादन करेछे तो सूर्यना प्रकाशनुं आच्छादन थायछे, प्रकाश ढंकाइ जायछे, किंतु यदा वादळां विखराइ जायछे त्यारे प्रकाश स्वच्छ पडेछे. एम आत्मा अने कर्म विषे जाणवुं आत्मा सूर्य समान छे, अने कर्म वादळो समानछे, दृष्टांत एक देशी जाणवुं.

प्रश्न–अरूपी आत्माना गुणोनो उपघातरूपी कर्मथी शी रीते थइ शके?

उत्तर–ब्राह्मी औषधिरूपी, अरूपी बुद्धि वृद्धिमां उत्तेजकछे, मदिरा रूपी छतां ज्ञानीना अरूपी ज्ञाननुं आच्छादन करी ग्रथिल बनावेछे, तथा रीत्या आत्माना असंख्यात प्रदेशे लागेलां ज्ञाना वरणीयादिक कर्मरूपी अरूपी आत्मगुणोनी आविर्भावतानुं आच्छादन करेछे.

विषयांतरथी निवृत्त थइ पुद्गल द्रव्यनुं स्वरूप कथतां अन्य प्रश्न करेछे.

प्रश्न–पृथ्वी, पाणी, वायु विगेरेनो उत्पन्न कर्त्ता इश्वरछे, अने तमे तेने केम अन्य स्वरूपे कथोछो.

उत्तर–पृथ्वी, पाणी, वायु विगेरेनो कर्त्ता इश्वर नथी. अनादि कालथी ते वस्तुओछे. इश्वर अरूपी निरंजनछे तेनाथी रूपी पृथ्वी आदि जगत् बनी शकतुं नथी, सर्व द्रव्य पोतपोताना स्वभावे वर्त्तेछे. पुद्गल द्रव्यमां जाणवानो स्वभाव नथी माटे जडछे, प्रत्येक परमाणुमां उत्पात, व्यय, अने ध्रुवपणुछे. वर्ण, गंध, रस अने स्पर्शनी परावर्त्तना प्रत्येक परमाणुमां थायछे. पुद्गल द्रव्यमां स्वगुण, स्वधर्म, स्वपर्यायनी अस्ति-

ताछे. परद्रव्य, परधर्म, परपर्यायनी नास्तितता पुद्गल द्रव्यमां छे. जे समयमां अस्तितताछे, तेज समयमां नास्तितताछे. अस्तिता अने नास्तिततानुं स्वरूप वक्तव्या वक्तव्य रूपेछे. पुद्गल द्रव्य चतुर्दश राजलोकमां व्यापीने रह्युंछे. पुद्गल परमाणुओ अनंताछे. पुद्गल द्रव्यने आ जीवे शरीर, आहार, इंन्द्रियादिपणे अनंतिवार ग्रहण कर्युं अने मूक्युं पण पुद्गल द्रव्य कोइ काळे आत्मानुं थयुं नथी अने थवानुं नथी एनुं विस्तारथी स्वरूप गुरुमुखथी धारवुं.

५ काळ–काळना त्रण भेद छे, अतीत काळ, अनागत काळ अने वर्त्तमान काळ, काळनो समय अति सूक्ष्म छे, सर्व द्रव्य उपर काळनी वर्तना वर्ती रहीछे, काळ द्रव्य आत्मगुणोनुं घातक नथी.

६ जीवद्रव्यास्तिकाय–जीव द्रव्य अरूपीछे, शरीरधारी जीव व्यवहारनयथी रूपी कहेवाय छे. जीव चेतन छे, पोतानुं स्वरूप निश्चयनयथी अक्रिय छे, अने वळी निश्चयनयथी पोताना धर्मनी क्रिया जीव करेछे, माटे जीव सक्रिय छे, व्यवहारनयथी जीवकर्मनी साथे भळ्यो छतो परद्रव्ययोगे गमनादिक क्रिया करेछे माटे सक्रिय छे. जीवद्रव्य अनंत छे. जीवना बे भेद छे. एक संसारी अने सिद्धना जीवो संसारी जीव पण अनंतछे, अने सिद्धना जीवो पण अनंत छे, ज्ञान. दर्शन, चारित्र, वीर्य, उपयोग ए जीवनुं लक्षणछे. जीवमां स्वकीय द्रव्य, क्षेत्र काळादिकनी अस्तिता छे, परद्रव्यना द्रव्य क्षेत्र काळ भावनी जीव द्रव्य मां नास्तितताछे, स्वद्रव्यादिकनी अनंत अस्तितता अने परद्रव्यादिकनी अनंत नास्तितता समये समये जीवद्रव्यमां वर्ते छे. द्रव्यार्थिक नयथी जीव शाश्वतो छे, अने पर्यायार्थिकनयथी जीव अशाश्वतो

छे. जीवमां उत्पाद, व्यय अने ध्रुवपणुं व्यापीने रह्युं छे, जीवना असंख्याता प्रदेश छे, एकेक प्रदेशे अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंत वीर्य, अनंतभोग, आदि ऋद्धि रहीछे, पंचद्रव्यना द्रव्य, गुण, पर्याय धर्मनुं जाणवापणुं एक आत्माना प्रदेशमां रह्युं छे तो असंख्याता प्रदेशनी तो वातज शी कहेवी? निश्चयनये स्वगुणादिकनो कर्ता आत्मा जाणवो, व्यवहारनयथी कर्मनो कर्ता आत्मा जाणवो. व्यवहारना घणा भेदछे. शुद्ध व्यवहारनय, अशुद्ध व्यवहारनय. शुभ व्यवहार, अशुभ व्यवहार, अनुपचरित व्यवहार, उपचरित व्यवहारनय, वळी व्यवहारनयना बे भेदछे. १ सद्भूत व्यवहार, बीजो असद्भूत व्यवहार. एक द्रव्याश्रित ते सद्भूत व्यवहार अने जे परविषयनो आश्रय करे ते असद्भूत व्यवहार नय जाणवो.

प्रथम सद्भूत व्यवहारना बे भेदछे, एक उपचरित सद्भूत व्यवहार अने बीजो अनुपचरित सद्भूत व्यवहारनय. सोपाधिक गुण गुणीनो भेद देखाडे. जेम जीवस्यमतिज्ञानं. अत्रमतिज्ञान सोपाधिक गुणछे, अने जीव गुणी तेनो भेद देखाड्यो, ते उपचरित प्रथम भेद जाणवो.

तथा निरूपाधिक गुण अने गुणीना भेदे बीजो अनुपचरित सद्भूत व्यवहार जाणवो. जेम जीवस्य केवलज्ञानम्. जीवनुं केवल ज्ञान, अत्र केवलज्ञान निरूपाधिक गुणछे, अने जीव गुणी छे, माटे निरूपाधिकपणे गुण गुणीना भेदे बीजो भेद जाणवो.

असद्भूत व्यवहारनयना बे भेद छे, एक उपचरित असद्भूत व्यवहार, अने बीजो अनुपचरित असद्भूत व्यवहार जाणवो.

प्रथम भेद असंश्लेषितयोगे एटले कल्पित संबंधे होयछे, जेम

आ देवदत्तनुं धनछे, अत्र देवदत्त अने धनने उपर उपरनो संबंध छे, स्वस्वामीभावरूप कल्पित संबंधछे, ते माटे देवदत्तनुं धन कहेवुं ते उपचारथी जाणवुं. तथा देवदत्त अने धन ए बे एक द्रव्य नथी, माटे ते धननो आरोप देवदत्तने विषे असद्भूतछे ए उपचरित असद्भूत व्यवहार जाणवो. आत्मानी साथे कर्मसंश्लेषपणुंछे, एटले आत्मानी साथे कर्म, तथा देहना संश्लेषपणाना (जोडावा वा मळवा) ना योगे अनुपचरित असद्भूत व्यवहार जाणवो.

आत्मानी साथे अष्टकर्मनो संबंधछे ते धन संबंधनी पेठे कल्पित नथी. वळी औदारिक—वैक्रिय, आहारक, तैजस अने कार्मण शरीरनो आत्मानी साथे संबंधछे ते पण धन संबंधनी पेठे कल्पित नथी. विपरीत भावनाए निवर्ते नहीं, जावज्जीव रहे ते माटे ए अनुपचरित अने कर्मादिक भिन्न विषय माटे असद्भूत जाणवो.

अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनये जीव कर्मनो कर्त्ता जाणवो, अने उपचरित असद्भूत व्यवहारतः गृह धननो कर्त्ता जाणवो, तथा स्वजाति उपचरित असद्भूत व्यवहारे पुत्र पुत्रीनो कर्त्ता जीव जाणवो. पुत्र पुत्री पोतानी जातिनां छे, पुत्रादिक जीवनां नथी तेम छतां जीवनां कहेवां ते उपचार, पुत्रादिक पोतानाथी भिन्नछे माटे असद्भूत जाणवो. विजाति उपचरित असद्भूत व्यवहारे धनादिकनो कर्त्ता जीव जाणवो. धन विगेरेनी जीवना करतां जुदी जातिछे एटले ते पुद्गल जातिछे, माटे विजाति धनादिक जाणवुं, धन विगेरेनो कर्त्ता जीवने कहेवो ते उपचार छे, कल्पितपणुं छे. धनादिक पोतानाथी भिन्न द्रव्यछे माटे असद्भूतपणुं तेमां जाणवुं.

स्वजाति विजाति उपचरित असद्भूतव्यवहारनयतः नगरादिकनो कर्त्ता जीव जाणवो. जीव, अजीव बन्नेनो समास

तेमां थयो. अशुद्धनिश्चय नये राग द्वेषनो अशुद्ध स्वभावे जीव कर्त्ता जाणवो.

शुद्धनिश्चयनये स्वकीयनिरुपाधिकज्ञानदर्शनादिक गुणोनो कर्त्ता जीव जाणवो.

आत्मानुं केवळज्ञान ते शुद्ध सद्भूत व्यवहार जाणवो, धर्म अने धर्मीना भेदथी ए व्यवहार थयो, तथा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, आत्मानुंछे एम कहीए ते अशुद्ध सद्भूत व्यवहार जाणवो.

परद्रव्यनी परिणति भळवाथी द्रव्यादिकमां नवविध उपचारथी असद्भूत व्यवहार थायछे.

१ द्रव्ये द्रव्योपचार, २ गुणे गुणोपचार, ३ पर्याये पर्यायोपचार ४ द्रव्ये गुणोपचार, ५ द्रव्ये पर्यायोपचार, ६ गुणे द्रव्योपचार, ७ पर्याये द्रव्योपचार ८ गुणे पर्यायोपचार ९ पर्याये गुणोपचार. एनुं स्वरुप कहे छे.

१ द्रव्ये द्रव्योपचार—क्षीरनीरन्यायवत् जीव पुद्गल साथे मळ्यो छे माटे जीवने पुद्गल कहीए ए जीवद्रव्ये पुद्गल द्रव्यनो उपचार जाणवो.

२ गुणे गुणोपचार—भाव लेश्या ते आत्मानो अरूपी गुणछे तेने जे कृष्ण नीलादिक काळी लेश्या कहीएछीए ते कृष्णादि पुद्गल द्रव्यना गुणनो उपचार करीएछीए ए आत्मगुणे पुद्गल गुणनो उपचार जाणवो, इति गुणे गुणोपचार.

३ पर्याये पर्यायोपचार—अश्वहस्ति प्रमुख आत्मद्रव्यना असमान जातीय द्रव्यपर्याय तेने स्कंध कहेछे, आत्मपर्याय उपरे पुद्गल पर्याय जे स्कंध तेनो उपचार कहीए छीए ते पर्याये पर्यायोपचार.

४ द्रव्ये गुणोपचार—हुं गौरवर्णछुं एम बोलतां हुं एटले आत्म द्रव्य अने गौरपणुं ते पुद्गलनुं उज्वलतापणुं, आत्मद्रव्यमां

गौररूप जे पुद्गलनो गुण तेनो उपचार कर्यो माटे द्रव्ये गु-
णोपचार जाणवो.

५ द्रव्ये गुणोपचार–हुं गौरवर्णछुं एम बोलतां हुं ते आत्मद्रव्य
अने देह तो पुद्गल द्रव्यनो सामान्य जातीय पर्याय जाणवो.

६ गुणेद्रव्योपचार–यथा दृष्टांत ए गौर देखायछे, गौरतारूप
पुद्गल गुण उपरे आत्मद्रव्यनो उपचार ते गुणे द्रव्योपचार.

७ पर्यायेद्रव्योपचार–देहने आत्मा कहेवो त्यां देहरूप पुद्गल
पर्यायने विषे आत्मद्रव्यनो उपचार कर्यो ए सातमो भेद जाणवो.

८ गुणेपर्यायोपचार–मतिज्ञान ते पंचइंद्रिय अने मनोजन्य छे माटे
शरीरज कहीए अत्र मतिज्ञानरूप आत्मगुणने विषे शरीररूप
पुद्गल पर्यायनो उपचार कर्यो.

९ पर्यायेगुणोपचार–शरीर ते मतिज्ञानरूप गुणजछे अत्र शरीररूप
पर्यायने विषे मतिज्ञानरूप गुणनो उपचार करायछे, ए नवम
भेद व्यवहारनये अनेकधा जीव व्यवहरायछे, निश्चय
नये सर्व जीवनी सत्ता एक सरखीछे. सर्व वस्तुथी जीव
न्यारोछे, अनादि कालथी आत्मानी अशुद्ध परिणतियोगे
आत्मा कर्मादिकने ग्रहेछे, यथा मदिरापानथी मुग्ध मनुष्यनी
बुद्धि फरी जायछे, तेम कर्मनायोगे आत्मा परस्वभावमां राच्यो
माच्योछे, यदा उपयोगनी एकाग्रताए स्वध्यानमां आत्मा रमे
तदा कर्मादिकनो नाश थायछे. जे ऋद्धिने माटे जीव फांफां
मारेछे, ते ऋद्धि आत्मामां समायीछे. आत्मा पोतानुं स्वरूप
ज्ञानवडे जाणेछे अने परद्रव्यनुं स्वरूप पण ज्ञानवडे जाणेछे.
आत्माना समान कोइ उत्तम वस्तु नथी, आत्मा आदेय, आ-
राध्य पूज्यछे. आत्मानी ऋद्धि आत्मस्वरूपना ज्ञानथी प्राप्त
थायछे. त्रण जगत्नो स्वामी आ प्रत्यक्ष देखाता शरीरमां रहेलो

आत्माछे, तेना करतां चमत्कारी बीजी कइ वस्तुछे? सुरमणि, कामकुंभ, कामधेनु पण आत्माना आगळ हीसाबमां नथी. आत्मा तेज परमात्माछे. आत्मा ते निश्चयथी विचारतां पोतानो गुरुछे, स्याद्वाद रीते आत्मानी ओळखाण कोइ भाग्यवंत पुरुषने थायछे, आत्मानुं स्मरण करवुं. प्रवृत्ति मार्गमां प्रवृत्ति त्यां सुधी थायछे के ज्यां सुधी आत्मानुं ज्ञान तथा रमण नथी, आत्मानुं स्वरूप ज्यां सुधी जाण्युं नथी, त्यां सुधी प्रवर्धमान गुणठाणानी प्राप्ति थती नथी कह्युंछे के–

आया सामाईअ आया सामाइयस्स अठे;

वळी कह्युंछे के–

जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ;
जे सव्वं जाणइ, से एगं जाणइ ॥१॥

एको भावः सर्वथायेन दृष्टः सर्वेभावाः सर्वथातेन दृष्टाः
सर्वेभावाः सर्वथायेन दृष्टाः एकोभावः सर्वथातेन दृष्टः२

यथातथ्य एक आत्मानुं स्वरूप जेणे जाण्युंजे, तेणे सर्व द्रव्यनुं स्वरूप जाण्युंछे. कारण के–ज्यां सुधी भव्यात्मा आत्मानुं स्वरूप जाणतो नथी तावत् अन्य द्रव्योनुं स्वरूप जाणी शकतो नथी, सर्व शास्त्रनी रचना पण आत्मज्ञान थकीछे. सर्व शास्त्रकारो आत्मानी स्तुति करेछे.

स्तोत्रम्–

अनंतदेवेश जगन्निवास, त्वमक्षरं त्वंपुरुषः पुराणः
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता, त्वमस्य विश्वस्य परंनिधानम् १

भावार्थ–हे आत्मा तुं अनंतछे, तारो कदी अंत नथी, तुं आत्मा

देवतानो पण स्वामीछे—चतुर्दश रज्वात्मक लोकमां तारी स्थितिछे. तुं असंख्यात प्रदेशमयी छे, त्यारा प्रदेशो क्षरे तेम नथी. तारुं स्वरूप नाश पामवानुं नथी. माटे तुं अच्युत अने अक्षरछे, अनादि काळनो तुं आत्माछे, तुं अव्यय स्वरूपछे. सनातन शुद्धधर्ममय तुंछे, भव्यात्माओने मोटामां मोटुं निधान तुंछे. तुंज परमेश्वररूपछे. आम पोते मुनिराज शरीरमां व्यापी रहेला आत्मानुं ध्यान करे.

" दोहा. "

नव तत्त्व षड् द्रव्यना, ज्ञाने छे उपयोग;
अनंत गुणनी ऋद्धिनो, कर्त्ता नित्यज भोग. ७४
भोगी नहि परभावनो, आत्मस्वरुपे ध्यान;
ध्यान नहिं परभावनुं, देखे चरण निधान. ७५

भावार्थ—जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, पुण्यतत्त्व, पापतत्त्व, आश्रव, संवर, निर्जरा, बंध, ने मोक्ष ए नवतत्त्वनुं द्रव्य अने भावथी जेने ज्ञान थयुंछे, अने षड्द्रव्यनुं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावथी ज्ञान जेने थयुंछे, ते ज्ञानी जाणवो नवतत्त्वनो षड्द्रव्यमां अंतर्भाव थायछे. षड्द्रव्य विना जगत्मां अन्य कोइ पदार्थ नथी, षड्द्रव्यमां पण एक आत्मद्रव्य पोतानुंछे. आत्मद्रव्यनी श्रद्धा थवी मुश्केलछे. कोइक तो आत्माने जळ पंकजवत् सर्वथा अलिप्तमानी व्यवहार निश्चयनयना ज्ञान विना एकांत मिथ्यात्व स्वरूपे आत्मानुं ध्यान करता समकित विना चतुर्गत्यात्मक संसारना त्रिविध तापोने पुनः पुनः प्राप्त करी विवेक शून्यताए ग्रथिलनी पेठें कृत्याकृत्यने नहीं गणता मोहनीयना उदये नरभवनी निष्फलताए संसारना चतुरशितिलक्ष जीवयोनिना प्रवाहमां रोग शोकथी पीडाता चक्र खाता तणायछे, जेटला विद्वानो महत्वातवंत थया, थायछे, अने थशे ते सर्व ज्ञानना प्रताप थकी

अने ते ज्ञान आत्मद्रव्यमां रह्युंछे, दुनीयामां जेटलां शास्त्रछे ते आत्मामांथी नीकळ्यांछे. अभ्यासादिक ज्ञाननां साधनछे, अनंत गुणोनो भोक्ता आत्माछे, आत्मानी ऋद्धि सदाकाल आत्मामां रहीछे, आत्म ऋद्धिनो कदापि नाश थनार नथी. निश्चयनयथी जोतां आत्मा पराभावनो भोगी नथी. आत्मार्थी परभावनुं ध्यान निवारी स्वशुद्ध आत्मस्वरूपनुं ध्यान करे तो चरणनिधान देखे, क्रियाकांडथी भगवदाज्ञा डोळघालु कपटीओ अज्ञानी जीवने पोताना फंदमां फसावी धर्मना विश्वासमां फसावी पोते पण अज्ञानमां बुडेछे, अने अन्योने पण बुडाडेछे, सिंहना पराक्रमनो अभिमानथी पोतानामां आरोप करनारो शृंगाल क्यां सुधी कपट वृत्ति चलावी शके. आत्मज्ञान तेज धर्मछे, तेज आदेयछे, अधुना पंचविषना योगे आ भरत क्षेत्रमां कृष्ण पक्षीय जीवोनी बाहुल्यताए गीतार्थना, सद्गुरुना समागम तथा विश्वास विना अने भवाभिनंदीपणाना त्याग विना अशुभ व्यवहारना त्याग विना मुमुक्षुना योग्यगुणो विना अज्ञानी जीवो ज्यां त्यां दृष्टिरागनी अंधताए विवेकनयनशून्य थया छता उपर उपरथी धर्मनामे टीलां टपकां करता अने करभ विवाह प्रसंग रासभ प्रशंसाना आचरणमां पोतानी वाहवाहमां कृत कृत्यता समजनार अज्ञानी जीवो सद्गुरुनी वाणी विषना प्याला समान लेखवी, कुगुरुनी वाणी अमृतना प्याला लेखवता, कुधारामां सुधारानी बुद्धि माननार, अस्थिर चित्तवाळा पामर प्राणीओ आध्यात्मिक शास्त्रोना ज्ञान विना अने देवगुरु धर्मनी श्रद्धा विना स्वच्छंदाचारीपणाने लीधे आत्मप्रशंसा अने परगुणापकर्षताए अज्ञानश्रद्धाए तत्त्व पाम्या जाणे होयनी ? एम संसारमां पराभव प्रवृत्तिथी स्वआयुष्य पूर्ण करी नृभवचिंतामणि रत्नसमान हारी नरकादिक गतिना

मेमान थइ आधि व्याधिनी दुःख श्रेणि परंपराने पामेछे.

आत्मार्थि जीव स्वपरवस्तुनो विवेक करी हेयज्ञेय उपादेय समजी गुणठाणानी परिणति समजी व्यवहार निश्चयनयनुं स्वरुप गुरुगमद्वारा समजी वैराग्यनी तीक्ष्णताए सद्गुरु आज्ञाभक्ति विनययोगे सालंबन अने निरालंबन ध्याननी अभिलाषाए अंतःकरण शुद्धिपूर्वक स्याद्वाद आत्मिक धर्मनुं आराधन करतो जल पंकजवत् वर्तन चलावतो व्यवहारमां वर्तेछे, परभाव प्रवृत्तिमूलरागद्वेषमहा मल्लछेदक आत्मस्वभावपरिणतिमां वर्तता भव्यात्माओ ज्ञान ध्यानयोगे क्षयोपशमभावे वा उपशम भावे मोहनीय कर्मनो उच्छेद करी समकित पामी स्वल्पकालमां कर्मक्षय करी केवलज्ञानादि संपदा पामी चउदमुं गुणठाणुं आयुष्य मर्यादाए उल्लंघी सादि अनंति स्थिति पामी अनहद आनंददायक शाश्वत शिवसुख स्वरुप मुक्तिधाम पामी शकेछे. समये समये जीव सात वा आठ कर्म बांधे छे, स्वभावमां रमे तो कर्मबंध टळेछे, माटे आत्मतत्त्वनी प्राप्ति अर्थे सद्गुरु वचनामृतनुं विनयभक्तियोगे पान करवुं एज हिताकांक्षा.

" दुहा. "

अखंड अक्षय शाश्वतुं, देखी आतम रूप;
चित्ते चमक्यो आतमा, अरे हुं तो महा भूप.७६

भावार्थ—अखंड, अक्षय, शाश्वतस्वरुप पोतानुं पोते आत्मा देखी चित्तमां चमक्यो अर्थात् आश्चर्य पाम्यो, अने कहेवा लाग्यो के—अरे हुं तो महाभूपछुं, अद्यापि पर्यंत में पोताने अज्ञानी जाण्यो, हुं गरीब छुं एवी मने भ्रांति हती पण हवे ए भ्रांति चाली गइ, हुं निर्धनछुं एम हुं पोताने मानतो हतो पण जाण्युं के—मारा आत्मामां अनंत धन रह्युंछे, तेनी संप्रति काले खबर पडी, चक्रवर्ति आदि

राजाओने हुं महाभूप तीरके स्वीकारतो हतो पण हवे आत्मानुं स्वरुप ओळखतां मालुम पडयुं के इंद्र, चंद्र, नागेंद्र करतां पण आ शरीरमां व्यापक आत्मा महाभूपछे. एनी प्रभुताइने कोइ पामी शके तेम नथी. स्त्री पुत्रादिकपर जेटली ममता थाय छे तेटली जो आत्मा उपर ममता थाय अने तेनुं ध्यान करवामां चित्त लागे तो आत्मा परमात्मस्वरूपने पामे. बहिरात्मिसाधुओने शिष्यो करवा उपर जेटली चाहनाछे तेटली जो आत्माना उपर चाहना थाय तो परमात्मपद अवश्य पामी शकाय. बाह्यधन तो मळेछे अने पापना उदये विणशी जायछे पण आत्मानुं अंतर्धन कदापि काळे नाश पामी शकतुं नथी. दुनीयाना प्रवाहमां जे तणायछे ते आत्मिक लक्ष्मी पामी शकता नथी–घणा भव कर्या, घणां शरीर छोड्यां, पौद्गलिक माया सर्व नाश पामी किंतु त्रणे काळमां आत्मा चेतन स्वभावेज वर्तेछे माटे आत्मा शाश्वतछे, वांचवा अगर कहेवा मात्रथी नहीं पण ते अनुभवगम्यछे.

“ दुहा. ”

रझळ्यो हुं परदेशमां, लहियां दुःख अनंत;
शुभ देखी निजदेशने, शान्त थयो शिवकंत. ७७

भावार्थ–पोताना आत्माना असंख्यात प्रदेश ते पोताना प्रदेश जाणवा अने पृथ्वीना जे देश ते पुद्गलास्तिकायछे, पुद्गलास्तिकाय द्रव्य जडछे, पृथ्वीना प्रदेशोने पोताना प्रदेश मानी परदेशमां रझळ्यो, क्षुधा पिपसाए ताडनतर्जन छेदनभेदन आदि आत्माए अनंत दुःखो सहन कर्यां, अने नाना प्रकारनां शरीरो धारण कर्यां पण दुःखनो अंत आव्यो नहीं, पण हवे सद्गुरुयोगे आत्मानुं स्वरूप जाणतां पोतानो देश ओळख्यो अने आत्मा मुक्तिनो स्वामी शान्त

थयो, ध्यानथी आत्मा अने परमात्मानो भेद टळेछे. कहुंछे के-

आत्मनोहि परमात्मनियो भूद्भेद बुद्धि कृत एव विवादः;
ध्यानसंधि कृदमुंव्यपनीय द्रागभेदमनयोर्वितनोति.१

आत्मा अने परमात्मामां भेद बुद्धिनो विवाद हतो, अर्थात् तेमां पंडितना विवादरूप झघडा हता तेने ध्यानरुप संधि पाळे ध्यानी पुरुषे जलदीथी तेनुं अभेदपणुं करी आप्युं, ध्यानमां आत्मा अने परमात्मानो अभेद थाय एटले ध्याननी सिद्धि जाणवी. ध्यानीने पौद्गलिक देश उपर क्यांथी ममता होय. भर-निंद्रामां शून्यतानी पेठे ध्यानो पुरुष रागद्वेषशून्य थायछे, खरुं सुख ध्यानी पुरुष जाणेछे, शब्दज्ञानियो भले व्याकरण न्यायना वाक्पंडितपणाथी इदं भवति इदं न भवति इत्यादिथी भोळा लोकोनी आगळ भ्रमजाल रचे. किंतु आत्मिक सुख मळतुं नथी, अने निरर्थक बाह्याचारनिंदकी थइ मनुष्य जन्म हारेछे, एवा शब्द ज्ञानीओने स्वदेशनी ममता थवी मुश्केलछे, शब्दज्ञानियो खंडनमंडननी संकल्प जाळमां पडी आत्मिकसुख प्राप्त करता नथी, अने तेमनुं परदेश पर्यटन बंध थवानुं नथी; बाह्य क्रियाकांडनी खटपटमां शब्दज्ञानीयो मतभेद चलावी परस्पर राग द्वेष करेछे, तेमनुं कल्याण मत कदाग्रहत्वथी थवुं दुर्लभछे. स्वदेश अने परदेशनुं ज्ञान नथी त्यां सुधी जीव मिथ्यात्वी जाणवो. आत्मतत्त्वनुं ज्ञान थाय त्यारे मनुष्य जन्म लेखे जाणवो, खरेखर आत्मज्ञ महाशयो आत्मानी तात्त्विक शांतताने पामेछे; उपर उपरनी हल्दरना रंग समान जे शांतता ते अंते टकी शकती नथी. केटलाक जीवो उपरथी बगनी पेठे कपटवृत्तिथी शांत देखायछे, अने अंतरमां कपटथी भरेला होय छे, केटलाक जीवो उपरथी देखतां शांत जणाता नथी अने अंतरमां खरेखर शांत होयछे, केटलाक जीवो उपरथी पण शांत होयछे अने

अंतर्मां पण शान्त होयछे, केटलाक अंतर्थी शांत होता नथी अने उपरथी पण शांत होता नथी. शांतावस्थानुं सुख आत्मज्ञानीयो पाम्या, पामेछे, अने पामशे.

" दुहा. "

परपुद्गलना देशने, मान्या मारा देश;
तेनी ममताए करी, ग्रहिया पुद्गल वेष. ७८
ठाम ठाम हुं भटकियो, चार गति दुःख खाण;
त्यां पण ममता देशनी, कीधी गुणनी हाण. ७९

भावार्थ–पौद्गलिक देशने पोताना मानी राग द्वेषथी कर्म ग्रहण करतो छतो विचित्र प्रकारनां शरीर धारण कर्यां, नाना देहो धारण करी दुःखनी खाणभूत चार गतिमां ठेकाणे ठेकाणे चेतन भटक्यो, अने ज्यां ज्यां उत्पन्न थयो त्यां पण देशनी ममता धारण करी पोतानुं भान भूली आत्मगुणनो तिरोभाव कर्यो, आ मारुं घर, मारुं क्षेत्र, मारी पृथ्वी, आदिना अभिमानथी रुशिया जापाननी पेठे हजारो जीवोनो नाश थयो तेनुं कारण परपौद्गलिक देशनी ममताछे, अज्ञानी जीवो स्वदेशाभिमानमां एम. ए. सुधी भण्या होयछे तो पण अज्ञान प्रवाहमां तणाइ जायछे. पोतानो देश कयो छे ते गुरुभक्तो निश्चयतः जाणी शकेछे. मन बाह्य विषयमां धावे छे, तावत् जीव कर्मनी राशि अशुद्ध परिणामे ग्रहेछे, गुजरात, वंगालादि देशो माराछे अने हुं एनोछुं, आ राज्य मारुंछे अने हुं एनोछुं, आ कुटुंब मारुंछे, अने हुं एनोछुं, एवी बुद्धि यावत् थायछे तावत् जाणवुं के–चेतन जडता अनुभवेछे, आत्मा अने परमात्म स्वरुपनुं ज्ञान थाय तेने ज्ञान कहेछे. अने आत्मा अने परमात्मानी ध्यानयोगे ऐक्यता थाय तेने विज्ञान कहेछे.

उक्तञ्च—

अन्य शास्त्रेऽपि क्षेत्र क्षेत्र ज्ञयोर्ज्ञानं, तज्ज्ञानं ज्ञानमुच्यते:
विज्ञानं चोभयोरैक्यं, क्षेत्रज्ञ परमात्मनोः १

स्वकीय अज्ञानथी आत्मा भटकायछे, अने पोताना ज्ञानथी कर्म विमुक्त आत्मा बनेछे, आत्मानो उद्धार आत्माज करी शकेछे, आत्मानुं उपादान कारण आत्माना गुणोछे, उपादाननी शुद्धि अर्थे भव्य जीवो निमित्त हेतु अवलंबी परमात्मपद पामेछे. अभव्य जीवोमां उपादान कारणनी शुद्धि थाय तथा प्रकारनो स्वभाव नथी. निमित्त कारण तो पामेछे, किंतु अभव्य जीवमां भव्य स्वभाव नथी, तेथी उपादान कारण शुद्ध थतुं नथी भगवद्गीताना छट्टा अध्यायना पांचमा श्लोकमां कह्युंछे के—

श्लोक.

उद्धरेदात्मनात्मानं, नात्मानमवसादयेत्,
आत्मैवह्यात्मनो बन्धु, रात्मैव रिपुरात्मनः १

आत्मा उद्धारवो पोते, आत्माने मारवो नहि;
बंधु पोतेज पोतानो, पोतेज रिपु छे सहि. १

आत्मा स्वशुद्धपरिणामयोगे पोते पोतानो उद्धार करेछे अर्थात् परमात्मपद पामेछे, प्रभुरुपो कहेछे के—आत्माने भव्यात्माओए मारवो नहीं, पोताना आत्मानो घात करवो तेना समान पाप नथी, अध्यात्मगीतामां कह्युंछेके—

स्वगुण रक्षणा तेह धर्म, स्वगुण विध्वंसना ते अधर्म;
भाव अध्यात्म अनुगत प्रवृत्ति, तेहथी होय संसार छित्ति. १

आत्माना अनंत गुणो कर्मयोगे ढंकायाछे, निगेभावे रह्याछे,

तेनु रक्षण करवुं एटले ते अनंत गुणोने आविर्भाव करवा, कर्मशत्रुथी अवरावा देवा नहीं तेनुं नाम धर्मछे, धर्मना चार भेदछे, १ नामधर्म, २ स्थापनाधर्म, ३ द्रव्यधर्म, ४ भावधर्म. कोइनुं धर्म एवुं नाम आपवुं ते नामधर्म, कोइ पण वस्तुमां धर्मनो आरोप करवो ते स्थापनाधर्म, धर्मना हेतुओनुं अवलंबन करवुं ते द्रव्यधर्म वा उपयोग शून्य जे धर्म ते द्रव्यधर्म जाणवो, आत्मानी उपयोगताए नयनिक्षेपा सप्तभंगीथी आत्मानुं अनेकान्त स्वरुप जाणी श्रद्धा करवी, तेनुं रक्षण करवुं तेनुं नाम भावधर्म जाणवो.

ते भावधर्म आत्मामां रह्योछे, शुद्ध, सत्य, अखंड, अक्षयरुप भावधर्म अरुपीछे अने ते भव्य जीवोने प्राप्त थायछे, समकितवंत जीवने भावधर्मनी प्राप्ति थायछे, भावधर्म विना सर्व क्रिया निष्फल जाणवी.

द्रव्यधर्मना बे भेदछे, लौकिक द्रव्यधर्म बीजो लोकोत्तर द्रव्यधर्म, लौकिक द्रव्य मिथ्यात्वनुं कारणछे, भावधर्म सापेक्ष लोकोत्तर द्रव्यधर्म परमात्मपद साधक निमित्त कारणछे, आत्मीय गुणोनुं रक्षण ते धर्म, अने आत्माना गुणोनो नाश करवो एटले आत्माना गुणो तिरोभावे वर्ताय तेम रागद्वेषयोगे ज्ञानावरणीयादि कर्म ग्रहण कराय तेनुं नाम अधर्म जाणवो, नाम अध्यात्म, स्थापना अध्यात्म, द्रव्य अध्यात्म अने भाव अध्यात्म ए चार ४ निक्षेपाए अध्यात्म जाणवुं. आद्यनां ३ त्रण अध्यात्म अनुपयोगी जाणवां, भाव अध्यात्मथकी कर्मकलंक नाश पामेछे. माटे भाव अध्यात्म अनुगत प्रवृत्ति थाय तो तेथी संसारनो उच्छेद थायछे, माटे ज्ञानी पुरुषो कहे छे के आत्माने मारवो नहीं, आत्मानी जो अशुद्ध परिणति थइ तो आत्माए आत्माने मार्यो कहेवायछे, आत्मा पोते पोतानो बंधुछे, एम कहेवाथी सिद्ध थयुं के पोतानुं भलुं करवा पोते आत्मा समर्थ

छे, राग द्वेषने आत्मा जीते तो आत्मा बंधु समानछे, सगा सहोदर बंधुनी ममताथी आपणा पोताना आत्माने राग द्वेष लाग्याछे ते दूर थता नथी, माटे बीजाने बंधु तरीके मानवा ए तो संसार व्यवहारनी कल्पनाछे, व्यवहारिक कार्योमां सहोदर बंधुनी जरुरछे, किंतु आत्मा परमात्मस्वरूपमय थाय तेमां तो आत्माज पोते बंधुछे, त्यां अन्यनुं कशुं चालतुं नथी, रागद्वेषना प्रवाहमां आत्मा अशुद्ध परिणामथी वहेछे तो आत्मा पोते पोतानो शत्रुछे एम जाणवुं. आत्मा परभाव त्यागी स्वभावमां रमे तो आत्मानो कोइ शत्रु नथी, आत्मा विना आत्मानो शत्रु अन्य कोइ व्यवहारथी कल्पना मात्र जाणवो. राग द्वेषे संसारमां राचवुं माचवुं, तथा आत्मानी अज्ञानताथी मिथ्यात्व परिणतिए करी आत्माने परमात्मपद पामवामां आत्मा शत्रुभूतछे, यावत् जीव समकित पाम्यो नथी अने मिथ्यात्व भावे रमी परने पोतानुं मानेछे तावत् तात्त्विक सुख पामी शकतो नथी, माटे आत्मिक असंख्यातप्रदेशमां ध्यान देवुं.

" दुहा. "

धर्माऽधर्माऽकाशना, प्रदेश हान न लेश;
पुद्गलना जे देश छे, दे अज्ञानी क्लेश. ८०

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायना प्रदेशथी आत्मगुणोनी हानि लेशमात्र पण थती नथी, पण पुद्गल स्कंधो अज्ञानीने क्लेश आपेछे

धम्मा धम्मा गासा तिन्नीवि ए ए अणाइया ।
अपज्जवसियाचेव सव्वद्धं तु वियाहिया.

धर्म, अधर्म अने आकाश ए त्रण द्रव्य अनादिकालनांछे अने अनंछे १४ चउदराजलोक व्यापि धर्मास्तिकायछे, अधर्मास्तिकाय

पण चउद राजलोक व्यापीछे, आकाशास्तिकाय लोकालोक व्यापी छे. अशुद्ध परिणति योगे आत्मा पुद्गलास्तिकायना स्कंधोने ज्ञानावरणीयादि अष्टविधकर्मराशिरूप बनावी ग्रहण करी संसारमां परिभ्रमण करेछे.

आत्मा शुद्धस्वरूप जोतां अरूपीछे, छतां रूपी एवा कर्मथी आत्माना अनंतगुणोनुं आच्छादन थायछे, आत्माना एकेक प्रदेशे अनंति कर्मवर्गणाओ लागीछे, किंतु आत्माना आठ रूचक प्रदेशे कोइ कर्म लागतुं नथी ते आठ रूचक प्रदेश सिद्ध समान सदाकाल निर्मल अनादि कालनाछे, ए आठ रूचक प्रदेशे पण जो कर्म लागे तो जीवनुं जीवत्वपणुं चाल्युं जाय. रूचक प्रदेशनो एवो स्वभावछे के तेने कोइ कर्म लागी शके नहीं, जेम जेम एकेंद्रियादिक भवनुं उल्लंघन करी उच्च गतिमां आवेछे तेम तेम तरतमयोगे सामान्यतः मतिज्ञान श्रुतज्ञाननी प्राप्ति थायछे.

शिष्यप्रश्न–आत्माना असंख्यात प्रदेशी शी रीते कहेवाय ? असंख्यात प्रदेश कहेवाथी आत्माना असंख्यात भाग थया त्यारे आत्माना खंड थया अने अखंड आत्मा कहेवाशे नहिं माटे आत्माना असंख्यात प्रदेशो कहेवा ते शीरीते=

सद्गुरु–आत्मा असंख्यातप्रदेश मळी कहेवायछे, असंख्यात प्रदेश कहेतां आत्माना असंख्याता भाग थइ शकता नथी. कारणके प्रदेशो एक एकथी जुदा पडता नथी, प्रदेशो वाळ्या वळता नथी, छेद्या छेदाता नथी, हण्या हणाता नथी. केवली केवली समुद्घात करे त्यारे आत्माना प्रदेशो लोक प्रमाण विस्तारेछे छतां पण प्रदेशो एकमेकनी साथे नित्य संबंधथी संबंधितछे. तेथी असंख्यात प्रदेशे मळी आत्मा कहेवामां कोइ जातनुं दूषण नथी आवतुं, आत्माना प्रदेशो अरूपीछे, तेथी

असंख्य प्रदेशात्मक आत्मा पण अरूपी कहेवायछे. आत्माना खंड कोइनाथी पाडी शकाता नथी, अने कोइ काले खंड थता नथी. माटे अखंड आत्मा कहेवायछे, असंख्यातप्रदेशो कल्पना मात्र नथी पण ते सत्यछे. कल्पना मात्र कहेवामां प्रत्यक्ष प्रमाण नथी, अनुमान प्रमाण नथी, उपमान प्रमाण पण नथी. अने आगम प्रमाणमां तो आप्तमुख्य श्री सर्वज्ञ वाक्य प्रमाण कहेवायछे-श्री सर्वज्ञ भगवंते कह्युंछे के-लोगागासतुल्ला अप्पपएसा माटे लोकाकाशना जेटला आत्माना प्रदेशछे एम सत्य श्रद्धा करवी.

प्रश्न-कोइ एक गिरोलीनी पुंछडी कपाइ जइ त्यारे एक तरफ पुंछडी कूदेछे. उछळेछे, अने एक तरफ धड उछळेछे त्यारे जीव वेमां समजवो के एकमां ?

उत्तर-पुंछडी अने धडमां एम वेमां आत्माना असंख्य प्रदेशो होवाथी नेमां अपेक्षाए जीव कहेवाय छे. केटलाक प्रदेशो पुंछडीना भागमां रहेला होयछे तेथी ते हालेछे पण धडना भागमां ते सर्व प्रदेशो भळी जायछे त्यारे पुंछडी हालती नथी. ते समये धडमां जीव कहेवायछे ए उपरथी सिद्ध थायछे के आत्माना प्रदेशोथी एवो वनाव वने छे, सूक्ष्मबुद्धि अने गुरुगमथी आ दृष्टान्त मनन करवुं. ज्ञानावरणीय कर्म सर्व जीवने एक सरखुं होय तो सर्व जीव एक सरखा ज्ञानवाळा होवा जोइए पण ज्ञान एक सरखुं होतुं नथी माटे ज्ञाननुं प्रतिबंधक ज्ञानावरणीय कर्म जीव जीव प्रत्ये भिन्न भिन्न नाना प्रकारनुं होयछे. तेथी तेना क्षयोपशम भावे प्रत्येक जीवने भिन्न भिन्न प्रकारनुं ज्ञान थायछे. उपाधि भेदे ज्ञानावरणीयकर्म पंचविधछे, ज्ञानावरणीयादि

अष्टकर्म आत्माना अष्ट गुणोनु आच्छादन करेछे. अष्टकर्मना नाशथी अष्ट गुणो आविर्भावे थायछे, यद्यपि जो के कर्म बलवान्छे तथापि आत्मा ज्ञानयोगे स्वस्वरूपमां रमे तो क्षणमां कर्मनो नाश करी शकायछे, भगवद्गीतामां पण कह्युं छे के–

अध्याय चोथो श्लोक ३७ मो.

यथैधांसि समिद्धाऽग्नि, र्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन.
ज्ञानाग्निः सर्व कर्माणि, भस्मसात् कुरुते तथा. ३७
नहि ज्ञानेन सदृशं, पवित्र मिह विद्यते,
तत्स्वयं योग संसिद्धः कालेनात्मनि विंदति. ३८
अपिचेदसि पापेभ्यः, सर्वेभ्यः पापकृत्तमः
सर्वंज्ञानप्लवेनैव, वृजिनं संतरिष्यसि. ३९

भावार्थ–महामेरुना ओळंघनारने वालुका जेम लंघ्यछे, अग्नि काष्ट समूहने बाळी भस्म करेछे तेम ज्ञानरूप अग्नि सर्व कर्मोने बाळी भस्म करेछे आत्मानुं अनेकांतपणे यथातथ्य ज्ञान थाय तो कर्मनो नाश थायछे. परम पुरुषार्थ साधन ज्ञान समान कोइ नथी, अपवित्रने पण ज्ञान पवित्र करेछे, माटे ज्ञान सदृश अन्य कोइ पवित्र नथी, ज्ञानी सर्व पापनो नाश करेछे, हुं आत्मा परमात्मा स्वरूपछुं एम स्वसत्ताने भव्यात्मा ध्यावेछे.

मोटामां मोटुं पाप करनारो तुं होइश तो पण हे अर्जुन तुं ज्ञान नौकाथी सर्व पाप तरी जाइश एम कृष्ण कहेछे.

शिष्य–आ ठेकाणे तमो केम भगवद् गीतानो दाखलो आपोछो?

जैन–जैनधर्म एक देशी नथी पण सर्व देशीछे, जैनोमां जेम ज्ञाननुं महात्म्य कथ्युंछे, तेम गीतामां पणछे ते जणाववा माटे साक्षी

आपीछे.अन्य शास्त्रना श्लोकोने समकिती जीव अनेकान्तनयनी अपेक्षाए ग्रहण करी समकित रूपे परिणमावेछे,एक शरीर त्यागी अन्य शरीर धारण करवानु कारण कंइ पण होवुं जोइए. ते कारण कर्मछे, अने कर्म आत्माथी भिन्नछे, भिन्नछे त्यारे ते चैतन्य नथी, विपरीत जड द्रव्य सिद्ध ठर्युं, माटे तेनो पुद्गलास्तिकाय द्रव्यमां अंतर्भाव थायछे. लोहचुंबक पोतामां रहेली शक्तिवडे जेम सोयने पोतानी भणी खेंचेछे तेम आत्मा अशुद्ध परिणतियोगे स्वभायोग्य पुद्गलोने राग द्वेषयोगे कर्मरूपे ग्रहण करेछे. अने कर्मथकी चार गतिनां दुःख जीव पामे छे. नैश्चयिक शुद्ध आत्मिक स्वरूप ध्यावे अने आत्म ने सर्वथकी न्यारो माने अने परवस्तु उपरथी अहंममत्वभाव उठाडे तो सिद्ध बुद्ध परमात्म स्वरूपमय आत्मा थाय.

" दुहो "

वर्ण पांच जेमां रह्या, गंध दोय ज्यां खास;
पांचे रसनी स्थीति ज्यां, स्पर्श आठनो वास. ८१
एवा पर्यायो रह्या, तहिज पुद्गल द्रव्य;
व्याप्युं लोकाकाशमां, कर्त्ता नहि कोइ भव्य. ८२
काल अनादिथी रह्युं, रहेशे काल अनंत;
नित्यानित्यपणे सदा, रूपी द्रव्य कहंत. ८३

भावार्थ—पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, अने आठ स्पर्शरूप पर्यायो जेमां रह्याछे, तेने पुद्गलद्रव्य कहेछे, ते लोकाकाशमां व्याप्युंछे, पण अलोकाकाशमां पुद्गल्द्रव्य नथी, पुद्गल्द्रव्य अनादिकालथीछे, अने अनंत काळ सुधी रहेशे, द्रव्यार्थिक नये पुद्गलद्रव्य नित्यछे, अने पर्यायार्थिक नये पुद्गल्द्रव्य अनित्यछे, पुद्गल द्रव्यरूपीछे.

" दुहा. "

घटपट वस्तु जे दिसे, ते सहु पुद्गल जाण।
ते आतमथी भिन्न छे, शास्त्र वचन प्रमाण. ८४
पुद्गल देशे म्हालतां, मार्यो चेतन जाय;
तेमां ममता मानता, मरी मरी दुःख पाय. ८५
पृथ्वी थइ नहि कोयनी, कोटी करे उपाय;
लक्ष उपायो लखवे, नहि आकाश झलाय. ८६
पुद्गल वस्तु कारमी, घर हाटां ने म्हेल;
सोनुं रूपुं धन सहु, पुद्गलना छे खेल. ८७
दृष्टा पुद्गलनो सदा, सुख दुःखनो जे जाण;
वास वस्यो पुद्गल विषे, आतम गुणनी खाण. ८८
पुद्गल जे देखाय छे, तेथी चेतन भिन्न;
कर्त्ता चेतन कर्मनो, परपरिणति रस पीन ८९
आत्माऽसंख्य प्रदेश छे, प्रति प्रदेशे ज्ञान;
अनंत जिनवर भाखियुं, छति पर्याये जान ९०
विशेष सामान्ये करी, दो भेदे उपयोग;
असंख्यात प्रदेशथी, वर्त्ते निजगुण भोग. ९१
अस्ति धर्म अनंतनो, भोगी आतम राय;
नास्ति धर्म अनंत त्यांय, समय समय वर्तांय. ९२
उज्ज्वल आत्मप्रदेश छे, समता रस भंडार;
तेनो कर्त्ता आतमा, शुद्धनये निर्धार. ९३

वसतां तेह प्रदेशमां, रमतां समता संग;
सुखसागरमां उछळे, हर्षानंद तरंग. ९४
ममता पर परदेशनी, भागी जागी ज्योत;
सहजे आत्म स्वरूपनो, थयो मद्दा उद्योत. ९५
भिन्न जाति पुद्गल तणी, मारी तेथी भिन्न;
भिन्न जातिशुं संग श्यो, तेथी थइयो खिन्न. ९६
संग अनादि कालथी, तेने मानी मित्र;
राग द्वेषना योगथी, ग्रहियां देह विचित्र. ९७
दुग्धनीरसंयोगवत्, आतम पुद्गल संग;
थयो अनादि कालथी, करतां कर्म कुढंग. ९८
तेथी अवळी परिणते, कर्त्ता कर्म कहाउ;
सवळी परिणति योगथी, शुद्ध निरंजन थाउ. ९९
पुद्गल खावुं पहेरवुं, पुद्गल वसति महेल;
वास वसी तेमां मुधा, मानी सुखनी स्हेल. १००
रमुं हवे शुं बाह्यमां, जेनी कूडी चाल;
संगे तेनी माहरे, थवुं पडयुं बेहाल. १०१
मित्र नहि ते माहरो, अवळो तास सहाव;
हाय हाय तस संगथी, बनिया एह बनाव. १०२

भावार्थ—आ प्रत्यक्ष घट पट दंडादि वस्तु चक्षुपा विषय गोचर थायछे. ते पौद्गलिक वस्तु जाणवी. अने ते आत्म द्रव्यथी भिन्नछे. एम श्री तीर्थंकर महाराजा शास्त्रमां कथेछे.

पृथ्वी आदिक रूपे स्थित उपवन, गिरि, वस्त्रादि, गुजरात, पंजाब, इंग्लांड, युरोप, अमेरिकादि देशोमां मारापणानी बुद्धिथी राची माची तल्लीन बनी तेमां म्हालतां चेतन मार्यो जायछे, देश, गृह, धनादिकमां मारापणानी बुद्धि धारतो मृत्यु पामी पुनः पुनः तद्गत वासना योगे जन्म धारण करी आधि व्याधि उपाधिनां दुःखो पामेछे. हे चेतन शुं तृष्णा जाळमां फसायछे ? स्वभावाभावरूप अज्ञानतमः राशिमां विवेक नयन शून्यात्मा अत्र तत्र ऐहिक सुखनी भ्रान्तिए भ्रमण करतो, मनोराज्यनी संकल्प विकल्प श्रेणिए चढयो छतो धूम्र वृन्द ग्रहण पुरुषवत् क्षणिक तुच्छ सर्वदा जड पृथ्वीने पोतानी मानी तदर्थे सहस्रशः जीव घातक बनी शोफापुरुषवत् स्वमहत्वतामां अन्य भव्यात्माओने पर्वतारोहण पुरुष दृष्टिवत् लघु गणी पारमार्थिक तत्त्व शून्यात्मा क्षणिक तुच्छ स्वार्थमां राची परवस्तुमां ममतानो दृढ भाव संकल्पी रात्री दिवस तिलपीलक यंत्र वृषभवत् असदाचरणोमां स्वकाल अज्ञानी पशुवत् निर्गमेछे, पोतानाथी अत्यंत भिन्न पृथ्वी कोइनी थइ नथी, अने थवानी नथी मारी मारी मानवी ए केवल भ्रांतिछे, लक्ष उपायो करतां पण आकाश हाथमां झाली शकातुं नथी. तेम कोटि उपायो करतां पण पृथ्वी देश, घरबार पोतानां थवानां नथी, देश, घरने जीव मूकी परभवमां चाल्यो जायछे, जे घर हाट म्हेल बंधावतां रक्षण करतां चेतने जरा पण शांति लीधी नहीं, ते घर हाट मूकी मरण समये जीव टगमग जोतो जीववानी सहस्रशः आशाओ करतो पण परभवमां चाल्यो जायछे, साथे कोइ पण वस्तु आवती नथी, ज्यां जे वस्तु हती ते त्यांने त्यां रही, अनंता भव कर्या पण कोइ वस्तु साथे आवी नहीं, तो आ भवमां तुं कइ वस्तु पोतानी साथे लइ जइश ? हा अलबत कोइ पण वस्तु पोतानी साथे आवनार

नथी, पौद्गलिक वस्तु उपर शो राग अने द्वेष करवो ? केटलीक वस्तुओ मळेछे अने केटलीक वस्तुओ नाश पामेछे, सगां संबंधी वर्गनी प्रीति पण स्वार्थना लीधे क्षणिकछे. खरी वस्तु आत्माछे, बाह्य पदार्थोमां मारापणानी बुद्धि थायछे तेनो नाश थइ अंतर आत्मतत्त्वमां मारापणानी बुद्धि थाय तो परमात्मपद पामी शकाय. घर हाट म्हेल आदि पौद्गलिक वस्तु कारमीछे, सुवर्ण, रुपुं, मोती, हीरा आदि सहु धन जे कहेवायछे ते कारमुंछे, हे जीव तेमां तुं शुं ममता धारण करेछे ? जेनो संयोग तेनो अवश्य वियोग थवानोछे, पूर्वोक्त पुद्गलनो दृष्टा अने सुख दुःखनो ज्ञाता आत्मा देहरूप पुद्गलमां वस्योछे, अनंतगुणनो धणी आत्माछे. पांच प्रकारना शरीरथी आत्मा भिन्नछे, पर परिणतिमां लीन थएलो चेतन व्यवहारथी कर्मनो कर्त्ता जाणवो.

आत्माना असंख्याता प्रदेशछे, प्रत्येक प्रदेशे अनंतु ज्ञान श्री जिनवरे कह्युंछे. आत्मामां अनंत धर्मनी अस्तिता रहीछे, तेमज आत्मामां अनंत धर्मनी नास्तिता रहीछे, अस्ति अने नास्ति धर्म समये समये आत्मामां वर्तेछे, सत्ताए संसारी जीवोना प्रदेश निर्मळ सिद्ध समान जाणवा अने ते समता रसनो भंडारछे, शुद्धनयथी स्वज्ञानादिक गुणनो कर्त्ता आत्मा जाणवो.

आत्माना असंख्यात प्रदेशमां रमतां असंख्यप्रदेशरूप आत्मा पोते पोताना स्वरूपे स्थिर थतां अने शत्रु मित्रपर समपणुं ते रूप समता साथे रमतां क्षणे क्षणे अनंत अनंतगणुं सुख थायछे, आत्मस्वरूपनो स्ववीर्यध्याने उद्योत थतां परपरदेशनी ममता नष्ट थइ अने जाण्युं के—पुद्गलनी जाति माराथी भिन्नछे, अने हुं तेथी भिन्नछुं, तो मारे पुद्गल जातिथी शो लाभ ? अने तेनो संग केम करवो जोइए ? अरेरे हुं अनादि काळथी तेनी संगतिथी खिन्न थयो.

वळी पुद्‌गलने शत्रु तरीके छतां मित्र तरीके मानी राग द्वेषना योगे विचित्र देहो ग्रहण कर्यां.

हवे आत्मा अने पुद्‌गल स्वरूप कर्मनो परस्पर कोना जेवो संयोग थयो ते कहेछे=क्षीर नीरवत्=दुग्ध अने जळना संयोगनी पेठे.

जे देखायछे ते पुद्‌गलद्रव्य हे चेतन तारुं नथी अने तुं तेनो नथी तेम छतां तुं केम तेमां मारापणानी बुद्धि धारण करेछे, ज्यां सुधी चेतननी अवळी परिणतिछे त्यां सुधी संसार जाणवो, सवळी परिणति थतां कर्मनो क्षय क्षणमां थायछे, अने आत्मा शुद्ध निरंजन परमात्मपद प्राप्ति करेछे.

पुद्‌गलनुं भोजन तरीके तथा पुद्‌गलनुं पाणी तरीके खान पान करवुं, तथा वस्त्र तरीके पहेरवुं, पण पुद्‌गल जाणवुं, स्थान, प्रासादरूप पुद्‌गलद्रव्य जाणवुं. फोगट आत्माए पुद्‌गलमां वसी सुखनी सहेल भ्रांतिथी मानी.

हवे हुं पुद्‌गल द्रव्यमां केम राची माची रमुं? तेनी संगतिथी मारी खराब अवस्था थइ, मारा अनंत गुणोनो पुद्‌गलद्रव्य घातकछे, माटे ते मारो मित्र नथी, कारण के मारा करतां तेनो अवळो स्वभावछे, मारो चेतना गुणछे तो तेनो जड गुणछे, अरेरे तेनी संगतिथी आ संसारमां परिभ्रमण करतां विचित्र बनाव बन्या.

“ दुहा. ”

च्यार गतिना चोकमां, लख चोराशी बजार;
त्यां बहु जन्म मरण करी, पाम्यां दुःख अपार १०३
पुद्‌गल संगे राग छे, पुद्‌गल संगे रोग;
रुचि अरुचि पुद्‌गले, पुद्‌गलनो छे शोग. १०४

घर पुद्गलनी लालचे, लडाइ करता लोक;
राजन साजन मोटका, जन्म गमावे फोक. १०५
विरोधिनी मित्रता, करतां निज गुण हाण;
अज्ञानी मूढातमा, रणना रोझ समान. १०६
चुंथी पुद्गल एंठनें, रमतो तेनी संग;
विष्ठाना कीडापरे, धरतो कर्म कुढंग १०७
भ्रमित थइ भूली गयो, अविचल आत्मस्वरूप;
अशुद्ध परिणतिथी अरे, पडियो भवजल कूप. १०८
चेत चेत झट आतमा, शुद्ध स्वरूप निहाल;
आ संसार स्वरूप सहु, परगट माया जाल. १०९
अधुना भ्रान्ति छोडीने, देखो अंतर्दष्टि,
अंतर्दष्टि देखतां, प्रगटे निजगुण सृष्टि. ११०
तिरो भाव निजऋद्धिनो, आविर्भाव प्रकाश;
परमातम पद ते कह्युं, ते पदनो हुं दास. १११
ते पद जेणे ओळख्युं, तेमां जेनुं ध्यान;
साधुपद तेणे ग्रह्युं, तेनुं शुद्धुं ज्ञान. ११२
तत्पदना उपयोग वण, चाले जे व्यवहार;
घाणी वृषभ तणीपरे, मटे नहीं संसार. ११३
राचो नव रस ज्ञानथी, काव्य करो को लाख;
तत्पदना उपयोग वण, घी रेड्यो ज्युं राख. ११४

तर्क नरक गति दीये, जेने नाहि निज भान;
शब्दशास्त्रथी भिन्नछे, आतमपद गुणवान्. ११५
कथा पुराणी बहु करे, जन मन रंजे भाट,
वाद वाघरी घेरछे, धर्म विना सहु वात. ११६
क्रियाकांड नवि मुक्ति दे, जो नाहि आतमभान,
आत्मोपयोगी साधुने, धर्मक्रिया गुणखाण. ११७

भावार्थ—चतुर्गति संबंधी चतुराशिति लक्ष जीवयोनिमां आ प्रत्यक्ष शरीरनिष्ठजीवे जन्म मरण करी अनंत दुःख पाम्यां.

पुद्गल ममता वा अरूचिथी जीवनी परिणति रागद्वेषमय थइ जायछे, रूचि अरूचि पण पुद्गलना संबंधेछे, पुद्गल संबंधे शोक थायछे, देशधनादिक पुद्गलनी लालसाए दुनियाना जीवो सहस्रशः जीवोना प्राणनी आहुति युद्धाग्निमां होमेछे. रूशिया, जापान, विगेरे युद्ध करेछे ते पण पुद्गलनी लालसाथी जाणवी. महमद गीजनीवत् नृपो पुद्गल लालसामां रक्त बनी शोफा पुरूषवत् स्वमहत्वनी भ्रमणामां भूली तत्त्व विवेचन विवेकशून्य अंतःकरणवाळाओ अजागल स्तनवत् स्वआयुष्यनी निष्फलता करेछे.

पुद्गल द्रव्य आत्मगुण विरोधीछे, तेनी मित्रता करतां स्वकीय गुणनी हानि थया विना रहेती नथी, पुद्गलथी पोताने भिन्न नहीं माननार अज्ञानी मूढात्मा रणना रोझ समान ज्ञानशून्य जाणवो.

आहार, पाणी आदि पुद्गलने अनंता जीवोए भोगव्युं तेज पुद्गलने आ जीव भक्षण करेछे, अनंता सिद्ध भगवंतोए संसारावस्थामां अनंता भव करी पुद्गल स्कंधोने खाधा, पीधा, वळी

तेज पुद्गल द्रव्यने अभव्यादि जीवोए पण पोताना भोगमां ग्रह्या माटे पुद्गल सर्व जीवोनी वमन करेली ऐंठ जाणवी. ते ऐंठने हे जीव! तें अनंतिवार चूंथी, हाल पण चूंथेछे, भविष्यकाले पण कोण जाणे शुं थशे? हजी तुं केम चेततो नथी, तारी अनंति ऋद्धि तारी पासेछे ते मूर्कीने तुं ऐंठ चुंथे ते तारी ओछी अज्ञानता! अरे जीव तुं जरा मात्र पग शरमातो नथी, शुं तने भिक्षुकनी पेठें पुद्गल ऐंठ चुंथवाथी तृप्ति वळवानीछे? ना कदी नहीं, जेटला पुद्गल ऐंठ चुंथेछ ते गमे तो इंद्र, चंद्र, नरेंद्रादिक होय तो पण भिखारीना सरखा जाणवा.

प्रश्न–हे सद्गुरु! त्रयोदश गुणस्थानवर्ति श्रीतीर्थंकर केवली पण आहार पाणी ग्रहण करेछे तेथी ते पण शुं भिक्षुक जाणवा?

उत्तर–हे शिष्य–श्री त्रयोदश गुणस्थान वर्त्ति तीर्थंकर महाराजे मोहनीय, अंतराय, ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, ए चार ४ कर्मनो सर्वथा क्षायिक भावे क्षय कर्योछे, वेदनीयादिक चार अघातीयां कर्म अवशेष रह्यांछे, क्षुधा लागवी, तृषा लागवी ए वेदनीयकर्मनो विषयछे, मोहनीय कर्मना अभावे क्षुधा वेदनीयना उदये क्षुधा शांत्यर्थम् गृहभाटकवत् आहारादिकनुं ग्रहण करेछे, तेथी पुद्गल ऐंठ चुंथी कहेवाय नहीं, ममताभावे आहारादिक जे ग्रहण करेछे ते पुद्गल ऐंठ चुंथनारा जाणवा.

मुनिराजो के जे स्वस्वभावमां रमनारा अने परस्वभावना त्याग करनारा कदाग्रह त्याग करनारा शत्रु मित्र सम दर्शक अध्यात्मनिष्ट चित्तवृत्तिवंतो पुद्गलने माटे क्षुधा तृपा शांतिने माटे आहार पानादि ग्रहण करेछे, पण तेमां राचता नथी तेथी ते पुद्गलनी ऐंठ चुंथनारा जाणवा नहीं, मेवा मिष्टान्न आदि भक्षण करतो नथी पण ते भक्षण करवानी जेना मनमां लालसाछे, अने

ते मिष्टान्नमां राचे माचेछे तेने पुद्गल अेंठ चुंथनार जाणवो.

बाह्यथी स्त्री भोगववानुं पच्चख्खाण कर्युंछे, पण अंतरमां स्त्री भोगववानी लालसा बनी रहीछे तो ते स्त्री भोगवनारज जाणवो. जो एम न मानीये तो घणा दोषो आवे.

प्रश्न–कोइ बहुचराजीनो फातडो (पुरुष पण स्त्रीनो वेष पहेरनार) छे ते स्त्री कायाए करी भोगवतो नथी तो शुं ते ब्रह्मचारी कहेवाय के नहीं ?

उत्तर–जो फातडाना मनमां स्त्री भोगववानी इच्छा बनी रहीछे तो ते व्यभिचारी जाणवो. कारण के रागथी कर्म बंधायछे, ते राग तो मनमां स्त्री उपर बनी रह्योछे माटे ऋजुसूत्र नयना मते व्यभिचारी जाणवो.

प्रश्न–कोइ ठेकाणे एम कहुं छे के–मन जाय तो जाणे दो, मत जाने दो शरीरः विन चढावी कामठी, क्युं लगेगा तीर. १ आ उपरथी सिद्ध थायछे के मन कदापि आडुं अवळुं जाय तो हरकत नथी किंतु शरीर जवा देशो नहीं, कारण के शरीरथी कर्म बंधायछे, माटे शरीरथी ब्रह्मचर्य पाळे तो शुं ब्रह्मचर्य कहेवाय नहीं ?

उत्तर–ए कथननो सार ए छे के मनमां कदापि स्त्री भोगववानी इच्छा थइ पण हे भव्य शरीरथी स्त्री भोगवीश नहीं, कारण के तेथी एक तो कर्मबंध, ताडन तर्जन, निंदा, अवहेलनादि विशेष दोषो प्राप्त थशे, ते जणाववाने माटे अने वळी जाणवुं के–मनयोगनी साथे काययोग भळे तो विशेष कर्मबंध थाय, तेथी एम शिक्षा वाक्य लख्युंछे.

प्रश्न–कोइ माणसे मनमां एम चिंतव्युं के मारे विष खावुं अने अन्य मनुष्ये विष भक्षण कर्युं, ए बे मध्ये कोने वधारे हानि

थाय ? तथा एक मनुष्ये-कायाए करी लाख मनुष्य मार्यां अने एक मनुष्ये मनमां चिंतवना करी लाख मनुष्य मार्यां तेमां विशेश दोष कोने लागे ?

उत्तर-कायाए करी विष भक्षकने विशेष हानि थाय कारण के ते मनोयोगथी चिंतनपूर्वक विष भक्षण करेछे, अने तेथी ते मृत्यु पामेछे. मनोयोगथी जेटली हानि थती नथी माटे प्रायः थोडो दोष जाणवो. कायाए लक्ष मनुष्य मारनारनी साथे मनोयोग भळेलोछे, तेथी विशेष दोष लागे तथा फक्त मनमां चिंतवनाथी लक्ष मनुष्य मारनारने तेना करतां थोडो दोष लागे. प्रसन्नचंद्र राजर्षिए मनमां युद्ध करवाथी घणां कर्म उपार्ज्यां तेथी कर्मबंधमां मननी मुख्यता जाणवी, मनना योगे अन्यप्रवृत्ति थायछे, मनमां विकल्प संकल्प थाय नहीं तेने माटे ध्याननी अगत्यता छे, घणां कर्म ध्यान करवाथी नष्ट थाय छे.

श्री यशोविजयजी उपाध्यायजी कहे छे के

श्लोक

यत्र गच्छति परं परिपाकं, पाकशासनपदं तृणकल्पं ॥
स्वप्रकाशसुखबोधमयं तद्, ध्यानमेव भव नाशि भजध्वं १

भावार्थ—ज्यां ध्याननी परिपक्वता थएछते मुनिराज इन्द्रनी पदवीने पण तृण बरोबर जाणे, गणे, माटे पोताना आत्माना स्वरूपनुं प्रकाशक एवा ध्य नथी दुःखनी भ्रान्ति टळे छे, अनुभवथी भासेछेके-ध्यानविना आत्मिकसुखनो अनुभव थतो नथी, केवल सुखनुं निधान छे, तथा ध्यानथी आत्मानुं शुद्ध ज्ञान प्रगटे, माटे हे भव्यात्माओ! मुनिवरो! तमोए बाह्य उपाधिने त्यागीछे तो रागद्वेषमोहादिक अंतर् उपाधिथी भरपूर एवो जे भार

गतिरूप संसार तेनो नाश करनार जे ध्यान तेने सेवो, तेनो आदर करो, तेना उपर राग धरो. अने ध्यानवंत पुरुषोनी संगति करो के जेथी मति श्रुतज्ञाननी स्फूर्ति थाय जे ध्याननुं अवलंबन करतां प्रसन्नचंद्र राजर्षि कर्मग्रंथी छेदी मोक्षे गया ते ध्याननुं अवलंबन करवाथी मनुष्य जन्मनी साफल्यता जाणवी.

श्लोक.

आतुरैरपि जडैरपि साक्षात्, सुत्यजाहि विषयाननुरागः
ध्यानवांस्तु परमद्युनिदर्शी, तृप्तिमाप्य नतमृच्छति भूयः २

भावार्थ–कामातुर अने जड पुरुषोवडे पण कारण पामी पंचेंद्रियना विषयो त्यजायछे. जेमके–कोइने स्त्री भोगववीछे पण वेदरवानामांछे, तेथी सुखे विषय त्यागे. कोइ रोगी दवाखावाना प्रसंगे चरी पाळेछे, तेथी शाकादिकनो सुखे त्याग करेछे, पण ते विषयनो कारणीभूत जे राग तेनो नाश थतो नथी. राग दशा त्यागवी दुर्घटछे. किंतु ध्यानवंत पुरुष तो मात्र परमात्म स्वरूपने देखनारछे तेथी ते ध्यानमां तृप्ति मानी पुद्गल वस्तुने न्यारी गणी आत्म स्वरूपमां मग्न थयो छतो अत्यंत आनंद भोगवेछे, तेवी ध्यान दशा पामी फरीथी विषयनुं मूल कारण रागदशाने वांछतो नथी, कारणके ध्यानीने विषयमां थती जे सुखनी भ्रांति ते टळीछे तेथी राग थाय नहीं.

श्लोक.

यानिशा सकलभूतगणानां,
ध्यानिनो दिनमहोत्सव सएषः ।
यत्र जाग्रति च तेऽभिनिविष्टा,
ध्यानिनो भवति तत्र सुषुप्तिः ३

सर्व प्राणीने निद्रामां जे रात्रि जायछे, ते रात्रि ध्यानदशावंत मुनिनें दिवसना महोत्सवरूपछे, अहो ध्यानिनी केटली उत्तमता तेनुं सुख अनुपमछे. अने संसारी जीव विषयमां लीन थइ जे वेळाए जागेछे ते वेळा ध्यानवाळा मुनिराजने शयनरुपछे, एमां केटलो भेदछे ते विचारवो.

श्लोक.

बध्यते न हि कषायसमुत्थैर्मानसैर्नततभूपनमद्भिः
अत्यनिष्टविषयैरपि दुःखै ध्यानवान् निभृतमात्मनिलीनः १

भावार्थ–ध्यानवान् पुरुष ,रागद्वेषरूप कषाय जनित मनथी बंधातो नथी. ध्यानीने नृपतितति आवी नमस्कार करे तोपण तेनुं चित्त डोळातुं नथी, अर्थात् तेना मननी स्थिरता पूर्वना जेवी बनी रहेछे. अत्यंत अनिष्ट विषयना दुःखे पण निश्चळपणुं छोडे नहीं तेने आत्मामां लीन जाणवो.

श्लोक.

स्पष्टदृष्टसुखसंभृतमिष्टं, ध्यानमस्तु शिवशर्मगरिष्ठं ।
नास्तिकस्तु निहतो यदिन,स्यादेवमादि नयवाङ्मयदंडात्

भावार्थ–स्पष्टदृष्टसुखे भर्युं एवुं इष्ट ध्यान ते मोक्षना सुख करतां पण अधिकछे, पण ज्यांसुधी शास्त्रना दंड थकी नास्तिक भावने अतिशयपणे हण्यो नथी त्यां सुधी नथी, पण नास्तिक भावे रहित जे ज्ञान ते मोटुंछे.

श्लोक.

ज्ञाते ह्यात्मनि नोभूयो ज्ञातव्यमवशिष्यते ।
अज्ञानं पुनरेतास्मिन् ज्ञानमन्यन्निरर्थकम् ॥१॥

जेने आत्माने जाण्यो तेने पुनः किंचित् अन्य जाणवानुं रहुं नथी, अने यावत् आत्माने जाण्यो नथी तावत् अन्य सर्व जाण्युं निरर्थक छे.

श्लोक.

नवानामपि तत्त्वानां, ज्ञानमात्मप्रसिद्धये;
येनाजीवादयो भावाः स्वभेदप्रतियोगिनः १

नवतत्त्वनुं ज्ञान पण आत्मज्ञान प्रगट करवाने माटेछे, कारण के अजीवादिक जे भाव ते पण आत्मज्ञानवडे शमायछे.

श्लोक.

एक एवहि तत्रात्मा, स्वभाव समवस्थितः।
ज्ञानदर्शनचारित्र, लक्षणप्रतिपादितः १
प्रभा नैर्मल्यशक्तीनां, यथा रत्नान्नभिन्नता.
ज्ञानदर्शनचारित्र, लक्षणानां तथात्मनः २
आत्मनो लक्षणानां च, व्यवहारो हि भिन्नता।
षष्ठ्यादिव्यपदेशेन, मन्यते न तु निश्चयः ३
घटस्यरूपमित्यत्र, यथा भेदो विकल्पजः।
आत्मनश्च गुणानां च, तथा भेदो न तात्त्विकः४

त्यां आत्मा एक पोते स्वस्वभावपणे रह्योछे, ते आत्मा ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप लक्षणे करी युक्तछे.

रत्ननी कांति अने निर्मलता शक्ति कंइ रत्न थकी भिन्न नथी तेम ज्ञान, दर्शन, चारित्र लक्षणथी आत्मा भिन्न नथी. आत्मा अने आत्मानुं लक्षण ए बे व्यवहारे जुदाछे ते षष्ठी विभक्तिना व्यपदेशथी मनायछे किंतु निश्चयथी नहीं.

जेम घट अने घटनुं रूप तेनो भेद विकल्प मात्रछे ते प्रमाणे आत्मा अने आत्माना गुणोनो भेद तात्त्विक नथी.

श्लोक.

वस्तुतस्तु गुणानां तद्रूपं न स्वात्मनः पृथक्
आत्मास्यादन्यथानात्मा, ज्ञानाद्यपि जडं भवेत्॥

भावार्थ—वस्तुतः जोतां गुणोनुं अने आत्मानुं रूप जुदुं नथी यदि भिन्न कथीए तो आत्मा ते अनात्मा थाय ज्ञानादिक पण जड थाय.

श्लोक.

मन्यते व्यवहारस्तु, भूतग्रामादिभेदतः।
जन्मादेश्च व्यवस्थातो, मिथो नानात्वमात्मनां. १
न चैतन्निश्चये युक्तं, भूतग्रामो यतोऽखिलः
नामकर्मप्रकृतिजः स्वभावोनात्मनः पुनः २

जन्मावस्था बाल, युवान, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि भेदथी आत्माओनुं विचित्रपणुं व्यवहारनयवालो मानेछे, पण ए वात निश्चयनये जोतां युक्त नथी अर्थात् सत्य नथी, ते नय एम कहे छे के—जीवने सर्व अवस्था नामकर्मना स्वभावथी प्रगटेछे पण ते आत्मानो स्वभाव नथी.

श्लोक.

जन्मादिकोऽपिनियतः परिणामो हि कर्मणां;
न च कर्मकृतो भेदः स्यादात्मन्यविकारिणि १

निश्चयनयथी जोतां जन्म जरा मरणादिक परिणाम ते आत्मानो नथी पण ते कर्मनो परिणामछे माटे अविकारी आत्माने विषे कर्मनो वास्तविक संबंध नथी.

श्लोक.

यथा तैमिरकश्चंद्र, मप्येकं मन्यते द्विधा;
अनिश्चयकृतोन्माद स्तथात्मानमनेकधा २

भावार्थ—जेम तिमिर रोग वाळो एक चंद्रने बे तरीके मानेछे तेम निश्चयनयना ज्ञान विनानो उन्मादक प्राणी आत्माने अनेक प्रकारे मानेछे.

श्लोक.

व्यवहारविमूढस्तु, हेतूंतानेव मन्यते ।
बाह्यक्रियारतस्वान्त स्तत्वं गूढं न पश्यति १

भावार्थ—व्यवहारनयमां रक्त विमूढात्मा परपर्यायने पोताना फलहेतु मानेछे माटे जेनुं मन बाह्य क्रियामां रक्तछे तेवा प्राणी गुप्त तत्त्वने देखी शकता नथी.

श्लोक.

अज्ञानी तपसा जन्म, कोटिभिः कर्मयन्नयेत् ।
अन्तं ज्ञानतपो युक्तं, तत्क्षणेनैव संहरेत् ॥

ज्ञानविना एककोटि भवसुधी अज्ञानी जेटलां तप करे ते तपमां जेटला कर्मनो क्षय न थाय तेटला कर्मोने एक क्षणमां ज्ञान सहित तपश्चर्याए खपावे.

श्लोक.

तद्ध्यानं सा स्तुतिर्भक्तिः सैवोक्ता परमात्मनः ।
पुण्यपाप विहीनस्य, यद्रूपस्यानुचिंतनं ॥

शरीररूपलावण्य, वप्रछत्रध्वजादिभिः ।
वर्णितैर्वीतरागस्य, वास्तवीनोपवर्णना ॥

पुण्यपापरहित परमात्माना स्वरूपनुं चिंतवन करवुं तेने ध्यान कहेवुं अने स्तुति तथा भक्ति पण तेज जाणवी.

पण शरीरना वर्ण लावण्य-वप्र, छत्र ध्वजाओथी परमात्माओने करी परमात्माने वखाणवा एवी जे स्तुति ते वस्तुतः वास्तविक स्तुति नथी.

श्लोक.

व्यवहार स्तुतिः सेयं वीतरागात्मवर्तिनां; ।
ज्ञानादीनां गुणानां तु, वर्णना निश्चयस्तुतिः ॥
पुरादिवर्णनात् राज, स्तुतिः स्यादुपचारतः ।
तत्त्वतः शौर्यगांभीर्य्य धैर्य्यादि गुणवर्णनात् ॥

श्री तीर्थंकरना शरीरादिकनुं वर्णन करवुं एवी जे स्तुति ते व्यवहारे जाणवी. अर्थात् ते व्यवहार स्तुति जाणवी. पण वीतराग परमात्माना ज्ञानादिक गुण प्रशंसवा अने ते गुणो पोताना आत्मामां सत्ताए रह्याछे एम जाणी तेनुं ध्यान करवुं. तेज खरी स्तुति छे परमात्म स्वरूप हुं छुं, एम सतत दृढ निश्चयथी चिंतववुं ते निश्चय स्तुति जाणवी.

जेम देश नगरादिकना वर्णनथी राजने वखाणेलो ते उपचारे स्तुति जाणवी अने राजानुं बल गांभीर्य्य धैर्य्यादिक गुणोनुं वर्णन ने निश्चय स्तुति जाणवी.

श्लोक.

पुण्य पाप विनिर्मुक्तं तत्त्वतस्त्वविकल्पकं ।
नित्यं ब्रह्म सदा ध्येयमेषा शुद्धनयस्थितिः ॥

पुण्य पाप रहित अने तत्त्वथी जोतां निर्विकल्प एवो शाश्वत आत्मा ध्यान करवा योग्यछे. भव्यात्माओए तेनुं ध्यान करवुं एवी शुद्धनयनी स्थिति जाणवी. ए ध्यानथी घातिकर्मनो पण सहजमां क्षय थायछे.

आत्मध्यानीने क्रोधादिक शत्रुओ उपद्रव करी शकता नथी, अदेखाइ पण थती नथी. आ स्थळे क्रोधादिकनुं वर्णन करेछे.

क्रोधादिकनुं स्वरूप.

आत्माना गुणोनो घातक क्रोधरूप चंडालछे, क्रोधरूपि अग्नि हृदयने बालेछे. तथा शरीरने तपावेछे. वळी क्रोधथी चित्तनी निर्मलता नाश पामेछे अने मन शान्त बहु वखते थायछे. कोइ महात्माने कोइ शिष्ये प्रश्न कर्युं के हे पूज्य, हुं क्रोधथी क्यारे मुक्त थाउं ? त्यारे प्रत्युत्तरमां जणाव्युं के समताने आदरे त्यारे. क्रोधरूप अग्नि धर्मवृक्षने बाळी भस्म करेछे, मुमुक्षुए धैर्य धारण करी उपजता क्रोधने सहनशीलताथी जीतवो. जे मनुष्यना हृदयमां क्रोधरूप अग्नि रहेछे ते अपवित्र जाणवो. मनुष्य ते गंगाना जलमां स्नान करे तो पण क्रोधदोष गया विना पवित्र थतो नथी. मनुष्य ज्यारे अन्यना उपर क्रोधायमान थायछे त्यारे कर्म क्रोध करनारना उपर क्रोधायमान थायछे, क्रोधरूप चंडाळ छिद्र जोइने हृदयमां प्रवेश करेछे, कोइ वखत तो तेनुं एटलुं जोर थायछे के ते क्रोधना उदये मनुष्य घणा जीवोने मारी नांखेछे. क्रोध बुद्धिनो शत्रुछे. समतासागरमां क्रोध वडवानल समानछे, क्रोधरूपी अग्नि हृदयमां प्रगट थायछे त्यारे तेनो धूमाडो शरीरमां प्रसरेछे. क्रोधनुं कारण परस्वभाव रमण जाणवुं. परवस्तुमांथी मारापणानी बुद्धि टळी आत्मस्वरूपमां जेनुं मन लीन थयुंछे तेवा महात्माओना हृदयमां क्रोधरूप अग्निवास करतो नथी. कारण के तेमना हृदयमां समतारूप

गा नदी सदा वह्या करेछे. त्यां मलीनता रही शकती नथी. आहार, स्त्र, स्थान, धन, अपमानथी क्रोध उत्पन्न थायछे, आहारादिक उपर ममता थवाथी तेनुं कोइ हरण करे तो क्रोध उत्पन्न थायछे. प्रीति ज्यां होय त्यां पण क्रोध करवाथी थायछे. वैर क्रोधने क्षमाथी जीतायछे. अदेखाइ संतोषथी जीतायछे. क्षमाथी क्रोधरूप अग्नि शान्त थायछे.

यतः श्लोक.

क्षमा नाथः क्षमा तातः क्षमा माता क्षमा सुहृत् । १
क्षमा लयश्च लक्ष्मीश्च, क्षमा शोभा क्षमा शुभं.
क्षमा श्लाघा क्षमाचारः, क्षमा कीर्तिः क्षमा यशः २
क्षमा सत्यं च शौचं च, क्षमा तेजः क्षमा रतिः
क्षमा श्रेयः क्षमा पूजा, क्षमा पथ्यं क्षमा हितं । ३
क्षमा दानं पवित्रं च, क्षमा मांगल्यमुत्तमं.
क्षमा तुल्यं तपो नास्ति, न संतोषात् परं सुखं । ४
न मैत्री सदृशं दानं, नास्ति धर्मो दयासमः
कामक्रोधसमेतः सन् किमरण्ये करिष्यति । ५
अथवा निर्जितावेतौ किमरण्ये करिष्यसि.
सकषायस्य चित्तस्य, कषायैः किंप्रयोजनं । ६
अथवा निष्कषायत्वं, कषायैः किंप्रयोजनं.
किमरण्यैरदांतस्य, अदान्तस्य किमाश्रमैः । ७
यत्र यत्र वसेद्दांतः, तदरण्यं स आश्रमः

क्षमा खड्गं करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति;
अतृणे पतितो वन्हिः स्वयमेवोपशाम्यति ८

क्षमा एज भव्यात्माओनो नाथ जाणवो, माता पिता मित्र समान पण क्षमा जाणवी. क्षमा एज मोटी शोभाछे. क्षमा एज कीर्त्ति जाणवी. कारण के जेनामां क्षमा नथी अने क्रोधे करी धमधमायमान सदा रहेछे. तेनी कीर्त्ति जगमां थती नथी. क्षमाथी कीर्त्ति उत्पन्न थायछे. क्षमा तेज सत्य जाणवुं. क्रोधीमां सत्य क्यांथी होय. क्षमा एज मोटी पवित्रताछे. क्षमा विना स्नान पण लेखे नथी. दान पण लेखे नथी. क्षमा रहीत साधु होय तो ते नामनो साधु जाणवो, ज्यां क्षमा नथी त्यां गंभीरता रहेती नथी. क्षमा एज मोटुं तेजछे, सुखकारक आनंदप्रदा पण क्षमाछे, जे क्रोधी होय ते आनंद क्यांथी पामे ? क्रोधीना अनेक वैरियो दुनीयामां होयछे तेथी क्रोधीने निरांते उंघ पण आवती नथी. वळी क्रोधी मनुष्यनो कोइ मित्र पण होतो नथी. कारण के ज्यां त्यां क्रोधथी तेना उपर अप्रीति जलनी वृष्टि थया करेछे, क्षमा कल्याणकारीछे, जे मनुष्यमां क्षमा नथी ते पोताना तथा परना आत्मानो घातक बनेछे. क्षमा मोटी पूजाछे. कर्मरूप रोगथी रहीत थवा माटे क्षमा पथ्यछे. क्षमा एज मोटुं हितछे. क्षमा ए मोटुं दानछे. जेनामां क्षमाछे ते पोताना आत्माने ज्ञान दर्शन चारित्र गुणोनुं दान आपेछे. क्षमा तुल्य अन्य कोइ तप नथी. कूरगडु ऋषिए क्षमारूप तपथी आत्महितनी सिद्धि करी. श्री वीरभगवाने क्षमावडे अनेक उपसर्गो सहन कर्या, श्री मेतार्यमुनिए क्षमाथी आत्महित साध्युं. श्री स्कंधकसूरिना शिष्योने घाणीमां घाली पील्या पण तेमणे क्षमाथी कर्म शत्रुनो पराजय करी. आत्मिक लक्ष्मी प्राप्त करी. समरादित्य केवळीए साधु अवस्थामां क्षमाए करी घोर उपसर्ग सहन कर्या. क्षमाधारक अनेक मुनिवरोए

परमात्मपद प्राप्त कर्युं भविष्यत् काळे पण करशे, अंतरमां क्रोधरूप अग्नि सळगी रह्योछे अने बाह्यथी छठ अट्ठम विगेरे करे तोपण आत्महित थतुं नथी. क्रोध नरकनुं बारणुंछे. क्रोध फणीधर सर्प समानछे ते क्षमारूप नागदमनी औषधीथी वश थायछे. क्षमाना समान तप नथी, संतोष समान सुख नथी. दया समान धर्म नथी.

काम अने क्रोध सहीत जे प्राणीछे ते जंगलमां जोगी थइ वास करशे तो पण शुं थयुं ? अर्थात् कंइ नहीं. अथवा जेणे काम क्रोध जीत्याछे ते अरण्यमां जइ शुं करशे ? अर्थात् कंइ नहीं. काम क्रोधनो तें जय कर्योछे तो तुं अरण्यमां जइ शुं करीश ? जेनुं चित्त काम क्रोधादिक कषाय सहीतछे तो तेने कषायलां वस्त्र पहेरवावडे करीशुं ? अथवा जो चित्तमां काम क्रोधादिक कषायनी उत्पत्ति नथी तो तेवा पुरुषने कषायलां वस्त्र पहेरवाथी शुं ? अर्थात् कंइ नहीं.

जेणे इंद्रियो दमी नथी तेने अरण्य थकी शुं ? तथा अदांतने आश्रमोवडे करी शुं ? अर्थात् कंइ नहीं. जेने इंद्रियोने जीतीछे एवो दान्त पुरुष जे ठेकाणे वसे ते अरण्य तथा आश्रम जाणवुं, माटे भव्यात्माओ क्षमा धारण करो. क्षमा रूप खड्ग जेना हाथमांछे तेने दुर्जन शुं करशे ? अर्थात् कंइ नहीं, तृण विनानी जगाए पडेलो अंगारो पोतानी मेळे शान्त थइ जायछे, तेम आपणा उपर अन्य पुरुषे क्रोध कर्यो पण आपणे क्रोध करीशुं नहीं अने क्षमा राखीशुं तो अन्य पुरुषे आपणा उपर वरसावेलो क्रोध पोतानी मेळे शान्त थशे.

श्लोक.

क्रोधान्धाः पश्य निघ्नंति पितरं मातरं गुरुम् ।
सुहृदं सोदरं दारा नात्मानमपि निर्घृणाः ॥ १ ॥

हे भव्य देख, क्रोधान्ध जीवो पिता माता अने गुरुनो पण नाश करेछे तेमज मित्र सहोदर स्त्री तथा पोताना आत्मानो पण निष्ठुर पुरुषो क्रोधवशे घात करेछे. माटे क्रोधने त्यागी क्षमा धारण करवी, भव्य प्राणी क्षमा धारण करी सामायक समभाव स्वरूप करे आत्मा अने आत्माना गुणो ज्ञान दर्शन चारित्रादिकनुं स्वरूप मनमां विचारे—

यतः श्लोक.

नचात्मनः पृथक्ज्ञाना, दि त्रयं विद्यते क्वचित् ।
ज्ञानादि त्रय मेवात्मा, नास्य क्वापि परा भिदा ॥१॥
आत्मानमात्मना वेत्ति, मोहत्यागाद्य आत्मनि ।
तदेव तस्य चारित्रं । तज्ज्ञानं तच्च दर्शनम् ॥१॥

आत्माथी पृथक् ज्ञानादित्रिक नथी, ज्ञानादित्रिक स्वरूप आत्मा छे, व्यवहारथी तेनो भेद जाणवो.

श्री हरिभद्रसूरियोगप्रदीपमां सामायिकनुं लक्षण कहेछे.

श्लोक.

अतीतं च भविष्यं च यन्न शोचति मानसं ।
तत् सामायिक मित्याहु, र्निर्वातस्थानदीपवत् १
निस्संगं यन्निराकारं, निराभासं निराश्रयं ।
पुण्यपापविनिर्मुक्तं, मनः सामायिकं स्मृतं ॥२॥
गते शोको न यस्यास्ति नैव हर्षः समागते ।
शत्रु मित्र समं चित्तं, सामायिक मिहोदितं ॥३॥

भावार्थ-अतीतकालमां जे थइ गयुं, आपणा संबंधी वा परसंबंधी तेनो विकल्प संकल्प करे नहीं, वा अतीतकाल संबंधी कोइ

वात याद करे नहीं. सारांश के अतीतकाल संबंधी शोक करे नहीं. तेम भविष्यकाल संबंधो स्व अने पर आश्रयी विकल्प संकल्प करी शोक करे नहीं. विकल्प संकल्प रहीत आत्मानी स्वउपयोगे अवस्थीति-तेने सामायिक कहेछे कोनी पेठे ते दर्शावेछे, वायु रहीत दीवानी ज्योतिनी पेठे दीवाने वायु लागतां ज्योति चंचळ थायछे, तेम आत्मामां पण विकल्प संकल्प थतां आत्मा चंचल थइ परस्वभावमां पडेछे. माटे एकाग्रचित्ते स्थिरपणे एक आत्मस्वरूपमां उपयोग राखवो ते सामायिक जाणवुं. मनमां कोइ पण वस्तु चिंतववी नहीं, मननी साथे कोइ पण वस्तुनो संग थाय नहीं. अर्थात् मन अन्य वस्तुना संगथी रहीत होय, कोइपण वस्तुनो आकार मनमां चिंतववो नहीं, मनमां कोइ पण वस्तुनो आभास रहे नहीं. कोइपण वस्तुना आश्रय रहीत मन निराश्रित होय, मन पुण्य अने पापना व्यापार रहीत होय, मनने आत्म स्वरूपमां लीन करी देवुं, जेम भरउंघमां कोइ पण वस्तुना व्यापार रहीत वाह्यथी देखतां जणायछे, तेम भरउंघनी पेठे परवस्तुने भूली अखंड निर्मल आत्म स्वरूपमां आत्म स्वभावे जागवुं, अने परस्वभावनी चिंतवना करवी नहीं अने तेने सामायिक कहेछे.

गतकाल, गतअवस्था, गतवस्तु आदिने विषे मनमां शोक थाय नहीं, अने आवतो काल, आवनार भावीकाले वस्तुना इष्ट संयोग तेनो मनमां हर्ष थाय नहीं, अने शत्रु तथा मित्र उपर समचित्त होय एवी जे आत्मानी अवस्था तेने सामायिक कहेछे. आ उपरना त्रण श्लोको कथाकोष ग्रंथमां कह्याछे. जे भव्यात्माओने क्षमावडे तथा समपणे सामायिक वर्तेछे तेमने क्रोधादिक शत्रुओ पराभव करी शकता नथी.

भव्यात्माए मुक्तिपदनी चाहना राखवां अदेखाइनो नाश क

रवो जोइए. अदेखाइ रूप नागण हृदयमां पेसतां आत्माना गुणो हणायछे. परना गुणो सांभळी तथा परजीवनी कीर्त्ति सांभळी प्राणी विचारे छे के-हाय, हाय ते माराथी वधारे वखणायछे लोकोमां तेने वधारे मान मळेछे, एनी जो भूल काढुं वा एना उपर कंइ कलंक चढे तो ठीक थाय एम पाप विचार करी लोकोनी आगल निंदा करे. खोटां कलंको चढाववां. ए सर्व अदेखाइनुं फलछे. नागण कदापि कोइने करडे तो सारी पण अदेखाइरूप नागिणी जे प्राणीने डसेछे तेनुं आ भवमां तथा परभवमां पण खराब थायछे, अदेखाइ ज्यां सुधी हृदयमांछे त्यां सुधी आत्मज्ञान थतुं नथी. वकील वकीलनी साथे अदेखाइ, साधु साधुनी साथे अदेखाइ, वेपारी वेपारीनी अदेखाइ, शोक शोकने अदेखाइ प्रायः रहेवानो संभवछे, माटे आत्मार्थी प्राणी मनमां विचारे के-सर्व प्राणी, पोतानां कर्मयोगे शाता वा अशाता भोगवेछे. कोइनी कीर्त्ति थाय तेमां मारे शा कारणथी अदेखाइ करवी ? जेवां कर्म ते प्रमाणे यश वा अपयश थया करेछे, तेमां मारे शुं ? यश वा अपयश, मान वा अपमान ए कंइ आत्मिक वस्तु नथी हुं आत्मा तेनाथी भिन्नछुं, हुं कर्मयोगे कोइ वखत राजी थयो ते वखत याचकोए कीर्त्ति गाइ, पण तेमांनुं आजे कंइ नथी. वळी कोइ भवमां अपमान पण घणां थयां हशे पण तेमांनुं हाल कंइ नथी. जे पोतानी वस्तु नथी तेमां अहंभाव संकल्पी केम रति अरति करवी जोइए, कह्युंछे के-

कबहिक काजी कबहिक पाजी, कबहिक हुआ अपभ्राजी,
कबहिक जगमें कीर्त्ति गाजी, सब पुद्गलकी बाजी. आप स्व० १

धवलशेठ श्रीश्रीपालनी अदेखाइथी अंते मरण पाम्या अने दुर्गतिमां गया. धवलशेठे अदेखाइथी शुं शुं कृत्य कर्युं नथी, दुनीयामां अदेखाइ करनारनी पडती थया विना रहेती नथी. अदेखा-

इथी निंदा कपट हिंसा, असत्यादि दोषो उत्पन्न थायछे, विशेषे शुं कहेवुं ? आत्मार्थी पुरुषे अदेखाइनो नाश करवो. तेनो नाश करवा संत पुरुषोनी संगति करवी.

जे पुरुषने मानदशा होयछे ते मानी कहेवायछे, मानी पुरुष कृत्य अकृत्यने विचारतो नथी, तथा तेने जरा पण शान्ति मळती नथी अने ते विद्या धन पामी शकतो नथी, लघुताथी प्रभुता थाय माटे लघुता भावी माननो नाश करवो. रावण दुर्योधनादि पुरुषोए मानथी दुःखराशि ग्रहण करी. गमे तो राजा होय. करोडाधिपति होय तोपण मान दशा ज्यारे छूटे त्यारे कल्याण थायछे, बाहुबल मुनिवरने मान केवलज्ञानमां विघ्नकारक थयो. अने ज्यारे मान दशा छोडी त्यारे केवलज्ञान उत्पन्न थयुं श्री यशोविजयजी उपाध्याय मान नामना पाप स्थानकनी सज्झायमां कहेछे के-

विनयश्रुत तपशील त्रिगुण हणे सवे, माने ते ज्ञाननो भंजक होय भवोभवे;
लुंपक छेक विवेक नयणनो मानछे, एहने छंडे तास न दुःख रहे पछे.

इत्यादि विचारी भव्य पुरुषोए मानदशा त्यागी आत्मस्वरूप-मां आयुष्य गाळवुं. मायास्वरूप कथाकोश ग्रंथे आ प्रमाणे छे.

माया परित्याग मदो विधाय, सदार्जवं साधुजना विधत्ते
यथैहिका मुष्मिक कामितानां, सिद्धिर्भवेद्धःपरमार्थशुद्धा

यतः श्लोक.

दंपती पितरः पुत्राः सौदर्य्याः सुहृदो निजाः ।
ईशा भृत्यास्तथान्येऽपि माययाऽन्योऽन्य वंचकाः ॥१॥
सर्वं जिम्हं मृत्युपद मार्जवं ब्रह्मणः पदं ।
एतावान् ज्ञान विषयः प्रलापः किं करिष्यति. ॥२॥

समग्र विद्या वैदुष्येऽ, धिगतासु कलासुच ।
धन्यानामुपजायेत । बालकानामिवार्जवं ॥३॥
अज्ञानामपि बालानां, आर्जवं प्रीतिहेतवे ।
किं पुनः सर्व शास्त्रार्थ परिनिष्ठित चेतसां. ॥४॥
श्रुताब्धि पारमाप्तोपि । गौतमो गणभृद्वरः ।
अहो शैक्ष इवाश्रोषीत् आर्जवाद्भगवद्गिरः ॥५॥
अशेषमपि दुःकर्म रुज्वा लोचनया क्षिपेत् ।
कुटिलालोचनां कुर्वन् अल्पीयोपि विवर्धयेत् ॥६॥
काये वचसि चित्तेच समंतात् कुटिलात्मनां ।
न मोक्षः किं तु मोक्षः स्यात् सर्वत्रा कुटिलात्मनां ७
तपः क्रिया ज्ञान विचक्षणा अपि ।
कौटिल्यमेकं न परित्यजंतः ॥
दुर्योनि दुःखानि लभंति ते नराः ।
साध्वी यथा वीरमतीति नाम्नी. ॥ ८ ॥

अहो आ जगत्मां जे खरेखरा गुणोथी साधुजनोछे ते कपटना त्याग करी सरलताने धारण करेछे, आ भव अने परभव संबंधी इच्छित कार्योनी सिद्धि सरलताथी थायछे. अने परमार्थथी विचारतां धर्मनो अधिकारी पण निष्कपटी भव्यात्माछे. स्त्रीओ पिताओ, पुत्रो, मित्रो सहोदरो, स्वामीसेवक आदि मायावडे परस्पर वंचक जाणवा. मृत्युने देनार (मृत्युपद) कपट जाणवुं. सरलता ब्रह्मनुं स्थान आत्माने हितकारकछे.

समग्रविद्याएकरी विद्वान होय अने सर्वकलानो वेत्ता होय तोपण कपटनो त्याग थवो मुश्केलछे. धन्यछे एवा पुरुषोने के नानां भोळां बाळकोनी पेठे सरलताने धारण करेछे.

जेने तत्त्वनुं ज्ञान नथी एवा बालकोनी सरलता पण प्रीति माटे थायछे तो जे सर्व शास्त्रार्थना पारंगामीछे, एवा पंडितोनी सरलता आत्माने विशेष हितकारी थाय तेमां शुं कहेवुं ?

श्रुतज्ञाननो दरियो एवा गौतम गणधरे पण सरलताथी भगवाननी वाणी सांभळी अहो केवी आश्चर्यता ?

सरलपणे आलोचना करवाथी घणां कर्मने प्राणी खपावेछे, कुटिलताथी आलोचना करतो अल्प पापी होय तो पण प्राणी पापने वधारेछे, जेनी कायामां मनमां वचनमां कुटिलताछे, एवा जीवो उत्कृष्ट तप तपे, आकरी क्रिया करे, वैराग्यरंगमां झील्या होय एवा देखाय तोपण तेनो आत्मा कर्मरहीत थइ मोक्षपद पामतो नथी, मायाए रहीत जीवोनो मोक्ष थायछे एमां संदेह नथी. विचित्र प्रकारनां तप अने विचित्र प्रकारनी धर्म संबंधी क्रिया अने ज्ञानमां विचक्षण एवा पुरुषो पण एक समग्रदुःखमूळभूता कुटिलताने सेवता दुर्योनिमां उपजी विचित्र प्रकारनां भयंकर दुःखोना भागी थायछे. जेम वीरमती नामनी साध्वी कुटिलताथी दुःख पामी तेम कपटी पुरुषो पण धर्म विषयमां कुटिलता करी चतुर्गतिरूप संसारमां परिभ्रमण करेछे, माटे आत्मार्थि पुरुषोए मने करी वचने करी तथा कायाए करी कुटिलतानो त्याग करवो, निष्कपटी मनुष्यने धर्म परिणमेछे. उदायीराजानो घातक बाह्यथी साधु अने अत्यंत विनयवंत एवो विनयरत्न कुटिलताथी मरी नरकमां गयो, तेम तेनी पेठे जे धर्माचारमां बाह्यथी जुदां आचरण अने मनमां जूदुं एम करशे ते धर्मरत्न पामी शकशे नहीं. अने दुःखना

भागी थशे. भावधर्मनी प्राप्ति कोइ विरला जीवोने थायछे. द्रव्य धर्म तो कपटी पण आदरेछे, आत्मज्ञानी समकिती जीवने भावधर्मनी प्राप्ति थायछे, सारांश के मायानो त्याग करशे ते परमात्मपद पामवाने योग्य थशे. श्रीयशोविजयजी उपाध्याय कहेछे के–

श्लोक.

दंभेन व्रतमास्थाय; यो वांछति परंपदं ।
लोहनावं समारुह्य, सोऽब्धेः पारंयियासति ॥१॥
केश लोचधरा शय्या, भिक्षा ब्रह्मव्रतादिकं ।
दंभेन दुष्यते सर्वं, त्रासेनैव महामणिः ॥२॥
सुत्यजं रस लांपट्यं, सुत्यजं देह भूषणं ।
सुत्यजाः कामभोगाद्या, दुस्त्यजं दंभसेवनम् ३
स्वदोष निन्हवो लोक, पूजास्यात् गौरवं तथा ।
इयतैव कदर्थ्यंते, दंभेन व्रत बालिशाः ४
अहो मोहस्य माहात्म्यं, दीक्षा भागवतीमपि ।
दंभेन यद् विलुंपंति, कज्जलेनेव रूपकं ५
आत्मोत्कर्षात् ततोदंभात्, परेषां चापवादतः ।
बध्नाति कठिनं कर्म, बाधकं योग जन्मनः ६

कपटवृत्तिथी पंचमहाव्रत ग्रही जे जीवो परमपदने वांछे छे, ते जीवो लोहनी नावमां बेसी समुद्रनो पार पामता इच्छता होय तेम जाणवा.

केशनुं लुंचन करवुं साधुने सहेल छे, सूर्यसामी दृष्टि राखी आतापना लेवी सहेलछे, पृथ्वीने विषे शयन करवुं, लज्जानो

त्याग, गृहे गृहे भिक्षा मागवी, काम विकारने जीती ब्रह्मचर्य पा-ळवुं आदि सर्व सहेलछे किंतु साधुने कपटनो त्याग करवो मुश्केलछे. सर्व व्रत, तप क्रियादि कपटथी दुषित थायछे. जेम सुंदर निर्मल मणिने डाघलागवाथी तेनी कांति मंद थायछे तेनी पेठे अत्र समजवुं.

रसनुं लोलपीपणुं सुखे त्यागी शकाय, देह भूषग पण त्यागी शकाय. कामभोगादिने पग सुखे त्यागी शकाय. पग कपटनो त्याग करवो घगो विकटछे. जेम जेम विद्वत्ता वृद्धि पामे तेम तेम आत्म उपयोगी शून्य मुनि कपटमां पोतानी विद्यानो उपयोग करे छे कपटमात्र त्यागवाथी सुख थायछे, कोइ प्राणी मान पूजानी लालचे उपरथी बाह्य चारित्र शुद्ध पाळे, पंचसमितिनो बाह्यथी खप करे, त्रग गुप्तिनो बाह्यथी सारी रीते खप करे. उपरथी एवो वैराग्य जगावे के लोको तेना उपर फीदा फीदा थइ जाय पग अंतरमां आत्मानो उपयोग होय नहीं अने अभ्यंतर निर्मल परिणाम न होय पोताना गच्छनो मतनो पक्ष सबल करवानी लालसा बनी रही होय, आत्मा अने परमात्मानुं स्वरूप शुं छे ? तेनो तो विचार पण करे नहीं, व्याख्यान वाणीथी हजारो जीवोने रंजन करे, बोलवानी कळा एवी होय के जेथी विचारा मुग्ध जीवोने वश करी दृष्टी रागीया करे, एवो साधु कपटवृत्तिथी परमात्म स्वरुप पामी शकतो नथी. ज्यारे साधुनी पग आवी स्थीति छे तो अल्पज्ञ संसारना खाडामां पतित श्रावकवर्गनो भाग्ये कपटनो त्याग करी शके. कपट रुप काळो नाग जे भव्यना हृदयमां पर निंदा, स्वमहत्वता, परापकर्षरुप फणीवडे करी सहीन वसतो होय ते प्राणी दुःखनी परंपराने पामेछे. अल्पज्ञ पुरुषो कपटीयोना कपटने पारखी शकता नथी, जे मुनि बाह्य क्षणिक मान पूजा कीर्तिनी लालचे श्रावक आगळ ठीकठाक आचरण देखाडी रंजन

करे ते श्रावकनी आगळ एवुं बोलेके ते भद्रिक महामुनि तेमने जाणे पण पोतानामां कंइ होय नहीं.

श्री चिदानंदजी महाराज कहेछे के—

कथनी कथे सहु कोइ, रहेणी अति दुर्लभ होइ;
जब रहेणीका घर पावे, तब कहेणी लेखे आवे. १

निष्कपटी अने कपटी साधुओनी परीक्षा करवी दुर्घटछे, महा बुद्धिना धणी एवा अभयकुमार सरखा कपटी वेश्या श्राविकानुं कपट जाणी शक्या नहीं, तो बालजीवोनुं शुं कहेवुं ? जेने मान पूजा कीर्तिनी लालच गइछे एवा पुरूषोने धन्यछे, विवेकी सुज्ञ पुरूष हंसनी पेठे कपटी अने निष्कपटी साधुओनी परीक्षा करी देछे, कपटी एम धारेछे के हुं अन्यने छेतरुं छुं पण कपटथी तेना आत्माने कर्म छेतरी पोताने वश करेछे ते जाणी शकतो नथी. आखी दुनीयामां कपटजाळ मोह राजाए पाथरीछे तेमां मनुष्यादिक रूप माछलां बिचारां अंतरना अज्ञाने सपडायछे. अने विविध दुःख पामेछे, जेने खरेखरुं निज आत्मानुं ज्ञान थायछे ते कपटजाळने छेदी नाखेछे, निष्कपटी पुरूषोनी वाणीमां द्विधाभाव रहेतो नथी, निष्कपटी मनुष्य जेवुं होय तेवुं कहेछे. कपटीनी वृत्ति काक सदृशछे. पोताना दोषने गोपवनार लोक पोतानुं गौरव मान पूजा जेम थाय तेम दंभथी आचरण करेछे, अहो केटली अज्ञानता ? जेनो अंते त्याग करवानोछे तेनामां मुंझावुं ए बाळजीवोनुं लक्षणछे. प्राणी मनमां परमार्थबुद्धिथी विचारे तो कपट करवानुं कंइ कारण नथी. एम विश्वास थाय. गुरुमहाराजने पण कपटी शिष्यनो विश्वास आवतो नथी. ज्ञानी गुरुराजनी पासे जइ कोइ प्राणी कपटथी पृच्छा करे तो ते तुरत जाणी लेछे. अने तेथी पृच्छकने अयोग्य जाणी मौन धारेछे, कपटी एवुं जाणीने कपट

करेछे के, हुं युक्ति रचुं छुं, हुं कळा करुंछुं, हुं बोलुंछुं, ते अन्य कोइ जाणतुं नथी. पण याद राख के प्रथम तो कपटने जाणनार तारा शरीरमां रहेलो तारो आत्माछे. वीजुं सिद्ध भगवंत ज्ञाने करी तारुं कपट जाणी रह्याछे, कोनाथी छानुं तारुं कपटछे. हे मूर्ख जीव ! तुं चार घडीना चांदरणानी पेठे आ दुनीयामां थोडो काल रही परभवमां चाल्यो जनारछे, तारा शरीरनी खाख थइ जशे, हाडकांना चूरेचूरा थइ जशे. करेलां कर्म परभवमां भोगववां पडशे. तुं तारी मेळे विचार तो तारा आत्मा न्यायाधीशनी पेठे न्याय करी आपशे, कपट विनानी तारी केटली जींदगी गइ ? तेनो विचार कर–तारुं कपट कदापि तुं अत्र छानुं राखीश पण परभवमां केम छूटीश ? राजा, राणा, शेठ, गरीब आदि सर्व कपट करशे तो ते तेनुं फल भोगवशे. पोताना आत्माने सुबुद्धि-थी प्रश्न करो के हे आत्मा तने कपट प्रियछे ? त्यारे आत्मा तर-फथी विचार थशे के कपट करवुं ते महापापछे.

अहो मोहराजानुं माहात्म्य तो जुओ के प्राणी श्री तीर्थक-रोक्त भागवती दीक्षाने पण काजळें करी चित्रामणनो जेम लोप थाय तेम कपटे करी लोपी नाखेछे.

पोताना आत्मानी वडाइ करे, घणुं कपट धरे अने पारका अवर्णवाद बोले तेथी प्राणी कठीन कर्म बांधेछे, तेवा पुरुषो योगी-ना जन्मने बाध करनाराछे. ते शुद्ध चारित्र पामी शके नहीं. श्री यशोविजयजी उपाध्यायजी "माया" विषे कहे छे के—

नवमास उपवासीया सुणो संताजी ।
शीत लीए कृश अन्न गुणवंताजी ॥
गर्भ अनंता पामशे सुणो संताजी ।

आरभ्यते पूरयितुं, लोभगर्तो यथा यथा।
तथा तथा महच्चित्रं, मुहुरेषो विवर्धते १३
लोभस्त्यक्तो यदि तदा, तपोभिरफलैरलं
लोभस्त्यक्तोनचेत्तर्हि, तपोभिरफलैरलं १४
लोभमूलानि पापानि, रसमूलानि व्याधयः
स्नेहमूलानि दुःखानि, त्रीणित्यक्त्वा सुखीभव. १५

सर्व दोषनुं स्थान लोभछे, गुणनो ग्रास करवाने लोभ राक्षस समान छे. व्यसनरुप वल्ली कंदभूत लोभ जाणवो. एम सर्वार्थनो बाधक लोभ जाणवो. निर्धन सो रुपीयाने इच्छे, अने सो रुपीया मळे हजारनी इच्छा, अने हजारनो अधिपति थये लाखनी इच्छा थाय. लक्षमळे करोडनी इच्छा थाय कोटीश्वर नृप ऋद्धि चाहे, राजा चक्रवर्तिनी पदवी इच्छे अने चक्रवर्ती देवतानी ऋद्धि चाहे छे. देवताने इंद्रनी पदवानो लोभ रहे छे. एम मूलमां लघु अने अंते वृद्धिने पामनार लोभ शरावनी पेठे जाणवो.

पापनुं मूळ हिंसा अने कर्मनुं मूळ जेम मिथ्यात्व, अने रोगोने विषे जेम राजरोग (क्षयरोग) सर्व रोगनुं मूळछे. तेम लोभ सर्व पापनो गुरु छे. अहो लोभनुं साम्राज्यतो जुओ. पृथ्वीने विषे एक छत्र लोभनुं राज्यछे, वृक्षो पण निधानने पामी मूळीए करी संताडेछे.

द्रव्यना लोभमां द्वीन्द्रियादि जीवो पण सपडायाछे पूर्व भवना निधान उपर मूर्च्छावडे अधिरोहण करे छे.

सर्प, उंदर, गिरोली प्रमुख पण धनना लोभमां पूर्व भवनी मूर्छाना योगे फसायछे. अने निधानना उपर वास करेछे.

भूत प्रेत पिशाच यक्षादिक पण धनना अधिष्टाता तरीके रहे छे, अहो लोभनी केवी सत्ताके देवताओ सरखा पण धनादिकनी मूर्छाए नीच योनिमां अवतरेछे. मोटा मोटा मुनिवरो के जे उपशा-

न्तमोह गुणठाणे क्रोधादिकने झीती चढ्याछे तो पण तेमने लोभ धक्को देइ पाडी नाखेछे.

लोभथी राजाओ ठाकोरो विगेरे गामनी सीमोनी तकरारमां हरसाल क्लेश करी वैर धारण करी लढी मरेछे, जुओ प्रत्यक्ष रुशीया अने जापान देश लोभना कारण माटे मोटी मोटी हाल लडाइओ करी अने तेमां लाखो जीवोनो संहार थयो.

लोभरूपी खाडाने पूरवा माटे जेम जेम प्रयत्न करीये छीए तेम तेम वृद्धि पामेछे. अहो केवुं आश्चर्य ?

लोभ त्याग्यो तो तपवडे पण शुं ? अर्थात् लोभना नाशथी तप तपवानी कंइ जरुर नथी अने कदापि जो लोभ हृदयमां छे तो तपश्चर्यावडे करीने शुं ? अर्थात् कंइ नही. लोभ मूळ भूत पाप कृत्य जाणवां, रसमूळ भूत व्याधियो जाणवी. स्नेह मूल दुःखो जाणवां, एटले स्नेहथी सर्व दुःखो उत्पन्न थायछे, माटे हे प्राणी ए त्रण वस्तुओनो त्याग करी तुं सुखी था.

लोभथी कपट थाय लोभथी जीवहिंसा थाय, लोभथी असत्य वचन बोलवुं पडे, लोभथी चोरी करवानुं मन थाय. लोभथी कृत्य अकृत्यनुं भान रहे नहीं. लोभथी लज्जा दूर रहे, लोभथी धर्मनाश पामे, लोभथी विवेकनो नाश थाय छे. लोभी पुरुषने सुखे निद्रा पण आवती नथी, लोभी पुरुष गरज वखते गधेडाने पण बाप कहेछे. लोभी पुरुष सदा पारकुं खावा चाहेछे, लोभी पुरुष मातापिताने पण छेतरेछे, लोभी पुरुष साधु पुरुषनुं पण अपमान करेछे, मम्मण शेठ जेवा लोभी पुरुषो परभवमां पण सुख पामी शकता नथी, आ दुनीयामां लोभी पुरुष शुं शुं कृत्य करी शकता नथी. लोभी पुरुष धनने माटे अन्यनो घात करेछे तेनुं मरण इच्छेछे, जुओ लोभ वशे धवळ शेठ श्री श्रीपाळ राजाने मारवा माटे गया, पण खोदे ते पडे

तेनी पेठे पोते मरण पाम्या अरे दुर्गतिमां गया. लोभथकी सागर शेठ समुद्रमां बूडी मरण पाम्या. लोभथी पुत्र पोताना पिताना राज्यने माटे घात करेछे, करावेछे, वांछे, लोभी पुरुषनी पासे लाखो रुपैया होय तो पण सुखे उंघी सकता नथी, लोभी पुरुष पापकर्मथी जरा मात्र पण डरतो नथी. साधुओने वस्त्र पात्र शिष्यादिकनो लोभ होय छे. ज्ञानी पासे तेमांनुं कंइ नथी. ज्ञानी वस्त्र पात्रादिक राखे छे छतां ते उपर मोह राखतो नथी. ज्ञानी मनमां एम विचारे छे के हुं कइ वस्तुनो लोभ करुं. जे वस्तुनो लोभ थाय छे ते वस्तुक्षणीकछे अने मारी नथी, राज्य धन, कुटुंब, पुत्र, पुत्रीओ, घर, हाट, वस्त्र, विगेरे वस्तुओ आत्मानी नथी अने आत्मानी साथे आवनार पण नथी. फक्त अज्ञानताए जीव परवस्तुने पोतानी मानी तेना लोभमां विचित्र दुःखो पामेछे. मरी गया बाद सर्व वस्तुओ ज्यां हशे त्यांनी त्यां रेहेशे. माटे अरे जीव जरातो विचार!! पृथ्वी, घर, हाट, राज्य, लक्ष्मी मूकी घणा मनुष्यो चाल्या गया तेम तुं पण एक दिवस सर्व मूकीने चाल्यो जवानो, जे कायामां सारुं सारुं मिष्टान्न तुं भरेछे, जे कायामां तुं वस्योछे, जे कायावडे तुं हाली चाली शकेछे, जे कायाने तुं न्हवरावे धोवरावेछे ते काया पण अंते तारी थवानी नथी. तो तुं लोभ शा माटे करेछे? धूमाडाना बाचक भरवा जेम नकामाछे ते परवस्तुने पोतानी मानी लोभ करवो ते पण खोटोछे. खारु जल पीवाथी जेम तृप्ति वळती नथी तेम लोभ करवाथी शान्ति सुख मळतां नथी. माटे अमृत समान संतोष गुणनुं हे जीव तुं सेवन कर के जेथी शान्ति सुख मळे.

संतोष स्वरूप.

श्लोक=कथाकोष ग्रंथे.

यथा नृणां चक्रवर्ती, सुराणां पाक शासनः
तथा गुणानां सर्वेषां, संतोषः परमोगुणः १
संतोषयुक्तस्य यते रसंतुष्टस्य चक्रिणः
तुल्यासंमितोमन्ये प्रकर्षः सुख दुःखयोः २
किमिंद्रियाणां दमनैः किं कायपरपीडनैः
ननु संतोष मात्रेण मुक्तिस्त्रीमुखमीक्षते ३
यत् संतोषवतां सौख्यं, तृणसंस्तारशायिनां ।
क्वतत् संतोषवंध्यानां तुलिकाशायिनामपि ४

जेम मनुष्योमां चक्रवर्ती देवताओमां जेम इंद्र, तेम सर्व गुणोमां संतोष मोटामां मोटा गुणछे. संतोष युक्त यतिना जेटलुं इंद्र चंद्र नागेंद्रने पण सुख होतुं नथी. इंद्रियोना दमन करवावडे करीशुं, कायाने पाडवावडे शुं ? संतोष मात्रवडे मुक्तिस्त्री मुखनुं निरीक्षण थायछे. तृणना संथारा उपर शयन करनार एवा संतोष वाळा मुनिवरोने जे सुखछे ते सुख संतोष वंध्य तूलिकामां शयन करनार नृप गृहस्थोने होतु नथी. संतोषी नर सदा सुखी जाणवो. असंतोषि पुरुषने संतोषी एवा भिक्षुक जेटलुं पण सुख होतु नथी. संतोषीने चिंता होती नथी. संतोष कल्पवृक्ष समानछे. संतोष अ-नहद आनंददायकछे. संतोषी पारकानो उपकार करवा समर्थछे. असंतोषी मरीने परभवमां पण सुख पामतो नथी. संतोषी मोटो धनवान् जाणवो. संतोषमां जे सुखछे ते सुख अन्यत्र नथी. भा-

त्मज्ञान थया विना तात्त्विक संतोष थतो नथी माटे आत्मज्ञान करतां सर्व दोषो नाश पामशे. चक्रवर्ती सरखा मोटा राजाओ पण लक्ष्मीनो त्याग करी सुखी थया.

आत्मार्थी भव्योए पारकी निंदानो त्याग करवो, कारण के निंदक चंडालछे. निंदक मोटो पापीछे. नाम दइने निंदा करे तो अधम जाणवो. परमां भूल होय पण तेना पूंठे निंदा करवाथी कंइ फायदो थतो नथी. पापमां शक्तिवाळा पुरुषोने निंदा करवानो स्वभावछे. गंगाजलमां स्नान करनार होय, अडसठ तीर्थनी यात्रा करे किंतु जो ते निंदक छे तो ते अपवित्र अने दुष्ट जाणवो, बहादूर पुरुषो निंदा करता नथी. निंदक झागडाना करतां पण भूंडोछे. अदेखाइथी निंदा उत्पन्न थायछे अने निंदाथी क्लेश उत्पन्न थायछे अने ते सामा पुरुषना जाणवामां आवे तो परस्पर वैर बंधायछे, निंदक आभवमां तथा परभवमां पण दुःख पामेछे, निंदा करवाथी मित्रनी मित्राइ पण तूटेछे.

जो तमे गुणी थवाने चाहताहो के मनुष्यनी धोळी बाजू तरफ दृष्टिद्यो. पण काळी बाजु तरफ दृष्टि द्यो नहीं, हालना वखतमां कोइ सर्व गुणी नथी, कोइ पुरुषनी कोइ निंदा करे तो तेने मनमां एम विचारवुं के भले ए निंदे. हुं जो सारो मनुष्य छुं तो तेनी निंदाथी मारे शुं ? निंदकना उपर मारे केम क्रोध करवो जोइए ? सामा मनुष्यनुं हित इच्छवुं होय तो तेना गुण गावा. कोइ निंदक निंदा करे तो उलटुं निंदकनामां जे गुण होय ते आपणे वखाणवो पण खराब लागणीथी सामु तेनुं बुरुं करवा प्रयत्न करवो नहीं. कोइ आपणा उपर दुष्टता करे तो पण आपणे तेनी तरफ शुभ भावना राखवी, तेनु सारुं करवा शुभ संकल्प करवो एम करवाथी सामो पुरुष अंते दुष्टतानो त्याग करशे आ नियमनो अनु-

भव करवाथी खातरी थशे.

आत्मज्ञानीओ कोइनी पण निंदा करता नथी तेओ तो आत्म स्वरूपमां तल्लीन रहेछे. परना तरफ दृष्टि देता नथी अने कदापि उपकारने माटे परतरफ दृष्टिछे तो पण आत्महितथी अन्य प्रवृत्ति करता नथी.

कोइ विरला जगत्मां आत्म तत्त्वनी शोधमां स्वकाल निर्गमन करेछे, अने कोइ विरला परमात्मपदने पामेछे, सत्य तरफ प्रायः दुनीया प्रवृत्ति करती नथी पण असत्य तरफ करेछे ते उपर एक दृष्टांत मुसलमानी धर्ममां प्रगट थयुं छे ते एवी रीते के कोइ एक महान् पादशाहना वखतमां एक फकीरे प्रश्न कर्यो के—हे पादशाह आ सब खल्क बुरे रस्तेपर क्युं चल रही हे ? त्यारे एना उत्तरमां पादशाहे फकीरने विज्ञप्ति करी कह्युं के—आपकुं मेरा मुकाममें दो वर्षतक रहेना चाहिए. जब आपका सवालका जवाब में देनेकुं शक्तिमान होउंगा—आ उपरथी फकीर बावा त्यां रह्या के तुरत पादशाहे पोताना राज्यमांना तमाम अमीर उमरावोने बोलावी हुकम आप्यो के—अमारा खजानामांथी तमाम लक्ष्मी खर्ची एक महा मोटो बाग बनाववो जोइए ने ते बागमां तमाम सृष्टिनी सर्व वस्तुओ प्रगट करीदेवी. बाद तमाम जगत्मांनी सर्व प्रजाने ते बाग जोवा बोलाववी, ने तेमनो तमाम खर्च तेमनी जग्यापर पहोंचाड्या सुधीनो आपणे करवो जोइए. आवा प्रकारनो हुकम मळतां सर्व कचेरी मंडळे तावडतोब आखी पृथ्वीमां रहेला तमाम कारीगरोने बोलाव्या ने तेमना कह्या प्रमाणे असंख्य जातनां साधनो पुरां पाडवा लाग्या. जे उपरथी बसे कोसनी वचमां जमीन पहाड समुद्र नाना प्रकारनां तमाम दुनीयामां रहेलां पशुपंखीओ तथा अढारभार

वनस्पति, मेवानां झाड, विचित्र प्रकारनां अमूल्य वस्त्र रत्न इत्यादि भातभातनां पक्वान्न, बागमां फरवाना मनोहर लताना मंडपोवाळा रस्ता, ठेकाणे ठेकाणे सुंदर वेश्याओ नाटक करे तेम गोठवण थइ, स्थळे स्थळे विचित्र प्रकारनां नाटको. तेमज खेलाडुओनी गोठवण थइ, साकरीयां पाणी, गुलाबजल लोकोना उपभोगने माटे तैयार कराव्यां. अनेक तरेहना जानवरोना तमासानी रमतनी गोठवण थइ. बाग जोनाराने बेसवाने माटे अनेक खुरशीओ आदिनी सगवड थइ. बागमां सुंदर सरोवरो हवा खावाने माटे बंधाव्यां अने ते सरोवरनी आसपास चारे तरफ लींमडा ववराव्या. घटा करावी, ठेकाणे ठेकाणे पाणीना फुंवारा मूकी दीधा, विषेश शुं ? अपरंपार तेनी शोभा बाह्य जगत्नी वस्तुओथी बनावी दीधी, अने राजवर्गे पादशाहने खबर आपी. पादशाहे जगत्मां एवी जाहेरात् खबर आपी के—मारा वसो कोशना बागना मध्यभागमां एक महेल में रचावेलो छे, ते महेलमां अमुक दिवसे बपोरना त्रण बागे हुं एक कलाक संताइ रहीश, तेवामां जे पुरुष मने शोधी काढशे तेने हुं मारी तमाम पादशाही आपी देइश. एवी रीतनी जाहेर खबर दुनीयामां फेलावी दीधी. ठरावेला दिवसे तमाम लोको बादशाही बाग जोवा आव्या. तमाम प्रजा बाग जोवा मशगुल थइ कोइ फुलनां झाडो जोवा लाग्या. कोइ वाघसिंहादि पशुओने जोवा लाग्या, केटलाक शोखीन तळावनी शोभा जोवा लाग्या अने ठंडो पवन खावा लाग्या, नाटक जोवाना रसीया नाटक जोवामां लीन थया. मेवाना रसीया मेवा खावा लाग्या. कोइ पुरुषे बीजा पुरुषने कह्युं के—भाइ चालो आपणे बादशाहने शोधी काढीए, त्यारे सामा पुरुषे जवाब आप्यो के—तुं तो घेलो थयो छे, शुं राजा ते महेलमां संताय ? एने एनुं राज्य व्हालुं छे,

माटे आपणे तो वेश्याओनो नाश जोवामां आनंद मानीशुं–कोइ व्याकरण शास्त्रना विद्वाने नैयायिकने कह्युं–हे नैयायिक तुं वादशाह महेलमां संताणो छे ते वातने खरी वात माने छे के खोटी त्यारे नैयायिके कह्युं के.–वादशाह वाक्यं प्रमाणं वा अप्रमाणं वा, तस्य वाक्यं सत्यं वा असत्यं वा. एतत् कार्यस्य किं प्रयोजनं, इदृशं पूर्वं न भूतं, कदापि वादशाह गांडो थयो हशे, कदापि महेलमां तेने शोधवा जतां वादशाह मारी नांखे तथा वळी एक एवी शंका थाय छे के–वादशाह महेलमां छे तेमां शुं प्रमाण ? प्रत्यक्ष प्रमाण प्रत्यक्ष विरुद्ध छे. अनुमान प्रमाणमां कोइ हेतु अव्यभिचारी सिद्ध थतो नथी, उपमान प्रमाण पण सादृश्यना अभावथी वाधितछे. आगम प्रमाणनी पण अत्र सिद्धि थती नथी, माटे अमो तो वादशाहने शोधवानुं वंध राखी आ प्रत्यक्ष देखाती वस्तुओ जोवामां आनंद मानीशुं, त्यारे व्याकरणशास्त्रवेत्ताए कह्युं सत्यं सत्यं भवतां कथनं पादशाह वाक्यं प्रमाणीभूतं मया न ज्ञायते–कोइ सगां संबंधीनी वातो करवा लाग्या. वागनी मनोहरतानी एवी खुवी हती के पगले पगले विचित्र जोवानुं मळे, खावानुं मळे, केटलाक तो वृक्ष तळे सूइ गया, केटलाकएक वीजाने वस्तुओ ओळखाववा लाग्या, केटलाक रुपैया खर्ची टीकीटो करावी तमासा जोवा लाग्या, केटलाक एम विचारवा लाग्या के वादशाह बुद्धिमान् छे, तेनी ओछी माया नथी ते एवो संताणो हशे के आपणा हाथमां आववो मुश्केलछे, माटे आपणा करना होइए ते करो. केटलाक एम चिंतववा लाग्या के ज्यारे आ वागमां पण एवी भूलवणी चुकवणी छे के आपणे भूला पडीयेछीये तो वादशाहना महेलमां तो बहु भूलवणी चुकवणी हशे के जेथी शोधवाने बदले आपणे भूला पडीए तो अतोभ्रष्ट ततोभ्रष्ट थइए. केटलाक सुंदर पक्षीओ देखी तेमां

मोह पाम्या. केटलाक रागरागणीना तानमां गुलतान थया. केटलाक व्यापार करवा लाग्या, केटलाक विषयनी वातो करवा लाग्या केटलाक एम चिंतववा लाग्या के आ बागमां सदा रहेवानुं थाय तो ठीक. एम सर्वजन वागनी मोहमायामां फसाया. कोइए वादशाहने शोधी कहाडवानो प्रयत्न कर्यो नहीं, एवामां एक डाह्यो पुरुष हतो तेणे विचार्युं के—खरेखर आ जगत्नी तमाम प्रजा गांडीने मूर्ख छे, केमके ते जोवामां मशगुल थइ पडी पण तेमनामां एटली समजण नथी के प्रथम बाग जोवाना करतां वादशाहने शोधी कहाडवो जोइए वादशाहने शोधी काढे तो आ सर्व वाग तथा वादशाही तेने मळे, माटे आपणे तो प्रथम वादशाहने शोधी काढवो जोइए एम निश्चय करी आ पुरुषे महेल तरफ प्रयाण कर्युं. कोइ वस्तु तरफ दृष्टि दीधी नहीं, अंते महेलमां गयो, वादशाहने शोधी काढ्यो, के तुरत वादशाहे एक हजार तोप फोडावी मान साथे पोतानी वादशाही तेने हवाले करीने तुरत पेला फकीर बावाने पादशाहे कह्युं के—फकीर साहेब देखो. ऐसी दुनीया दिवानीकी रीति है के सब खलक जूठा बाग देखनेमें मशगुल हुइ, लेकीन कीसीका ध्यान मेरी शोध तरफ नहीं आया. सारांश के एवी रीते आ दुनीयाना जीवो असत्य मोहमायाथी जगत्मां फसायाछे. मोहमायानो त्याग करी जिनाज्ञा सत्य मानी पोतानी कायारूपी महेलमां अनंत शक्तिमान् अनंत सुखभोक्ता एवा आत्मारूपी वादशाह रहेलोछे तेने शोधवा ध्यान लगाडे तो जीव पोते परमात्मा वनी त्रण जगतनो स्वामी थाय. संसाररूप वागमां सर्व जगत् मोहमायाथी फसायुंछे, कोइ विरला प्राणी आत्मज्ञानने माटे सद्गुरुनुं संसेवन करेछे, जेम झांझवाना पाणीथी तृषा शान्त थती नथी तेम संसारनी मोहमायाथी आत्माने शान्ति मळती नथी, संसारनी सर्व खटपटने त्यागी आतमस्वरूप प्राप्त करवुं. एज

सारमां सारछे. पुनः पुनः मनुष्यभव मळवानो नथी, गयो वखत पाछो आववनार नथी सद्गुरुनां वचन हृदयमां ठस्यां नथी एम लागेछे, जो ठस्यां होत तो संसारना पदार्थोमां मन जाय नही, हे चेतन तुं क्षणमां सारां सारां भोजन जमवानी इच्छा करेछे पुनः स्त्रीविषयाभिलाषे तुं वहेछे पण समजतो नथी के-स्त्रीना उपर मोह पामवानुं शुं कारण ? स्त्रीनुं शरीर सात धातुथी भरेलुंछे, स्त्रीनी कायामांथी मळमूत्र लींट वह्या करेछे, एना शरीरमां जरा पण पवित्रता देखाती नथी. परसेवो, मेल, मस्तकना केशमां जू विगेरे प्रत्यक्ष देखायछे माटे हवे तुं वैराग्य लावी ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर.

ब्रह्मचर्य स्वरूप

श्लोकः

वन्हिस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणात्,
मेरुःस्वल्प शिलायते मृगरिपुः सद्यः कुरंगायते;
व्यालो माल्य गुणायते विषरसः पीयूष वर्षायते,
यस्यांगेऽखिल लोक वल्लभतमं शीलं समुन्मीलति· १
ऐश्वर्य्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्य्यस्य वाक् संयमो,
ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो वित्तस्य पात्रे व्ययः,
अक्रोधस्तपसः क्षमा प्रभवितुः धर्मस्य निर्व्याजता,
सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणं. २

तथा गाथा

शीलं कुल आहरणं, शीलं रूवं च उत्तमं जयइ;
शीलं चिय पंडित्तं, शीलं चिय निरुवमं धम्मं. १

तथाच श्री हेमसूरिपादाः

प्राणभूतं चरित्रस्य, परब्रह्मैककारणं;
समाचरन् ब्रह्मचर्यं, पूजितैरपि पूज्यते. २

तथा च दशमांगे श्री प्रश्न व्याकरणे यस्य ब्रह्मचर्यस्य नामानि गुणाश्चैवमुच्यंते तथाहि जंबू एत्तोय बंभचेरं उत्तम तव नियम णाण दंसण चरित्त सम्मत्त विणयमूलं गुणप्पहाणजुत्तं हिमवंत महंत तेय मत्त पसथ्थं गंभीरं थिमितमज्जं अज्जव साहुजणा चरितं मोख मग्गं विसुद्धं सिद्धिगति निलयं सासत मव्वाबाहं अपुण भवं पसथ्थं सोमं शुभं सिव मयल मख्खर करं जति वरसा रख्खियं सुसाहस्सहियं नवरि मुणिवरेहिं महा पुरिस धीर सूर धम्मिय धितिमंताणय सया सुविसुद्धं भव्वं भव्वजण समुचिणं निसंकियं निभ्भयं नित्तुसं निरायासं निरुवलेवं निव्वुइ घर नियम निप्पकंपं तव संजम मूल दलियणेग्गं पंचमहव्वय सुरख्खियं समिति गुत्ति जाणवरं कवाड सुकयरख्खण दिण्ण फलिह सण्णद्धोथ्थयिअ दुग्गतिपहं सुगतिपह देसग्गं च लोगुत्तमं च वयमिणं पउमसर तलाग पालिभूयं महा सगडअर तुंब भूअं महाविडिम रुख्ख खंधभूतं महानगर पागार कवाड फलिह भूअं रज्जपिणद्धोव इंदकेउं विसुद्धणेग गुणसंपिणद्धं, जम्मिअ भग्गम्मि होइ सहसा सव्वसंभग्गसद्धिय महिय चुण्णिय कुशल्लि तपल्लट्ट पडिअ खंडिय परिसडिय विणासियअं विणयसील तव नियम गुण समूहं तं बंभं भगवंतं गहगण णख्खत्त तारगाणं वा जहाउलुपति मणिमुत्त सिलप्पवाल रत्त रयणागराणंव जहा समुद्दो वेरुलि उव्वेव जह मणीणं जह मउडो चेव भूसणाणं वथ्थाणं चेवख्खोम जुअलं अरविंद चेव पुप्फ जेठं गोसीसंचेव चंदणाणं हिमवंता चेव ओसहीणं सीतो आचेव निम्मगाणं उदहीसु जहासयंभूरमणो रुअगवरो चेव मंडलि अपव्वयाण पवरे ऐरावणो इव कुंजराणं सीहोव्व ज-

ह्यामिगाणं पवरो पन्नगाणं चेव वेणुदेवे धरणे जणपण इंद्राया कप्पाणं चेव बंभलोए सभासु अजह भवे मुहम्मो ठितीसु लवसत्त मगासव्वपवरा दाणाणं चेव अभयदाणं किमिराओ चेव कंबला-णं संघयणे चेव वज्जरिसभे संठाणे चेव चउरंसेआणेसुअ परमसु-कम्झाणं णाणेसुअ परम केवलं सिद्दं लेसासुअ परम सुक्कलेसा तिथ्थकरो जहचेव मुणीणं वासेसु जहा महाविदेहे गिरिरायाचेव मंदरवरे वणेसु जहा नंदणवणं परंच दुमेसु जह जंबू सुदंसणा वी-सुजसा जीसे नामेण अयं दीवो तुरगावती रहवती नरवती जहवीसु ते चेव राया रहिए चेव महारह मते एवं अणेग गुणा अहीणा भ-वंति एकम्मि बंभचेरे जम्मिअ आराहि अं वयमिणं सच्चं सीलं तवो ओय विणओय संजमोय खंती मुत्ति तहेव इह लोइअ पारलोइय जसोकित्तिय पव्वओय तम्हा निहुएण बंभचेरं चरिअव्वं सव्वओ विसुद्धं जावजीवाए. इत्यादि महिमा ब्रह्मचर्य व्रतनो कह्यो छे.

" दुहा. "

आतम सुखनी :चाहतो, विषयेच्छा परिहार;
विषयेच्छा मनमां घणी, तो शुं ? आतम विचार. १
आत्म स्वरूपे ध्यानतो, विषयेच्छानो नाश.
प्रतिपक्षी बे धर्मनो, नहीं एकत्र निवास. २
बे साथे वर्ते नहीं, वर्ते त्यां छे दंभ;
भोगज कर्माधीनथी, त्यां शुं होय अचंभ. ३
दुर्गंधीनी कोथळी, मळमूत्रे भरी देह;
कान्ता काया एहवी, अपवित्रतानुं गेह. ४
रंग रुप खोटा सहु, श्रवे अशुची नित्य;

मोह करे शुं जीवडा, समज समज तुं चित्त. ५
भोग रोग सममानतो, स्वप्ने पण नहीं आश;
अनित्य आ संसारमां, क्यांथी तेनो वास. ६
दुर्लभ आत्मस्वरूपनी, वातो करवी सहेल;
किंतु आत्म स्वरूपनी, प्राप्तिछे मुस्केल. ७

निंदा, आलस्य, असत्यादि दूषणो निवारी निःसंगी थइ आत्म तत्त्वनी खोज करनार आत्मतत्त्व पामी शकेछे. आत्मतत्त्वनी वातो करवी सहेलछे पण आत्म तत्त्वनी प्राप्ति थवी मुश्केलछे. कोइ विरला प्राणी आत्मा उपर रुचि करेछे.

आ चेतन अज्ञानयोगे भ्रमित थइ कदापि चलित थइ जाय छे. एवुं आत्म स्वरुप भूली गयो तेथी परवस्तुमां मोह पाम्यो, अशुद्ध परिणत्तिथी औदारिक, वैक्रिय आहारक, तेजस, कार्मणादि शरीरो धारण करी तेना योगे ताडन तर्जन छेदन भेदनादिक दुःखो लह्यां, हवे जो तने सुखनी आशा थइ होय तो हे आत्मन् चेत चेत समय चाल्या जायछे मनना मनोरथ मनमां रहेशे, सद्गुरु संगे रही आत्म स्वरूप समज अने तेना ध्यानमां रहेतां.आश्रवनुं दूरी करण थशे. अने अंतर् तत्त्वोपयोगे संवरनी प्राप्ति थशे तारुं स्वरूप तुं देखे एटले तारो मोक्ष थशे.

श्री देवचंद्रजी पण कहेछे के–

" दुहा. "

तत्त्वते आत्म स्वरूपछे, शुद्ध धर्म पण तेह;
परभावानुग चेतना, कर्म गेहछे एह. १
तजीपर परिणति रमणता, भज निज भाव विशुद्ध;

२
आत्म भावथी एकता, परमानंद प्रसिद्ध·
स्याद्वाद गुण परिणमन, रमता समता संग;
३
साधे सुद्धानंदता, निर्विकल्प रसरंग·
मोक्ष साधनतणुं मूळ जे, सम्यग्दर्शन ज्ञान;
वस्तु धर्म अवबोध विणुं, तुस खंडण समान· ४
आत्मबोध विणुं जे क्रिया, तेतो वालक चाल;
५
तत्वार्थनी वृत्तिमं, लेजो वचन सभाल·

इत्यादिथी पण आत्मज्ञाननी खास जरुरछे, आ जगत्मां राग
द्वेषव्यापी गयोछे ने आत्माना अज्ञानने लीवे जाणवो. आ शरी-
रमां रहेला आत्माना सरखा अन्य शरीरोमां पण रहेला आत्माओछे
एम जो जाणवामां श्रद्धा पूर्वक आवे तो कोइ दुःख कोइ जीवने
आपे नहीं, अने कोइ जीवना उपर कोइ जीव वैर राखे नहीं. आ-
त्मज्ञानी सर्व जीवने सिद्धसमान गणे तो पछी कया जीवनी साथे
ते विरोध करे ? अलवत कोइ जीवनी साथे ते विरोध करे नहीं,
ए वातनो अनुभव करवाथी मालम पडशे, आत्मिक शुद्धानंद पण
त्यारे अनुभवमां आवशे. राग द्वेषथी जेनु मलीन छे तेने सुख म-
ळतुं नथी. जगत्मां तात्त्विक सुखना भोक्ता आत्मज्ञानी मुनिवरोछे.
तेमने स्त्री नथी. पण समता रुपस्त्री भावथी जाणवी. राजाओ शेठी-
याओ, वकीलो, डाक्तरो, ज्यारे ताप आदिना निवारण माटे छत्री
धारण करेछे तो तेना बदले आत्मज्ञानी मुनिवरो क्षमारूप छत्रीने
धारण करेछे. क्षमारूप छत्रीथी क्रोधरूप ताप लागतो नथी. अने
अदेखाइरूप उष्ण पवन तो जरा मात्र लागतो नथी. वळी मोहरूप
मेघनी वृष्टिथी पडेलुं तृष्णारूप पाणी तेने क्षमा छत्रीथी झीली शु

कायछे, अन्य राजाओ पादशाहो ज्यारे एक देश बे देशना मालिक होयछे त्यारे मुनिराज तेना करतां पण अधिक पोताना आत्माना असंख्यात प्रदेशना मालीक होयछे. ज्यारे अन्य राजाओ घणी लक्ष्मी भेगी करेछे. त्यारे मुनिराज आत्मानी ज्ञान दर्शन चारित्र लक्ष्मी भेगी करेछे. तफावत एटलो के राजानी लक्ष्मी खोटी, क्षणिक छे अने मुनिनी लक्ष्मी सत्य अने अचल अखूटछे, राजा पादशाहने मनवचन कायाए करी संतोष रहेतो नथी. त्यारे मुनिने मनवचन कायाए करी संतोष रहेछे. राजा ज्यारे नृपादिक शत्रुओनी साथे युद्ध करेछे, त्यारे मुनीश्वर रागद्वेषरूप शत्रुओनी साथे युद्ध करेछे, राजाओ ज्यारे बागमां क्रीडा करेछे त्यारे मुनीश्वरो धर्मध्यानरूप बागमां क्रीडा करेछे–धर्मध्यानरूप बाग केवो छे ते कहेछे–धर्मध्यानरूप बागनी चारे तरफ उदासीनतारूप वाड करेली छे. ज्ञानरूप कूपधर्म ध्यानरूप बागमां शोभी रहेलोछे. संवेगादिक वनस्पति त्यां खीली रहीछे. त्यां मुनिराज स्थिर चित्तरूप आसन उपर बेसी विचरेछे. ते बागनी शोभा अनहदछे. तेनी सुगंधीथी अनेक जातना रोगो नाश पामेछे. ए बागनी अंदर क्षुद्र प्राणीओ प्रवेश करी शकतां नथी. जेनी योग्यता होय ते त्यां जइ शकेछे. जगतनी मोह मायामां फसाएला प्राणीओने ते बागनुं सुख थतुं नथी, वळी ए बागमां एक चारित्ररूप महेल शोभी रह्योछे. तेनी अंदर जन्म जरा मरणनां दुःख नाशक अनेक औषधो रह्यांछे तेनो मुनीश्वर उपयोग करी शकेछे. अने ते औषधोनुं भक्षण करी अजरामरपद पामेछे. वळी ते बागमां रहेला ज्ञानकूपमांथी मुनिश्वर जलपान करेछे. ज्यां परोपाधिरूप तापतो आवी शकतो नथी. वळी ते बागनी असंख्यात प्रदेशरूप जमीन स्वच्छ निर्मलछे. मुनीश्वरनी साथे शुद्ध चेतना रहेछे. वळी ते मुनीश्वर आत्मा अने परमात्मानी ऐक्यतारूप भांगने कायारूप ख-

ळमां घूंटी मनरूप प्यालाथी पीवेछे. तेथी शुद्ध चेतनारूप नीशो मुनीश्वर महाराजने एवो चढे छे के ते वखते अगम निगम दर्शाय छे. अने ते समये शरीर अने शरीरीनु पण भान रहेतुं नथी अने ते वखते अनहद आनंद थायछे. आवा मुनिराजने सुख थायछे ते अनंत छे. श्री यशोविजयजी उपाध्याय अध्यात्मसारमां कहेछे के—

श्लोक.

कान्ताधर सधा स्वादात्, यूनां यज्जायते सुखं ।
बिंदुः पार्श्वे तदध्यात्म शास्त्रस्वादसुखोदधेः १
अध्यात्मशास्त्र संभूत-संतोष सुख शालिनः
गणयंति न राजानं नश्रीदंनापि वासवम्. २

भावार्थ—स्त्रीना अधर रूप अमृतना स्वादथी युवान पुरुषोने जे सुख थायछे तेतो भ्रमणा मात्र छे, तात्त्विक सुख नथी, ते सुख तो अध्यात्म शास्त्रना स्वादथी उत्पन्न थयेलुं दरिया समान सुख तेनी आगळ बिंदु समान छे. अध्यात्म शास्त्रथी उत्पन्न थयेलुं संतोष रूप सुखना भोक्ता जे प्राणी छे ते प्राणी राजाने तथा धनदने तथा इंद्र सरखाने पण लेखामां गणता नथी.

श्लोक.

रसो भोगावधिः कामे, सद्भक्ष्ये भोजनावधिः
अध्यात्म शास्त्र सेवाया रसो निरवधि पुनः १

कामने विषे भोगवतां सुधी रसछे, मिष्ट भोजनने विषे जमवाना वखत पर्यंत मधुरपणुंछे. पण अध्यात्म शास्त्रनी सेवानो जे रस ते तो निरवधि छे. कारण के अध्यात्मशास्त्रनो रस प्रारंभ काळथी मांडीने प्रतिदिन वृद्धि पामेछे. ते रस कोइ वखत चढ्यानो

नथी, ज्यारे आत्मानंदी मुनिराजने अत्यंत सुख थायछे त्यारे सिद्ध भगवंतोने अनंत सुख छे तेमां शुं कहेवुं ? अनुभवथी सुखनी प्रतीति थायछे. वळी मुनीश्वर उपर कहेला एवा बागमां सदाकाल वास करेछे, तेमने कोइ जातनी स्पृहा नथी आवा मुनींद्रना बागनी तोले राजा वा शाहुकारोना बाग आवी शकता नथी. राजाने तो मनुष्य सेवेछे किंतु मुनीश्वरने सुर असुर इंद्रादिक पण सेवेछे. राजाने परशत्रु थकी भय रहेछे. किंतु मुनीश्वरने जय होतो नथी. राजानी पासे अनेक सुभडो होयछे त्यारे मुनीश्वर रूपी राजानी पासे क्षमा, वैराग्य, ज्ञान, दर्शन चारित्रादि अनेक सुभटो हायछे. राजानी लक्ष्मी जन्मांतरमां साथे आवती नथी. पण मुनींद्रनी लक्ष्मी तो परभवमां साथे आवेछे अने मोक्षमां पण साथे रहेछे, राजा पोताना देशमां पूजायछे, अने मुनींद्र तो ज्यां विचरे त्यां पूजायछे. राजा वैभव छतां दुखी थायछे, अने आत्मज्ञानी मुनीश्वर तो वैभव विना पण अंतर् वैभवथी सुखी रहेछे, राजाने पोताना राज्यथी संतोष रहेतो नथी. अने मुनींद्रने तो सदा संतोष छे. राजाने आ भवमां तथा परभवमां क्लेश सहन करवो पडेछे, अने मुनीश्वरने आ भव तथा परभवमां सुखनी प्राप्ति थायछे, राजा संसारमां प्रवृत्ति करेछे. त्यारे मुनीश्वर प्रवृत्तिनो त्याग करेछे, राजा हाथी उपर बेसी बखतरथी शोभा पामतो तीक्ष्ण भालाने धारण करेछे त्यारे मुनीश्वर संवेग रूप हाथी उपर बेठा थका ब्रह्मचर्यरूप बखतरथी शोभा पामता ध्यानरूप तीक्ष्ण भालाथी रागद्वेष रूप शत्रुनो शिरच्छेद करेछे, मुनीश्वरने तो कोइ शत्रु नथी. किंतु व्यवहारथी शत्रुनी कल्पना जाणवी. पोते पोताना आत्म स्वभावमां रमेछे एटले स्वतः राग द्वेषनो क्षय थायछे, राजाने जरापण शांति मळती नथी, अने मुनीश्वरतो सदा शान्तिमां रहेछे. राजा ज्यारे बाह्यवस्तु उपर ममता

राखेछे त्यारे मुनीश्वर अंतर्धन उपर ममता राखेछे. क्यां मेरु अने क्यां सरसवनो दाणो, क्यां सागर अने क्यां तळाव, क्यां रात्रि अने क्यां दिवस एटलो तफावत आत्मज्ञानी मुनीश्वर अने राजा वच्चे जाणवो. दुनियामां आत्मज्ञानी मुनिसदृश अन्य कोइ सुखी नथी, शेठ, वकील, बारीष्टरादि लोको तत्त्वथी विचारतां सत्य सुख भोगवता नथी. सत्य सुखनी प्राप्ति तो आत्मज्ञानीने थायछे.—अंत: दृष्टिना अभावे बाह्यदृष्टिजीवो सत्य सुखनो अनुभव करी शकता नथी. आत्मज्ञानी मुनि सदा निर्भय रहेछे, अहो ते जीवता जीवन्मुक्तनी दशाने अनुभवेछे. आत्मज्ञान विना खंडनमंडननी विद्वताथी आत्महित थतुं नथी. दुनीया ज्यारे परपरिणतिमां म्हालेछे त्यारे मुनीश्वर स्वपरिणतिमां म्हालेछे.

आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति

आ वाक्यनो अनुभव पण आत्मज्ञानी मुनीश्वर करी शकेछे. शुष्कज्ञानी जीवो वाक्पटुताथी आत्मज्ञानीनो डोळ भले बतावो पण तेना अनुभवथी थतुं सुख ते पामी शकता नथी. आत्माना केवल ज्ञानादिगुणोनी प्राप्ति आत्मार्थिने थायछे.

संसारी जीवने ज्ञान दर्शन चारित्रादिक ऋद्धि सर्व तिरोभावे छे. ते तिरोभाव ऋद्धिनो आविर्भाव थाय. तेज आत्मानुं परमात्मपद जाणवुं. ते परमात्मनो हुं दास एटले उपासक छुं ते परमात्मपद जेणे ओळख्युं अने परमात्मपदमां जेनुं एकाग्र चित्तथी ध्यान वर्तेछे, तेने साधुपद ग्रह्युं एम जाणवुं. अने शुद्धज्ञान पण ते पाम्यो एम जाणवुं. नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव ए चार निक्षेपे साधु जाणवा.

कोइनुं साधु एवुं नाम ते नाम साधु, स्थापना करीए ते स्थापना साधु तथा जे पंचमहाव्रत पाळे क्रियानुष्ठान करे शुद्ध आहार ग्रहण करे पण ज्ञान ध्याननो जेवो उपयोग जोइए तेवो उपयोग न

होय ते द्रव्य साधु जाणवा. जे भाव संवरपणे मोक्षनो साधक थइ भाव साधुनी करणी करे ते भाव निक्षेपे साधु जाणवा.

कोइ जीवनो ज्ञान एहवो नाम ते नामज्ञान तथा जे पुस्तकमां अक्षररूपे लख्युंछे ते स्थापना ज्ञान, अने उपयोग विना सिद्धान्तनो भणवो अथवा अन्यमतिनां सर्व शास्त्र भणवां तथा शरीरादिक ते सर्व द्रव्यज्ञान. अने नवतत्त्वनो नय निक्षेपाए जाणवां अने आतम-तत्त्व आदरवुं ते भावज्ञान जाणवुं. ए आगमसारमां कह्युंछे. शुद्ध ज्ञाननी प्राप्ति पंचमकाळमां कोइक महा पुरुषने थायछे. ज्ञानना पंच प्रकारछे. १ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मनःपर्यवज्ञान. देवर्द्धि वाचक कहेछे के,—पाठ. से किंतं मइनाणं दुविहं मइ-नाणं पन्नत्तं तंजहा सुयनिस्सियं च असुयनिस्सियं च सेकिंतं असु-यनिस्सियं असुयनिस्सियं चउविह पन्नत्तं तंजहा उप्पत्तिया वेणइया कम्मिया परिणामिया बुद्धि चउव्विहा पन्नत्ता.

भावार्थ—मतिज्ञान बे प्रकारेछे. श्रुतनिश्रित मतिज्ञान, बीजुं अ-श्रुतनिश्रित मतिज्ञान. प्रायशः श्रुतज्ञानना अभ्यास विना सहज क्षयो-पशमवशे जे उत्पन्न थाय तेने अश्रुतनिश्रित कहे छे ते चार प्रकारनुंछे. उत्पादिकी बुद्धि, वैनयिकी बुद्धि, पारिणामिकी बुद्धि तथा कर्मजा बुद्धि.

पोतानी मेळे उत्पन्न थाय ते औत्पातिकी बुद्धि अने गुरुनो विनय शुश्रूषा सेवा करतां आवे ते वैनयिकी बुद्धि, कर्म करतां उपजे जे ते कार्मिकी बुद्धि अने परिणामते दीर्घकालनुं पूर्वापर अर्थनुं अवलोकन करतां उपजे ते पारिणामिकी बुद्धि.

पूर्वेश्रुत परिकर्मित मतिना उत्पादकालने विषे शास्त्रार्थ पर्यालो-चन करतांज जे उत्पन्न थाय तेने श्रुतनिश्रित मतिज्ञान कहेछे. तेना

चार प्रकारछे. अवग्रह, इहा, अपाय अने धारणा तेमां अवग्रह बे भेदेछे. व्यंजनावग्रह, अर्थावग्रह. किमिदं एटले आ शुंछे? एवो (अव्यक्त) अप्रगट ज्ञानरूप अर्थावग्रह थायछे. तेनी पूर्वे अत्यंत अव्यक्ततर (अति छानुं जे ज्ञान) होयछे तेने व्यंजनावग्रह कहेछे. वंजणवग्गहचउहा=एटले व्यंजनावग्रह चार प्रकारेछे. ते नीचे मुजब-मणनयण विणिंदिय चउका=मन तथा नयन ए बे विना बाकीनी चार ४ इंद्रियोने आश्रयी चार भेदेछे. श्री नंदीसूत्र पाठ. से किंतं वंजणुग्गहे चउव्विहे पन्नत्ते तंजहा, सोइंदिय वंजणुग्गहे घाणिंदिय वंजणुग्गहे, रसेंदिय वंजणुग्गहे, फासिंदिय वंजणुग्गहे= श्रोत, घ्राण, जिव्हा, स्पर्शेन्द्रिय व्यंजनावग्रह जाणवो. मन तथा नयन ए बे इंद्रियो अप्राप्यकारीछे. चक्षुरिन्द्रिय छे ते विषयदेश प्रति जाइने देखती नथी, तेम प्राप्त अर्थनुं अवलंबन करती नथी, तेम मननुं पण जाणवुं.

आ कंइपणछे? एवुं अनिर्धारित सामान्यरूप अव्यक्तपणे अर्थनुं जे ग्रहण तेने अर्थावग्रह कहेछे, ते पांच इंद्रियो अने मने करी छ प्रकारनोछे. श्रोतेंद्रियार्थावग्रह, चक्षुरिंद्रियार्थावग्रह, घ्राणेंद्रियार्थावग्रह, रसनेंद्रियार्थावग्रह, स्पर्शनेंद्रियार्थावग्रह तथा मानसार्थावग्रह. अवग्रहगृहीत वस्तुने विषे जे धर्मनी गवेषणा करवी एटले आ स्थाणुछे? अथवा पुरुषछे? तेमां पण हाल संध्याकालछे अने महा अरण्यछे, वळी सूर्य पण आथम्योछे, माटे पुरुष नथी. इत्यादि व्यतिरेक धर्मनुं निराकरण करवुं. अने एने पक्षीओ भजेछे. वच्चमांथी वांकुछे, अने कोटर सहितछे. इत्यादिक अन्वय धर्मनो अंगीकार करवो, एवुं जे ज्ञान विशेष तेने इहा कहेछे. ए पण पंच इंद्रियो अने मने करी छ प्रकारेछे. तथा इहित वस्तुने विषे आ निश्चये करी स्थाणुजछे, एवो एक कोटिना निश्चयरूप जे बोध तेने

अपाय कहेछे. स्थाणुरेवायं इत्यात्मकरूपो अपायः तथा निश्चित वस्तुने विषे अविच्युतिपणे अथवा स्मृतिपणे अथवा वासनापणे जे धारण करवुं तेने धारणा कहे छे. ते पण पंचइंद्रियो अने मने करी छ प्रकारे छे. एम छने चारे गुणतां चोवीस भेद अने व्यंजनावग्रहना चार मेळवतां २८ अठ्ठावीश भेद मतिज्ञानना जाणवा एमां चार भेद अश्रुत निश्रितना मेळवतां बत्रीस भेद थाय छे. तथा जाति स्मरण पण अतीत कालना संज्ञी पंचेंद्रियना संख्याता भव देखे. मतिज्ञाननोज ते भेद जाणवो. श्री आचारांग सूत्रनी टीकामां जातिस्मरण ज्ञानने धारणानो भेद कह्यो छे—यतः जातिस्मरणं त्वाभिनिबोधिक ज्ञान विशेषमिति. कोइ एक सभामां घणा पुरुषो बेठाछे ते वखते शंख, तथा भेरी, रणशिंगुं, आदि वाजींत्र वागवा लाग्यां श्रोताजनोए सर्व वाजिंत्रनो शब्द समकाले सांभळ्या छतां सर्वनी क्षयोपशमनी विचित्रताथी अधिक न्यूनादिक सांभळवामां आवेछे जेमके कोइने ते शंख भेरी आदि वाजींत्रनो शब्द भिन्न भिन्न सांभळवामां आवेछे तेना जाणवामां एम आवे के अमुक भेरीओ आटला शंख वागेछे एम जणाय तेने बहु कहेछे. १ कोइने मात्र वाजींत्र वागेछे एम जणाय तेने अबहु जाणवो. २ तथा ते शब्दमां पण कोइकने मधुर मंदत्वादि बहुपर्यायोपेते जे शंखादिक ध्वनि पृथक् पृथक् घणा प्रकारे सांभळवामां आवेछे तेने बहुविध कहीए. ३ कोइने एक बे पर्यायोपेत ते ध्वनि सांभळयामां आवेछे ते अबहुविध जाणवो. ४ कोइकने तुरत ते नाद सांभळवामां आवे छे ते क्षिप्र जाणवो. ५ कोइक विचारी विचारी घणी वार पाछळथी जाणे ते अक्षिप्र जाणवा. ६ ध्वजारूप लिंगेकरी जेम देवकुल ओळखायछे तेम लिंग सहित जाणे तेने निश्रित कहेछे. ७

कोइ उक्त प्रकारे लिंगरहीत जाणे तेने अनिश्रित कहेछे. ८
कोइने शंसयरहीत संभळायछे तेने असंदिग्ध कहेछे. ९
कोईने शंसयसहीत संभळायछे तेने संदिग्ध कहेछे. १०

कोइके एक वेळा सांभळी ग्रहण करी लीधेलुं ते सदा सर्वदा स्मरण रहे पण वीसरे नही तेने ध्रुव कहेछे ११. अने कोइक एकवार ग्रहण करेलुं सर्वदा स्मरणमां रहे नहीं तेने अध्रुव कहेछे. १२. एवी रीते बार भेदे ज्ञान थायछे तेने पूर्वोक्त अट्ठावीश भेदोथी गुणतां त्रणशेंने छत्रीश भेद मतिज्ञानना थाय. तथा तेमां अश्रुत निश्रितना चार भेद मेळवीए तो त्रणसेने चाळीस भेद मतिज्ञानना थायछे. अर्थावग्रह एक समय प्रमाणछे. इहा अने अपाय अंतर्मुहूर्त्त प्रमाणछे. धारणा संख्यात असंख्याता काल सुधीछे अथवा द्रव्यक्षेत्र कालभावथी मतिज्ञान चार प्रकारनुंछे.

मतिज्ञानी आदेशथी सर्व द्रव्य जाणे पण देखे नही.
क्षेत्रथकी सर्व क्षेत्र लोकालोक जाणे पण देखे नही.
कालथकी आदेशे सर्व काल जाणे पण देखे नही.
भावथकी आदेशे सर्व भाव जाणे पण देखे नही.

श्रुतज्ञान स्वरूप

श्रुतज्ञान चौद तथा वीश प्रकारनुंछे चौद भेद कहेछे—

गाथा.

अख्खर सन्नी सम्मं, साईयं खलु सपज्जवसियं च ।
गमियं अंग पविठं, सत्तावि ए ए सपडिवख्खा १

भावार्थ—अक्षरश्रुत, अनक्षरश्रुत, संज्ञीश्रुत, असंज्ञीश्रुत, सम्यक्श्रुत, असम्यग्श्रुत, आदिश्रुत, अनादिश्रुत, पर्यवसितश्रुत, अपर्यवसितश्रुत, गमिकश्रुत, अगमिकश्रुत, अंगप्रविष्टश्रुत, तथा अंग बाह्यश्रुत, ए चौद भेद जाणवा.

१ अक्षरश्रुत—अक्षरश्रुतना त्रण भेदछे संज्ञाक्षर, व्यंजनाक्षर तथा लब्ध्यक्षर. तेमां प्रथम संज्ञाक्षर—अढार प्रकारनी लीपी, तथाहि—हंसलिवी, भूयलिवी जख्खातह रख्खसीय बोधवा। उड्डी जवणी तुरुक्की कीरी दवडीय सिंधविया १ मालविणी नडिनागरि लाडलिवी पारसीय बोधव्वा। तह अनमित्तियलिवी चाणक्की मूलदेवीय. २ बीजो व्यंजनाक्षर प्रकार ते अकारथी हकार पर्यंत बावन अक्षर मुखे उच्चारवारूप जाणवो ए बन्ने प्रकार यद्यपि अज्ञानात्मकछे तथापि श्रुतना कारण होवाथीं उपचारे करी ए बे प्रकारने श्रुतज्ञाननी संज्ञा आपीछे.

३ शब्द श्रवण तथा रूप दर्शनादिक थकी अर्थ परिज्ञान गर्भित जे अक्षरनी उपलब्धि रूप लब्ध्यक्षर श्रुत जाणवुं, करपल्लवी आदिके जेथी अक्षर संख्यानुं ज्ञान थायछे तेनो समावेश लब्धि अक्षर श्रुतज्ञानमां जाणवो.

२ अनक्षरश्रुत—शिरकंपन, हस्तचालन प्रमुख तथा समस्याए करी गमनागमनादिक मनना अभिप्रायनुं जे परिज्ञान तेने जाणवुं. यथा कोइ मनुष्य कोइ मनुष्यने पृच्छा करे के भाइ बाहेर जावुं छे के ? तेनो प्रत्युत्तर मुखथी नहीं देतां मस्तक हलावीने अथवा हाथवती शान करीने पोतानी नामरजी जणाववी. पूछनारने तेना मनना अभिप्रायनुं परिज्ञान (जाणपणुं) थाय तेने अनक्षरश्रुत कहेछे.

३ त्रीजुं संज्ञीश्रुत–संज्ञा त्रण प्रकारनीछे १ दीर्घकालिकी, २ हेतुवादोपदेशीकी, तथा दृष्टिवादोपदेशिकी.

केम करवुं ? हवे केम थशे ? इत्यादिके करी अतीत तथा अनागत घणा कालनी घणा काल पर्यंत विचारणा करवी ते दीर्घकालिकी संज्ञा जाणवी. तात्कालिक इष्ट अनिष्ट वस्तु जाणीने प्रवृत्ति निवृत्ति करवी ते हेतुवादोपदेशिकी संज्ञा. क्षयोपशम ज्ञाने सम्यग् दृष्टिपणुं होय ते दृष्टिवादोपदेशिकी संज्ञा जाणवी. विकलेंद्रिय असंज्ञीने हेतुवादोपदेशिकी संज्ञाछे. संज्ञी पंचेंद्रियने दीर्घकालिकी संज्ञाछे. कारण के ते विचार चिंतवना करी शकेछे, समकिती जीवने दृष्टिवादोपदेशिकी संज्ञा जाणवी. मन तथा इंद्रियोथी उत्पन्न थयेलुं जे ज्ञान तेने संज्ञीश्रुत कहेछे.

४ मन विना मात्र इंद्रियोए करी थयेलुं ज्ञान ते असंज्ञीनुं श्रुत जाणवुं.

५ पक्षपात विना कोइ विषयना स्वरूपने जे यथार्थ जाणवुं तेने सम्यक्श्रुत कहेछे, अर्हत् प्रणीत आगमने सत्य मानवुं पक्षपात विना ते.

६ यथावस्थित बोधना अभावथी मिथ्यादृष्टिए अर्हत्प्रणीत अथवा मिथ्यादृष्टि प्रणीत वाक्यादिकनुं जाणवुं एटले पक्षपात प्रमुख बुद्धिए करी कोइ विषयना स्वरूपने यथार्थ न जाणवुं तेने असम्यक्श्रुत कहेछे.

८ श्रुतज्ञान सादि पर्यवसितछे, तेमज अनादि अपर्यवसित पण छे.

१० द्रव्यथी एक पुरुष आश्री लइए तो सादि सपर्यवसितछे, अने घणा पुरुषो आश्री लइए तो अनादि अपर्यवसित पणछे. क्षेत्रथकी भरत तथा ऐरवतने विषे ज्यारे तीर्थंकरनो तीर्थ

वर्तेछे त्यारे द्वादशांगी रूप श्रुत होयछे, अने ते तीर्थनो विच्छेद थवाथी ते श्रुतनो पण विच्छेद थायछे, तेथी ते सादि सपर्यवसित जाणवुं. महाविदेहमां तीर्थनो विच्छेद श्रुतनो पण विच्छेद थतो नथी तेथी त्यां अनादि अपर्यवसितश्रुत जाणवुं. कालथी उत्सर्पिणि तथा अवसर्पिणीमां चोथे तथा पांचमे आरे श्रुतज्ञान होय अने छठ्ठे आरे विच्छेद थायछे तेथी सादि सपर्यवसित जाणवुं. महाविदेह क्षेत्रमां एवुं कालचक्र नहीं होवाने लीधे त्यां श्रुत ज्ञान पण अनादि अपर्यवसित जाणवुं.

भावथी–भव्यसिद्धिआ जीवने ज्यारे सम्यक्त्वनी प्राप्ति थाय छे त्यारे आदि अने केवलज्ञाननी प्राप्ति थायछे त्यारे अंत होवाथी सादि सपर्यवसित श्रुतज्ञान जाणवुं.

११ अग्यारमुं गमिकश्रुत ते ज्यां सूत्रना सरखा आलावा आवे ते जाणवुं. दृष्टिवाद सूत्रमां जाणवुं.

१२ बारमुं अगमिक श्रुत अणसरखा अक्षरोना आलावा होय ते जाणवुं.

१३ तेरमुं अंग प्रविष्ट ते द्वादशांगीरूप जाणवुं.

१४ चौदमुं अंग बाह्यश्रुत ते आवश्यक तथा दशवैकालिक जाणवुं तथा श्रुतज्ञानना वीश भेद पण कर्मग्रंथ विगेरेथी जाणी लेवा.

अवधिज्ञान स्वरूप.

अनुगामी, वर्धमान, प्रतिपाति, अप्रतिपाति, हीयमान, अननुगामी ए छ प्रकार गुण प्रत्यय अवधिज्ञानना छे. उक्तंच नन्द्यध्ययने "तं समासओ छव्विहं पन्नत्तं तंजहा आणुगामियं अणाणुगामियं, वद्धमाणयं, हीयमाणयं, पडिवाइ, अपडिवाइ.

१ प्रथम जे ठेकाणे अवधिज्ञान उत्पन्न थयुं होय ते ठेकाणुं मूकीने बीजे देशांतर प्रमुख जाय त्यां लोचननी पेठे जे साथे आवे तेने अनुगामिक अवधिज्ञान कहेछे. ज्यां पुरुष जाय त्यां साथे आवे ते.

२ बीजुं जे ठेकाणे रह्यां अवधिज्ञान उत्पन्न थयुं होय ते स्थानके आवे तेवारेज होय. पण अन्यत्र स्थाने जाय तेवारे साथे न होय तेने अननुगामि अवधिज्ञान कहेछे.

से किंतं णाणुगामीयं अाहीनाणं ओहीन्नाणं तंजहा नामएगेइ पुरिसेगममहं जोइठाणं काउं तस्सेव जोइठाणस्स परि पेरं तेसुपरिहिंडमाणे परिहिंडमाणे परिघोलमाणे तमेव जोइठाणं पासइ अन्नथ्थगए न पासइ एतमेव अणाणु गामियं ओहिनाणं जथ्थेव समुपज्जइ तथ्थेव संखिज्जाणि वा असंखिज्जाणि वा जोयणाइ पासइ न अन्नथ्थ.

भाष्यकारोप्याह–अणुगामिउ अणुगच्छइ गच्छंतं लोयणं जहा जहा पुरिसं इयरोउ नाणु गच्छइ ठियप्पइवव्वगच्छंतं–इति.

३ त्रीजुं जे वृद्धि पामे तेने वर्द्धमानअवधिज्ञान कहेछे, जेमके शकगतिअग्निमां जेम जेम वलतण नाखीये तेम तेम वधती ज्वाला थायछे तेनी पेठे यथायोग्य प्रशस्त अतिप्रशस्ततर अध्यवसायने लीधे पूर्वावस्थाथी ते उत्तरोत्तर समय समय वधतुं वधतुं जाय तेने वर्धमान अवधिज्ञान कहेछे अर्थात् प्रथम उपजती वखते अंगुलना असंख्यातमा भाग जेटलुं क्षेत्र जाणे देखे पश्चात् वधतां वधतां यावत् अलोकाकाशने विषे लोक जेवडा असंख्यातां खांडवां देखे.

४ चोथुं पूर्वे शुभ परिणामवशे घणुं उपजे पश्चात् तथाविध

सामग्रीनो अभाव थयाथी पडता परिणामे करी हानि पामे तेने हीयमान अवधिज्ञान कहेछे.

५ पांचमुं संख्याता असंख्याता योजन उत्कृष्टपणे यावत् समग्र लोक देखीने पण पडे एटले जे आव्युं जाय तेने प्रतिपाति कहेछे.

६ छठुं जे उत्पन्न थया पछी क्षीणताने न पामे ते लोक समग्र देखीने अलोकना एक प्रदेशने देखे ते अप्रतिपाति ज्ञान जाणवुं. ते ज्ञान आव्युं जाय नहीं.

प्रश्न–हीयमान अने प्रतिपाति ए बन्नेनां लक्षणो तो सरखांछे तेम छतां जूदां बतावावानुं शुं कारणछे ?

उत्तर–पूर्वावस्थाथी हळवे हळवे घटतुं जाय एटले क्षीणताने पामे ते हीयमान कहेवायछे अने जे विध्मात प्रदीपनी पेठे एक कालने विषेज निर्मूल थायछे ते प्रतिपाति कहेवायछे.

अवधिज्ञानना असंख्यात भेदछे, वळी अवधिज्ञानना चार प्रकारछे तथा चाह.

तंसमासओ चउव्विहं पन्नत्तं तंजहा दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ दव्वओणं ओहीनाणी जहन्नेणं अणंताइं रूविदव्वाइं जाणइ पासइ उक्कोसेणं सव्व रूविदव्वाइं जाणइ पासइ, खित्तओणं ओहीन्नाणी जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जभागं उक्कोसेणं असंखिज्जाइं अलोए लोयप्पमाण मित्ताइं खंडाइं जाणइ पासइ कालओणं ओहिन्नाणी जहन्नेणं आवलियाए असंखिज्जभागं उक्कोसेणं असंखिज्जाओ उस्सप्पिणी अवसप्पिणी अतीयं च अणागयं च कालं जाणइ पासइ भावओणं ओहिन्नाणी जहन्नेणंवि अणंते भावे जाणइ पासइ उक्कोसेणं वि अणंतेभावे जाणइ पासइ सव्वभावाणं अणंतभागं.

अवधिज्ञानी द्रव्यथी जघन्यपणे अनंतारूपी द्रव्यने जाणे देखे

उत्कृष्टपणे सर्वरूपी द्रव्यने जाणे देखे ते द्रव्यथी अवधिज्ञान.

क्षेत्रथी जघन्यपणे अंगुलनो असंख्यातमो भाग जाणे देखे अने उत्कृष्टपणे अलोकाकाशने विषे लोकप्रमाण असंख्याता खांडवा जाणे देखे.

कालथी अवधिज्ञानी जघन्यपणे आवलिकानो असंख्यातमो भाग जाणे, देखे अने उत्कृष्टथी असंख्याती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी पर्यंत अतीतकाल अनागतकाल जाणे देखे ते कालावधि ज्ञान.

भावथी अवधिज्ञानी जघन्यपणे अनंतभावने जाणे देखे अने उत्कृष्टथी पण अनंता भावने जाणे देखे ते भावावधिज्ञान जाणवुं.

मनःपर्य्यवज्ञानस्वरूपं.

मनःपर्य्यव ज्ञानना बे भेदछे. एक रुजुमति, बीजो विपुलमति अमुक पुरुषे घट चिंतव्योछे एम सामान्यपणे मननो अध्यवसाय ग्रहे ते रुजुमति जाणवुं.

तथा अमुक पुरुषे घट चिंतव्योछे ते द्रव्यथी सुवर्णनोछे, क्षेत्रथी पाटलीपुरनोछे. कालथकी शीतकालनोछे, अने भावथी पीतवर्ग सुकुमाळ द्रव्यादि विशेष ग्राहिणीमति तेने विपुलमति ज्ञान कहेछे.

अथवा मनःपर्यवज्ञान ४ चार प्रकारनुंछे, द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा भावथी उक्तंच तं समासओ चउव्विहं पन्नत्तं तंजहा दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ. दव्वओणं रिउमइणं ते अणंतपएसिए खंधे जाणइ पासइ ते चेव विउलमइ अभ्भहियतराए विमल तराए जाणइ पासइ.

भावार्थ-द्रव्यथी रुजुमति अनंत प्रदेशी अनंता स्कंध जाणे देखे अने विपुलमति तेहिज स्कंध कांइक अधिकेरा विशुद्धपणे जाणे देखे, क्षेत्रथकी रुजुमति नीचे रत्नप्रभा पृथ्वीनुं क्षुल्लक प्रतर लगे

अने उंचुं ज्योतिषिना उपरीतल लगे तीर्च्छुं अढीद्वीप बे समुद्र पन्नर कर्मभूमि त्रीश अकर्मभूमी अने छप्पन्न अन्तरद्वीपने विषे संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्ताना मनोगत भाव जाणे देखे अने विपुलमति तेहिज क्षेत्र अढी अंगुले अधिक देखे अने विशुद्ध देखे. कालथकी जघन्यपणे रुजुमति पल्योपमनो असंख्यातमो भाग अने उत्कृष्टपणे अतीत अनागत जाणे देखे. अने विपुलमति तेथी अधिक अने विशुद्धतर जाणे देखे. भावथकी रुजुमति अनंताभाव जाणे देखे. अने विपुलमति तेथी अधिक जाणे देखे.

केवलज्ञानस्वरूप.

केवलज्ञान उत्पन्न थतांज समकाले सर्व पदार्थोना द्रव्य क्षेत्र काल तथा भाव जाण्यामां आवी जायछे, तथा दीठामां आवी जायछे, माटे केवलज्ञान एक प्रकारनुं छे.

आत्मानुंछे, केवलज्ञानमां मतिज्ञानादिनो अंतर्भाव थायछे, आत्मज्ञानी समकिती मुनिने शुद्ध ज्ञाननी प्राप्ति थायछे.

आत्मस्वरूपना उपयोग विना जे संसारमां चालेछे तेनो तिल पीलक यंत्र वृषभनी पेठे संसारनो पार आवतो नथी.

काव्यना नवरस ज्ञानथी राचो अने लाखो काव्य करो किंतु आत्मपदना उपयोग विना अन्य सर्व राखमां घृत सींचननी पेठे निष्फळ जाणवुं. तर्कशास्त्र पण आत्मतत्त्वना उपयोग विना मिथ्याभावे परिणमेलुं नरकादिक गति भ्रमण हेतुभूतछे. व्याकरण शास्त्रथी पण आत्मपद भिन्नछे.

सारांशके–व्याकरण शास्त्र भणतां छतां पण जो आत्मानी ओळखाण थइ नहीं तो तेथी शुं थयुं ? अलबत आत्मतत्त्व ज्ञानमां व्याकरण हेतुभूतछे पण आत्मतत्त्वना रस्ता उपर दोराय तो लेखे थाय. व्याकरणभणीने वादविवाद मिथ्या करवाथी वैरविरोध क्लेश

शनी उत्पत्ति थायछे. मारा जेवो कोण विद्वानछे ? सभामां मने कोण जीतनारछे ? इत्यादि अभिमानना आवेशमां सपडाइ जवायछे. माटे व्याकरण शास्त्र भणीने पण आत्मतत्त्व जिज्ञासु थवुं. एज परमोपदेश रहस्यछे, आत्मतत्त्व जाणतां रागद्वेष क्रोध मान माया लोभ विगेरेनो नाश थायछे. वैरविरोध कदाग्रहनो आत्मतत्त्व जाणतां नाश थायछे. जेना अज्ञानथी संसारनी मायामां लपटावानुं थयुं अने जेना ज्ञानथी अनंतकाल पर्यंत चतुर्गत्यात्मक संसारमां जडवत् स्वचेतना नष्ट प्रायः थइ परिभ्रमण करवुं पडयुं तेनुं जो ज्ञान थाय तो संसारनी उपाधिथी मुक्तज थाय अने अत्यद्भूत अनहद शुद्ध अखंड निर्मल शाश्वत आत्मसुख अनुभवी शकाय. पोतानुं ज्यां अज्ञान त्यां रागद्वेष अने पोतानुं ज्ञान थतां सूर्योदयथी अंधकार जेम स्वतः नाश पामेछे तेम रागद्वेष स्वतः नाश पामेछे.

अन्य दर्शनियो पण आत्मतत्त्वनुं गान करेछे ते नीचे प्रमाणे छे.

फकीर फकीर क्या कहो, फकीर जगत्का पीर;
फकीरसे तो ढुंढ निकाला, पूर्ण रुप अमीर. १

मन मारे तन वश करे, सोधे सकल शरीर;
दया धर्मकी कफनी पहेरे, आप रूप फकीर. २

वेद वेद शुं कहो, वेद छे धर्म तारो;
वेदथी वस्तु छे न्यारी, अखंड तरखलो मारो. ३

कुवा देखा तळाव देखा, न्हाया देवकी कुंड;
गोळकी गंगडीके उपर, मख्खीकी वहोत हे झुंड, ४

चल चल बोलो मत, खोलो पडदा अपना;

गुफामें तो साहेब देखा, सुरत नुरतसें जपना. ५
हा कहुं तो हे नहीं, ना कह्यो न जाय;
हा ना के भितर, कीडी साकर खाय. ६
शास्त्र भण्यो पुराण भण्यो, वेद तो मने खटक्यो;
अनंतरूपे प्रभुजी मारो, आकाशमांहि चटक्यो. ७
जोगी जंगम सेवडो, सन्याशी दरवेश;
चक्षु सामे प्रभुजी दीठा, वृत्ति आतमदेश. ८
वगर पाणीना तळाव मांहि, खील्युं कमळनुं फूल;
वत्ती विना अजवाळुं आपे, झगझगति तेनी गुल९
रत्नाकर सागर मांहे, गागर फूटी जाय;
पाणी मांहे पत्थर लडे, अगम निगम परखाय. १०

आवां अनेक भजनपद अन्य मतावलंबीयो गायछे, किंतु ए-कांते तेनो अर्थ करवाथी जेवो जोइए तेवो सम्यग् लाभ थतो नथी.

अनेकान्तमत ज्ञाता आत्मार्थि अवळाने पण सवळा तरीके परिणमावेछे.

आत्मज्ञानने माटे प्रयत्न करवो ते अति उपयोगीछे.

कथा मात्र कहेवाथीज जो आत्महित थतुं होत तो पुराणीओ बहु कथाओ कहेछे माटे तेमनुं तो कल्याण थवुं जोइए किंतु तेथी कल्याण थतुं नथी. आत्मतत्त्वनुं ज्ञान नथी तो एक उदर पोषक कथाथी शुं थाय ? अलबत् कंइ नहीं. मनुष्योना मननुं रंजन करवाथीज जो धर्म थाय तो भाट चारण, नाटकीआ विगेरे जनमनरंजन करेछे ते मने धर्म थवो जोइए परंतु समजवानुं के

आत्मधर्म समज्या विना अने आत्मार्थिपणाना गुणो प्रगट्या विना जनमनरंजनताथी पोतानी वाहवाहमां आत्मधर्म साधी शकातो नथी. माटे भव्यात्माओए कीर्त्ति, वाहवाह जनमनरंजनता प्रति लक्ष्य नहीं देतां आत्मधर्म उपर लक्ष्य देवुं. आत्मधर्म प्रति जेनी दृष्टि ते प्राणी त्रण भुवनमां पूज्यताने पामेछे, व्याख्यान द्वारा जनमनरंजनपर ध्यान आपवुं ते अयोग्यछे. भव्यात्माओ आत्महित शी रीते करे ते उपर लक्ष आपवुं. अने तेवा शुद्ध अंतःकरणना अभिप्रायथी उपदेश देवो ते स्वपर हितकारकछे.

परस्पर क्लेशोत्पादक वादथी कंइ आत्महित थतुं नथी. गाळी देवीने लेवी एवो वादतो वाघरीना गृहे पणछे परमार्थ शून्य वादथी कायक्लेशादि मात्र फळछे. आत्मतत्त्व रमण तथा आत्मज्ञान विना सर्व वात निष्फळछे. व्याकरण, न्याय, वादादि आत्मतत्त्वमां उपकारकछे माटे तेमनुं स्वरूप जाणी तेमां रमण करे तो वादादि सफलछे. दीर्घ आयुष्यना अभावे अवश्य ज्ञातव्य आत्मतत्त्वनुं अवलंवन करी रागादि दोषोनो नाश करवा प्रयत्न करवो ए हित शिक्षाछे.

आत्मानुं ज्ञान जो नथी तो क्रिया कांडथी पण मुक्ति थती नथी, आत्मस्वरूपना उपयोगी मुनिराजनी सर्व क्रिया गुणनी खाण जाणवी, तद्धेतु, अमृत क्रियाना अधिकारी मुनीश्वरछे.

अध्यात्मसार ग्रंथे श्लोक.

अपुनर्बंधकस्यापि, या क्रिया शमसंयुता ।
चित्रा दर्शन भेदेन, धर्मविघ्नक्षयाय सा १

अशुद्धापि हि शुद्धायाः क्रियाहेतुः सदाशयात् ।
ताम्रं रसानुवेधेन, स्वर्णत्वमधिगच्छति २

शमभाव सहित विचित्रदर्शनभेदे अपुनर्बंधी जे चोथुं गुणठाणुं तेनी जे क्रिया ते पण यद्यपि धर्मना विघ्नने करनारीछे, तो पण भला आशय थकी अशुद्ध क्रिया करे ते पण शुद्ध कहेवाय. जेम ताम्र रसानुवेधे सुवर्णताने पामे छे, तेम अत्र समजवुं, अन्योऽन्य क्रिया, विषक्रिया, गरलक्रिया, तद्धेतुक्रिया, अमृताक्रिया ए पंच प्रकारनी क्रिया जाणवी. तेमांनी आद्य त्रण क्रिया त्याज्य जाणवी. तद्धेतु, अने अमृत क्रियानी प्राप्तिथी मुक्ति थाय छे, अनेकान्त मार्गमां कदाग्रह करवो नहीं, समयसिंधुनुं बिंदुग्रही मकलावुं ते व्यर्थ छे, मतकदाग्रहग्रस्तमना जीवोनी रागद्वेषयोगे सर्व क्रिया दुःखनुं धाम एटले स्थान छे, स्वात्मोत्कर्ष मान पूजा कीर्त्तिने माटे परात्मापकर्षकारक क्रियावादी स्वात्महित निरपेक्ष पणाने लीधे साधन साध्य बुद्धि शून्यताथी परमात्म पद साधी शकतो नथी, सापेक्षपणे व्यवहार निश्चय पूर्वक जिनाज्ञा सहित तद्धेतु अमृत क्रियानु अवलंबन करीने भव्यात्माओ अखंड निर्मल शाश्वत सुखमय शिवस्थाननी प्राप्ति करे छे, जे भव्यो क्रियानुं अजीरणजे निंदा तेनुं सेवन करेछे ते मुक्तिपदना अधिकारी थता नथी, अमुकमां अमुक दोषछे, अमुक तो आम करेछे, इत्यादि परभाव परिणति ज्यां सुधीछे त्यां सुधी आर्त्तध्यान अने रौद्र ध्याननी क्रिया जाणवी. अंतर्दृष्टि थतां धर्मध्याननी क्रिया थइ शकेछे, जगत्मां रोगो अनेक प्रकारना होयछे, तेमज औषधो पण अनेक प्रकारनांछे, कोइने उधरस थइ होय ते अमुक औषधथी मटे अने ते उधरस कोइने ते दवाथी मटती नथी. सूरतथी विहार करता मीयागाम आव्या त्यां श्री दुर्लभविजयजी साथे दीपविजयजी तपस्वी हता तेमने उधरस घणी हती, तेम ताव पण हतो ते गाममां मोटां मोटां मरचां खावाथी उधरस मटी तो भव्यात्माओने समजवानुं के भावरोगी जी-

वा अनेक प्रकारनाछे, कर्मरोग पण अनेक प्रकारनाछे, तेना उपर धर्मनां औषधो पण अनेक प्रकारनांछे, कर्मरोगने टाळनार सद्गुरू वैद्यो पण अनेक प्रकारनाछे, कोइ जीवने कोइ धर्म औषधथी लाभ थाय, कोइ जीवने कोइ मुनीश्वर वैद्यथी लाभ थाय, माटे पक्षपात करी एकान्तमतरूप कदाग्रहनुं अवलंबन करवुं नहीं, पंचमारके अल्पपुण्यवंत वहुपापकर्मीजीवो प्रायशः धर्मनुंनाम धरावी मारा तारा पणानी बुद्धि धारण करी पक्षपातरूपविषनुं पान करी अनंतभवभ्रमण करनारा थशे. अज्ञानरूप निद्रामां सुतेलाने तो सद्गुरू महाराज सहेलाइथी उठाडी शकेछे किंतु जे मत कदाग्रह पक्षपातरूप दारूनुं पान करीने अज्ञानरूप निंद्रामां सुइ रहेलाछे ते पुरूषने तो गुरूमहाराज पच्चीश लाकडीओ मारीने आत्मस्वरूपे जगाडवाने समर्थ नथी. कारणके ते विलकुल वेशुद्ध वनी गयाछे, सत्यतत्त्व समजवाने शक्तिमान्छे किंतु जेणे मतकदाग्रह रूप मदिरानुं पान कर्युंछे, एवा पुरूषनी आगळ सत्यतत्त्वनी हित शिखामण गुरूमहाराजा आपेतो ते व्यर्थ जायछे, उलटुं ते गुरूमहाराजने पण निंद्य वचन संभळावेछे, केटलाक जीवो तो एवा होयछेके पोताना मतमां वेठुं ते खरूं अन्य सर्व खोटुं मानेछे तेवा जीवोने ज्ञानी गुरूमहाराज वहु प्रयासे सत्यमार्गे दोरेछे, व्यवहार अने निश्चय नयना जाण ज्ञानी गुरूमहाराजा क्रियावडे कर्मनो नाश करेछे, ए परमार्थ.

" दुहा. "

आत्मोपयोगी साधुने, किरिया सद्गुण धाम;
मतकदाग्रह लालचु, सहु किरीया दुःख ठाम. ११८

जलनी उपाधिथकी, जुदी अवस्था थाय;
तेवी जे जननी थती, भवमां ते भटकाय. ११९

उपादान समजे नहीं, समजे नहीं निमित्त;
कारण कार्य समजे नहीं, तत्त्वे शुं शुभ चित्त. १२०
द्रव्यभाव समजे नहीं, वर्ते बाह्याचार;
अनुपयोगिआत्मनो, पामे नाहि भवपार. १२१

भावार्थ—प्रथम दुहानो अर्थ उपर लखायोछे जलनी उपाधिथी जेम भिन्न भिन्न अवस्थाओ थायछे—एटले जेम जलमां लाल रंग नाखीए लाल देखायछे. पीळो रंग नाखीए तो जळ पीळुं देखाय छे, लीलो रग नाखीए तो जल लीलुं देखायछे, एटले जल अन्यनी साथे मिश्र थवाथी व्यवहारथी स्वशुद्ध रूपनो त्याग करेछे. तेम जे जीवो असत् संगतिरूप उपाधिना योगे जेवा मळ्या तेवा थइ जायछे, ते भवमां अटकेछे, अर्थात् सारांशके—जे जीव पादरीनी संगतथी तेना उपदेशवडे इशुने पूज्यमाने, अने ख्रीस्ति धर्म स्वीकारे, कदापि ते जीवने कोइ बौध गुरुनी संगति थइ. बौधे कह्युं ख्रीस्ति धर्म तो अनार्य धर्मछे, ते धर्मथी मुक्ति मळती नथी, बौध धर्म सत्यछे माटे ते स्वीकार. त्यारे तेना उपदेशथी बौध धर्म स्वीकारे, वळी तेने कोइ मुसल्मान मळ्यो तेणे कह्युं बुद्ध धर्म तो खोटोछे,सत्य धर्म तो खुदाकाहै, बुद्ध धर्ममें तो अमुक जूठा कहाहै, ओ तो काफरोंका धर्म है, इसलिये खुदाका धर्म मानेगा सो दोझखमे पडेगा नहीं, एम मुसलमानना उपदेशथी मुसलमान धर्म स्वीकार्यो. त्यारे ते पुरुषने कोइ वेदांति मळ्यो. वेदांतीए कह्युं सर्व धर्मनुं मूळ वेदान्त छे, वेदथी मुक्तिनी प्राप्ति थायछे. इत्यादि कथनथी वेदधर्मनो स्वीकार कर्यो. त्यारे कोइ कालीका भक्ते कह्युं. अरे मनुष्य तुं कालिकानी भक्तिकर, कालिका [illegible] वैभवने आपनारीछे, माटे कालिका तेज सारीछे, [illegible] सुख मळतुं नथी,

इत्यादि कथनथी कालिकानो भक्त थयो. तरेवळी नास्तिकवादी तेने मळयो तेणे कह्युं भला मनुष्य तने धर्म धुतारामो छेतरेछे केमके जे वस्तु आपणी आंखे देखाती नथी. ते वस्तुनी इच्छा राखवी ते व्यर्थछे, कालिका तो पत्थरनी मूर्त्ति छे ते कंइ फल आपवा समर्थ नथी इत्यादि कथनथी नास्तिक थाय इत्यादि अवस्था जे मनुष्यनी थायछे ते कदापि आत्म सुख पामी शकतो नथी. कारण के ते अज्ञानी अविवेकी अने श्रद्धा रहीतछे, तेथी भवभ्रमण कर्या करेछे.

वळी जे भव्यो उपादान कारणने समजता नथी अने निमित्त कारणनुं स्वरूप पण जाणता नथी, अमुक कार्य अने तेनुं कारण अमुक ते पण समजी शकता नथी. साधन अमुक अने साध्य अमुक ते पण समजी शकता नथी एवा अज्ञानी जीवोनुं तत्त्वमां चित्त होतुं नथी.

द्रव्य अने भावथी चारित्रने समजता न होय. फक्त ओघदृष्टिथी बाह्याचारमां धर्म मानी प्रवर्त्ते, आत्मतत्त्वनो उपयोग होय नहीं तेवा जीवो भवनो पार पामी शके नहीं श्री यशोविजयजी उपाध्याय कहेछे के-

ढाळ.

ज्यां लगें आतम तत्त्वनुं, लक्षण नवि जाण्युं;
त्यां लगें गुणठाणुं भलुं, किम आवे ताण्युं. आतम॰१

ए प्रमाणे विचारतां आत्म तत्त्वावबोध विना क्रिया मुक्तिमार्गप्रतिकारणीभूत थती नथी. हुं क्रिया कोने माटे करूंछुं, क्रियाथी शुं थायछे, क्रियानो कर्त्ता कोणछे ? एनी यथायोग्य समजण विना अनुपयोगताए परमात्मपदस्वरूपसाध्यसंसिद्धि थइ

शकती नथी, उलटुं ते अनुपयोगताए क्रिया करी अन्य फल प्राप्त करेछे यथा विनायकं प्रकुर्वाणो, रचयामास वानरं । विनायकनी मूर्त्ति बनावतां वांदरो रच्यो तेनी पेठे–आत्मानी अज्ञानताए अन्योन्य,विष, गरल, ए त्रण क्रियानुं सेवन थायछे–अने ए त्रण क्रियाथी जीव अशुध्धपरिणातियोगे शुभाशुभ कर्मपुद्गलो ग्रही अनेक जन्म ग्रहतो त्रिविध तापथी पीडातो कूटातो दुःख संततिनो भोगी बनेछे. जड चेतननुं विशेषतः भेद ज्ञान थयुं नथी त्यां सुधी बहिरात्मपणुं टळतुं नथी. अने वहिरात्मयोगे चेतन जड जेवो भासेछे, अने अज्ञानी जीव परवस्तुमां अहंत्व परिणाम धारतो जडता अनुभवेछे–श्री यशोविजयजी उपाध्याय कहेछे के–

हुं एहनो ए माहरो, ए हुं एणी बुद्धि;
चेतन जडता अनुभवे, न विमासे शुद्धि. आतम. १
आतम अज्ञाने करी, जे भव दुःख लहीए;
आतम ज्ञाने ते टळे, एम मन सद्दहीए. आतम. २

आत्माना अज्ञानथी जे भवदुःख परंपरा पमायछे, ते भव दुःख परंपरानो नाश आत्मज्ञान थतां थायछे. अर्थात् आत्मज्ञान थतां अनादि कालथी परमां परिणमन थयुंछे ते टळेछे. रागद्वेष योगे जीव परवस्तुमां परिणमेछे अने यदा रागद्वेषनी परिणाति टळेछे, तदा आत्मा परवस्तुमां परिणमतो नथी. ज्यां सुधी सम्यग् रीत्या आत्मस्वरूप जाण्युं नथी. त्यां सुधी जीव रागद्वेप परिणामे मोही बनेछे. आत्मज्ञानथी रागद्वेषनी परिणाति उद्भवेछे, आत्मज्ञाने सहज स्वभावे रमतां रागद्वेषनी परिणति नाश पामेछे, आत्मोपयोगे स्थिरता थतां निर्विकार अखंड शाश्वत सुख भोगवाय छे, माटे आत्मोपयोगी साधुने सर्व धार्मिक क्रिया सुखनी खानि

भूत थायछे, अज्ञानीने संवरना हेतुओ आश्रवरूपे परिणमेछे अने स्याद्वादरूपे जेणे आत्मतत्त्व जाण्युंछे एवा ज्ञानीने आश्रवना हेतुओ पण संवररूपे परिणमेछे, एम ज्ञानीओनुं कथनछे-प्रथम कोइ अपेक्षाए अजीवतत्त्वनुं ज्ञान करवुं जोइए. कारणे अजीवने अवबोधतां सहेजे तेथी भिन्नजीव जाण्यो जायछे, जीवाजीवादि नवतत्त्वोनो सम्यगवबोध भेदज्ञान थवामां मुख्य हेतुछे.—

आत्मज्ञानथी मुनिवर्यो मुक्तिपद प्राप्त करेछे. कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचंद्र पण कहेछे के—

श्लोक.—योगशास्त्रे.

मोक्षः कर्मक्षयादेव, सचात्मज्ञानतो भवेत् ।
ज्ञानसाध्यं मतं तच्च, तद्ध्यानं हितमात्मनः १
न साम्येन विना ध्यानं,नध्याने न विना च तत् ।
निःकंपं जायते तस्माद्,द्वयमन्योन्य कारणम् २

मोक्षपद प्राप्ति कर्माष्टकक्षयतः थायछे, अने भवसंतति वृद्धि कारणीभूतकर्माष्टकनो क्षय आत्मज्ञानथी थायछे. इत्यादिथी विचारतां आत्मज्ञान थवुं एज सर्व शास्त्रनो स्पष्ट रहस्यभूत उद्देश समजायछे. मतिज्ञान अने श्रुतज्ञानना योगे अस्ति नास्ति धर्ममय आत्मानुं ध्यान थायछे, अने ध्यान पण आत्मानुं समजवुं. ध्यानयोगे स्थिरता प्रगटतां अनंत सुख अनुभवी आत्मा बनेछे, अने अनुभव ज्ञानयोगे भव्यात्मा सुखनो आस्वादी बनेछे. कोइ वस्तुपर राग नहीं अने कोइ वस्तुपर द्वेष नहीं एवी आत्मानी अवस्थाने साम्य अवस्था कहेछे. सूर्यना समान ज्ञान गुणे प्रकाशी आत्मा समजवो. सूर्य अभ्रथी आच्छादित थतां तेना किरणोना प्रकाशनुं पण आच्छादन थायछे,

वायुना योगे वादळां दूर थतां जेम सूर्य किरणोथी प्रकाशेछे तेम आत्मारूपसूर्य कर्मरूपवादळांथी अवरायोछे तेथी सर्व वस्तुओ आत्माना ज्ञानमां ज्ञेयरूपे भासती नथी. पण मतिज्ञानने श्रुतज्ञानना योगे ध्यानरूप वायु वातां कर्मरूप वादळां आत्माथी दूर थायछे. त्यारे आत्मारूप सूर्य ज्ञानरूप किरणोथी लोकालोकने प्रकाशेछे. ध्यानपरंपराए आत्मोपयोगीपणुं मुनिराजने सतत बन्युं रहेछे, भावचारित्रनी प्राप्ति विना आत्मोपयोगता वर्तती नथी. द्रव्य चारित्रथी कर्म नाश थतुं नथी, चारित्र शुं छे ? ते जे जीवो अज्ञानयोगे समजता नथी, ते भाव चारित्रनो स्पर्श करी शकता नथी, भावचारित्र प्राप्ति प्रति रजोहरण मुहपत्ति साधुवेष दीक्षा आदि निमित्त कारणोछे, अने तेवी दीक्षा प्रत्येक तीर्थंकरोए ग्रही भाव चारित्र प्रगटाव्युं, तेम अन्य भव्यात्माओए पण प्रभुना पगले चाली तेमनुं अनुकरण करी भावचारित्र प्रगट करवुं, ते भाव चारित्रनी निरपेक्षताए बाह्याचारमां सरागदृष्टिथी मुंझाता एवा जीवो उपयोगनी शून्यताए संसाररूप समुद्रनो पार पामी शकता नथी.

प्रश्न–भाव चारित्र विना साधुवेष असमंजसछे तो ते केम ग्रहण करवो जोइए ?

उत्तर–रजोहरण मुहपत्तिथी युक्त साधुवेष अंगीकार करी जीव बाह्यग्रंथिनो त्याग करेछे ते आभ्यंतरग्रंथि नाश प्रति कारणछे. माटे दीक्षा अंगीकार करवाथी बाह्य उपाधि टळेछे. अने छकायना जीवोनी रक्षा थायछे, पंचमहाव्रत पाळवाथी आश्रवना मार्गो नाश पामेछे. सर्वतीर्थंकरभगवंतोए एवी भागवती दीक्षा अंगीकार करीछे. अने तद्द्वारा विकल्प संकल्प त्यागी आत्मध्यानमां प्रवर्ती परमात्मपद साध्युं, माटे भव्यात्माए पण भागवती दीक्षा अंगीकार करवा प्रयत्न करवो. संसारमां

गृहस्थावासमां वसी सर्वतः विरतिपणुं पामवुं मुश्केलछे, माटे दीक्षा अंगीकार करतां राग द्वेषनी हीनता थतां आत्मस्वरूपे रमण करतां भावचारित्र प्रगटेछे, ए राजमार्ग जाणवो. मोक्ष पद लक्ष्यमां राखी सद्गुरू संगति करतां आत्मज्ञान प्रगटेछे. उपाधिमां अहर्निश राचीमाची रहेनार गृहस्थ जीवोने दुःख संततिरूप फलनी प्राप्ति थायछे. आत्मज्ञानना अभिलाषि पुरूषोए सद्गुरूनुं सेवन करवुं. सद्गुरु सेवनथी जे ज्ञान मळेछे ते तात्त्विक फळने प्रगटावेछे, अने ते ज्ञानथी संयमनुं ग्रहण थायछे. अने संयमथी पोताना स्वरूपमां स्थिरता प्रगटेछे, अने स्थिरतायोगे जीव स्वगुणोने आविर्भाव रूपे प्रकाशेछे. माटे द्रव्यचारित्र एटले साधुवेष दीक्षाअंगीकार पंचमहाव्रत धारण आदि द्रव्यचारित्र कदापि असमंजस कहेवाय नहीं, भावचारित्रनी सापेक्षताए द्रव्यचारित्र निमित्त कारणीभूत आदरणीयछे. माटे भागवती दीक्षा अंगीकार करवी एज हिताकांक्षा–निज गुण स्थिरता तेज वस्तुतः चारित्र जाणवुं. व्यवहार चारित्रथी निश्चयचारित्र प्रगटेछे, आत्म परमात्मपद ए माटेज व्यवहार चारित्रक्रियारूप कथ्युंछे. निश्चय चारित्रनी सापेक्षताए व्यवहारचारित्र सप्रमाण निमित्त कारणछे.

" दुहा. "

शिथिलाचारी आळसु, विषय वासना राग;
कृष्ण सर्प सम ते गुरु, करवो तेनो त्याग. १२२

ब्रह्मचर्य उपदेश दे, मनमां ललना वास;
कृष्णसर्पसम ते गुरु, संग न कीजे खास. १२३

भावार्थ–वळी जे शिथिल आचारवंत–धर्मध्यानमां आळसु

परस्वभाव रमणतामां तत्पर, वळी जेना हृदयमां विषयवासनानो राग सदा बन्यो रहेतो होय. तेवा कुगुरूओ कृष्णसर्पसदृश जाणवा, तेनो धर्माभिलाषी जीवोए त्याग करवो जोइए. कृष्ण सर्प संगतिथी एकवार मृत्यु थायछे, अने एवा कुगुरुनी संगतिथी मिथ्यातत्त्वोपदेश पामतां रागद्वेष परिणति योगे अनेक जन्मधारण करवा पडेछे. वळी जे गुरु नाम धरावता ब्रह्मचर्यव्रत पाळवानो उपदेश आपेछे. अने अंतरमां स्त्रीनो वासछे एवा कृष्णसर्प सदृश कुगुरुनी संगति करवी नहीं. विषयना जे रागी होयछे तेनी संगतिथी आत्मा निर्विषयी बनतो नथी. विषयो विषना करतां पण अति दुःखदायकछे. कह्युं छे के–

श्लोक.

विषस्य विषयाणा च, दृश्यते महदंतरं
उपभुक्तं विषं हंति, विषयाः स्मरणादपि. १

विष अने विषयोनुं महद् अंतर् देखायछे, विष तो खाधुं छतुं प्राणनो नाश करेछे. अने कामादिक विषयो तो स्मरण मात्रथी आत्माना गुणोने हणेछे तो जे विषयना संगी होय तेनी संगतिथी आत्महित थतुं नथी तेवा कुगुरूओनी पण निंदा करवी नहीं. मनमां एम चिंतववुं के ए विषयना भिखारी अशुद्ध परिणतियोगे हेयज्ञेय उपादेय विवेक शून्य चित्तवाळा थइ चिंतामणि रत्नसमान आत्मधर्मनो अनादर करी परपुद्गलरूप एंठमां राचीमाची रह्याछे, ए तेमनी भवितव्यतानो वांकछे. एम विचारी माध्यस्थपणे वर्ती तेमनी संगति त्यागवी. कुगुरुनुं लक्षण जणाववानुं मुख्य कारण ए छे के–भव्यजीवो जेवुं आलंबन मळे तेवा थइ जायछे, सारुं आलंबन मळे तो आत्मा सारा रस्ते वळेछे. अने नठारुं आलंबन

ळे तो आत्मा अधोगति भाक् थायछे माटे भव्यजीवो असत्य आलंबननो त्याग करी सत्य सद्गुरुरूप निमित्त कारणनुं अवलंबन करे, एज हिताकांक्षाछे.

" दुहा. "

विषय त्याग वैराग्यता, वनितानो नहि संग;
धन कंचननो त्याग जास, नमीए सद्गुरु चंग. १२४
विषयाशा मनमां मटी, मन मर्कट वश जास;
भवभीरु भ्रमणा मटी, तेना थइए दास. १२५

सुगुरु लक्षण कथेछे—जेओए विषयनो त्याग कर्योछे. अने जेवनुं मन वैराग्यथी सतत वासीत थयुंछे. अने जे वनितानो संग करता नथी. धन कंचन ए उपाधिछे. तेथी विकल्प संकल्प उद्भवेछे. एम जाणी जेणे त्याग कर्योछे, एटले बाह्य परिग्रहनो त्याग कर्योछे. एवा सुंदरगुरुने नमस्कार करीए, विषयनी आशा तृष्णाना अंकुरा जेना हृदयमां उत्पन्न थता नथी. अने जेणे मन रूप मांकडुं वश कर्युंछे. अशुद्ध राग द्वेषनी परिणति योगे मनमां आर्तध्यान वा रौद्रध्यान थायछे, ते मन वश करवाथी थतुं नथी. मन वश चित्तने वश करतां विकल्प संकल्पनो नाश थायछे. मन वश करवुं ते अत्यंत दुर्जयछे. कोइ धनुष्यधारी स्वबुद्धि विचक्षणताथी राधावेध सहज मात्रमां साधी शके तेवो पण मनने पोताना वशमां करी शकतो नथी.

यतः श्लोक.

चित्तमेवहि संसारो, रागादि क्लेशवासितं ।
तथैव तैर्विनिर्मुक्तं, भवान्त इति कथ्यते ॥१॥

रागादि क्लेशथी वासीत चित्त तेज संसारछे; अने रागद्वेषा-

दिकथी रहित मन थतां भवान्त कथायछे. एवुं चित्त पण जेणे वश कर्युंछे एवा सुगुरुमहामुनिराजने देखी प्राणी पण शान्त भावने पामेछे. तेमना उपदेशथी अनेक जीवोने सर्वज्ञ कथीत तत्त्वनी श्रद्धा थायछे. कोइ श्रावक व्रत अंगीकार करेछे. कोइ साधु व्रत अंगीकार करेछे, वळी जे सद्गुरू ज्ञान दर्शन चारित्रथी मोक्ष सुख आराधेछे, ते सद्गुरू मुनिराज चोराशी उपमाए बिराजीत होयछे ते ग्रंथान्तरथी जाणवी वळी मुनिराज अनेक उपमाओने धारण करनाराछे. यथा. गाथा.

कंसे संखे जीवे, गयणे वाउय सारए सलिले ॥
पुख्खरपत्ते कुम्मे, विहग खग्गेय भारंडे ॥१॥

कंस पात्र समान उज्जवळ, शंख, जीव, गगन, वायु, शरदृतु जल, कमलपत्र, काचबो, पंखी, खड्गी, भारंडपंखी, हाथी, वृषभ, सिंह, मेरुपर्वत, समुद्र चंद्र, सूर्य, सुवर्ण, पृथ्वी, अग्निनी आदि उपमाओने धारण करनार मुनीश्वर जाणवा. वळी मुनीश्वर लक्षण कथेछे—भवभीरु—एटले संसारमां अनेक प्रकारनां दुःख भर्यांछे, ज्यां सुधी संसारछे त्यां सुधी तात्त्विक सुख नथी. पुनः पुनः रागद्वेषथी बीता होय माटे रागद्वेषने सेवे नहीं. भ्रमणा मटी—जड वस्तुमां आत्मबुद्धि हती ते टळी हुं अने मारुं आवी भ्रमणारुप बुद्धि परवस्तुमां थती हती, ते भ्रमणा बुद्धिनो जेणे नाश कर्योछे, एवा महात्मामुनीश्वर आत्मतत्त्व साधी शकेछे, वळी जे पुरूष शिष्यभाव तथा वैराग्यथी रहितछे. एवा अनधिकारी पुरूषने प्रायः उपदेश देवा पण प्रवृत्ति करता नथी. अन्य शास्त्रोमां पण कह्युंछे के—

श्लोक.

नापृष्टः कस्यचित् ब्रूया । न्नचान्यायेन पृच्छतः ॥
जानन्नपिच मेधावी, जडवल्लोकमाचरेत् ॥ १ ॥

विद्वान् मुनिवर्य प्रश्न कर्या विना कोइनी साथे बोले नहीं, अन्यायथी पृच्छकने पण उपदेश करे नहीं, किंतु सर्वतत्त्वनो जाण छतो पण मेधावी जगत्मां जडनी पेठ विचरे वळी जे मुमुक्षु मुनिनी आत्मज्ञान तरफ धारणाछे, अनेक प्रकारनी वासनाओथी वासित चित्त ज्यां सुधी होयछे त्यां सुधी आत्मस्वरूप प्रतिलक्ष लागतुं नथी जेम मलीन दर्पणमां प्रतिबिंब स्वच्छ पडी शकतुं नथी. ज्यारे दर्पणने राख विगेरेथी उटकीएछीए त्यारे तेनी अंदर स्पष्ट प्रतिबिंब भासेछे तेम मनोरूप दर्पण रागद्वेष तेमज अनेक प्रकारनी वासनाओथी युक्त होयछे त्यां सुधी तेनामां आत्मस्वरूप भासतुं नथी, पण ज्यारे रागद्वेष इच्छा वासनारूप मलीनतानो नाश थाय छे त्यारे आत्मस्वरूप भासेछे, निर्मल चित्त जेनुं थयुंछे एवा मुनिवर्यो आत्मतत्त्वना अधिकारीछे.अन्य के जेनां मन ममत्व वासनाथी मलीनछे एवा पुरूषो गृहस्थो—तत्त्व प्राप्तिमां अधिकारी नथी.

वळी मुनीश्वर निंदा वा स्तुतिथी संतुष्ट थाय नहीं. कारण के मायाना फंदमां पडेली दुनीया दोरंगीछे, कोइ कंइ कहे अने कोइ कंइ कहे, लोककीर्त्ति अने लोकनी स्तुति अर्थे जे आचरण आचरवां ते मायानी वृद्धिने माटेछे पण आत्मसुख माटे नथी. माटे लोककीर्त्ति स्तुतिरूप वासनानो मुनि त्याग करे.—स्वकीय आत्मानुं हित करवुं तेज योग्य छे,

यतः श्लोक.

विद्यते न खलुकश्चिदुपायः। सर्वलोक परितोषकरो यः।
सर्वथा स्वहितमाचरणीयं। किं करिष्यति जनोबहुजल्पः

आ दुनीयामां एवो कोइ उपाय नथी के जेथी सर्व लोक स्तुति करे. माटे आत्मतत्त्वाधि पुरूषे लोकवासनानो सर्वथा परि-

त्याग करी आत्महित आचरवुं. लोकनी निंदा स्तुति तरफ देखवुं नहीं, वळी अन्य शास्त्रोमां कह्युं छे के—

श्लोक.

न लोकचित्तग्रहणेरतस्य। नभोजनाच्छादन तत्परस्य॥
न शब्दशास्त्राभिरतस्य मोक्षो। न चातिरम्यावसथप्रियस्य

जो पुरुष सर्व प्रकारसें लोकोंके चित्त रंजन करणे विषे प्रीतिवाला है तथा जो पुरुष भोजन आच्छादन विषेहीं तत्परहै. तथा जो पुरुष व्याकरणादिक अनात्मशास्त्र विषे अभिनिवेशवाला है. तथा जो पुरुष अत्यंत रमणीय गृहो विषे प्रीति वालाहै ऐसे पुरुषकुं मोक्ष प्राप्त होता नहीं, यातें मोक्षकी इच्छा करनेवाले मुनिवर्यकुं सा लोकवासना सर्व प्रकारतें परित्याग करणी चाहिये.

ए श्लोकथी पण विचारतां मुनिवर्यने सर्व प्रकारनी वासनानो परित्याग थवो जोइए. वासनारहित मुनिवर्य अनेक प्रकारनां धार्मिक कार्य करतां बंधाता नथी.

अंतरथी वासना आदिनो त्याग विना बहिरनो निष्फळ त्याग जाणवो. आत्माथी भिन्न सर्व जगत्‌ने देखनारा मुनिराजना हृदयमांथी सर्व वासनानो नाश थायछे.

असंख्यात प्रदेशी आत्मा तेज हुं परमात्माछुं, अन्य जडवस्तुओ हुं नथी. अने अन्य जडवस्तुओ मारी नथी आ प्रमाणे दृढ निश्चय भावनाभावे, अने अंतरथी न्यारो वर्ते. आत्माभिमुख चेतनापणे वर्ते. एवा परमपूज्य करुणासागर मुनिश्वर महाराजना दास थइने रहीए. एवा मुनिना दास महाभाग्य होय तो थवाय. एमनी सेवा चाकरीथी भवोभवनां दुःख नाश पामे. अने सर्व उपाधि टळे, आत्मा परमात्मरूप थाय. माटे भव्य सुशिष्योए एवा

मुनिवर्यना दास थइ रहेवुं, एमनी आज्ञा मस्तके चढाववी. कदी एवा मुनिवरनी आज्ञानो लोप करवो नहीं, तेमनुं सदाकाल ध्यान स्मरण करवुं, तेमनी वैयावच्च करवी.

प्रश्न–गुरू अने मुनिमां आपना बोलवा प्रमाणे कंइ भेद समजाय छे तेनुं शुं कारण ?

उत्तर–जेणे उपदेश देइ सम्यक्त्व पमाड्युं होय ते धर्माचार्य गुरू जाणवा.

ते मुनिराज छते पण धर्म पमाडवाथी धर्माचार्य गुरु मुनिराज जाणवा. अने ते विनाना उपरोक्त लक्षण सहित जे होय तेवा रजोहरण मुहपत्तिना धारक मुनिराज जाणवा. समकितदान दातृत्वथी बेमां एटलो भेद जाणवो. उपकारथी भेद जाणवो. हवे सर्व जीवने धर्मनी प्राप्ति केवा लक्षणथी थाय ते देखाडेछे, अत्र मुनि तेमज श्रावकनो भेद पाडया विना, बन्नेने हितकारक आत्म धर्म जाणी बन्नेने उपदेश आपेछे.

" दुहा "

रहीए आप स्वभावमां, लहीए तत्त्व स्वरूप ॥
आपोआप विचारतां, मिटे अनादि धूप ॥ १२६ ॥
जाति नहीं हे आत्मकुं, जस जाति अभिमान ॥
पामे नाहि ते धर्मने । नक्की मनमां जाण ॥ १२७ ॥

भावार्थ–मोक्ष पदप्राप्त्यर्थम् आत्मस्वभावमां रमणता करवी जो आत्मस्वभावमां रमण करीए तो तत्त्व स्वरूप एटले परमात्म पद पामीए, वेष बदलो, देश बदलो, किंतु आत्मस्वभावमां रमणता विना मुक्ति नथी. परवस्तु संबंधे थता अनेक प्रकारना विकल्प संकल्पो तेने मनथी दूर हठावी केवळ आत्मानुं ध्यान करवुं. आ-

त्याग करी आत्महित आचरवुं. लोकनी निंदा स्तुति तरफ देखवुं नहीं, वळी अन्य शास्त्रोमां कह्युं छे के—

श्लोक.

न लोकचित्तग्रहणेरतस्य। नभोजनाच्छादन तत्परस्य॥
न शब्दशास्त्राभिरतस्य मोक्षो।न चातिरम्यावसथप्रियस्य

जो पुरुष सर्व प्रकारसें लोकोंके चित्त रंजन करणे विषे प्रीतिवाळा है तथा जो पुरुष भोजन आच्छादन विषेहीं तत्परहै. तथा जो पुरुष व्याकरणादिक अनात्मशास्त्र विषे अभिनिवेशवाळा है. तथा जो पुरुष अत्यंत रमणीय गृहो विषे प्रीति वाळाहै ऐसे पुरुषकुं मोक्ष प्राप्त होता नहीं, यातैं मोक्षकी इच्छा करनेवाले मुनिवर्यकुं सा लोकवासना सर्व प्रकारतैं परित्याग करणी चाहियै.

ए श्लोकथी पण विचारतां मुनिवर्यने सर्व प्रकारनी वासनानो परित्याग थवो जोइए. वासनारहित मुनिवर्य अनेक प्रकारनां धार्मिक कार्य करतां बंधाता नथी.

अंतर्थी वासना आदिनो त्याग विना बहिरनो निष्फळ त्याग जाणवो. आत्माथी भिन्न सर्व जगत्ने देखनारा मुनिराजना हृदयमांथी सर्व वासनानो नाश थायछे.

असंख्यात प्रदेशी आत्मा तेज हुं परमात्माछुं, अन्य जडवस्तुओ हुं नथी. अने अन्य जडवस्तुओ मारी नथी आ प्रमाणे दृढ निश्चय भावनाभावे, अने अंतर्थी न्यारो वर्ते. आत्माभिमुख चेतनापणे वर्ते. एवा परमपूज्य करूणासागर मुनिश्वर महाराजना दास थइने रहीए. एवा मुनिना दास महाभाग्य होय तो थवाय. एमनी सेवा चाकरीथी भवोभवनां दुःख नाश पामे. अने सर्व उपाधि टळे, आत्मा परमात्मरूप थाय. माटे भव्य सुशिष्योए एवा

मुनिवर्यना दास थइ रहेवुं, एमनी आज्ञा मस्तके चढाववी. कदी एवा मुनिवरनी आज्ञानो लोप करवो नहीं, तेमनुं सदाकाल ध्यान स्मरण करवुं, तेमनी वैयावच्च करवी.

प्रश्न–गुरू अने मुनिमां आपना बोलवा प्रमाणे कंइ भेद समजाय छे तेनुं शुं कारण ?

उत्तर–जेणे उपदेश देइ सम्यक्त्व पमाड्युं होय ते धर्माचार्य गुरू जाणवा.

ते मुनिराज छते पण धर्म पमाडवाथी धर्माचार्य गुरु मुनिराज जाणवा. अने ते विनाना उपरोक्त लक्षण सहित जे होय तेवा रजोहरण मुहपत्तिना धारक मुनिराज जाणवा. समकितदान दातृत्वथी बेमां एटलो भेद जाणवो. उपकारथी भेद जाणवो. हवे सर्व जीवने धर्मनी प्राप्ति केवा लक्षणथी थाय ते देखाडेछे, अत्र मुनि तेमज श्रावकनो भेद पाड्या विना, बन्नेने हितकारक आत्म धर्म जाणी बन्नेने उपदेश आपेछे.

" दुहा "

रहीए आप स्वभावमां, लहीए तत्त्व स्वरूप ॥
आपोआप विचारतां, मिटे अनादि धूप ॥ १२६ ॥
जाति नहीं हे आत्मकुं, जस जाति अभिमान ॥
पामे नाहि ते धर्मने । नक्की मनमां जाण ॥ १२७ ॥

भावार्थ–मोक्ष पदप्राप्त्यर्थम् आत्मस्वभावमां रमणता करवी जो आत्मस्वभावमां रमण करीए तो तत्त्व स्वरूप एटले परमात्म पद पामीए, वेष बदलो, देश बदलो, किंतु आत्मस्वभावमां रमणता विना मुक्ति नथी. परवस्तु संबंधे थता अनेक प्रकारना विकल्प संकल्पो तेने मनथी दूर हठावी केवळ आत्मानुं ध्यान करवुं. आ-

त्मा पोते सुखनुं स्थानछे. आत्मा पोतानी मेळे ज्ञान गुणथी पोतानुं स्वरूप जाणेछे, हुं आत्मा सदा सच्चिदानंद स्वरूपनो धारण करनारछुं. हुं मायाथी न्यारोछुं. सर्व उपाधिथी हुं भिन्नछुं. मारूं पोतानुं स्वरूप रागद्वेष रहितछे तो हुं केम तेनो एटले परपुद्गलनो संग करूं ? हुं अरूपी छुं तो रूपीवस्तुने केम पोतानी मानुं ? हुं विजातिथी न्यारोछु तो माराथी भिन्न विजातिय पुद्गल द्रव्य तेने केम पोतानुं मानुं ? मारा शुद्ध स्वरूपे हुं रमुं तो हुं अखंड आनंदमयछुं. विकल्प संकल्प रहित हुं छुं तो विकल्प संकल्पने हुं पोताना केम मानुं ? अने विकल्प संकल्प हुं केम करूं ? अने ज्यां सुधी विकल्प संकल्प करूं त्यां सुधी सुखी केम थाउं ? तेमज निर्विकल्प एवुं मारुं स्वरूप पण शी रीते पामुं ? विकल्प संकल्प करवा ए मारा आत्मानो शुद्ध स्वभाव नथी तो हवे हुं स्थिर असंख्यप्रदेशमय उपयोगी थाउं ? अने गाढ निद्रानी पेठे सर्व माया जाळने भूली जाउं, तो मारो अनुभव आपो आप विचारतां थाय अने एम निर्विकल्प दशामां रहेतां आत्मशक्ति मारी आविर्भावेप्रकाशे, क्षायिकभावे, द्रढध्यान संततियोगे आत्म गुणो स्फुरायमान थाय, विकल्प संकल्प श्रेणि परंपरा नाश पामतां सहज अनुभव सुखराशि प्रगटे, अने अनादिकाल संलग्न आधि व्याधि उपाधिरूप धूप नाश पामे. सारांश के—आधि व्याधि उपाधिनां दुःखोनुं मूल कारण कर्मनी प्रकृतियोछे. अने द्रव्य कर्मरूप प्रकृतियोनुं आत्मानी साथे जे बंधावुं ते रागद्वेष परिणति याज्यछे.

रागद्वेष परिणतिनी नष्टता ज्ञान ध्यानथीछे. आत्मा स्वस्वभावमां रमण करेतो अनंत भवोपार्जित कर्मराशिने दूर करेछे अनुक्रमे सर्व कर्म प्रकृति विकृति समूलतः क्षय करी परमात्मपद आत्माविषे प्रगटावेछे, आत्मज्ञानथी एतादृश सुखोत्पत्तिज्ञान क्रि-

यामां प्रवर्तवाथी थायछे.

आत्मानुं स्वरुप दर्शावेछे.

" जाति नहि हे आत्मकुं "–आत्माने जाति नथी एटले ब्राह्मण जाति, वणिक् जाति, कणबी, सोनार, लुवार. ढेड, चंडाळ, इत्यादिजाति आत्मानी स्वरुपतः विचारी जोतां बिलकुल जणाती नथी. जाति देहकुलने आश्रितछे, आत्मा अरूपी तेथी न्यारोछे. माटे जातिमान् आत्मा नथी. कोइ जात्याभिमानथी हुं ब्राह्मण छुं, हुं वणिकछुं, हुं रजपुत छुं, हुं कणबी छुं, एम अज्ञानयोगे जाति अध्यास पोताना आत्मामांमानी लेछे ते आत्मपद प्राप्त करी शकतो नथी. वस्तुतः विचारी जोतां मालुम पडेछेके जगत्व्यवहारमां जाति एक संज्ञा मात्र छे, आत्मामां सदा ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्वादि जाति कदी रहेती नथी अने रहेशे पण नहीं, व्यवहारमार्गे जातिनी कल्पना छे पण ते वस्तुतः सत्य नथी माटे जातिनो अध्यास आत्मामां धारण करवाथी बहिरात्मपदनी प्राप्तिनो वियोग थतो नथी. जेम आकाशमां कोइ जाति नथी. तेम आत्मामां पण कोइ जाति नथी अभिमानवाळा जडजीवो आत्मअनात्म विवेक शून्य बनी परमां अहंममत्त्वबुद्धिथी रागद्वेष परिणति भजी मानसिक अनेकशः संतापो अनुभवी आर्त रौद्रध्यान वश थइ अधोगति प्राप्त करेछे. " जसजाति अभिमान " जेने जातिनुं अभिमान छे ते बाह्य पदार्थोमां धर्म मानेछे, जातिना अभिमानथी लोको परस्पर एक बीजानी निंदा करेछे, एक बीजाने जाति अभिमानथी हलका गणेछे. जात्यभिमानी जीव जातिमां राची माची रहेछे, उंची जातिवाळो कहेवातो होय तो नीच जातिवाळाने हलको गणेछे. पोतानी जातिमां राग बंधाय छे, अने अन्य जातिमां द्वेष बंधाय छे. पोतानी जातिमां ज धर्मछे अन्य जातिमां धर्म रहेतो नथी एम दृढवासनाथी भवमां भ्रमायछे.

माटे तेवा जीवो वहिर् दृष्टिपणाथी चिदानंद आत्मामां सदा रहेला धर्मने प्राप्त करी शकता नथी. जात्यभिमानी जीवनी अंतर्दृष्टि थती नथी, तेतो क्षणे क्षणे हुं ब्राह्मण छुं, हुं क्षत्रीयछुं, हुं वाणियोछुं, छुं एवी बुद्धि धारण करेछे, पण हुं ब्राह्मण नथी, हुं वणिक् नथी, हुं क्षत्रिय नथी, एवी बुद्धि धारण करी शकतो नथी, श्री यशोविजयजी उपाध्याय पण समाधिशतकमां कहेछे के—

" दुहा. "

जाति देह आश्रित रहे, भवको कारण देह ॥
तातें भव छेदे नहीं, जातिपक्षरति जेह ॥ १ ॥

इत्यादिकथी विचारतां पण जात्यभिमानी आत्मधर्म साधी शकतो नथी, माटे आत्मधर्मार्थी मुमुक्षु जनोए आत्मानुं स्वरूप समजवुं, अने वाह्य जात्याभिमानरूपभ्रमबुद्धि त्यागी अंतर्दृष्टिथी आत्मधर्म साधवो, परमार्थ शिक्षा इत्येवं.

" दुहा. "

लिंग देह उपर रहे, आतमथी छे भिन्न;
तेमां शुं रंगाइये, रंगातां दुःख दीन. १२८
वर्णाश्रमना भेदथी, माने जे मन धर्म;
सत्य धर्म ते नवि ग्रहे, बांधे उलटां कर्म. १२९

भावार्थ—पुरुषलिंग वा स्त्रीलिंग आदि लिंग देहाश्रित छे, देह ज्यारे आत्माथी भिन्न छे, अलवत आत्मानी देह नथी त्यारे लिंग आत्मनुं कहेवायज केम ? पुरुषादि त्रणे लिंगो आत्माने कर्मोपाधिना संबंधथीज कहेवाय छे, हुं पुरुष ए अभिमान मनुष्य धारण करतो मायान्ध बनी हुं असंख्यप्रदेशी आत्मा एवो विवेक

भूली जाय छे, पुरुष लिंग प्राप्त थयुं ए कर्मना उदयथी छे, तेमां अहंता धारण करवी ते अज्ञानी जीवनुं लक्षण छे, पुरुष वा स्त्रीना अध्यासथी बंधातां आपणुं आत्मानुं शुद्ध स्वरुप भूलीएछीए, हुं अने मारुं ए अभिमानथी त्रण जगत्मां कोइ आत्मानंदानुभवी थयो नथी अने थवानो नथी माटे वस्तुतः प्रियधर्मसाधक भव्यात्माओ लिंग अध्यासथी केम परमां रंगावुं जोइए ? अर्थात् कदी पण लिंगाध्यास मनमां स्फुरवा देवो नहीं, अने एमां जो रंगाशुं तो दुःख वडे दीन एटले गरीब अवस्था प्राप्त थशे एमां संशय नथी. कोइ मर्द पुरुषने चंपालाल, नपुंसक कहे तो त्वरित तेना मनमां आवशे. के मने नपुंसक कहेनार कोण ? एम संकल्प थतां क्रोधनो आविर्भाव थतां मुख तोबरा जेवुं फुली जशे. वखते चंपालालने त्रण चार अपशब्दो पण संभळावे, परस्पर एक बीजानो अपकर्ष करवा बाकी राखे नहीं, ए लिंगाभिमाननुं फळ छे. माटे विवेकनयनाधिष्ठाताओए परमात्मपद प्राप्त्यर्थं अन्तर्दृष्टि साधी एतादृश अभिमानने त्यजवो, ज्यां सुधी लिंगाध्यास छे त्यांसुधी जीव हुं परमात्मा छुं एवी दृढ भावना धारण करवाना अभावे जन्म मरणनी उपाधि संचय संग्रहेछे.

वर्ण, तेमज आश्रमभेदे जे आत्मिकशुद्धधर्मनो भेद मानेछे, ते शुद्ध शाश्वत आत्मधर्म प्राप्त करतो नथी, सत्यधर्म तेवा व्यवहारजडजनथी समजातो नथी. अने कदापि तेवा पुरुषनी आगळ कोइ सत्य धर्मनु दर्शावे तोपण कदाग्रहग्रस्त थवाथी वचनामृतो पण तेने विषवत् परिणमेछे, अने सत्य धर्म ते आत्मानो पोताना सहज स्वभावे सदाकाल पोतानाथी जरामात्र पण दूर नथी तेने अज्ञानान्धजीव विपरीत दृष्टिथी जाणी शकतो नथी.—जडमां आत्म धर्मना अभिनिवेशथी उलटां कर्म संग्रही तेना उदये अधोगति भजे छे, श्री

यशोविजयजी उपाध्याय पण समाधि शतकमां कहेछे के—

लिंग देह आश्रित रहे, भवको कारण देह;
तातें भव छेदे नहीं, लिंग पक्षरत जेह. १

जाति लिंगके पक्षमे, जिनकूं है दृढ राग;
ताते भव छेदे नहीं, जाति पक्ष रति जेह. २

जाति लिंगना पक्षमां जेने दृढ राग छे ते भवान्त कदापि करी शकता नथी. आत्माने जाति नथी के लिंग नथी जेम स्वप्नमां अनेक प्रकारनी जातियो तथा लिंगो धारण करायछे, अने ते जागीने जोतां कंइ भासतुं नथी, तेम जाति अने लिंगाध्यास पण ज्यारे आत्माभिमुख चेतना थायछे त्यारे स्वप्नवत् लागेछे. हुं पुरुष वा स्त्री नथी. आ मंत्रनो मनमां १००८ वार जाप जरा श्राद्ध राखीने जिज्ञासु कर, पछे तारा मनमां केवा प्रकारना विचारो आवेछे ते विचार अने पहेलांना विचारोमां केटलो फेर पडेछे ते विवेकथी विचार. एकवार आ मंत्रप्रयोग श्रद्धाथी जे अजमावशे तेने अनुभवनी मालुम पडशे, हुं चंपालाल, मनसुखलाल नथी एम अर्ध कलाक पर्यंत धारणा करवाथी प्रथमनी अवस्था अने चालती अवस्थाना विचारोमां एक मोटो भेद पडतो पोताने मालुम पडशे, अने आत्म धर्म प्राप्त करवानी जिज्ञासानो उद्भव थशे. शुं त्यारे जाति लिंग मानवुं खोटुं छे, तो कोइ पोताने अमुक जातीवाळो कहीने बोलावे तो बोलवुं नहीं ? वा कोइ कहे के तुं पुरुष छे के स्त्री छे ? त्यारे एम कहेवुं के हुं तो पुरुष वा स्त्री पण नथी. आम जो वर्ताए तो चाले केम ? तेना प्रत्युत्तरमां समजवानुं के—अंतरथी जाति वा लिंगनो अध्यास धारण करवो नहीं ? व्यवहारथी जाति वा लिंगना व्यवहारो कराय छे तेम करवा, पण अंतरथी पोताना

मानवा नहीं. तेमज जाति वा लिंग आश्रित धर्म मानवो नहीं, धर्म आत्मानो अने धर्मी आत्मा अरूपी छे अने ते देह तथा जातिथी भिन्न समजवो. ए ज परमार्थ.

कुलाचारनी रीतमां, जे माने मन धर्म;
धर्म मर्म समजे नहीं, ले नहीं शाश्वत शर्म.१३०

भावार्थ—जे भव्यो अज्ञानदशाथी पोताना कूलना आचारमां धर्म मानेछे ते धर्म मर्म समजता नथी. अने धर्मज्ञानना अभावे शाश्वत शर्म पामी शकता नथी. कूलाचारनी प्रवृत्ति दरेकनी भिन्न भिन्न होयछे, अने ते प्रमाणे सर्व मनुष्योनी प्रवृत्ति थया करेछे, ज्ञानी पुरुषो कूलाचारनी रीतिमां धर्म मानता नथी. प्रायः कूलाचारनी रीति जे देशमां जे धर्म चालतो होय तेनी मिश्रताथी थइ होय छे;—जैनोनी कूलाचारनी रीति जैन धर्म फीलोसोफीथी मिश्रितछे, माटे जैनोनी कूलाचारनी रीतिमां धर्मना हेतुओमानो अंतर्भाव वर्त्ते छे. माटे तेनाथी विपरीत वर्तवुं नहीं—बाल जीवोने कूलाचारनी रीति पण व्यवहारथी धर्म साधनमां कारणी भूतछे आ वचन बोलवामां दीर्घदृष्टिथी विचार करतां घणो उंडो परमार्थ समायोछे, ते अर्धदग्ध उपलक डोळ घालु जनोना जाणवामां आवशे नहीं,—जैन धर्मनी सत्यताथी ते धर्म जे लोको आचरेछे तेनी कूळाचारनी रीति पण धर्मकारणमिश्रित होयछे, माटे श्रावकना कूलाचारे पण जे धर्मनी श्रद्धा—आचार ते श्रेयस्कर छे, जेम कोइ कूवामां पाणी (जल) ना होय अर्थात् सुकाइ गयुं होय तो पण ते खोदवा गाळवाथी जलनी सेरो फूटी कूवामां पाणि नीकळशे,—तेम जैन धर्म पण कूलाचारथी पाळतां ज्ञानीगुरुनो संग थतां तेनुं रहस्य समजातां—समकीतनी प्राप्ति थशे, माटे समजु भव्यजनोए आ बाबतनो विचार करवो—हालनो समय प्रथमना जेवो नथी, माटे जैनीओए

नहीं समजतां पण लौकिक देवगुरुनो त्याग तेमज देवपूजा-गुरुवंदन जैन देरासरे जवुं अन्यत्र नहीं, ए विगेरे ओघथी पळातो आचार पण धर्मनुं अंग जाणी त्यागवो नहीं, ज्ञानियोनी दृष्टिमां ते हलको छे, पण बालजीवोने तेथी चढवानुं छे, श्रावक कूलमां उत्पन्न थएलो माणस एटलुं तो समजशे के अरे हुं तो जैन छुं, मारो धर्म जैन छे, एम मोनी अन्य धर्म मानशे नहीं, तेम गुरुनो संग थतां समजतो थशे—कूलथी पण जैन धर्म पाळनार, कूळमां उत्पन्न थनार विशेष धर्म समजशे नहीं तो पण मारो जैन धर्म छे एटलुं पण धर्माभिमान आवशे माटे सापेक्षपणे विचारतां व्यवहारनयथी श्रावक कूळाचारमां प्रवत्त थनारने धर्मनो प्राप्तिछे, अन्य कूळमां उत्पन्न थनारने माटे नहीं,—एकांत वादीओ कूळाचारमां धर्म मानेछे तेना निषेधपर आ वचन छे. जाति संबंधी पण अंतर् अभिमान त्याग करवो. कोइ एम चिंतवे के आपणे वर्णावर्ण गण्याविना ढेड भंगी ख्रीस्ति विगेरे सर्वनी साथे खावुं पीवुं, तेथी आपणो आत्मातो अभडातो नथी, त्यारे तेनी साथे खावा पीवामां शो दोषछे ? आम कोइ सडेल भ्रष्ट बुद्धिथी कहे तेनो प्रत्युत्तर के जे जातोनी साथे खावापीवानो व्यवहार नथी तेनी साथे खावाथी जाति अभिमान टळ्युं कंइ कहेवातुं नथी, पण अंतर्मां जाति अभिमान बिलकूल नहीं रहेवाथी अभिमान टळ्युं कहेवाय छे. जाति अभिमान ज्यांथी उत्पन्न थायछे त्यांथी तेनो नाश करवो जोइए. एज मुख्य परमार्थछे, इत्यादि घणुं कहेवानुं छे पण विस्तारभयथी लख्युं नथी, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनो विचार करी चालवुं.

हवे कुसाधु संबंधी कहेछे.

" दुहा. "

सत्य धर्म समजे नहीं, दे उलटो उपदेश;
धर्म मर्म समज्या विना, अंतरमां व्हे क्लेश. १३१
स्त्रीविषयाशक्ति घणी, त्याग विराग न लेश;
मन चंचल जेनुं सदा, लजवे साधु वेष. १३२
शिष्य थइने रीसथी, वर्ते गुरुनी साथ;
आत्महित ते नहि करे, विनयी ले शिवपाथ. १३३
कपटी काळा कागडा, कुगुरु कर्मचंडाल;
संगकदी करवो नहीं, भवतस अरहट्ट माळ. १३४

तत्त्वनो उपदेश अज्ञानी कुगुरूओ सत्य आपी शकता नथी, अने उलटां कर्म ग्रहेछे ते जणावेछे.

भावार्थ–आत्मानुं स्वरूप सम्यग् जाण्या विना जे गुरू एवुं नाम धरावेछे, ते कुगुरू जाणवा, धर्मनो मर्म जरा मात्र समज्या विना आत्मापरमात्मानो उपदेश आपवा तैयार थइ जायछे, जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा, मोक्ष, इत्यादिनुं किंचिदपि ज्ञान होय नहीं, तेम छतां उपदेश आपे तेवा कुगुरूओ मनमां क्लेश पामेछे, अने पोते पण बूडेछे, अने वीजाने पण बूडाडेछे, आ वचन लौकिक कुगुरू अने लोकोत्तर कुगुरूना उपदेशने उद्देशी कह्युंछे, सामान्यनीति शिक्षण हितशिक्षा तो परस्पर मनुष्यो एक बीजाने आपेछे, तेनुं आ ठेकाणे ग्रहण कर्युं नथी. फक्त धर्मना उपदेश माटे लखवानुंछे, धर्मनो उपदेश आपवाने साधुओने अधिकार छे, संसारमां राचीमाची रहेला श्रावकोने तो धर्मनो उपदेश आप-

वानुं क्यांथी होय ? माटे श्रावकवर्गने उद्देशीने पण लख्युं नथी. उपदेशनो अधिकार अधिकारी विना नथी. सामान्यतः श्रावक वांचे ते माटे ना नथी. हवे मूळ विषय उपर आवीये, लौकिक तेम लोकोत्तर कुगुरुओ अज्ञानदशाथी पोते पोताना आत्माना वैरी थायछे. अने अन्य जनोना आत्माना पण वैरी बनेछे. पोते हिंसा करे, असत्य वदे, परवस्तु ग्रहे, अब्रह्ममां लीन होय, स्त्री परिग्रहना धारी होय अने अंतरथी विष्टामां राची रहेनार भूंडनी पेठे पौद्गलिक सुखमां अहर्निश अभिलाषी होय. एवा कुगुरुओ अधोगति भाक् थइ, अनेक प्रकारना क्लेशो पामेछे.

जेना मनमां त्याग तथा वैराग्य लेश मात्र पण होय नहीं, अने स्त्री विषयोनी आशक्ति घणी होय अने हस्तिकर्णवत् वा विद्युत्वत् जेनु मन चंचळताने भजतुं होय, एटले परवस्तुमां मन रमण करतुं होय एवा साधुनो वेष जो के धारण करेछे, तोपण ते साधुवेषने लजवेछे. जेम कोइ मनुष्य बख्तर वगेरे पहेरी युद्धमां लडवा जाय अने ज्यारे लडाइ थाय त्यारे नासे. ते जेम वीरपणाने लजवेछे तेम अत्र पण जाणवुं. दुःखगर्भितवैराग्य वा मोहगर्भित वैराग्यथी दीक्षा अंगीकार करी पश्चात् अंतरदृष्टि विना बाह्यपौद्गलिक विषयोमां मन वर्त्ते, अने तेना योगे आर्त्तध्यानने रौद्रध्याननो परिणामी बनी उपरथी साधु वेषना सद्भावे साधु कहावे, तो ते अवश्य पोताना आत्माने ठगेछे, अर्थात् तेने राग द्वेषनी अशुद्ध परिणति ठगेछे.

वळी जे धर्मदानथी तथा धर्मोपदेश दानथी वा दीक्षा आपवाथी पोताना गुरु तरीके जे होय अने पोते शिष्य होय तेम छतां रीसना हेतुओनो संबंध पामी रीसथी गुरुनी साथे वर्ते गुरुनी निंदा करे वा तेमनां दूषणो शोधे– तेमनोउपकार भूली जइ तेमनी आज्ञा

प्रमाणे करे नहीं, तेवा अविनेय शिष्यो आत्महित करी शकता नथी, हराया ढोरनी पेठे स्वच्छंदाचारपणे वर्ती बहिरात्मदशामां आयुष्य निर्गमन करता आत्महित साधी शकता नथी. जे शिष्यो नम्र विनयी परमार्थना ग्राहक लज्जा, आदि गुणोथी अलंकृत छे ते शिष्यो मुक्ति मार्ग ग्रहेछे.

कपटभावथी परिपूर्ण कृष्णलेश्या अंतर्मां वर्तवाथी कृष्ण सर्प सदृश, चंडाल सदृश जे कृत्यो करता होय एवा कुगुरुओनो हे भव्यात्माओ संग करशो नहीं. एतादृश कुगुरुओनी भववृद्धि अरहट्टमालन्यायवत् जाणवी. ख्रीस्ति आदि कुगुरुओनी संगति चेपी रोग समान छे तेथी सदा दूर रहेवुं, विशेषतः लौकिक कुगुरुओने माटे आ वचन छे. कदापि संसारी जीवोने कार्यवशात् ख्रीस्ति आदिक कुगुरुओनी संगति करवी पडे तो पण तेमना वचन सांभळवा नहीं, अने तेमना उपदेशनी श्रद्धा करवी नहीं, कारण-के तेथी संसारनी वृद्धि थाय, मिथ्यात्वनी वृद्धि करनार पादरीओ विगेरे कुगुरुओ छे, माटे मोक्षार्थी जीव कुगुरुनो त्याग करी सुगुरुने भजे--सेवे.

" दुहा. "

ममता त्यजी तुं बाह्यनी, अंतर्धनने देख;
अंतर्धन ते धर्म छे, सत्यज मानी लेख. १३५

अरूप अंतर्धनतणी, रूद्धि त्हारी पास;
तेनी भ्रमणाए करी, करे शुं अन्य प्रयास. १३६

अन्य प्रयासे दुःख राशि, परपरिणति परतंत;
परपरिणतिमां लीन जे, करे न भवभय अंत. १३७

संसारी अवळा फरे, सवळा फरे फकीर;
नमो नमो ते सद्गुरु, भयभंजन वडवीर. १३८

भावार्थ—हे आत्मा सद्गुरु संगत्या आत्मतत्व समजी बाह्यनी एटले धन, धान्य, क्षेत्र, स्त्री, पुत्र, गृह, हाट, राज्यादि जे पर वस्तु तेनी ममता त्यजी हे चेतन तुं तारा अंतर्धनने देख-ज्ञान दर्शनचारित्र रुप अंतर् धन आत्मानी अंदर रह्युंछे तेने हे आत्मा निहाळ, अंतर् धन ताराथी दूर वा भिन्न नथी, अंतर् धननी प्राप्तिथी अपूर्व शान्तिनो भोगी आत्मा बनेछे, अंतर्धन विना क्षायिक सुखनी प्राप्ति कदी थवानी नथी. दरेक ग्रंथोमां आत्म स्वरुपना हितने माटे विवेचन छे, सात नयथी सम्यग् आत्मानुं स्वरूप जाणवुं. एकांत पक्षथी आत्म स्वरुप जे जाणेछे ते सम्यग् परमात्मपदनी प्राप्ति सन्मुख थइ शकता नथी. आत्मानुं ध्यान मनन करवाथी आत्मगुणोनो आविर्भाव थायछे, ते संबंधी श्री देवचंद्रजीए आत्मस्तुति नीचे प्रमाणे करीछे.

स्तवन--ध्यानदीपिका.

गुण अनंत धर जीवने, बंधे भवमे कर्म–धरोनिज भावना–ए टेक.

राग द्वेष मुख हि वहढ्या, शत्रु हणु धरी ध्यान. धरो०
आतम लखो निज ज्ञानशुं, बाळी कर्म अज्ञान. ध० २
कर्म हणु तिम ध्यानशुं, जेम न पडुं भवमांहे. ध०
भवज्वर अज्ञाने नडया, नवि दीठो शिव राह. ध० ३
परमातम जग गुरु ठग्यो, निरस विषयने संग. ध०
सर्वज्ञ आत्म नवी लेखीयो, भ्रम अज्ञाने रंग. ध० ४
आत्म स्वरूप पिछाणवा, ज्ञान दृष्टिए करी देख. ध०
पंच ध्येय अरु आतमा, ज्ञान गुण एक लेख. ध० ५

नित्य छतोछे सहज ते, केवळ गुण मुज मांहि. ध०
मोह दाह त्यां पीडवे, ज्ञान अमृत ज्यां नांहि. ध० ६
कर्म उदय चउगति भमुं, निश्चय सिद्ध स्वरूप. ध०
कर्मने भजुं केम हुं, अनंत चतुष्टय भूप. ध० ७
तजी आशा निज शक्तिशुं, हुं आनंद स्वभाव. ध०
छेद अज्ञान अनादिनो, आज लह्यो निज दाव. ध० ८
एम जाणी धीरज धरी, रागादि मल खोय. ध०
ध्यावे आतम शक्तिशुं, धर्म शुक्ल ध्यान होय. ध० ९
ध्यान ध्येय स्वरूपथी, ध्यावो स्ववेद ध्यान. ध०
कर्महीन सर्वज्ञता, निर्मल शील भगवान. ध० १०
जड चेतन जीवादि ए, ध्येय स्वभाव पिछाणि. ध०
ध्यान लहो मन स्थिर करो, ज्ञान ध्याए आणि. ध० ११
परमेश्वर परमातमा, ध्येय अरूपी देव. ध०
द्रव्यार्थिक नय शाश्वतो, ए परमातम सेव. ध० १२
भवद्रुम क्षयकर शुद्धछे, ज्ञान थकी पर भिन्न. ध०
जगत् सकल आदर्श ज्युं, जीर्ण ज्योतिमय. ध० १३
दर्शन ज्ञान आनंदमय, अक्षर विगत-विकार. ध०
इंद्रि विणुं निकल गुणी, शान्त जाण शिवधार. ध० १४
शुद्ध अष्ट गुण युक्तछे, निर्मल अमेय अभेय. ध०
पर त्यागी अक्षय गुणी, ज्ञानीने आदेय. ध० १५
अणुथी पण जे सूक्ष्मछे, थंभथी पण जे वृद्ध, ध०
जगत् पूज्य निर्भय सदा, परमातम शिव सिद्ध. ध० १६
ध्याने कर्म सहु गळे, जगगुरु अमल अरूप. ध०
जिण जाणे सहु जाणीये, जाय अविद्या धूप. ध० १७
तत्त्व दृष्टि निज थीर हुवे, जाणे निज अनुभूति. ध०

धरो ध्येय ज्ञेय आदेय ते, अंतर आतम भूत. ध० १८
वचन अगोचर भ्रम विता, चिंतवी सहज अनंत. ध०
जास ज्ञानमें अंशज्युं, मावे द्रव्य अनंत. ध० १९
आत्म ज्ञानथी आत्मने, जाण्यां थाये सिद्धि. ध०
मुनि तन्मय गुण तिहां लहे, तजी ग्रहीका नहीं लब्धि. ध० २०
लीन थइ ग्रहे एकता, ध्याता ध्यान सु ध्येय ध०
परमात्मा अंतरात्मा, एक अभिन्न अमेय. ध० २१
कटमे कट कर्त्ता तणी, दिसे दुविधा रीति. ध०
पण ध्यान ध्येय ए आत्मा, एथी नवीय परतीत. ध० २२
भवमें भम्यो अज्ञानथी, विण लाधा निज नाण. ध०
परम ज्योति जग दुःखहरु, तेहिज अनुभव जाण. ध० २३
भावे एम निज भावना, ध्यान बीज गुणधाम. ध०
देवचंद्र सुख सागरु, ध्यान अमूलख पाम. ध० २४

श्री देवचंद्रजी पण ए प्रमाणे आत्म स्वरूपनुं वर्णन करेछे. गुण विशिष्ट आत्माने संसार चक्रमां वर्ततां आत्मस्वरूपनी अनुपयोगताए परस्वभावमां रमणपणाथी परपुद्गलरूप जे कर्म तेनुं ग्रहण समय समय प्रति थतुं जायछे, माटे हे चेतन स्वस्वरूप रमणता रूप निजभावनानो दृढ प्रयास अने स्थिरताथी आदर कर. अनादि कालथी तुं परभाव एटले पुद्गल द्रव्यना वर्ण, गंध, रस स्पर्श, मय पर्यायोनी लालचमां–तृष्णामां, ग्रहणमां, ममत्त्वमां, पराभिमुख चेतना करी अशुद्ध परिणति धारी, स्वभान भूली लोभायो पण परवस्तु पोतानी थइ नहीं उलटुं राग द्वेषनायोगे पुद्गल द्रव्यने आकर्षी कर्मरूप परिणमावी अनेक योनिमां विचित्र देहो धारी स्वऋद्धिनुं आच्छादन करी परपुद्गुल भोगी थइ राजा जेवो पण तुं

रंक बन्यो, राग द्वेषरूप शत्रुने हणी आत्मीयध्यानमां प्रवृत्त थाउ, अने ज्ञान शक्तिथी निजस्वरूप जाणुं. आत्मज्ञान थतां परमां बंधाएलो अज्ञानाध्यास स्वतः दूर थायछे, आत्मा निर्मल थतां परमात्मा कहेवायछे—तेनुं स्वरूप कहेछे.

श्लोक.

साकारं निर्गताकारं, निष्क्रियं परमाक्षरं ।
निर्विकल्पं च निःकंपं, नित्य मानन्दमन्दिरम् ॥ १ ॥

आत्मा ज्ञानरूप उपयोगथी साकारछे, तथा दर्शनरूप उपयोगथी निराकारछे तथा आत्मा निष्क्रिय निश्चय नयथी जाणवो.

प्रश्न—शरीरस्थ आत्मा सक्रियछे, अनेक प्रकारनी खावा पीवानी गमनागमननी क्रिया करेछे, छतां ते निष्क्रिय केम जाणवो ?

उत्तर—ज्यां सुधी जीवना प्रदेशोनी साथे कर्म लाग्युंछे त्यां सुधी ते सक्रियछे—अने कर्मनो नाश सर्वथा थतां निर्मल सिद्ध बुद्ध परमात्मा निष्क्रियछे. शरीरस्थ आत्मा व्यवहार नयथी सक्रियछे कर्मनो संबंधछे माटे, अने निश्चयनयथी अक्रिय जाणवो. वस्तुतः आत्मानुं जेवुं स्वरूप होय तेवुं निश्चयनय वर्णवे छे, माटे आत्मानुं वस्तुतः ध्यान करतां निष्क्रिय भाववो, अने छे पण निष्क्रिय.

परमाक्षरं—क्षर एटले खरवुं, पोतानुं स्वरूप बदलवुं. परम एटले सर्वोत्कृष्टपणे पोतानुं स्वरूप नहि फेरवनार आत्माछे, अनादि कालथी विभाव दशायोगे भवचक्रमां आत्मा परिभ्रमेछे तोपण तेना असंख्यात प्रदेशमांथी एक प्रदेश पण खरी गयो नहि, तेमज अनंत गुणोमांनो एक गुण पण खरी गयो नथी, माटे आत्मा अक्षर, निश्चयदृष्टिथी जाणवो. यद्यपि आत्माना प्रदेशोनुं तथा गुणोनुं

कर्मथी आच्छादन थयुंछे तोपण प्रदेशो तथा गुणोनो नाश थयो नथी तेम पण थवानो पण नथी त्रण कालमां अक्षर रूप आत्माछे.

प्रश्न—परमाक्षर असंख्यात प्रदेशी आत्मा कीडी अने हाथीना शरीरमां एक सरखो केम मनाय ? कीडीनुं शरीर छोडी ज्यारे हाथीनुं शरीर धारण करे त्यारे तेनो विकास थयो, अने ज्यारे हाथीनुं शरीर त्यागी कीडीनुं शरीर धारण करे त्यारे आत्मानो संकोच थयो, असंख्य प्रदेशी आत्मानो संकोच विकास थयो त्यारे ते नाना शरीरमां लघु अने मोटा शरीरमां महान् थयो त्यारे आत्मानुं एकसरखुं रूप रह्युं नहीं, देहमात्र व्यापी जीव थयो तेनुं केम ?

उत्तर— गाथा.

जह पउम राय रयणं, खित्तं खीरं पभासयदि खीरं॥
तह देही देहथ्थो, सदेहमत्तं पभासयदि १

छाया.

यथा पद्मराग रत्नं, क्षिप्तं क्षीरे प्रभासयति क्षीरं;
तथा देही देहस्थ, स्सदेह मात्रं प्रभासयति· १

भावार्थ—पद्मरागरत्न दुग्धथी भरेला वासणमां नांखीए तो ते रत्नमां एवो गुण छे के—तेनी प्रभाथी सर्व दुग्ध तद्रूपगमय थइ रहेछे. जो नानी वाटकीमां दुग्ध भरी अंदर पद्मरागरत्न नांखीए तो पद्मरागना रंग सरखुं सर्व दूध थइ जायछे. तेमज मोटुं कुंडुं होय तेमां दूध भरी पद्मराग रत्न नांखीए तो ते रत्ननी प्रभा तेटला सर्व दूधमां व्यापी जायछे. तथा संसारी जीव पण अनादि काळथी कषायोद्वारा मलीन थतो शरीरमां रहेछे. शरीरमां असंख्यात प्रदेशोवडे व्याप्त थइ रहेछे, स्निग्ध पौष्टिक आहारथी जेम जेम शरीर

द्धि पामेछे, तेम तेम शरीरनी अंदर रहेला आत्मप्रदेशो पण तेटला
शरीरमां व्याप्त थायछे, मोटा शरीरमां जीवप्रदेशो विस्तारपूर्वक
रहेछे, नाना शरीरमां शरीरने व्यापी रहे तेवी रीते आत्मप्रदेशो
रहेछे, असंख्यात प्रदेशनी व्यक्ति स्वरूप जीव जाणवो, जो के आ-
त्मा शरीरादि परद्रव्यथी जुदोछे तोपण संसार अवस्थामां अनादि
कर्म संबंधथी नाना प्रकारना विभाव भाव धारण करेछे ते विभाव
भावोथी नवीन कर्मबंध थायछे, वळी ते बांधेलां कर्मोना उदयथी
फरी एक देहथी देहान्तर धारण करेछे, अने तेम अशुद्धकारक
चक्रथी संसारवृद्धि पामेछे, संसार अवस्थामां जीव कर्मसहित होय
छे अने मोक्षदशामां कर्मरहित आत्मा सादि अनंतभंगें सदा समये
समये अनंत सुख भोगवतो वर्तेछे, संसारी यद्यपि आत्माछे तोपण
तेनी सत्ताथी अक्षरछे, तथा सत्तातः निर्विकल्प आत्मा जाणवो,
विकल्प संकल्प मनना योगे थायछे, विकल्प संकल्प योगे राग
द्वेषमां आत्मा परिणमेछे, हुं आत्मा ज्यारे विकल्प रहीतछुं तो केम
विकल्प संकल्प करूं ? परभावमां रमतां विकल्पादि उद्भवेछे, माटे
परभावमां रमणता निवारवी, बाह्यदृष्टि योगे आत्मा परभावमां प-
रिणमेछे माटे मुमुक्षु भव्यजनोए बाह्यदृष्टि प्रचार वारवा माटे अं-
तर्दृष्टिथी आत्मधर्म तरफ क्षणे क्षणे लक्ष्य आपवुं, अंतर्दृष्टि थतां
बाह्यवस्तुमां परिणमेलो मननो वेग अटकतां मन अंतरात्मा प्रति
वळेछे, एम प्रतिदिन सतत दृढ अभ्यास थतां पोतानी ऋद्धिनो स्वयं
अनुभव थायछे. कह्युं छे के—

श्लोक.

बहिर्दृष्टि प्रचारेषु, मुद्रितेषु महात्मनः ।
अंतरेवावभासंते, स्फुटाः सर्वाः समृद्धयः ॥ १ ॥

महात्माने बहिर्दृष्टिना प्रचारो बंध थए छते पोताना आत्मा

आत्माथी न्याराछे, चक्षुथी देखाता आकारो अने स्वप्नमां देखाता आकारो पुद्‌गल द्रव्यनाछे, अने पुद्‌गल द्रव्यथी आत्मा त्रणे कालमां निश्चयनयतः जोतां भिन्नछे, माटे भिन्न वस्तुमां आत्मपणानी बुद्धि भ्रांति मात्रछे, माटे जेवी स्वप्नमां देखाता पदार्थोमां मारापणानी बुद्धि खोटी तेना सरखीज चक्षुथा देखाता पदार्थोमां मारापणानी बुद्धि खोटी जाणवी.

प्रश्न—त्यारे चक्षुथी देखाता सर्व पदार्थो असत्य समजवा? अने जो ते असत्यछे तो तेमां ममत्त्व भाव केम उत्पन्न थायछे?

प्रत्युत्तर-चक्षुथी देखाता सर्व पदार्थो पुद्‌गलना पर्यायोरूपे सत्य एटले अस्तित्त्व युक्त जाणवा, अने ते पुद्‌गल पर्यायरूप पदार्थो आत्मस्वरूपे नथी एटले आत्माथी भिन्नछे, आत्मपणुं तेमां कंइ नथी माटे आत्मअपेक्षाए ते असत्य जाणवा, आत्मद्रव्यमां पुद्‌गल पर्यायरूप पदार्थोनुं अस्तित्व नथी किंतु आत्मद्रव्यमां पुद्‌गल पर्यायरूप पदार्थोनी नास्तिता सदा समये समये परिणमी रहीछे, तदपेक्षया असत्य जाणवा, अने पुद्‌गलरूपे ते सत्य जाणवा, माटे पुद्‌गल वस्तुओ ज्ञानदृष्टिथी जोतां आत्माथी अत्यंत भिन्नछे तेमां मारापणानी बुद्धि अज्ञान तथा मोहथी उत्पन्न थायछे, ज्यारे अज्ञान नाश थतां ज्ञान प्रगटेछे त्यारे मोहनो नाश थतां परवस्तुमां थती अहंममत्वबुद्धि नाश पामेछे.

शंका—ज्यारे आ प्रत्यक्ष देखातुं शरीर पोतानुं नथी एम जाण्युं त्यारे कोइ शरीरनो घात करे तो शुं करवा देवो?

समाधान-कोइ शरीरनो घात करे तो बिलकुल करवा देवो नहीं. अने उलटुं शरीरनुं संरक्षण करवुं यतः शरीरमाद्यं खलु धर्म

कारणीभूतछे. यतः
साधनं प्रथम तो शरीरज धर्म साधनमां
कह्युं छे के–

श्लोक.

शरीरं धर्मसंयुक्तं, रक्षणीयं प्रयत्नतः
शरीराज्जायते धर्मः पर्वतात्सलिलं यथा· १

भावार्थ–धर्म संयुक्त एवा शरीरनुं यत्न पूर्वक रक्षण करवुं, कारण के जेम पर्वतथी नदी उत्पन्न थाय छे तेम शरीरथी धर्मनुं साधन थाय छे ने वळी कह्युं छे के शरीरंच पुद्गल धर्मत्वात् आहाराधारं–शरीर पुद्गल रूपछे माटे ते आहारना आधारे रहेछे कह्युंछे के–

गाथा.

देहो अ पुग्गलमओ । आहाराइ विरहिओ न भवे॥
तय भावे नय नाणं । नाणेण विणा कओ तित्थं· १

भावार्थ–देह एटले शरीर पुद्गलमयछे, अने ते शरीर आहार विना होतुं नथी. तेना अभावे ज्ञान नथी अने ज्ञान विना तीर्थ नथी. पूर्वे बार वर्षनी दुकाली पडी हती त्यारे आहारना अभावे श्रुत ज्ञाननी विस्मृति घणी थइ गइ माटे आहार पण श्रुत ज्ञानना अभ्यासमां चारित्र पालनमां कारणीभूतछे. अने आहार विना ज्ञान नाश पामेछे, आहार पुनः बे प्रकारनोछे, सावद्य आहार अने निरवद्याहार–जीवमय जे आहार ते सावद्याहार, अने जीव रहित जे आहार ते निरवद्याहार–सावद्यआहार भक्षणथी कर्म बंध थायछे. माटे मोक्षाभिलाषिजीवोए निरवद्याहारनुं ग्रहण करवुं, तेमां मुनिराज तो सर्वथा सावद्याहारना त्यागी होयछे, सावद्यआहारना निमित्तथी जीवो सप्त नरक पर्यंत गमन करेछे यतः कह्युंछे के–

गाथा.

आहार निमित्तेणं, जीवा गच्छंति सत्तमिं पुढवीं।
तंडुल जसं आहरणं, भणियं सुत्ते जिणंदेहिं. १

भावार्थ—आहारनो अभिलाषी तंडुल मत्स्य बीजा जीवोने भक्षण करवानी इच्छामात्रथी सातमी नरक सुधी जायछे. माटे भवभीरु मुनिवर्यो शुद्धआहार संयमार्थे ग्रहण करेछे, यतियोने आहार शुद्धि अति दुष्कराछे कह्युं छे के—

गाथा.

आहारे खलु सुद्धी, दुलहा समणाण समणधम्मंमि।
ववहारे खलु सुद्धी, दुलहा गेहीण गिहधम्मे. १

श्रमणोने श्रमण धर्ममां वर्तता निर्दोष आहारनी प्राप्ति दुर्लभछे, तेम गृहस्थोने गृहस्थावासमां वर्तता व्यापारादिमां व्यवहार सुधी दुर्लभाछे. शुद्ध आहारथी शरीरनुं पोषण संयमार्थम् श्रमणो करेछे प्रसंगथी आहारनुं विवेचन करी शरीर धर्मसाधनमां कारणी भूत छे एम सिद्ध कर्युं, धर्मीजीवोनुं शरीर धर्म माटेछे तेम पापी जीवोनुं शरीर पाप माटे जाणवुं. चतुरशीति लक्ष जीवयोने परिभ्रमण करतां दुष्प्राप्य मनुष्य शरीर चिंतामणि रत्न जेवुं पामी जे मनुष्यो खावा पीवामां. तेमज विषय सुख भोगववामां, मोज मजा मारवामां शरीरनी सार्थकता समजेछे, ते जीवो मूढ अविवेकी पशु समान जाणवा. देवताना शरीर करतां मनुष्य शरीर अत्यंत उपयोगीछे. मनुष्य शरीरथी मोक्ष प्राप्ति थायछे, बीजा शरीरथी मोक्ष प्राप्ति थती नथी, माटे शरीरनुं आहारादिकथी पोपण करवुं. रोगादिक थये छते रोगनाशार्थ औषध दवा करवी. कोइ शरीरनो घात करे तो करवा देवो नहिं कारण के शरीर विना धर्म साधन थतुं नथी.

शरीर मारूंछे एम मानवुं नही, कारण के ते पुद्गलछे शरीरथी न्यारो आत्मा भाववो, शरीर आत्म धर्मनी प्राप्तिमां निमित्त कारणछे एवं, उपरना प्रश्ननो उत्तर थयो.

प्रश्न—गजसुकुमाल मुनीश्वरे श्मशानमां शरीर घातनो उपसर्ग केम सह्यो ? केम तेमणे शरीरनो घात करवा दीधो ?

प्रत्युत्तर—गजसुकुमालेतो काउसग्ग कर्यो हतो अने एवी तेमनी श्रद्धा हती के शरीरना उपसर्गथी पग चळशा नहीं. सर्व जीवोने माटे एवी स्थीति नथी. अंतरथी भिन्नपणे आत्मभावमां वर्तवुं ? व्यवहारथी तेनुं संरक्षण करवुं, गज सुकुमालनी एवी भवितव्यता हती. तेमज तेनी अंतर्भावना प्रवर्द्धमान हती, तेथी एवी स्थीति बनी. एकांत जैनमार्ग नथी तेथी शंका करवी नहीं, काल, स्वभाव, नियति, कर्म, अने उद्यम ए पंच कारणोथी मोक्षरूप कार्यनी सिद्धि थायछे, शरीरनी सार्थकता व्रतधारण तपश्चर्या विगेरेथी छे. अंते शरीर आत्मानुं थयुं नथी अने थशे पण नहीं. नित्य पर्व सम शरीरनी लालना पालना करवामात्रथी आत्महित थतुं नथी पण तेथी धर्मनां कार्य करवाथी आत्महित थायछे ? त्रण धन दरेक मनुष्यनी पासे रहेछे, प्रथम बाह्य धन. सुवर्ण, रूपुं, जवाहीर, रत्न, राज्य विगेरे जाणवुं, ते बाह्य धन अनित्य चंचल जाणवुं, कोइनी पासे बाह्य धन विशेषछे तो कोइनी पासे स्तोकछे. ए बाह्य धननी अपेक्षाए गरीब तवंगरमां भेद पडेछे, बाह्य धनने माटे अनेक प्रकारना उद्योगो क्लेशो देशोदेश परिभ्रमण आदि उपाधियो वेठवी पडेछे. किंतु ए बाह्य धननो ढगलो मरती वखते साथे लेइ गयो नथी अने लेइ जवानो नथी. बाह्य धननी ममताए अह-

निश आर्तध्यान अने रौद्रध्यानमां आत्मा परिणमी अनेक प्रकारनां कर्म बांधेछे. अने वहिर्भावे राचीमाची अनेक जन्मनी वृद्धि करे छे.

जेम कुंभकार चक्रने एकवार वेग आपेछे तेथी ते चक्र चकरचकर घणी वखत सुधी भम्या करेछे तेम मनने आर्तध्यान, रौद्रध्यानना चिंतवननो एकवार वेग आप्याथी घणा वखत सुधी आर्तध्यानादिमां परिणमी रहेछे. रागद्वेषनो वेग आत्माने आपवाथी घणा काल सुधी आत्मा रागद्वेष वेग जोरे संसारमां परिभ्रमण करेछे, माटे अत्र सार ए ग्रहवानोछे के—धर्मनो वेगजो आत्माने आपवामां आवे तो मुक्तिपद आत्मा पामे, तत्पद अर्थे सदाकाल एम भाववुं के—देखाती वस्तुओमां हुं नथी. त्यारे मारे कंचन कामीनीने केम मारी मानवी ? वा मनमां तेनुं चिंतन केम थवा देवुं. कारण के ते वस्तुओ पोतानी नथी तो निरर्थक ते संबंधी विचार मारे केम करवो घटे ? हुं एटले आत्मा जेमां नथी तेमां रागद्वेषथी परिणमवुं मारे केम घटे. कदापि जाणोके शरीर निर्वाह आदि अर्थे ते वस्तुओनुं ग्रहण करवुं पडे तोपण उदासीन भावे ग्रहण करवुं. अंतरथी ते वस्तुओथी हुं न्यारोछुं एवा उपयोगनी स्थिरताए रहुं. पण तेमां रागद्वेषथी परिणमवुं योग्य नथी. संसारनां कार्यो करुं पण तेमां लपटाउं नहीं एवी रीते वर्तवुं तेज आत्माने हितकारीछे, देखाती वस्तुओ पुद्गलना पर्यायो जाणवा, पुद्गलनो सडण पडण, विध्वंसन स्वभावछे. पुद्गलना पर्यायो अनेक आकाररूपे देखायछे. अने पाछा विखरी जायछे. जेम संध्या समये पुद्गलना पर्यायो अनेक रंगरूपे परिणमेछे अने क्षणमां नष्ट थइ जायछे तेम चक्षुथी देखाती वस्तुओ विचित्र वर्ण गंध रस स्पर्शमय देखायछे अने वळी ते पाछी जुदा आकाररूपे परिणमी

भिन्नवर्ण गंध रस स्पर्शने धारण करेछे शरीर पण पुद्गलछे. माटे ते मारुं नहीं अने हुं तेनो नथी, पुद्गलनी भिन्न जातिछे. अने आत्मानी भिन्न जातिछे तेनी जाति भिन्न अने जेनो धर्म भिन्न जेनी वर्तना भिन्न ते एक कदी होय नहीं. हुं आत्मा पुद्गलमां त्यारे केम होउं ? जो के संसारमां कर्मनायोगे हुं पुद्गलथी वस्यो छुं तो पण पुद्गलथी निश्चय नयथी जोतां हुं न्यारो छुं. ए त्रीजा विषयनो अल्प विचार कर्यो.

चतुर्थ विषय विचार-हुं क्यांथी आव्यो क्यां जाइश ? हुं आत्मा क्यांथी एटले कया स्थानमांथी अत्र मनुष्य गतिमां आव्यो, अने हवे आ शरीरनो उत्सर्ग कर्या बाद क्यां जाइश. ते संबंधी स्थिरचितथी विचार करतां एम सिद्ध थायछे के पूर्व भवमां कोइ पण में सारुं कृत्य करेलुं. सिद्धान्तमां पण कथ्युंछे के-जे जीव सरल हृदयी होय, परोपकारी होय, दयालु होय, धर्मार्थी होय, कोइ जीवनो घात करनार होय नहिं ते जीव मरीने मनुष्य थायछे. अर्थात् शुभभावनायुक्तजीव मरीने मनुष्य गति प्राप्त करेछे, तपश्चर्यावंत, व्रती, परोपकारी, ब्रह्मचर्यादि गुण विशिष्ट जीव देवगति प्राप्त करेछे, पापी, महारंभी, कृतघ्न, कपटी, हिंसा असत्यादिथी युक्त जीव नरक गति पामेछे, कपटवंत पापादि युक्त जीव तिर्यंचनी गति प्राप्त करेछे. माटे ते उपरथी विचारतां सिध्ध थायछे के पूर्व भवमां कंइ सारां कृत्य करेलां के जेना योगे मनुष्य शरीर ग्रही तेमां वश्यो छुं. जेने जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न थायछे ते पोतानो पूर्वभव यथातथ्य जाणेछे, जाति स्मरण मति ज्ञाननो भेदछे, संप्रतिराजा पूर्वे द्रुमकनो जीव हता. मिष्टान्न भक्षण लालचथी श्री आर्य सुहस्ति आचार्यजीने साधु थवानी विनंति करी, गुरु महाराजे योग्य जाणी लाभनी खातर साधु वेप समर्प्यो.

एम थवानुं कारण इश्वरना हाथमांछे एम कहीए तो आपणे इश्वरने गेर इन्साफी अने दया विनानो ठेरवीए छीए, कर्मथी ज आवा अवतारो बनेछे. इश्वरने सुख दुःख आपनारो मानवुं ए न्यायथी विरुध्ध तेमज महा अज्ञान जाणवुं. इश्वर कोइने सुख दुःख आपतो नथी. जीव, पुण्य, पाप रुप कर्मना अनुसारे सुख दुःख पामेछे एम श्री तीर्थंकर भगवान् कहेछे, तीर्थंकर केवळ ज्ञानीछे माटे ते सत्य पदार्थ स्वरूप कथेछे. माटे तेमना वचन उपर विश्वास राखवो. पुनर्जन्म सिध्धि सर्व प्रमाण सिध्धछे, चोराशी लाख जीवयोनिमां परिभ्रमण करतो जीव महापुण्योदये मनुष्य जन्म पामेछे.अमूल्य चिंतामणि समान मानवतनुं पामी भवोदधिनो पार पामवो एज कर्तव्यछे. संसाररूप समुद्र तरवा मनुष्यावतार एक वहाण समान छे. मनुष्यरूप वहाणमां आत्म रूप उतारु बेठोछे. आत्मोपयोग रूप खलासी वहाणने चलवेतो वहाण सम्यग् मार्गे चाले. समुद्रमां तृष्णा रुप मोटी भमरीओ आवेछे तेमां वहाणने बुडवा नहीं देतां शुध्धोपयोग रुप खलासी समुद्र पार वहाण उतारे माटे हे चेतन तुं शुध्धोपयोगनो आदर कर के जेथी तुं अनंत शाश्वत सुख पामे.

तुं क्यां जाइश—परभवना पुण्यथी मानसिक शक्तिवाळुं मानव तनु प्राप्त थयुंछे ते आयुष्यनी मर्यादा सुधी अंते रहेछे. पश्चात् ते शरीरमांथी आत्मा जुदो पडेछे. कोइ आत्मा महापाप करी नरक गतिमां संचरेछे. नरको सातछे, पहेली करतां बीजी नरकमां विशेष दुःखछे, बीजी करतां त्रीजीमां विशेष दुःख जाणवुं. सर्व करतां सातमी नरकमां विशेष दुःख भोगववुं पडेछे, उत्कृष्ट तेत्रीस सागरोपमनुं आयुष्य सातमी नरकना जीवोनेछे जे जीवो हजारो गायो भेंसो बकरांने रेंसी नांखेछे अने तेथी पोतानुं गुजरान च-

लावेछे तेवा जीवो प्रायः नरकगतिना मेमान थइ त्यां दुर्गंधमय खरावशरीरोने पामी असह्य दुःख क्षणेक्षणे भोगवेछे, विविध प्रकारनी क्षेत्र वेदनाओ भोगवेछे, जे जीवो हजारो माछलीओनुं भक्षण करेछे अने रात्रिदिवस तेमने मारवानो उद्यम करी रह्याछे तेवा जीवो नरकगतिमां गमन करेछे. मरती वखते तेवा जीवोनी लेश्या बगडे छे, अने नरकमां दुःख पामतां तेवा जीवोने मुकाववा कोइ जतुं नथी. त्यां नरकमां महारौरव दुःख पामेछे, करेला पापोमांथी छुटता नथी. जे जीवो शिकार रमी हजारो पंखी पशुने मारी तेना मांसथी पापी पेट भरेछे अने सदाकाल तेवा पापी शिकारकृत्यमां राचीमाची रहेछे तेवा जीवो प्रायः नरकगतिमां परमाधामीनी करेली वेदनाओ, बूमो चीसो पाडता भोगवेछे, सागरोपम वर्ष सुधी नरकमां रहेछे, ते जीवोने जरामात्र पण सुख नथी. आंख मींचीने उघाडीए तेटली वखत पर्यंत पण नरकमां सुख नथी जे जीवो मांसथी पापी पेट भरी आनंद मानेछे तथा परस्त्री लंपटी होयछे तेवा जीवो प्रायः नरकगतिमां जायछे, रौद्रध्यानना चार ४ पायामां वर्तती जीव क्रूरपरिणामयोगे नरकमां गमन करेछे. माटे हे आत्मा तुं जो उपरोक्त हेतुओनुं सेवन करीशतो नरकगतिमां जाइश. असंख्य जीवो रौद्र परिणामने धारण करता नरकगतिमां गया अने अनेक जायछे अने जशे. तुं मनथी तारूं वर्तन तपासीजो, तुं रात्री दिवस केवा प्रकारना विचारो धारण करेछे, तुं रात्रीदिवस पापनां केवां केवां कृत्य करेछे. वावे तेवुं उगे आ कहेवतने याद राख. तें अज्ञानथी नरकगतिमां जवाय तेवां पापो कर्यां होय तो हवे ते वावतनो पश्चात्ताप करवो घटेछे, अने गीतार्थगुरू पार्श्वे आलोचना लेवी घटेछे. प्रायश्चित्त विना पापनी शुद्धि थती नथी. जेने भवनी भीति उत्पन्न थइ होय ते प्रायश्चित्त ग्रहेछे, मान ल-

ज्जानो त्याग थाय अने वैराग्य प्रगटे त्यारे प्रायश्चित्त लेवायछे, जे जे गुप्त पापो कर्यां होय तेने बीजानी आगळ कहेवाथी जीव डरेछे वा लज्जा पामेछे. पण मोक्षाभिलाषी जीवोए गुरू पासे लोकवासना त्याग करी प्रायश्चित्त ग्रहण करवुं. व्रतभंगनुं प्रायश्चित्त ग्रहनार जीव आराधक जाणवो. मनमां शल्य राखवुं नहीं कहुं छे के—

गाथा.

ससल्लो जइवि कट्ठुग्गं, घोरं वीरं तवं चरे।
दिव्ववास सहस्सं तु, तओवि तं तस्स निप्फलं १
सल्लुद्धरण निमित्तं, गीयस्स नेसणाउ उक्कोसा।
जोयण सयाइं सत्तउ, बारस वरिसाइं २
आलोअणा परिणओ, सम्मं संपट्ठिओ गुरू सगासे।
जइ अंतरावि कालं, करिज्ज आराहगो तहवि. ३
लज्जाइगारवेणं, बहुस्सुअ मएणवाविदुच्चरिअं।
जो न कहेइ गुरुणं, नहु सो आराहगो भणिओ. ४
जह बालो जंपंतो, कज्जमकज्जं च उज्जुअं भणइ।
तं तह आलोइज्जा, मायामयविप्पमुक्कोअ. ५
न वि तं सथ्थं व विसंवर, दुप्पउत्तो च कुणइ वेआलो।
जं तं च दुप्पउत्तं, सप्पो व्व पमाइओ कुद्धो. ६

माटे उपरोक्त भावार्थ समजी सद्गुरु पार्श्वे कृत पापोनी व्रत भंगोनी आलोचना लेवी गुरु गीतार्थ जाणवा तेमनी पासे आलोचना लेवी सातसे योजन तथा बार वर्ष सुधी गंभीर

गीतार्थ पासे आलोचना लेवानी तीव्रेच्छा राखवी, तथा आलोचना लेनार पण आत्मार्थी तत्त्वनो अभिलाषी होवो जोइए. गुरुनी पार्श्वे पापनो पश्चात्ताप करतो प्राणी कर्मथी हळवो थायछे अने निर्मल थयेलो निशल्य भव्यात्मा सत्पंथे चालेछे, जेम कोइना उदरमां वगाड थइ ते अशक्त थयो होय तो ते माणस वैद्यने नाडी देखाडेछे, वैद्य तेनी वर्तणुक पुछी लेछे, कया कया पदार्थो खावामां आव्या हता ते पुछेछे त्यारे रोगी पण सर्व वात कहेछे पश्चात् वैद्य तेना शरीने सारुं करवा प्रथम मळ शुद्धि जुलाब आपेछे. पश्चात् बीजी दवाओ आपेछे, तेम गुरु महाराज पण अनेक प्रकारना पापोनी आलोचना रूप जुलाब आपी तेनुं हृदय शुद्ध करेछे पश्चात् आत्महितने माटे अन्य मार्गो, व्रतो बतावेछे माटे हे चेतन तुं हवे विचार कर अने नरकना हेतुओ दूर कर. श्रीवीरभगवान्नी मशीए माथाना वाळ जेटला धणी कर्या एम प्रभुनी पासे पश्चाताप कर्या तेथी सर्व पाप जतुं रह्यु, हे चेतन आर्तध्यान जो मनमां करीश तो तिर्यंचनी गतिमां जाइश. धर्मध्यानथी देवगति मनुष्यगति प्राप्त थायछे अने शुक्ल ध्यानथी मोक्ष स्थान प्राप्त थायछे. माटे चेतन-चारे गतिनां द्वार तारे माटे खुल्लांछे, जेवां कृत्य करीश तेवी गतिमां जाइश-आयुष्य पूर्ण थतां, देवता मनुष्य तिर्यंच अने नरक ए चार गतिमांथी गमे ते गतिमां कर्मानुसारे तुं जाइश-एक गतिमांथी नीकळी बीजीमां, बीजीमांथी नीकळी त्रीजीमां, एम अनादि कालथी तुं चतुर्गतिमां परिभ्रमण करेछे. चतुर्गतिमां परिभ्रमण करावनार कर्मछे. कर्माष्टक प्रकृति रूप द्रव्यकर्म जाणवुं. राग अने द्वेष रूप भावकर्म जाणवुं, राग अगर द्वेषना विचारो कर्याथी जीव पुद्गल स्कंधोने कर्म रूप परिणमावी ग्रहण करेछे.

दरेक माणस पोते करेला रागद्वेषना विचारोथी ज पोताने कर्मनी जाळमां घेरी लेछे, एम समजवानुंछे.–विचारमां समायला जोखमनो ख्याल नही होवाथी रागद्वेषना सर्वे विचारो सुखेथी आववा देछे. हवे एवा विचारोथी रागद्वेषना संस्कारो उत्पन्न थायछे. अने ते राग द्वेषना संस्कारो पोताना बनावनार उपर दवाण करी तेनी पासे फरीथी तेवा विचारो उत्पन्न करावेछे के जेनी अणसमजु लोकोने खबर नहि होवाथी तेम थतुं अटकाववानी कोशेश करवाने वदले उलटुं वारंवार तेवाज विचारो उत्पन्न थवा देछे, अने तेनुं छेवट परिणाम एवुं आवेछे के एकज विचार बे पांच वखत कीधाथी माणस पोते रागद्वेषना कबजामां आवी जायछे. अने ते पछी रागद्वेष, निंदा, शोक, मोह, अदेखाइ, बुराइ, चोरी, असत्य, व्यभिचार, हिंसा, कपट, विश्वासघातना विचारो माणसनी गरजी उपरांत तेनाथी थइ जायछे, एवी रीते राग द्वेष मोह मायाना विचारोना बंधनमां जीव पडेछे, कर्मनो कर्त्ता पोते अने जेमां बंधानार करोळीयाना जाळनी पेठे पोते ज छे, जे नठारा विचारो अजाण पणे फरी फरीथी करवाथी तेमां पोते बंधाइ जाय छे वळी रागद्वेष मोह, माया, मत्सर, रुप नठारा विचारोथी छेवटे नठारुं काम थइ जायछे के जेनुं कडवुं फळ भोगवती वेळाए ते दुःखी थायछे, दुःख खमती वखते तेने पोताना करेला कर्मथी छूटो थवानी इच्छा थायछे. अने फरीथी एवुं नठारुं काम नहीं थाय अने नठारो विचार नहीं आवे तेने माटे हवे ते सावचेत रहेवानी कोशेश करेछे. उत्पन्न करेली रागद्वेषनी टेवो घणी बलवान तथा अनादि काळथी होवाथी शरुआतमां तो मनुष्य निष्फळ जायछे, एटले तेनी मरजी उपरांत रागद्वेप मोहना विचारो आवी जायछे. अथवा तो खराब काम थइ जायछे. पण लांबो वखत पो-

तानी महेनत चालु राख्याथी छेवटे ते रागद्वेष मोह मायाना खराव विचारोने अटकावी शकेछे. अने तेम कीधाथी रागद्वेषथी बांधेलां कर्मनो पण ते नाश करी शकेछे, मनोजय अभ्यासथी थायछे. रागद्वेषना विचारोथी मनुष्य आवता भवने माटे नवां कर्म संग्रहेछे. तेथी परभवमां जन्म लेवो पडेछे, जन्म जरा मरणथी आत्मा खरूं सुख भोगवी शकतो नथी माटे हवे मनुष्य भवमां चेतवानुं छे, दरेक मनुष्यो पोतानी बुद्धि अनुसारे सुखी थवा महेनत करेछे-कोइ राज्यथी सुख मानी लेछे. कोइ पैशाथी तो कोइ स्त्रीथी कोइ कुटुंबथी तो कोइ पुत्रादिकथी सुख माने छे पण ते पुद्गल वस्तुओमां सुखनी बुद्धि धारवी ते केवल अज्ञानछे, खरुं सुख आत्मामां रह्युंछे, ते सुख आत्म ध्यानथी प्राप्त थायछे. श्री तीर्थंकर महाराजाए मोक्षनुं सुख सत्य कथ्युंछे, अने मोक्ष तो आत्मा कर्मथी मूकाय त्यारे मळे छे, मोक्षनुं सुख कंइ वातोना गपाटा मारवाथी मळतुं नथी. पण ते माटे सांसारिक सुखनी इच्छा त्यागी मोक्ष सुख प्राप्त करवा मुख्यताए चारित्र मार्ग आदरवो जोइए.

प्रश्न-चारित्र विना शुं मुक्ति नथी मळती ?

उत्तर-श्री सर्वज्ञे ज्ञाननुं फळ विरति कथ्युंछे माटे विरतिरूपचारित्र सर्व कर्मनो क्षय करेछे, विरति पणुं बे प्रकारेछे-देशविरति अने सर्व विरति-देशविरतिपणुं व्रतधारी श्रावकने होयछे. अने सर्वविरतिपणुं मुनीश्वरने होयछे. श्री तीर्थंकर महाराजाओ पण दीक्षा अंगीकार करेछे, जेटला तीर्थंकर थया अने थशे ते सर्व सर्वविरतिरूप चारित्रने ग्रहण करेछे. ज्यारे तीर्थंकरने दीक्षा लेवानो समय थायछे त्यारे लोकांतिक देवता वीनति करवा प्रभु पासे आवेछे. हे प्रभो आप दीक्षा लेइ जना जीवोनो उद्धारगत् करो, भव्यो विचारो के जेने ते भवमां

केवल ज्ञान उत्पन्न थायछे तेवा तीर्थंकर महाराजाओ पण चारित्र अंगीकार करेछे अने गृहस्थावासनो त्याग करेछे. तो बीजा भव्यजीवोने चारित्र विना मुक्ति शी रीते मळे ?अने वळी शास्त्रमां पण कह्युंछे के–

गाथा.

दंसण नाण जुओ विहु। न कुणइ कम्मक्खयं चरण रहिओ।
नाणरुइ जुओ विज्जुव्व । किरिय रहिओ अरोगत्तं १

भावार्थ–दर्शन अने ज्ञानवडे सहितपण प्राणी चारित्र विना कर्मनो क्षय करतो नथी. जाणकार वैद्य क्रियाहीनपणाथी रोग रहित थाय नहीं तेनी पेठे–वळी कह्युं छे के.–

गाथा.

बहुभवं कयंपि कम्मं । खवइ चरित्तमप्पकालंमि ।
चिर संचि इंधण भरं । खणेण निद्दहइ जह जलणो१
एग दिवसंपि जीवो । पव्वज्ज मुवागओ अनन्नमणो।
जय वि न पावइ मुक्खं। अवस्स वेमाणिओ होइ २
अथ्थउ ता एग दिणं। अंतमुहुत्तंपि चारु चरण जुओ।
खवइ असंखिज्ज भव । ज्जियंपि जीवो बहु कम्मं.३
सुइरंपि चरण विणा। न दिंति नाणं च दंसणं सिवं।
वरचरित्त जुयाइं । खणेण ताइं सिव फलाइं । ४

भावार्थ–बहु भवनां कर्यां कर्मने चारित्र अल्प काळमां क्षय करेछे घणा काळनो संचित इंधण समूहने जेम अग्नि बाळी भस्मकरेछे तेनी पेठे अन्यत्र चित्त नथी. अने आत्मरमणतामां चित्तवाळुं

एवुं चारित्र एक दिवसनुं जो मोक्ष न आपे तो पण वैमानिक देव-
पणाने आपे.

भाव सहित भावचारित्र एक अंतर्मुहूर्त्तमां पण असंख्यभवा-
र्जित पापनो क्षय करे, ज्ञान अने दर्शन ए बे पण चारित्र विना
मोक्ष आपी शकतां नथी. माटे सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्ष-
मार्गः ज्ञान, दर्शन, अने चारित्र मोक्षनो मार्ग जाणवो. भावचारि-
त्रथी पण कोइने मुक्तिनी प्राप्ति थायछे. चारित्र विना रागद्वेषनो जय
थतो नथी. माटे कह्युंछे के—ज्ञान विना चारित्र नहि, चारित्र विण
नहिं मुक्तिनां सुख छे शाश्वतां । ते केम लहीए युक्तिरे—इत्यादि महा-
पुरुषोनां वचनथी चारित्र मार्ग भावकर्मनो क्षय करनार बलवत्तर
जाणवो. हव चारित्र पाळवा अशक्त होय ते श्रावकव्रत अंगीकार
करे तेथी पण मननो शनैः शनैः जय थायछे. अने मोक्षाभिमुख
थवाय छे.

हवे भव्यात्माओने समजवानुं के—श्रावकनां व्रत वा साधुनां
व्रत अंगीकार करीने पण रागद्वेषनो क्षय करवानोछे, मनने जीत्या
विना रागद्वेषनो क्षय करवो दुर्लभछे, अने आत्मज्ञान छे ते षड्द्र-
व्य तेना गुण पर्यायना ज्ञानविना तथा वैराग्यविना थतुं नथी. मन
पवन करतां पण घणुं चंचळछे. पवनने जेम मूंठीमां झाली राखवो
तेम मनने पण वश राखवुं दुर्लभछे, आत्मस्वरूप चिंतवनना कृ-
त्यमां मनने लगाडवुं ए सिवाय बीजो रस्तो मनोजयनोनथी. प्रथम
स्थिर दृष्टि राखीने जोवुं के मनमां कया कया (शा शा) विचारो
थायछे, तुरत जोतां हजार विचारो आवता जणाशे ते वखते एम
चिंतववुं के हे आत्मा ! ए विचार त्हारा नथी; तुं तेनाथी भिन्नछे,
त्हारे एणी तरफ लक्ष आपवुं नहिं, एम विचारी तुरत आत्मगुणोना
चिंतनमां वळवुं, अरूपी आत्मा केवी रीतेछे ? तेनो विचार करवो.

प्रथम अभ्यासमां मनविचार करतां बंध रहेतुं नथी. माटे तेने कंइक उद्यम तो जोइए. माटे आत्मस्वरूप चिंतवनमां मनने दोरवुं. एटले मन बहिर्नी हजारो वस्तुओमां भटकतुं पोतानी मेळे बंध थशे. मनने बहिरनी वस्तुओमां भटकवाथी जेवो आनंद मेळेछे तेवो पहेलां मळशे नहीं. जेम नानां छोकराने निशाळे जतां जेवुं कंटाळा भरेलुं लागेछे तेम तथा कोइ पंखीने प्रथम पांजरामां पुरवामां आवेछे त्यारे जेम कंटाळा भरेलुं तेने लागेछे तेम पेला छोकराने ज्यारे निशाळमां भणतां समजण पडेछे त्यारे कंटाळो थतो नथी. अने पंखीने जेम पांजरामां खावो पीवानो आनंद थायछे तथा तेना धणीनी साथे हळी मळी जायछे त्यारे स्थिर थायछे तेम मन पण आत्मध्यानमां प्रथम कंटाळी जायछे. पण ज्यारे तेने स्थिर आत्मध्यानमां करवामां आवेछे त्यारे कंइक स्थिर थायछे. अने अंते तेना उपर काबु मेळवी शकायछे. अने ते बाह्यना विषयोमां भटकतुं नथी अने शान्त जेवुं थइ जायछे. पश्चात् निर्विकल्पमय आत्मस्वरूपमां स्थिर उपयोगदृष्टिनी धारा वृद्धि पामेछे तेथी भव्यात्मा आत्माना असंख्यप्रदेशे लागेलां घणां कर्म निर्जरावेछे, अने निराधार स्वपर प्रकाशक बने माटे परमपदनी चाहना करनारे प्रथम मनोजय करवो आवश्यकछे. श्री आनंदघनजी महायोगी कहेछे के—

श्री कुंथुनाथजीना स्तवनमां—

मन साध्युं तेणें सघळुं साध्युं. एह वात नहिं खोटी;
इम कहे साध्युं ते नवि मानुं, ए कंइ वात छे मोटी हो, कुंथुजिन०

जेणे मन वश कर्युं तेणे मुक्ति सुख वश कर्युं एम कहेवुं अतिशयोक्ति भर्युं नथी माटे पहेलां तो दरेक अभ्यासीए मन काबुमां राखवुं, जेम घोडाओ गाडी गमे त्यां घसडी जायछे. माटे तेओने काबुमां राखवा पडेछे, तेम इंद्रियो रूपी घोडाओ आ शरीररूपी

गाडीने पोताने गमे त्यां नहिं खेंची जाय ते सारु अंदर बेठेला आत्माए तेओने काबुमां राखवानाछे, प्रथम अवस्थामां मनने काबुमां राखवानी जेम जेम वधारे कोशेश करवामां आवेछे तेम तेम नहीं जोइता विचारो धमधोकार थया करेछे, सारा, नठारा, उंच, धनना, स्त्रीना, वेपारना हजारो विचारोथवानुं कारण समजी काढी खप विना विचार थवा देवो नहीं, सारां सारां पुस्तको वांचवामां आवे त्यां सुधी मन ते काममां रोकाइ रहेछे, अने खराब विचारो नो नाश थायछे, खराब विचारो महारोगोना करतां पण भूंडाछे, मोटा रोगो तो एक भवमां पीडा करेछे, किंतु खराब विचारोथी माठी असरो थइ घणां चीकणां कर्म बंधाय छे, माटे अंतरना खराब विचारो माटे विशेष लक्ष आपवानी जरुरछे अने तेवा अशुभ विचारमय आर्त्तध्यान अने रौद्र ध्याननुं स्वरूप शास्त्रमां कथ्युंछे, आर्तध्यान अने रौद्र ध्याननुं मूल कारण अज्ञान, रागद्वेष अने मोहछे, अज्ञान ए महा शत्रुछे. अज्ञाननो नाश करवा सद्गुरु उपदेश वारंवार सांभळवो अने तेनो विचार करवो. षड्द्रव्योनुं स्वरुप धारवुं. जड चेतननो विभाग करवो तेथी स्व अने परनी समजण पडतां भेद ज्ञान प्रगट थशे. समकित प्रगट थवानुं मुख्य कारण भेद ज्ञानछे. जड अने चेतन बे वस्तु भिन्न भिन्न छे एटला मात्रथी भेद ज्ञान मानी खुशी थवुं नहिं पण.आगल वधी अंतरथी सदाकाळ बे वस्तुओ न्यारी समजवी. हवे रागद्वेष ए बे मोटां भुतछे, राग ए चूडेलछे अने द्वेष ए जन्दछे. ए बे ज्यां सुधी माणसमां छे त्यां सुधी विचारो मनुष्य सदाकाल दुःखीयो जाणवो, चूडेल जेम मनुष्यनुं रुधिर चूसी लेछे, तेम रागरूप चुडेलथी आत्मानी अनंति रुद्धि कर्मावरणथी आच्छादन थती जायछे, जन्द जेम माणसना शरीरमां पेसी अनेक तोफान करेछे, माणसनुं भान भूलावेछे. तेम

द्वेषरूपी जन्द आत्माने वळग्यो छतो अनेक प्रकारनां तोफान करे छे अने आत्मानुं भान भुलावेछे, चूडेल अने जन्दने कोइ महा उस्ताद मंत्र वादी काढेछे तेम आत्माने लागेला रागरूपी चूडेल अने द्वेषरूप जन्द ते उस्ताद गीतार्थ गुरुना उपदेशरूप मंत्रथी दूर थायछे त्यारे आत्मा अत्यंत सुखी थायछे आ ठेकाणे शिष्यना आत्माभां रहेला रागद्वेषने काढवामां गुरु बलवान् निमित्त कारण जाणवा, अने उपादन कारण तो शिष्यना आत्मानी शुद्ध परिणति जाणवी. आत्मानी शुद्ध परिणति थाय त्यारे आत्मा निर्मळ पदने पामेछे, निश्चय नयथी कहेवातुं जे पोतानुं शुद्ध स्वरूप, तन्मय आत्मा बनतां लोक अने अलोक तेना केवलज्ञानमां प्रकाशेछे. ज्ञानावरणीय कर्म नाश पामेछे त्यारे अनंतज्ञान उत्पन्न थायछे.

प्रश्न–ज्ञानावरणीय कर्म क्यां रहेतुं हशे ? अने तेनुं ग्रहण शाथी थतुं हशे ?

प्रत्युत्तर–ज्ञाननुं जे आच्छादन करे ते ज्ञानावरणीय कर्म–ज्ञानना पंच प्रकारछे पंच प्रकारनुं ज्ञान आच्छादन करे तेथी ज्ञानावरणीय कर्म पण पंच प्रकारनुं जाणवुं. पुद्गलना स्कंधोने आत्मा अशुद्ध परिणतियोगे ज्ञाननुं आच्छादन करे तेवा रूपे पोताना असंख्य प्रदेशोनी साथे क्षीर नीरनी पेठे परिणमावे ए उपरथी स्पष्ट समजाशे के क्षीर नीरना मळवाना संबंधनी पेठे ज्ञानावरणीय कर्म आत्माना प्रदेशोनी साथे रहुंछे अने ते ज्ञानावरणीय कर्मनुं ग्रहण अज्ञानयोगे अशुद्धपरिणतिथी ग्रहण थायछे.

जेम सूर्यनां किरणोनो प्रकाश वादळांना आच्छादननी अवरायछे, तेम आत्मानुं सूर्य सदृश जे ज्ञान ते ज्ञानावरणीय कर्मथी अवरायछे. तेथी आत्मज्ञान स्वपर प्रकाशकरूप कार्य करी शकतुं नथी.

हवे ज्यारे ज्ञानावरणीयकर्मनो नाश थायछे त्यारे अनंतज्ञान उत्पन्न थायछे, दर्शनावरणीय कर्मनो सर्वथा नाश थवाथी अनंत दर्शन उत्पन्न थायछे. तथा शाता अने अशाता वेदनीयनो सर्वथा क्षय थवाथी अनंत अव्याबाध सुख उत्पन्न थायछे. मोहनीय कर्मनो सर्वथा क्षय थवाथी क्षायिक सम्यक्त्वनी तथा चारित्रनी प्राप्ति थायछे, आयुष्य कर्मनो क्षय थवाथी आत्मा सादि अनंत स्थिति पामेछे. सारांश के—आयुष्य कर्मथी मुक्त थयेलो जीव सिद्धशिलानी उपर एक योजनना २४ चोवीस भाग करीए तेमांना त्रेवीस भाग मूकी चोवीसमा भागे एक समयमां सिद्धिस्थानमां जीव विराजेछे त्यां गयानी आदिछे पण त्यांथी पडवानुं नथी माटे अंत नथी. माटे सादि अनंतमा भांगे सिद्धमां मुक्त थएल मुक्तात्मा रहेछे. नामकर्मना नाशथी आत्मा पोतानुं अरूपीपद आविर्भाव करेछे. गोत्रकर्मना नाशथी आत्मा अगुरु लघुगुण प्राप्त करेछे. अंतराय कर्मना नाशथी आत्मा सहज जे अनंतवीर्य तेने प्रगट करेछे एम ए आठ कर्मना नाशथी आत्मा अष्टगुणने प्रगट करेछे. अने परमात्मारूपे थायछे, पंचमीगति मोक्ष तेनी प्राप्ति कर्मना क्षयथीछे, एम जीवने चारे गतियोमां जवानां कारणो बताव्यां तेमज पंचमीगतिमां जवानो मार्ग याने उपाय बताव्यो. आत्मा जेवुं वर्तन चलावशे तेवी गतिमां जशे. ए स्पष्ट वात छे. क्यांथी आव्योने क्यां जाइश ? ए संबंधी विचार लख्यो, हवे पंचम विषय संबंधी विचार लखेछे.

पंचमविषय—मनुष्य जन्मनी साफल्यता शाथी—पंचमगति साध्य करवाथी मनुष्य जन्मनी साफल्यता थायछे. पुण्यपापक्षयान्मुक्तिः पुण्य अने पापना क्षयथी मुक्ति पद मळेछे शुभ कर्मने पुण्य कथेछे अने अशुभ कर्मने पाप कथेछे. शुभ वा अशुभ कर्म पौद्गलिक छे. बे प्रकारना कर्मने पण आश्रव कहेछे. शुपुण्य-

आश्रव कहेवाय छे अने पापने अशुभाश्रव कहेवायछे. आत्माने अनादि कालथी आश्रव एटले कर्म लाग्युंछे, क्षीरनीरवत् आत्मा अने कर्मनो संबंध थयोछे. आत्माना असंख्याता प्रदेशो छे तेमां प्रति प्रदेशे अनंति कर्मनी वर्गणाओ लागीछे. एकेक वर्गणा मध्ये अनंता पुद्गलपरमाणुछे एम अनंता परमाणु जीव साथे लाग्याछे. वर्णगंधरस अने स्पर्शमय परमाणुओनी वर्गणाओ जाणवी, जीवद्रव्यने लागेला परमाणुथकी अनंत गुणा परमाणुओ छूटाछे–कर्म सहित आत्मद्रव्य पण सत्ताथी सिद्ध परमात्मा समानछे. जीव द्रव्य नित्य पणछे अने अनित्य पणछे कह्युंछे के–

गाथा.

निच्चानिच्च सरूवा, भावा सव्वेवि ताव तियलोए ॥
उप्पाय विगम ठिइ धम्म, संगया ते पुणो एवं. ॥१॥
पुव्वभवपज्जएणं, विगमोइह भवगएण उप्पत्ती ॥
जीव दव्वेण ठिइ, निच्चा निच्चत्तमेवंतु ॥ २ ॥

नित्य अने अनित्य स्वरुपी सर्वे पदार्थो त्रिलोकमां वर्तता उत्पादव्यय अने ध्रौव्यता धर्ममय जाणवा, एक पदार्थमां उत्पादव्यय ध्रौव्यता केवी रीते थायछे ते घटावेछे–

यथा जीवद्रव्यमां पूर्व भवना पर्यायनो विनाश अने आभवना पर्यायथी उत्पाद अने जीव द्रव्यत्वपणे ध्रौव्यता एम त्रण धर्ममय जीव पदार्थ जाणवो, जीव द्रव्यमां गतिपर्यायथी उत्पाद व्यय ध्रौव्यता दर्शावी, आत्माना संसारावस्थामां अशुद्धपर्याय जाणवा वळी स्थूलदृष्टांते उत्पाद व्यय ध्रौव्यता वर्णवेछे–

गाथा.

कुंडल विगमो मउड प्पाओ कणगं अवठियं जहा ॥
तहसव्वेवि पयथ्था, जीवोनेओ पुणो एवं ॥ १ ॥

कुंडलरूप पर्यायपणे सुवर्णनो नाश अने तेनो ज्यारे मुकुट बनाव्यो त्यारे मुकुटरूप पर्यायपणे सोनानो उत्पाद, अने सुवर्णपणे ध्रौव्यता कुंडलमां तेम मुकुटमां पण बनी रहीछे, सोनुं कायम बनी रहुंछे सुवर्णमां सुवर्णना पर्यायोनो एटले आकारोनो उत्पाद व्यय थया करेछे. तेम अत्र जीवद्रव्यमां पण अनंत गुणोनो उत्पात व्यय समये समये थया करेछे. एम धर्मास्तिकायद्रव्य, अधर्मास्ति काय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय अने उपचारे कालमां पण उत्पाद व्यय थया करेछे, अने ध्रौव्यतापणुं सदा अवस्थित छे, षड्द्रव्य द्रव्यार्थिकनयापेक्षया नित्य जाणवां अने पर्यायार्थिकनया· पेक्षया अनित्य जाणवां, जीवे धारण करेला मोटा शरीरमां वा नाना शरीरमां आत्माना असंख्यात प्रदेशो सरखा जाणवा–ते वात दृष्टांतथी दृढावेछे–

गाथा.

संकोय विकोएहिं, पईवकंतिव्व मल्लगगिहेसु ॥
हथ्थिस्सव कुंथुस्सव, पएससंखा समाचेव ॥ १ ॥

मृत्तिकाना नाना वा मोटां कुंडामां दीपकनी कांति संकोच अने विकाशे करी युक्त जेमछे. एटले नाना कुंडामां दीपकनी कांति संकोचपणे रहेछे, अने तेज पाछी दीपकनी कांति मोटा कुंडामां विकाशपणे रहेछे, तेम जीव पण हाथीनुं शरीर पामतां तेमां आत्माना प्रदेशोना विकाशथी सर्व शरीरने व्यापी रहेछे. तेम कुंथुवानुं शरीर जीव ज्यारे ग्रहेछे त्यारे तेटला शरीरमां जीवना असंख्यातप्रदेशो

व्यापीने रहेछे. कर्म संयुक्त संसारी जीव शरीरमां वस्योछे तेनी अपेक्षाए नानामां नानुं अंगुलना असंख्यातमा भागनुं शरीर धारण करेछे माटे अंगुल असंख्यातमा भाग जेवडो आत्मा कहेवायछे. अने केवली समुद्घात करतां जीव लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेशो विस्तारेछे माटे तदपेक्षाथी लोकप्रमाण आत्मा कहेवायछे. मोक्ष दशामां, आत्मा अक्रिय थवाथी एकरुपे आत्मानी स्थीति रहेछे. शुद्धबुद्ध सिद्ध परमात्मामां पण उत्पाद व्यय ध्रौव्यता वनी रहेछे.

प्रश्न—हे सद्गुरो! संसारावस्थामां शरीर प्रमाणे आत्माना प्रदेशोनो संकोच विकोच थायछे त्यारे आत्माना प्रदेशो एक वीजा प्रदेशथी जुदा पडता हशे के केम—;

प्रत्युत्तर—तेवी स्थितिमां जो के आत्माना प्रदेशोनो संकोच विकाश थायछे तोपण प्रत्येक प्रदेशो एक वीजा प्रदेशोनी साथे नित्य संवंधे संवंधितछे. तेथी आत्माना प्रदेशो संकोच विकाशताने पामेछे तोपण एक वीजाथी जुदा पडता नथी. अग्निना तणखाओनी पेठे सर्वथा भिन्न आत्माना प्रदेशो जो पडे तो असंख्यात प्रदेश मळीने एक आत्मा कहेवाय नहीं, अने आत्मापणुं नष्ट थइ जाय. माटे अरूपी आत्माना प्रदेशो संकोचविकाशने संसारी अवस्थामां पामेछे तोपण तादात्म्य संवंधे संवंधीत होवाथी कोइ कालमां जूदा पड्या नथी अने पडशे पण नहीं. एवो प्रदेशोमां स्वभाव रह्योछे ते केवलीना ज्ञानगम्यछे, अनुभवीओ ए वातने सम्यग् अनुभवेछे.

प्रश्न—आत्माना असंख्यात प्रदेशने ठेकाणे एक प्रदेश मानीए तो कंइ हरकत आवे;

उत्तर—हा हरकत आवेछे, श्री सर्वज्ञ महाराजे आत्माना असंख्यात प्रदेश दीठा छे तेथी एक प्रदेश केम मानी शकाय, हे शंका-

वादी तने केवलज्ञान थयुंछे के एम कही शके. ना. त्यारे असंख्यात प्रदेश आत्माना छे एम श्रद्धा कर. मति कल्पनाथी कंइ काम थतुं नथी. वळी हे शंकावादी सूक्ष्मदृष्टिथी समज के ज्यां आत्माना प्रदेशोछे ते आत्माना प्रदेशोने व्यापीने ज्ञान अनंतघणुं रह्युंछे, प्रति प्रदेशे अनंतु ज्ञान रह्युंछे. मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन.पर्यवज्ञान अने केवलज्ञान ए पंचमांनुं कोइपण ज्ञान आत्माना प्रदेशोने त्यागीने रहेतुं नथी. हवे आत्मानो असंख्यात प्रदेश न मानीए नहींतो एक मोटो विरोध आवेछे.–

शिष्य--हे सद्गुरो आत्माना असंख्यात प्रदेशो मानीए नहीं तो मोटो शो विरोध आवेछे–ते कृपा करीने कहो.

सद्गुरु–प्रथमतो केवली केवलीसमुद्घात करेछे. लोकाकाश प्रमाण आत्माना प्रदेशो कर्मनुं परिशाटन करवा विस्तारेछे. अने कर्म भोगवी लेछे ते वातनो विरोध आवेछे एक प्रदेश लोकाकाश प्रमाण विस्तारातो नथी तेथी शी रीते कर्मनुं परिशाटन करे नागो पलाळे शुं अने नीचोवे शुं एवी वात थइ, वळी बीजो विरोध ए आवेछे के.–ज्यारे चतुर्दशपूर्वी शंका पुछवा माटे आहारकशरीर, लब्धिथी बनावी सीमंधर स्वामी पासे मोकलेछे त्यां जइ ते शरीर शंका पुच्छी तीर्थंकर सीमंधरस्वामी पासेथी उत्तर लेइ जलदी आवेछे. हवे कहो के–चउदपूर्वीए बनावीने मोकलेलुं जे आहारक शरीर तेमां आत्माना प्रदेशो खरा के नहि ?

शिष्य--हा सद्गुरो ते आहारक शरीरमां आत्माना प्रदेशो होवा जोइए– जो ते आहारक शरीरमां आत्माना प्रदेशो न होयतो ज्ञान विना भगवान्ने प्रश्न शी रीते पूछे. अने भगवान्

वाणीथी उत्तर आपे ते आहारक शरीरमां आत्माना प्रदेशोना होयतो समजी शकाय ते विना उत्तरनो अर्थ शी रीते समजे अने उत्तर अमुक प्रकारनो छे ते कोण धारण करी शके–माटे अवश्य आहारक शरीरमां आत्माना प्रदेशो मानवाज जोइए. श्री तीर्थंकर भगवाने जे वात कही छे. ते सत्यज छे–अनंतज्ञानी सर्व पदार्थनुं बराबर स्वरूप जाणेछे.

सुगुरु–ज्यारे चउदपूर्वीए आहारक शरीर अत्रथी बनावी महाविदेह क्षेत्रमां मोकल्युं त्यारे–बे शरीर थयां एकतो चउदपूर्वीनुं सात धातुथी बनेलुं औदारिक शरीर अने बीजुं महाविदेह क्षेत्रमां मोकलेलुं आहारक शरीर.

हवे बन्ने शरीरमां आत्माना प्रदेशो खराके नहीं–

शिष्य–हा गुरुजी बन्ने शरीरमां आत्माना प्रदेशो छे. औदारिक शरीरथी तो चउद पूर्वी व्याख्यान वांचेछे. ते समजवुं त्यां पण ज्ञान छे. नहीं तो व्याख्यान शी रीते वंचाय. वळी समजवुं के–यत्र यत्रज्ञानं तत्र तत्र आत्म प्रदेशाः ज्यां ज्यां ज्ञाननो सद्भाव छे त्यां त्यां आत्माना प्रदेशो जाणवा. बन्ने शरीरमां जो आत्मप्रदेशो होय नही तो बन्ने शरीरमां ज्ञान होय नहीं माटे बन्ने शरीरमां ज्ञानथी आत्माना प्रदेशो छे एम नक्की यथार्थ सिद्ध स्पष्ट मालुम पडयुं.–

सुगुरु–हवे ते बन्ने शरीरमां आत्मप्रदेशो छे एम सिद्ध थयुं. हवे समजो के एक प्रदेशी आत्मा होय तो बन्ने शरीरमां ज्ञाननो सद्भाव शी रीते होय, एक प्रदेश जो आत्मानो होत तो एवो बनाव बने नहीं. अने लब्धिथी बीजां शरीर धारण करवामां वांधो आवे. वैक्रिय शरीर पण धारण करी शकाय नहीं. आत्माना असंख्य प्रदेशो मान्या सिवाय बन्ने शरीरमां जाणवा-

पणुं घटे नहीं. एम पण सिद्ध थयुं. चउदपूर्वीना आहारक श-
रीरना दृष्टांतथी बन्ने शरीरमां आत्मप्रदेशो असंख्याता छे एम
सिद्ध थयुं अने एक प्रदेशआत्मानो मानवामां बाध आवेछे ते
पण सिद्ध कर्युं. युक्त अने युंजान योगियो पण अनेक
शरीर धारण करे छे तेमां पण आत्माना असंख्य
प्रदेशो जाणवा. तीर्थंकर महाराजे लोकाकाश प्रमाण आत्मा-
ना प्रदेशो कह्याछे ते वात पण सिद्ध ठरी, अने ते सिद्धछे. हवे
आत्माना प्रदेशो संबंधी वर्णन करेछे. आत्माना एकेक प्रदेशे
अनंता पर्याय रह्याछे, ज्ञान पण प्रति प्रदेशे अनंतु सदाकाल
शाश्वत समये समये वर्तेछे.

प्रश्न—आत्माना दरेक प्रदेशे जुदु जुदु अनंतज्ञान छे एम मानीए
तो एक प्रदेश जुदु जाणवारुप कार्य करे. त्यारे आत्मानो
कंइक जुदु जाणवारुप कार्य करे. त्रीजो प्रदेश वळी कंइ जुदु
जाणे. त्यारे एक जाणनार आत्मा रह्यो नहीं.

उत्तर–जो के आत्माना प्रत्येक प्रदेशे अनंतज्ञान सत्तामात्रे रह्युंछे
तो पण असंख्यात प्रदेशो मळी एक उपयोग वर्तेछे, पण
प्रत्येक प्रदेशनो जुदो जुदो उपयोग वर्ततो नथी ते कंइ बाध
आवतो नथी. असंख्य प्रदेशो मळी एक आत्मा कहेवायछे,
माटे आत्मापणुं नष्ट थतुं नथी. असंख्यप्रदेशो मळी एक
समये निर्मल सिद्धात्माने एक उपयोग होयछे तेथी एकज
आत्मा जाणवो.

कोइक आचार्य युगपत् उपयोग मानेछे. तथा चतत्पाठः

गाथा.

केइ भणंति जुगवं, जाणइ पासइ केवलीनिअमा ॥
अन्ने एगंतरिअं, इच्छांति सुउव्वएसेणं ॥ १ ॥

केचित् सिद्धसेनाचार्य वगेरे कहेछे के—युगपत् एककालावच्छेदन केवल ज्ञानी जाणेछे देखेछे—अन्ये जिन भद्रक्षमाश्रमण वगेरे एक समये केवल ज्ञानी जाणेछे अने बीजा समये देखेछे. एटले एक समये ज्ञानोपयोग अने बीजा समये दर्शनोपयोग एक क्रमवर्तिपणे इच्छेछे—आगमना अनुसारे तेम इच्छेछे. आ बे पक्षनी नंदिसूत्रमां घणी चर्चाछे. त्यांथी विस्तार विशेष जोइ लेवो.

जिज्ञासु—केवल ज्ञान विना मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्यव ज्ञानीने एक समये ज्ञानोपयोग अने बीजा समये दर्शनोपयोगे होय के नहीं.

सुगुरु—केवलज्ञानी विना बीजा ज्ञानवाळाओने एक समये ज्ञानोपयोग अने बीजा समये दर्शनोपयोग व्यक्त होतो नथी.

जिज्ञासु--आत्मज्ञानना छतिपर्याय अने सामर्थ्य पर्याय केवी रीते समजवा ?

सुगुरु—आत्माना असंख्यात प्रदेश पैकी प्रतिप्रदेशे छतापणे अनंत अनंत ज्ञान रह्युंछे ते ज्ञाननो त्रिकालमां कदीपण नाश थनार नथी. ते ज्ञानना छतिपर्याय जाणवा, अने ज्ञानमां ज्ञेय पदार्थनो भासनपणो तेथी ज्ञानना सामर्थ्य पर्याय जाणवा. ज्ञेयपदार्थो अनंताछे. अने ते समये समये ज्ञानमां भासेछे, माटे ज्ञेय जे अनंत पदार्थो तेनी भासता कार्य करणशक्तिवाळा जे ज्ञानना पर्यायो ते ज्ञानना सामर्थ्य पर्याय जाणवा. छति पर्यायथी सामर्थ्य पर्याय अनंत गुण विशेष जाणवा. सामर्थ्य पर्याय ते कार्यरूपछे. तथा च महाभाष्ये—यावंतो ज्ञेयाः तावंत एवज्ञानपर्यायाः ते च आस्तिरूपाः प्रतिवस्तुनि अनंताः ततोप्यनंतगुणाः सामर्थ्यपर्यायाः जेम एक दोरडो

शत एटले सो तांतणानो छेते अविभागपणे छता पर्यायछे अने ते दोरडाथी अनेक कार्य थाय, अनेक वस्तुओ बंधाय अने ते अनेकने आधार थाय. तेने सामर्थ्य पर्याय कहीए, छतिरूप जे पर्याय तेतो वस्तुरूपछे. अने सामर्थ्य पर्याय तो प्रवर्तन रूप एटले कार्यरूपछे. तेम अत्र ज्ञानना छति पर्यायमां अने सामर्थ्य पर्यायमां पण समजवुं-

जिज्ञासु—श्री सर्वज्ञे षड्द्रव्यनी वहार कोइ वस्तु नथी एम कथ्युं छे अने नैयायिक शोळ पदार्थ कहेछे. तेनुं केम ?

सुगुरु—षड्द्रव्यरूप छ पदार्थोनी अंदर शोळ पदार्थनो समावेश थायछे. तेथी छ पदार्थ सत्य जाणवा. प्रथम नैयायिक प्रमाणने भिन्न पदार्थ कहेछे ते युक्त नथी कारण के प्रमाण जेटलांछे तेटलां ज्ञानछे अने ज्ञानतो आत्मानो गुणछे तेने भिन्न पदार्थ कहेवाय नहि. प्रमेयपणुं पण षड्द्रव्योनी वहार नथी. वीजा प्रयोजन सिद्धांतादिक ते सर्व जीवद्रव्यनी प्रवृत्ति जाणवी माटे भिन्न पदार्थ कहेवाय नहीं,

जिज्ञासु--वैशेषिक द्रव्यगुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय अने अभाव ए सात पदार्थ कहेछे. तेनो षड्द्रव्यनी अंदर समावेश थायछे के षड्द्रव्यथी भिन्न पदार्थछे तेनी यथार्थ स्पष्ट समजण आपो.

सुगुरु—हे जिज्ञासु स्थिर दृष्टि राखी सांभळ. गुणने पदार्थ वीजो कहेवाय नहीं. गुण तेतो द्रव्यमां रह्याछे. तेथी गुणने भिन्न पदार्थ कहेवाय नहीं, तथा कर्म ते द्रव्यनुं कार्यछे तथा सामान्य विशेष ए वे तो द्रव्य मध्ये परिणमनछे. वळी समवायने पण द्रव्यमां समायछे, अने अभावतो अछताने कहेवाय ते अछताने पदार्थ मानवो घटतो नथी अभावछे

ते वस्तुनो व्यतिरेक धर्मछे माटे वैशेषिक मतपण षड्द्रव्यमां समाइ जायछे. वळी वैशेषिक द्रव्यना पृथिवी अप, तेज वायु आकाश. काल, दिशा, आत्मा, मन ए नव भेद कहेछे. ते संबंधी समजवुं के–पृथ्वी, अप, अग्नि वायु एतो एकेंद्रिय जीव जाणवा, पृथ्वीरूप शरीर धारण करी जे जीवो रह्याछे ते पृथ्वीकायना जीवो समजवा, अने शरीरतो पुद्गल द्रव्यमां आव्युं. एम ए चार पण आत्मद्रव्य ठर्यां. पण कर्मयोगे शरीर भेदे नाम जुदां पडयांछे. दिशीतो आकाशमां मळी जायछे अने आकाश ए आकाशास्तिकाय द्रव्य जाणवुं. मनतं आत्मानुं संसारीपणामां उपयोग प्रवर्तवानुं द्वारछे तेथी ते भिन्न द्रव्य कहेवाय नहीं. वैशेषिक मतवादी सामान्य विशेष ए बेने भिन्न पदार्थ मानेछे ते पण युक्त नथी–

गाथा.

तथाहि सकलशास्त्रे पक्षद्वयं,
जातिपक्षो व्यक्तिपक्षश्च तत्रजातिः
सामान्यं व्यक्तिस्तुविशेषः
इतिवचनात सामान्येतुसर्वेषामेव
नित्यत्वं सत्ताप्रतिपादनपरत्वात्
यथागोत्वाश्वत्वादिकं नित्यं नतु गौर
श्वोवानित्यः व्यक्तिपक्षेत्वनित्यमेव
यस्तुजातिपक्षः सत्वस्माकं
जैनानां द्रव्यार्थिकनयः व्यक्तिपक्षः
स्त्वस्माकं पर्यायार्थिकनयः

भावार्थ—सकलशास्त्रमां पक्ष बेछे. १ जातिपक्ष २ बीजो व्याक्तिपक्ष जाति एटले सामान्य अने व्यक्ति एटले विशेष. एवा वचनथी जाणवुं. सामान्ये एटले जातिपक्षमां सर्व पदार्थोनुं नित्यपणुं जाणवुं कारणके जातिपक्ष सत्तानुं प्रतिपादन करवामां तत्परछे ते हेतुथी जेमके गोत्व, अश्वत्व, गायपणुं अने अश्वपणुं ए नित्यछे. पण व्यक्तिरूप जे गौ घोडो ते अनित्यछे. जे आ जातिपक्षछे ते जैनोनो द्रव्यार्थिक नयछे. अने जे व्यक्तिपक्षछे. तेज जैनोनो पर्यायार्थिक नयछे. जातिपक्ष द्रव्यनुं ग्रहण करेछे अने व्यक्तिपक्ष पर्यायोनुं ग्रहण करेछे. जातिपक्ष ए सामान्य अने व्यक्तिपक्ष ए विशेष छे माटे ते बेनो नयमां समावेश थवाथी सामान्य विशेष षड्द्रव्यथी भिन्न पदार्थ नथी.

जिज्ञासु—पृथिवी, अप, तेज, वायु, ए चार विना बाकीनां पंच नित्य कह्यांछे. तो जैनोना स्याद्वादपक्ष प्रमाणे नित्य अनित्य ए बे पक्ष प्रत्येक द्रव्यमां घट्या नहीं. ने तमो घटावोछो ते केवी रीते ते समजावो

सुगुरू—हे भव्य सांभळ, प्रत्येक वस्तुमां ज्ञानदृष्टिथी जोतां नित्य अने अनित्यपणुं रह्युंछे. पृथिवी, अप, तेज अने वायु कार्यरूप न्यायशास्त्रमां अनित्य कह्यांछे अने परमाणुरूप नित्य कह्यांछे. आकाश स्वस्वरूपे त्रणकालमां एकरूपछे माटे तदपेक्षया नित्यछे. अने=घटाकाशोनष्टः पटाकाशोनष्टः) घटाकाश नष्ट थयुं. पटाकाश नष्ट थयुं, एवी रीते घटपटनी उपाधिथी अनित्य पक्षपणुं आकाशमां आव्युं. दिशाकालमां पण तेवी रीते नित्यानित्यपणुं घटयुं=आत्मापितस्यमते सचदेहेंद्रियव्यतिरिक्तः विभुर्नित्यश्चेति वचनात् तत्र कौंडिन्य न्यायेन पारिशिष्यानुमानेन देहाश्रितोनित्यएवेति=आत्मा

स्तिकाय. ए बे द्रव्य पण मानवां जोइए. तथा केटलाक संसार चक्रनो कर्त्ता एक परमेश्वर मानेछे. ते पण मृषा समजवुं. निर्मल राग द्वेषातीत प्रभु, विभु, परमात्मा, परना सुख दुःखनो कर्त्ता थाय नहीं. वळी जगत्कर्त्ता इश्वर नथी. एनो विस्तार अग्रे करवामां आवशे. हाल तो आत्मानुं स्वरूप वर्णवनां प्रसंगे अन्य चर्चा चाली. हवे आत्म स्वरूप विषयनुं वर्णन करीए. आपणे नक्की समजवुं के आत्मद्रव्य बीजां पंचद्रव्यथी न्यारुछे. अनादि कालथी अशुद्ध परिणतियोगे पुद्गलद्रव्यने परमाणुओ तेना स्कंधो कर्मरूप परिणमी आत्मानी साथे क्षीरनीर पेठे परिणम्युंछे. मन, वाणी, लेश्या, शरीर, संस्थान ए सर्व पुद्गल समजवुं. अष्टकर्मनी वर्गणाओ पण पुद्गलछे.

अष्ट वर्गणानुं स्वरूप लखेछे.

औदारिकवर्गणा, वैक्रियवर्गणा, आहारकवर्गणा तेजसवर्गणा, भाषावर्गणा, श्वासोश्वासवर्गणा, मनोवर्गणा, कार्मणवर्गणा, बे परमाणु भेगा थाय त्यारे द्व्यणुक स्कंध कहेवायछे. त्रण परमाणु भेगा थाय त्यारे त्र्यणुक स्कंध थाय. एम संख्याना परमाणु मिले त्यारे संख्याताणुकस्कंध थाय. तेमज असंख्याता परमाणुआ भेगा थाय त्यारे असंख्याताणुकस्कंध थायछे, तथा तेमज अनंतपरमाणुओनो स्कंध थायते अनंताणुकस्कंध थाय, एटला सर्व स्कंध ते जीवने ग्रहण करवा लायक नथी, पण ज्यारे अभव्यथी अनंतगुण अधिक परमाणुओ भेगा थइ जे स्कंध थाय. त्यारे तेनी औदारिक शरीरने लेवा योग्य वर्गणा थाय.

एमज औदारिकथी अनंतगुणा अधिकवर्गणामां दल भेगा थाय. तवारे वैक्रियवर्गणा थाय. वळी वैक्रियथी अनंतगुणा परमाणु मळे त्यारे आहारकवर्गणा थाय एम, सर्व वर्गणाना एकेकवी

अनंतगुणा अधिक परमाणु मळे त्यारे उपरनी वर्गणाओ अनुक्रमे थाय एटले पहेलीथी बीजी वर्गणा. बीजीथी त्रीजी, त्रीजीथी चोथी, अने चोथीथी पांचमी, अने पांचमीथी छठी, छठीथी सातमी, मनोवर्गणा थी आठमी कार्मण वर्गणामां अनंतगुणा परमाणुआ अधिक जाणवा आठ वर्गणाओमां औदारिक, वैक्रिय, आहारक, अने तैजस, ए चार वर्गणाओ बादरछे. ए चारबादर वर्गणाओमां पांच वर्ण बे गंध, पांच रस, अने आठ स्पर्श, ए वीश गुण जाणवा. तथा भाषावर्गणा. श्वासोश्वास वर्गणा तेम मनोवर्गणा ए चार वर्गणा सूक्ष्मछे, ए चार सूक्ष्मवर्गणामां पांच वर्ण, बे गंध, पांच रस, अने चार स्पर्श, ए सोल गुण रह्याछे, अने एक परमाणुमां एक वर्ण एक गंध, एक रस, अने बे स्पर्श, ए पांच गुणछे. ए अष्ट वर्गणा संसारी आत्माने लागीछे. अने तेमां पण समये समये उत्पाद व्ययध्रुवता परिणमी रहीछे. ते वर्गणामां पण अगुरू लघुथी षड्गुण हानिवृद्धि समये समये परिणमी रहीछे. ए आठ वर्गणामां आत्मानुं कंइनथी. पुद्गलद्रव्य अने आत्मद्रव्य बे भेगां थइ परिणमेछे—पुद्गल परमाणुआ अनंतछे.

हवे प्रसंगे पुद्गलनुं स्वरूप लखेछे—

पुद्गलस्वरूप,

वर्णादिक गुणो वृद्धि पामे. गळी जाय. खरी जाय एवो जेमां स्वभावछे. तेने पुद्गलास्तिकाय द्रव्य जाणवुं. मूलद्रव्य पुद्गलास्तिकाय परमाणुरूप अवबोधवुं—द्व्यणुक आदि जेटला स्कंधछे तेनुं मूल कारण जाणवुं. एटले घट, पट, दंड, चक्र, वस्त्र, पात्र, कपाट, इंट, पत्थर. आदि पुद्गलनी आकृतियोनुं मूल उपादान कारण परमाणुओ छे. तेवा रूपे परमाणुआ परिणम्याछे, बीजा पण तेमां निमित्त आदि कारणो मळेछे. छ प्रकारनां पुद्गल स्कंधो छे १ बादरबादर २ बादर ३ बादरसूक्ष्म ४ सूक्ष्मबादर ५ सूक्ष्म ६ सूक्ष्मसूक्ष्म.

१ पुद्गलपिंडना ने खंड कर्यां पोते फरी मळे नहीं ते काष्ट पाषाणादिक बादर बादर भेद प्रथम जाणवो.

२ पुद्गल स्कंध खंडखंड कर्यां पोतानी मेळे परस्पर एकमेक थइ जाय एवां दुग्ध, घी, तेल वगेरेने बादर कहेछे.

३ जे पुद्गल स्कंधो देखवामां स्थूल होय–खंडखंड करवामां आवे नहीं हस्तादिकथी ग्रहण थाय नहि, एवा धूप, चंद्र,चांदनी, आदिपुदूगलबादरसूक्ष्म कथायछे.छायातम पुद्गलो पणजाणवां.

४ जे स्कंधो सूक्ष्मछे किंतु स्थूलोपलंभ होय. स्पर्श, रस, गंध वर्ण, शब्द विगेरे सूक्ष्म बादर जाणवा.

५ जे पुद्गल स्कंधो अति सूक्ष्मछे इन्द्रियोना ग्रहवामां आवता नथी एवा कर्मवर्गणादिक सूक्ष्मपुद्गल कहेवायछे.

६ कर्मवर्गणाओथी पण अतिसूक्ष्म द्वयणुकस्कंध आदि सूक्ष्मसूक्ष्म कहेवायछे.

पूर्वोक्त स्कंधोनुं मूलकारण परमाणुछे, परमाणु शब्दरहीतछे जोके स्कंधोना मिलापथी शब्दरूप पर्यायने धारण करेछे तो पण व्यक्तरूप शब्दपर्यायथी रहीतछे. वळी परमाणु अविभागी एटले भाग रहीतछे. पृथिवी, अप अग्नि, वायु ए चारनुं कारण परमाणुआछे अर्थात् पृथिवी अप अग्नि वायु ए चार भूतो पण परमाणुओथी पेदा थायछे. वळी परमाणु परिणमन स्वभाववाळोछे. परमाणु अशब्द छे तोपण शब्दनुं कारणछे. परमाणु पोते द्रव्यछे अने तेमां वर्ण, गंध रस अने स्पर्श ए चार गुणोछे अने ते मूर्त कहेवायछे. पृथिवी जाति परमाणुओमां चारे गुणोनी मुख्यताछे. जलमां गंध गुणनी गौणता, अने वाकीना त्रण गुणोनी मुख्यताछे. अग्निमां गंध अने रस गुणनी गौणताछे, अने स्पर्श वर्णनी मुख्यताछे. वायुमां त्रण गुणोनी गौणताछे, अने स्पर्श गुणनी मुख्यताछे.

इन्द्रियो वडे उपभोग्य पदार्थो, तथा पांच प्रकारनी द्रव्येन्द्रिय तथा औदारिक वैक्रिय आहारक तेजस अने कार्मण ए पंच प्रकारनां शरीर तथा पैद्गलीक द्रव्य मन तथा द्रव्यकर्म नोकर्म विगेरे मूर्त पदार्थ पुद्गल द्रव्य जाणवुं. ए पुद्गल द्रव्य द्रव्यार्थिक नयथी शाश्वतछे, अने पर्यायर्थिक नयथी अशाश्वतछे. वस्तुतः पुद्गल द्रव्यथी आत्मा न्यारोछे. परपरिणति परिणामी थतां पुद्गल ग्राहक पुद्गल भोगी थए छते प्रति समये नवा कर्म बांधवे संसारी थयाछे, ज्यारे आत्मा स्वस्वरूप ग्राहक तथा स्वस्वरूप भोगी थाय त्यारे सर्वकर्म रहीत थइ परम ज्ञानमयी-परम दर्शनमयी-परमानंद मयी सिद्ध,बुद्ध अनाहारी,अशरीरी, अयोगी, अलेशी, अनाकारी, निःप्रयासी, अविनाशी,अज,अविचल, विमल स्वरूप,सुखनो भोगी सिद्ध परमात्मा थाय, माटे सर्व जगत् जीवनी अेंठतुल्य पुद्गलना भोगनो त्याग करी स्वआत्मा स्वरूप भोगी पणाना रसीया थइ स्वस्वरूप अनुयायी चेतना योगे निजगुण स्थिरतारूप चारित्रनी प्राप्ती करवी. एज मनुष्य जन्म पाम्यानी साफल्यता जाणवी.

षष्ठविषय--धर्म क्यां रहेछे अने तेना हेतुओ कोण;

विचार--संसाररूपी कूपमां पडता प्राणिओने धारी राखे तेने धर्म कहेछे. धर्मना बे भेदछे व्यवहारधर्म अने निश्चयधर्म,

प्रश्न--ज्यारे धर्म एकजछे, त्यारे तेना बे भेद केम कथन कर्या.

उत्तर--जो के आत्मामां स्थित धर्मरूप कार्य निश्चयता कारण विना थती नथी. माटे सर्वज्ञ प्रभुए व्यवहार धर्म अने निश्चयधर्म एवे प्रकारनो धर्म कथ्योछे. व्यवहारथीजे धर्मछे ते निश्चय जे शुद्ध आत्मिक धर्म तेने प्रगटाववामां कारणछे. व्यवहार धर्म ते साधनछे अने आत्मिक धर्म ते साध्यछे. माटे धर्मना पण कारण कार्यनी सापेक्षता ए बे भेदछे.

प्रश्न–निश्चय नयथी शुद्ध आत्मानोज ज्यारे धर्मछे तो व्यवहार धर्म आदरवानुं शुं कारण छे. एक फक्त निश्चय आत्मिक धर्म आदरवो जोइए.

उत्तर–व्यवहारधर्म विना निश्चयधर्म प्रगट थतो नथी. जेमके–बाजरीना दाणामां उगवानी घणी सारी शक्ति रहीछे तोपण जलनो संयोग थतां उगी नीकळेछे. तेम व्यवहारधर्म विना निश्चय धर्मनी प्राप्ति थती नथी–

प्रश्न–मरुदेवी माताए व्यवहारधर्म आदर्यो नहोतो. तेम छतां केम तेमने निश्चय आत्मधर्मनी सिद्धि थइ.

प्रत्युत्तर–कारण विना कार्यनी निष्पत्ति थती नथी. तेतो अवश्य समजवुं. जोके मरुदेवी माताए देशथीना सर्वथी चारित्र ग्रहुं नहोतुं. तोपण व्यवहारधर्मने अवलंब्यो हतो तेथीज निश्चय आत्मिक धर्मने प्रगटाव्यो.

जिज्ञासु–हे सद्गुरो मरुदेवी माताए कयो व्यवहार धर्म आदर्यो हतो. ते समजावो.

सुगुरु–मरुदेवी माता प्रथम श्री रूषभदेव भगवान्ना दर्शन करवा चाल्यां ए पण व्यवहारधर्मछे. तेमज मरुदेव माताए मनवचन अने काया ए त्रण योगनी गुप्ति करी, एटले मनवचन अने कायाना व्यापारोने परभावमां जता अटकाव्या. धर्म ध्यान ध्यायुं ते रुप व्यवहारथी उत्तम ध्याने चडयां. शुक्ल ध्यानध्यायी अंतकृत् केवली थइ मोक्षमां गयां–पुत्रप्रेम नाश थवानुं कारण मरुदेवीमाताने समवसरण थयुं. ते पण व्यवहार, तेमज तेथी संसारनी असारता उद्भवी, ते पण व्यवहारथी उत्पन्न थइ. मनवचय कायाना खराब आश्रवना व्यापार रोक्या. अलवत धर्मध्याना द्धियावतां रोकाणा,पश्चात् शुक्ल

रूप कार्यमां मनवचन कायानी गुप्ति तथा धर्मध्यानरूप व्यवहार धर्म मरुदेवी माताने थइ गयो, मनोगुप्ति वचनगुप्ति अने काया गुप्तिरुप तथा धर्मध्यानरूप व्यवहारधर्मने कारणता निश्चयधर्म रूप कार्यमांछे, व्यवहारधर्म घणा प्रकारेछे. तेनी विचित्रता सुगुरुना मुखथी सांभळी अनेकांतधर्म ग्रहवो. वळी भरतराजाने पण धर्मध्यानरूप व्यवहारधर्म केवल ज्ञान प्रगटवामां निमित्त कारणीभूत हतो. निश्चर्य धर्मतो अरूपीछे, ते व्यवहार धर्मनी मदतथी प्रगट थायछे. उपादान कारणनी शुद्धिमां निमित्त कारण वलवत्तरछे. एम समजवुं सारांश के मरुदेवी माता वा भरत चक्रवर्ति पण नीचला गुणठाणानुं छोडवुं अने उपरना गुणठाणे चढवुं ते रूप शुद्ध व्यवहार पाम्यां हतां.

जिज्ञासु प्रश्न--जो एमछे तो व्यवहारधर्म कोने कहेछे ते समजावो.

सुगुरु–पंच महाव्रत उच्चरवां. सर्व विरतिधर्म देशविरतिधर्म अलवत साधुधर्म. श्रावकधर्म ए व्यवहारणी धर्म जाणवो. ए व्यवहारधर्म निश्चयधर्मनी प्राप्ति करावी आपेछे. निश्चयथी संपूर्ण निरावरण परमात्मपदनी प्राप्ति कराव्या वाद व्यवहार रहेतो नथी.

शिष्यप्रश्न--आत्मा परमात्मारूप थाय तेमां कयां कयां कारणोनी जरुरछे.

सुगुरु–उपादान कारण. अने असाधारण कारण अपेक्षाकारण निमित्तकारण. ए चार कारणथी कार्यनी सिद्धि थायछे.

शिष्यप्रश्न--आत्मा सिद्धपणुं पामे तेमां पामे तेमां उपादान कोने समजवुं.

सुगुरु–सिद्धतारूप कार्य ते आत्मानुं अभेद स्वरूपछे. सिद्धतारुप कार्यनो कर्त्ता आत्मा पोतेजछे अने सिद्धपणुं आत्मानुं कार्य समजवुं. अधुना सिद्धता प्रगटाववी तेज कर्तव्यधर्मछे. सिद्ध-

तारुप कार्यनी रुचि विना अनंतकाल संसारमां परिभ्रमण थयुं. अने अज्ञान रागद्वेषयोगे पोताना धर्मथी भ्रष्ट बन्यो. हवे आत्मानो मूलधर्म भासन थयो तेथी हवे ते कार्यनी सिद्धि करवी. एम निर्धार करी तदनुगत चेतना वीर्यथी स्वस्वरुप कार्यनीपजावे प्रथम तो अंशथी आत्मा कर्त्ता थाय. पश्चात् आत्मिक गुणोनी आविर्भावता थतां संपूर्ण कर्त्तापणुं पामीने परमात्मरुप कार्य नीपजावे. एवी सिद्धतानुं उपादान कारण पोतानी सत्तागत ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यादिक अनंतागुण छे. तेज उपादान कारणपणे जाणवा. उपादान कारणरुप जे ज्ञानदर्शन चारित्र अने वीर्यछेते कार्यथी भिन्न नथी, अने तेज कार्यरूप परिणामेछे. माटे तेने उपादान कार्य कहेछे, आत्मानाधर्म छे तेमां पण ज्ञानदर्शन चारित्रनी मुख्यता जाणवी.

शिष्य--हे गुरुजी असाधारण कारण कोण समजवुं.

सुगुरु–उपादान कारणथी जे अभेद स्वरूपेछे. अने जे कार्यपणुं पामतुं नथी एटले कार्य संपूर्ण उत्पन्न थतां जे रहेतुं नथी तेने असाधारण कारण कहेछे. घटरूप कार्यनुं उपादानका मृत्तिका छे. मृत्तिकाछे. तेज घटरुपे थायछे, तेतो वाचकने लक्ष्यमां आव्युं हशे हवे असाधारण कारणनुं दृष्टांत कहेछे. जेमके घटरुप कार्य थतां स्थास, कोस, कुसलाकारजे थायछे. ते मृत्तिका पिंडरुप कारणथी अभेदछे परंतु घटरुप कार्य थतां ते असाधारण कारण स्थास कोस कुसलाकाररूप रहेतुं नथी. कह्युं छे के— प्रमाण निश्चयेन उपादानस्य कार्यत्वाप्राप्तस्य अवांतरावस्था असाधारणमिति.

हवे परमात्मरूप कार्यमां असाधारण कारण घटावेछे. सिद्धता रूप कार्यप्रतिप्रथम मनवचन कायानायोग तेहने स्वगुण रमणमां

अरागी अद्वेषीपणे प्रवर्तावत्रा. चोथा गुणठाणाथी मांडीने सिद्धतारुप कार्य पर्यंत गुणनी वृद्धि करवी. उपशमभाव क्षयोपशमभाव श्रेणीगतध्यान, विधिसहित आचरणा, पूजा भक्ति, गुणिनुं बहुमान, ज्ञान क्रियारुप साधक अवस्थानी तरतमता ते सर्व असाधारण कारणजाणवुं. आत्मानुं ध्यान करवुं. क्षणेक्षणे आत्मोपयोगमां स्थिरपणे वर्तवुं साधुव्रत. श्रावकव्रत पालवां इत्यादि सर्व असाधारण कारण जाणवुं. भेदज्ञान विना असाधारण कारणनी प्राप्ति थती नथी.

शिष्य--हे सुगुरो आत्मा सिद्धतारुप कार्यनीपजावे तेमां निमित्त कारण कोण ?

सुगुरु–देव अरिहंत, गुरु, अने सिद्धांत ते निमित्त कारण जाणवुं. निमित्त कारण विना जीव उंची स्थिति ए चढी शकतो नथी. धर्मनी प्राप्तिमां निमित्त कारण बलवान् रहेछे. देवगुरु सिद्धांत ए मुक्तिरुप महेलमां चढतां निसरणी समानछे. देवगुरुनी भक्ति बहुमान करवाथी कार्य सिद्धि थशे. तेम सिद्धांतनुं बहुमान विनयआदि करवाथी गुण प्रगट थशे. सुगुरुनो विनय विश्वास श्रद्धाभक्ति जेम घणी तेम निमित्त कारणनी पुष्टता जाणवी, सुगुरुनुं आलंबन मोटुंछे. अज्ञानरुप अंधकारनो नाश सुगुरु महाराज करेछे.

शिष्य--देवनी भक्ति बहुमान शी रीते करवुं.

सुगुरु–श्री अर्हन्नी पूजा करवी, अर्हन्ना गुणोनुं स्तवन, कीर्त्तन, करवुं, अर्हन्नी आज्ञा मानवी, इत्यादिथी पूजा भक्ति जाणवी.

शिष्य--अर्हन्ननुं पूजन शी रीते करवुं, अरिहंत साक्षात् तोहाल नथी, तेनो खुलासो आपो.

सुगुरु–अष्ट प्रकारी पूजा विगेरेथी प्रभुनी पूजा करवी. अरिहंत भगवान् साक्षात् जोके विद्यमान् नथी तोपण 'जिनना अभावे

जिन प्रतिमानुं पूजन करवुं. जिन प्रतिमामां जिनेश्वरनो आरोप करी मानतां-पूजतां समकितनी पुष्टि अने निर्जरानुं कारण जिन प्रतिमा थायछे.

शिष्य--श्री जिन प्रतिमानुं कथन सूत्रमां छे के नहि ?

सुगुरु–हा जिन प्रतिमानुं कथन प्रभुना पवित्र सूत्रोमां छे.

शिष्य--हे सुगुरुजी, कृपा करीने सूत्रनो एक पाठ कहा के जेथी जिन प्रतिमानी साबीती थायः

सुगुरु–हे भव्य सांभळ—सूत्रपाठः

तेणं कालेणं, तेणं समएणं, जावतुंगीयाए नयरीए, वहवे समणो वासगा परिवसंति, संखे, सयगे, सिलप्पवाले, रिसदत्ते,दमगे,पोख्खली,तिविठ्ठ,सुपयठ्ठे, भाणुदत्ते,सामिले, नरवम्मे, आणंदा, इणोअजे अन्नथ्थ परिवसंति, से अढ्ढा, दित्ता, वुछिन्न विपुलवाहणा,जाव लध्धठा,गहिअठ्ठा,अठमी,चाउदिसी, पुन्न मासिणी, सुपडिपुन्नं पोसहं पालेमाणा, निग्गंथाणं निग्गंथीणं, फासुएसणिज्जेणं,असण, पाण, खाइम, साइमेणं, जाव पडिलाभेमाणा, चेइआलएसु तिसं गंध पुप्फ वथ्थाइएहिं अच्चणं कुणमाणा जावविहरंति, सेतेणठेणं गोयमा, जेजिण पडिमं पूएइ, सोसम्मदिठी अन्नोपुणमिछ्छदिठि, मिच्छादिठिस्स नोनाणं, नोचरणं, नोमोख्ख इत्ति सम्मदिठिस्स नाणं,चरणं, मोख्ख, इतिसेतेणठेणं गोयमा, अवस्सजिणपडिमाण गधपुप्फवथ्थाइएहिं पूयाकायव्वा–श्रीपंचकल्प सूत्रे पूजालापक.

भावार्थ–तुंगीया नगरीमां रहेनारा सूत्रोक्त वार श्रावको पोषधव्रतनुं आठम चउदस पूर्णिमा अमावास्याए आराधत करता हता, पोषधपारीने साधु साध्वीओने निरवद्य आहार पाणी वहोरावता हता. अने चैत्यालयमां जिन प्रतिमानी पुष्पादिकथी पूजा करता,

हता, माटे गृहस्थ श्रावक जिन प्रतिमानी अवश्य पूजा करे. इत्यादि अधिकार समजी लेवो.

द्वितीय सूत्रपाठ.

तएणं सा दोवइ रायवरकन्ना, जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ. उवा० मज्जणघरं अणुपविसइ, अणु२ ण्हाया कय बलिकम्मा कयकोउअ मंगलपायछित्ता सुध्धप्पा वेसाइं, मंगलाइं, वथ्थाइं, पवरपरिहिया मज्जणघराओ पडिनिरकमइ, पडि२ जेणेव जिणघरे तेणेव उवागच्छइ उवा२ जिणघरं अणु पविसइ जिणपडिमाणं आलोए, पणामंकरेइ, लोमहथ्थगं गिन्हइ. ता२ जिणपडिमाओ पमज्जेइ, त्ता सुरभिणा गंधोदएणं ण्हावेइ, त्ता२ सुरभिए गंधकासाइए गत्ताइं लुहेइ, त्ता२ सुरसेहिं मल्लेहिअ अच्चेइ जहा सुरियाभो जिण पडिमाओ अच्चेइ अच्चेइत्ता तहेव भाणिअव्वं जाव धूवं दहइ, दहइत्ता, वामं जाणुं अंचइ, अंचइत्ता, दाहिणं जाणुं धरणिअलंमि कट्टु-त्तिखुत्तो-इत्यादिपाठः

भावार्थ–राजकन्या द्रौपदी स्नान करवा मज्जनगृहमां जाय अने त्यांथी जिनेश्वरना देरासरमां जाय. प्रभुनी प्रतिमाने देखी प्रणाम करे. रुडा लोम हस्तकथी जिन प्रतिमानुं प्रमार्जन करे. सुरभि गंधमिश्रितजलथी प्रभुनी प्रतिमानुं स्नान करे पश्चात् अंगलुंहन करे, पश्चात् गंधादिकनुं विलेपन करे–इत्यादि घणा पाठ छे तेथी सिद्ध थायछे के–प्रभुनी पडिमा एटले प्रतिमा छे. महानिशीथमां पण प्रभुनी प्रतिमा विषे पाठछे–माटे जिन प्रतिमामां जिनेश्वरनो आरोप करी मानतां पूजतां आत्महित थायछे.

वळी ज्यारे श्रीतीर्थंकर भगवान् समवसरणमां पूर्वदिशा सन्मुख बेसेछे अने दक्षणि, पश्चिम, उत्तरदिशिना द्वारे श्रीअरिहंतना प्रतिबिंब स्थापेछे, ते त्रण दिशाना स्थापनाजिननो आलंबन पामीने अनेक

जन समवसरणमां समकितरत्नने पाम्या, बीजी पर्षद् मध्ये जिन सेवनथी समकितनो लाभ थायछे. ए पण स्थापना निक्षेपानो उपगारछे.

विचरता अरिहंत तथा तेमनी स्थापना ए बे साधक जीवने निमित्त कारण छे पण उपादान नथी. अर्हन्ने वांदवानुं तथा अर्हन्नी प्रतिमाने वांदवानुं फल सरखुं जाणवुं. कारण के बेमां पण भावनी मुख्यता अंतर्थी थातां फल थायछे.

वळी दरेक वस्तुना चार निक्षेपा श्रीअनुयोग द्वारमां वर्णव्या छे. नामनिक्षेपो, स्थापनानिक्षेपो, द्रव्यनिक्षेपो, अने भावनिक्षेप. ए चार निक्षेपामां आद्यना त्रण निक्षेपाते भावना कारण छे. उक्तंचभाष्ये.

गाथा.

अहवा नाम ठवणा, दव्वाए भाव मंगलंगाए ॥
पाएण भाव मंगलं, परिणाम निमित्त भावाओ ॥१॥

माटे आद्यना त्रण निक्षेपा कारणछे. ए त्रण निक्षेपा विना भाव निक्षेपो थाय नहीं. अने नाम तथा स्थापना एबे निक्षेपा उपकारी कह्याछे. चोवीस तीर्थंकरनां नाम ए नाम निक्षेपोछे. तेमज नमो अरिहंताणं आ अरिहंत भगवान्नो नाम निक्षेपोछे. अर्हन्नी मूर्ति ए स्थापना निक्षेपछे, ज्यारे नमो अरिहंताणं ए नाम निक्षेपो कबुल करीए छीए अने ते जेम आत्मा प्रतिनिमित्त कारणछे तेम अरिहंतनी प्रतिमा पण आत्मा प्रति निमित्त कारणछे. नाम निक्षेपाथी जेटलो फायदोछे तेटलोज स्थापना निक्षेपाथी फायदो छे. नमो अरिहंताणं ए नाम निक्षेपाथी अरिहंतना गुणोनुं स्मरण थायछे तेटलुंज अरिहंतनी प्रतिमाथी अरिहंतना गुणोनुं स्मरण थायछे, अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, ए पंच परमेष्ठिनां

नाम तथा तेमनी स्थापना बन्ने सरखां फळने उत्पन्न करनारीछे. माटे जे भव्य पुरुष पंच परमेष्ठिनां नामनुं आलंबन करेछे तेणे पंच परमेष्ठिनी स्थापनानुं पण आलंबन करवुंज जोइए.

शिष्य--वीतरागनी स्थापनाथी आत्महितछे. एमां तो जरा मात्र संशय नथी, पण प्रभुनी प्रतिमा पूजतां श्रावकने हिंसा थाय तेनुं केम ?

सुगुरु–हे भव्य तुं सांभळ, जिनेश्वरनी आज्ञा प्रमाण के आपणी मति कल्पना प्रमाण.

शिष्य--गुरुजी, प्रभुनी आज्ञाप्रधान.

गुरु–त्यारे सांभळ–बीजे गाम जतां वच्चमां नदी आवे ते साधु उतरे के नहीं, यादराख–एकपाणिना बिंदुमां एटला जीवछे के ते पारेवा जेवडी काया करेतो जंबुद्वीपमां माय नहीं. एवुं जलनुं बिंदु समजवुं. वळी पाणीमां सेवालरूप वनस्पति पण साधारण बादर निगोदरूपे रहीछे. वळी पुरा प्रमुख सूक्ष्मत्रस जीव पण एवाछे के मनुष्यनी कायाना स्पर्शथी हणाइ जाय हवे कहोके एवी नदीना जलमां मुनिराज पगमुकी उतरे के नहीं?

शिष्य--प्रभु ए सिध्धांतमां हिंसा थतां पण साधुने नदी उतरवानी आज्ञा करीछे. कारणके तेथी मुनीश्वरने अन्य भव्यजीवो प्रतिबोधमां लाभ मळेछे. अने भावदयानी पुष्टि थायछे माटे, आपे एवुं मने समजाव्युं हतुं, प्रतिमाना निषेधको पण आ वात मानेछे.

सुगुरु–तेज प्रमाणे सर्वज्ञप्रभुए सिध्धांतमां श्रावकने, प्रभुनी प्रतिमा पूजननुं फरमान कर्युंछे. प्रभुनी प्रतिमा पूजतां मोटो लाभ थायछे. अत्र प्रभुनी आज्ञाज प्रधान जाणवी, प्रभु सर्वज्ञ हता. तेमना केवलज्ञान आगळ आपणी मति कल्पना-

हिसावमां नथी। माटे सर्वज्ञ प्रभुनी आज्ञानुसारे श्रावक प्रभुनी प्रतिमानुं पूजन करे. तेथी तेने आत्महित थायछे अने प्रभुकी आज्ञानो आराधक बनेछे, श्रावकतो आहारादिक माटे छकायना जीवनी हिंसा कर्या करेछे माटे ते हिंसाना आरंभथी दूर थयो नथी माटे श्रावक प्रभुनी प्रतिमानुं पूजन भक्ति करे तेमां तेने मोटो लाभ छे प्रभुनी प्रतिमाने मानेछे ते सम्यग्दृष्टि जाणवो. प्रभुनी प्रतिमा पूजतां श्रावकने हिंसाना परिणाम नथी–जीवोने मारवानी बुद्धि श्रावकने नथी. तेथी तेने हिंसानो बंध थतो नथी अने तेथी शुभ भाव प्रगटतां पुण्य बंध अने शुभ भाव प्रगटनां परमानंद पदनी प्राप्ति थायछे, यद्यपि जोके शुभ भावने पुण्य बंधनो हेतुछे. तोपण ते छताआत्मगुणने स्थिर थवानो तथा नवा प्रगट करवानो हेतुछे. पुण्यानुबंधी पुण्यनो हेतुछे माटे प्रभुना उपर रागरूप शुभ भाव पण परंपराए मोक्ष प्राप्तिमां हेतुभूतछे. श्रीहरिभद्रसूरिए पंचवस्तु ग्रंथमां कह्युं छे केः–

गाथा.

गुणरूइ मूलं एयं, तेणं गुणवुद्धि हेउअं भणिअं ॥
जह एलाइयुत्तो, पसत्थ रागेण गुणपत्तो ॥ १ ॥

माटे प्रभुनी प्रतिमा पूजतां शुभभाव पण उपादन कारणनी शुध्धिमां कारणछे, माटे श्रावके प्रभुनी प्रतिमानुं पूजन करवुं जोइए. वळी सूत्रमां कह्युंछे के–ज्ञानीने आश्रवनां कारण पण संवर रूपछे अने अज्ञानीने संवरनां कारण पण आश्रव स्वरूपे परिणमेछे.

वळी सर्व विरतिपदने धारण करनारा मुनीश्वर ज्यारे नदी उतरेछे ते पण ज्यारे लाभने माटे छे त्यारे श्रावक प्रभुनी प्रतिमानुं

पूजन करे ते केम लाभने माटे न होय. अलबत प्रभुनी आज्ञाए वर्तवुं ते श्रावक तथा साधुने लाभकारी छे. आज्ञा ए धर्म जाणवो

श्री आनंदघनजी महाराज पण नवमा सुविधिनाथना स्तवनमां प्रभुनी प्रतिमानुं पूजन करवुं एम उपदेशेछे, माटे जिनेश्वर वीतरागनी स्थापनारूप प्रतिमानी बहुमानता, सेवना, पूजा, अवश्य करवी जोइए. एक सामान्य उत्तम गुणवंतनी छवी जोइने केटलो आनंद थायछे. त्यारे त्रण जगत्ना पदार्थने जाणनार सर्वज्ञ अतिशय उपगारी तीर्थंकरनी प्रतिमाने देखी जीवने आनंद थाय बहुमानता प्रगटे, तेमां शुं कहेवुं–निमित्त कारणरूप देव तथा तेमनी प्रतिमानुं अवलंबन भव्यजीवोने करवा लायकछे. प्रभुनी प्रतिमा संबंधी घणुं विवेचन करवानुं धार्युं किंतु ग्रंथ गौरवना भयथी संक्षेपमां प्रसंगे वर्णन कर्युं.

शिष्य–हे सुगुरो ! आपे कृपा करी निमित्त कारण कोण अने तेनुं स्वरूप समजाव्युं हवे कृपा करी अपेक्षा कारण कोणछे ते समजावशो–

सुगुरु–जे कारण कार्यथी भिन्न छे अने जे कारण माटे कर्ताने प्रयास करवो पडतो नथी, अने कार्यनी सिद्धिमां निश्चयथी ते जोइए. अने जे बीजा कार्योमां पण कारणछे. तेने अपेक्षा कारण कहेछे.

यथा पृथ्वी, आकाश, काल, ए विना घटादिक कार्यनी निष्पत्ति थती नथी. भूमी, आकाश, काल, जेम घटनी निष्पत्ति प्रति कारणछे तेम अन्य कार्योना प्रति पण कारणछे. कर्त्ता जेम उपादान तथा निमित्त कारणनो व्यापार करेछे. तेम एनो प्रवर्तन करतो नथी. ते अपेक्षा कारणनुं तत्त्वार्थादिक ग्रंथोमां कह्युंछे.

यथा.

घटस्थ उत्पत्तो अपेक्षा कारणं व्योमादिं अपेक्षते तेनविना तद्भावाभावात् निर्व्यापारं अपेक्षाकारणं इति तत्त्वार्थवृत्तौ।

हवे आत्मा कर्मक्षय करी मुक्तिपद पामे तेमां अपेक्षा कारण दर्शावेछे.

मनुष्यगति प्रथम वज्ररूषभनाराच संघयण, पंचेंद्रियपणुं इत्यादि सिद्धिरूप कार्यनुं अपेक्षाकारण जाणवुं.

निमित्त कारणनी प्राप्ति विना अपेक्षाकारण लेखे आवतुं नथी. जे भव्यजीवे निमित्तकारण आचर्युं नथी तेनी मनुष्यगति अपेक्षाकारणमां गणाती नथी. श्रीदेवगुरुना पुष्ट निमित्ते उपादानकारणने तरतमयोगे प्रगटावतो असाधारण कारणताए चढतो मनुष्यादिक अपेक्षा कारणपणे करी तत्वानंदरूप कार्यनो कर्त्ता आत्मा थाय.

उपादानादिक त्रणनी कारणता निमित्तना अवलंबनथी प्रगटे छे माटे भव्यप्राणी निर्दोषपणे शुद्ध निमित्तकारणने सेवे. अने शुद्ध निमित्त कारणीभूत शुद्ध देव, तथा सुगुरूना सेवनथी कर्त्तापणुं स्मरे, अने कर्त्तापणुं स्मरण करी स्वकार्य करे.

श्री आप्तमीमांसामां त्रण कारण कथ्यांछे.

समवायासमवायि निमित्तभेदात्.

समवायी कारण ते अपेक्षाए उपादानकारण जाणवुं. अने असमवायि कारण ते नामांतर असाधारण कारण कहेवायछे तथा निमित्त कारणना वे भेद जाणवा. एक निमित्तकारण बीजुं अपेक्षाकारण— वळी कारणना वे भेद शास्त्रमां कह्याछे. एक उपादानकारण. बीजुं निमित्तकारण जाणवुं. घटदृष्टांतमां घटरूप भिन्न कार्यनो कर्त्ता कुंभकार घटथी भिन्नछे, तेम सिद्धतारूप अभिन्न कार्यनो कर्त्ता आत्मा पण कार्यथी अभिन्नछे. ज्ञाननो कर्त्ता आत्माछे तेम संपूर्ण

सिद्धतारूप कार्यनो कर्त्ता पण आत्माछे. कर्त्ता आत्मा ज्यारे कारणनीयोगवाइ पामे त्यारे कार्यनी सिद्धि नीपजावे. एकलो कर्त्ता कारण सामग्री विना कार्य करी शके नहीं एवी स्वभावता जाणवी.

उपर प्रमाणे आत्मा परमात्मपद पामे तेमां जे जे कारणो जोइए. तेनुं यत्किंचित् स्वरूप दर्शाव्युं.

शिष्य--हे सुगुरो ! पूर्वोक्त कारणोमांथी व्यवहार धर्मरूप केटलां कारण जाणवां.

सुगुरु-हे शिष्य स्वस्थ चित्तथी सांभळ—जे कारणो कार्य सिध्धि थतां रहेतां नथी. अने कार्य सिद्धिमां अवश्य कारणी भूत छे, ते कारणोनी प्राप्तिने व्यवहार धर्म कहेछे. निमित्त कारणनी सेवना तथा असाधारण कारणनी प्रवर्तना पण व्यवहार धर्म कथायछे. नीचेना गुणस्थानकनुं छोडवुं अने उपरना गुणस्थानकनुं आदरवुं ते शुद्धव्यवहार धर्म जाणवो. वळी साधुधर्म वा श्रावकधर्म पणव्यवहार नयथी धर्म कथायछे. व्यवहार धर्म कारणछे, अने निश्चय धर्म कार्यछे कारण अनेक छे अने कार्य एकछे. माटे असंख्ययोग जिनेश्वर भगवाने कथ्याछे. तेमां पण नवपदनी मुख्यता जाणवी. जेजे अंशे निरूपाधिपणुं तेते अंशे धर्मनी प्राप्ति जाणवी.

शिष्य—मनुष्यगति विना आत्मा सिद्धतारूप कार्य अन्य गतिमां प्राप्त करी शके के नहीं.

सुगुरु—मनुष्यगति विना सिद्धतारूप कार्यनी सिद्धि थती नथी. प्रथमतो एकेंद्रियमां अपेक्षाकारणरूप नरगति प्रथम संघयण नथी. तथा निमित्त कारण पण नथी. द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय. चतुरिन्द्रिय, मां अपेक्षा कारण नथी. पंचेंद्रियना चार भेदछे. प्रथम देवता समकिती होयछे तेमने क्षयोपशमभावनुं मतिज्ञान तथा श्रुत-

ज्ञान होयछे. अने तेओ समकितपणाथी चोथा गुणठाणाना स्वामी जाणवा. एटले ते अविरति सम्यग् दृष्टि देवना जाणवा. तेओ विरतिपणाने पामे नहीं एवी देवगतिनी स्थीति छे माटे तेओ उपरउपरना गुणठाणे चढी शकता नथी. मिथ्यादृष्टि देवताओतो प्रथम गुणस्थानके वर्त्तेछे. वेमानीक, भुवनपति, व्यंतर, अने ज्योतिष एम देवताना चार प्रकारछे.

तिर्यंच पंचेंद्रियना पंचभेदछे जलचर, थलचर, खेचर, उरपरिसर्प, भुजपरिसर्प.

तिर्यंच समकित पामी शकेछे. कृष्णमहाराजना भाइ वलदेव मुनीश्वरनुं एक हरिणभक्त हतुं. पण त्यां अपेक्षा कारण प्रथम तो नथी. गुर्वादिकनुं निमित्त पामी कदापि पंचम गुणस्थानक पर्यंत जाय. पण त्यां असाधारण कारणनी श्रेष्टता नथी. असाधारण कारणनो अंश पामे.

नारकीना जीवोनो पण देवतानी पेठे अधिकार समजी लेवो ए त्रण गतिमां धर्मसामग्रीनी संपूर्ण जोगवाइ नथी.

यतः गाथा

देवा विसय पसत्ता, नेरइया विविह दुःख संसत्ता ॥
तिरिया विवेग विगला, मणुआणं धम्म सामग्गी १

देवताओ विषयमां प्रसक्तछे. नारकी जीवो अहर्निश विविध प्रकारनां दुःखो भोगव्या करेछे, तिर्यंच विवेकथी विकलछे. फक्त गर्भज मनुष्योने धर्मनी सामग्रीछे.

मनुष्यगतिमां अपेक्षा कारण, निमित्त कारण, असाधारणकारण, उपादान कारण, ए चार कारणनी सामग्री प्राप्त थायछे. वली अपेक्षा कारणमां प्रथम संघयण अधुना नथी.

हाल पंचमारके पण निमित्तादि कारणो पामी आत्मधर्म साधन थायछे. मतिज्ञान अने श्रुतज्ञानना क्षयोपशमभावे असाधारण कारणने अवलंबतो जीव शुद्धानुभव पामेछे. अने भव्य, कर्मनां तिक्ष्ण बंधनने छेदवा समर्थ थायछे,

माटे भव्यजीवोए चिंतामणिरत्न, कल्पवृक्षथी पण दुर्लभ एवो मनुष्यजन्म पामी धर्मसाधन करवुं गयो वखत पश्चात् आवतो नथी. आयुष्य क्षणेक्षणे ओछुं थतुं जायछे. आ दुनीयामां कोइ अमर रह्यो नथी अने कोइ रहेवानो नथी. कायारूप माटीनुं पूतळुं आत्मानुं कदी थयुं नथी, अने थवानुं नथी. भ्रांतिथी परवस्तुमां सुखबुद्धि कल्पायछे. जेम आकाशमां कमलनी उत्पत्ति खोटीछे. तेम परवस्तुमां सुखबुद्धि खोटीछे. जडवस्तुमां आत्मसुख क्यांथी होयः अलबत जडवस्तुथी कदापि सुखनी प्राप्ति थती नथीज. बाल्यावस्थामां अज्ञानतायोगे जे सुख धूळना ढगलामां रमकडां रमवाथी मान्युं हतुं. ते मोटी उमर थतां पोतानी मेळे टळेछे. एटले मोटी उमर थतां रमकडां वा धूलमां रमवानुं मन थतुं नथी. ते रमत उपर अरूचि थायछे. तेम विषयभोग आदिमां रूचि बाल जेवा जीवोने थायछे. जेम कागडाए विष्टा चुंथवामां पोतानुं श्रेयः मान्युंछे. तेम अज्ञानी बालमनुष्योए विषयभोग आदि परवस्तुमां पोतानुं सुख मान्युंछे पण ते सर्व मिथ्याछे. ज्ञानीनी दृष्टि आगळ एवा बाळजीवो केवल दया पात्रछे. आत्मामां अखंड परमानंद समायोछे. अनंतसुख आत्मामां रह्युंछे. शोधेसोपावे आत्मसुखनी प्राप्ति अर्थे ज्ञाताओ आत्मध्यानमां सदाकाळ मग्न रहेछे. परवस्तुमां रागद्वेष बुद्धि धारण करता नथी. पोताना आत्मस्वरूपमां रमणता करेछे. परभावनो अनादर करेछे. परवस्तुमां आत्मपणुं कंइ मानता नथी. पुद्गल वस्तुथी आत्मा सदा न्यारोछे एम भावेछे. अने सदा अंतर्लक्ष्य राखेछे

परपरिणतिनो द्वार रोकेछे. आत्माना गुण पर्यायनुं चिंतवन करेछे. पोताना आत्मामां अनंतऋद्धि शोधेछे. उज्ज्वल ध्यान ध्यावेछे, अने ज्ञानीओ मनमां थता अनेक संकल्पविकल्पो दूर करी आत्मस्वभावमां मग्न रहेछे, प्रतिदिन उच्चास्थितिने भोगवेछे. सहज शांतिथी थतुं तात्त्विक सुख ते प्राप्त करी शकेछे. मननी थती चंचलतानो त्याग करवो. मनसंबंधी प्रथम घणुं कहेवामां आव्युंछे. तेथी अत्र विशेष वर्णन करवुं योग्य नथी. तोपण प्रसंगवशात् कहेवानुं के मन चंचल अने अस्थिरछे ते ज्यां जाय त्यांथी पाछुं वाळीने आत्मानी साथे वश करवुं.

मन ज्यां सुधी स्थिर रहे नहीं त्यां सुधी शास्त्रोक्तक्रिया जेटली करीए तेटली सफल थाय नहि. श्रीयशोविजयजी उपाध्याय कहेछेके—

श्लोक.

या निश्चयैकलीनानां, क्रिया नातिप्रयोजना ॥
व्यवहार दशास्थानां ताएवाति गुणावहाः ॥ १ ॥

भावार्थ—जेनुं मन निश्चयमां लीनछे. तेने क्रियानुं प्रयोजन नथी. व्यवहार दशावाळाने क्रिया अति गुणकारीछे. मन वश करवाथी बंधातां कर्म अटकेछे, ज्ञानी थइने फरता एवा पुरुषोथी पण मन जीतातुं नथी. अभ्यासथी मन जीतायछे, महा अनुभवी योगीओना शिष्यो मन वश करी शकेछे. पुस्तक, पोथी, पुराण, वांचवाथी पण जे मन वश थतुं नथी, ते मन सुगुरु महाराजनी गुप्त अर्पेली कुंचीओथी धीरे धीरे वश थायछे. पुस्तक सिद्धांतमां लखेला विषयोने जाणी सुगुरुए परिणामिकी बुद्धिथी जे अनुभव मेळव्यो होयछे ते शिष्यो के जे गुरुना सदाने माटे विश्वासी होयछे तेने मळेछे. माटे सुगुरुनुं शरण करी आत्मिक धर्मनी प्राप्ति करवी.

कर्मनो क्षय करतां आत्मिकधर्मनी आविर्भावता थायछे. काया पुद्गलछे, वचन पुद्गलछे, मनपुद्गलछे, धर्म तो निश्चयथी चेतनगत जाणवो, आतमामां धर्म रहेछे. ते आत्मिक धर्म आत्मस्वभावे स्थिर थतां प्रगटेछे. निश्चयथी आतमा अरूपीछे, अने आतमामां रहेलो धर्म पण अरूपीछे. असंख्य प्रदेश आत्माना छे, प्रतिप्रदेशे अनंत अनंत धर्म व्यापी रह्योछे, तात्त्विक आत्मिक धर्मथी अनंत सुखनी प्राप्ति थायछे. कर्मनो क्षय करी जे भव्यो सिद्धिपद पाम्याछे तेमने शुद्ध आविर्भावे आत्मिक धर्म प्रगट्योछे, जे जीवो कर्म सहीतछे तेमने तिरोभावे आत्मिक धर्म जाणवो. जे वस्तु मूळमां वस्तुतः सत्पणे नथी. तेनी उत्पत्ति थती नथी. कारण के—

नासतो विद्यतेभावो

सारांश के—असत्नुं उत्पन्न थवापणुं नथी.

शिष्य—जेम असत्नुं उत्पन्न थवापणुं नथी. तेम सत् जे वस्तु त्रिकालमां वर्तती होय तेनी उत्पत्ति कहेवी ए पण अयुक्तछे. कारण के—जे वस्तुनो उत्पाद थाय ते वस्तु प्रथम होय नहीं. यथा पट तेनो उत्पाद थयो तो ते प्रथम नहोतो. तेम जो आत्माना धर्मने सत् मानवामां आवे तो ते त्रिकालमां विद्यमानपणाथी तेनी उत्पत्ति थइ एम कहेवुं असत्य ठरेछे अने जो आत्माना शुद्ध धर्मने असत् कहेवामां आवे तो तेनी उत्पत्ति असत्य ठरेछे माटे हे सुगुरो कृपा करी यथार्थ स्वरूप समजावशो.

सुगुरू—हे शिष्य! एकाग्र चित्तथी श्रवण कर. असत् पदार्थनी तो त्रिकालमां पण उत्पत्ति थती नथी, हवे सत्वस्तुनो विचार करीए.

गाथा.

भावस्स णत्थि णासो, णत्थि अभावस्स चेवउप्पादो; गुण पज्जयेसु भावा, उप्पाद वए पकुव्वंति ॥ १ ॥

भावार्थ–भावनो एटले सत्‌रूप पदार्थनो नाश नथी, अने निश्चयथी अभाव एटले असत्‌नो उत्पाद नथी, गुणपर्यायोमां भावो उत्पाद व्ययने करेछे.

सारांश के–द्रव्यार्थिकनयथी सत् षट्पदार्थो उपजता नथी, तेम विनाशताने पण पामता नथी.

अने जे त्रिकाल अविनाशी सत्‌पदार्थोमां उत्पाद व्यय थाय छे ते पर्यायार्थिक नयनी अपेक्षाथी गुणपर्यायोमां जाणवा.

हवे आत्मधर्मना सत्‌पणा संबंधी विचार करतां समजाशे के आत्मिक शुद्ध धर्मनुं सत्‌पणुं द्रव्यार्थिकनयनी अपेक्षाए अनादि सत्‌पणेछे. जो के कर्मावरणथी आत्मिक शुद्धधर्मनुं आच्छादन थयुंछे तोपण आत्मधर्मनुं द्रव्यार्थिकनयथी जोतां सत्‌पणुं टळ्युं नथी. अनादि कालथी कर्मावरणथी आत्मिक धर्म आच्छादनताने पाम्योछे एटले ते तिरोभावे सत्‌पणे वर्तेछे, आत्मिक शुद्ध धर्मनुं सत्‌पणुं बे प्रकारे छे. संसारदशामां तिरोभावे सत्‌पणुं अने सिद्धावस्थामां आविर्भावे सत्‌पणुं एम प्रकारे जाणवुं. अनादि कालथी जीवनी साथे कर्मनो संबंधछे अने ते कर्मना संबंधे आत्मिक शुद्ध धर्म ढंकायोछे. ते ज्यारे कर्मनो नाश थायछे त्यारे आत्मिक शुद्ध धर्म प्रगटपणे प्रकाशेछे, हवे सत्‌स्वरूप आत्मिक धर्मनो उत्पाद केवी रीते थायछे ते समजावेछे. तिरोभावपणे वर्तता आत्मिक धर्म छे तेनो आविर्भाव थयो. तेनी अपेक्षाए उत्पत्ति समजवी सारांश के–सत्‌स्वरूप जे आत्मिक शुद्ध धर्मनो कर्मावरणथी तिरोभाव थयो हतो. ते सत्‌स्वरूप आत्मिक शुद्ध धर्मनो कर्मनाशथी आविर्भाव थयो–तिरोभावनो जे

आविर्भाव तेनी अपेक्षाए शुद्धधर्मनी आत्मामां उत्पत्ति जाणवी. सत्‌पणुं तो प्रथम पण विद्यमान हतुं. हवे ते उपरथी स्पष्ट समजाशे के सत्स्वरूप आत्मिक धर्म द्रव्यार्थिकनयनी अपेक्षाए सदात्रिकाल सत्पणे जाणवो.

तिरोभावे ढंकाएलो धर्म आविर्भावनी अपेक्षाए प्रगटपणे वर्ततो नथी माटे असत् अने तिरोभावनो नाश थतां आविर्भावपणे प्रकाशतां सत्स्वरूप जाणवो.

आविर्भावपणे आत्मिकशुद्धधर्म प्रगट थतां आत्मा परमात्मस्वरूप थइ जायछे अने ते अनंत सुखनो भोगी थायछे. पश्चात् कंइ कर्त्तव्य बाकी रहेतुं नथी. सिद्ध स्वरूप थतां पण आत्मामां पर्यायार्थिकनयनी अपेक्षाए पर्यायनो उत्पाद व्यय समये समये बन्या करे छे, सिद्धस्वरूपी आत्मामां अक्रियपणुं जाणवुं. गमनागमन पण सिद्धात्माने नथी. रागद्वेषरूप मलनो सर्वथा क्षय थवाथी सदाकाल स्वस्वभाव रमणतागुण प्रगटपणे वर्तेछे, ज्ञानावरणीय अने दर्शनावरणीय कर्मनो सर्वथा समूलतः क्षय थवाथी अनंत ज्ञान अने अनंत दर्शन आत्मामां प्रगटपणे प्रकाशेछे एम अष्टकर्म क्षयथी अष्टगुण आदि अनंत गुण आत्मामां आविर्भावताए प्रगटेछे.

एम अनंत धर्ममय आत्मा जाणवो, सत्य धर्म आत्मामां रहेछे, शुध्ध आत्मिक धर्म प्रगटाववाना हेतुओने व्यवहार धर्म कथायछे, माटे व्यवहार धर्म अने निश्चय धर्म ए बेनुं अवलंबन करवुं.

श्री सिद्धसेनाचार्य कहेछे के-

श्लोक.

निश्चयव्यवहारौ द्वौ, सूर्यचंद्रमसाविव ॥
इहामुत्र दिवारात्रौ, सदोद्योताय जाग्रतः ॥ १ ॥

अंतस्तत्त्वं मनः शुद्धि, र्वहिस्तत्त्वंच संयमः ॥
कैवल्यं द्वयसंयोगे, तस्माद् द्वितयभाग्भव ॥ २ ॥
नैकचक्रोरथो याति, नैकपक्षो विहंगमः ॥
नैवमेकांतमार्गस्थो, नरो निर्वाण मृच्छति ॥ ३ ॥
परस्परं कोऽपियोगः, क्रिया ज्ञान विशेषयोः ॥
स्त्रीपुंसयोरिवानंदं, प्रसूते परमात्मजं ॥ ४ ॥
भाग्यं पंगूपमं पुंसां, व्यवसायोंऽधसंनिभः ॥
यथा सिद्धिस्तयोर्योगे, तथा ज्ञानचरित्रयोः ॥ ५ ॥
खड्गखटकवज्ज्ञाने, चारित्र द्वितयंवहन् ॥
वीरो दर्शन सन्नाहः कलेःपारं प्रयातिवै ॥ ६ ॥
एकांते नतु लीयंते, तुच्छेऽनेकांतसंपदः
नदारिद्रगृहे मांति, सार्वभौमसमृद्धयः ॥ ७ ॥

भावार्थः—निश्चयनय अने व्यवहारनय आ जगत्मां सूर्यचंद्रनी पेठे प्रकाश करता जागताछे. सूर्य अने चंद्रनी उपमामां विशेष गंभीर भावार्थ समायोछे. सूर्य अने चंद्रना प्रकाशमां घणुं समजवानुं छे. पूर्वोक्त श्लोकोना भावार्थ स्पष्टछे. तेनुं तेथी अत्र विवरण कर्युं नथी. तुच्छ एकांत मार्गमां अनेकांत संपदाओ लीन थती नथी. आ वाक्य आपणने केटलुं समजावेछे, तेनी केटली तथी महत्त्वताछे. वळी कहेछे के—दरिद्रना घरमां सार्वभौमनी समृद्धि माती नथी. माटे भव्यात्माओए आयति सर्व शाश्वत सुख संतति प्रदायक व्यवहार निश्चय धर्मनुं अवलंबन करी उत्तम पुरुषोना पंथने अनुसरवुं तेमां हित समायलुंछे. अज्ञान मार्गनी अंध श्रद्धाथी एकांत मार्गनुं सेवन

करनारा मत कदाग्रही जीवो–व्यवहार अने निश्चयनयना ज्ञान विना वस्तु स्वरूप ओळखी शकता नथी. अने तेथी कर्तव्य कार्य सन्मुख थता नथी. सातनयोना ज्ञान विना जगत्मां मतोनी उत्पत्ति थइछे, परस्परनयोनी निरपेक्षताए वस्तु स्वरूप यथार्थ कथातुं नथी. श्री यशोविजयजी उपाध्याय कहेछे के–

एकेकनयना हठथी मतोत्पत्ति.

श्लोकः

बौद्धाना मृजुसूत्रतो मतमभू द्वेदांतिनांसंग्रहात् ॥
सांख्यानां ततएव नैगमनयाद् योगश्चवैशेषिकः ॥
शब्दब्रह्मविदोपि शब्दनयतः सर्वैर्नयैर्गुंफिता ॥
जैनीदृष्टिरितीह सारतरता प्रत्यक्षमुद्वीक्षते ॥ १ ॥

भावार्थ–ऋजुसूत्रनयथी बौधमत प्रगटयो, अने संग्रहनयथी वेदांतिनो मत प्रगटयो. तथा सांख्यमत पण नैगमनयथी तथा योग मत अने वैशेषिक मत पण ते नयथी प्रगटयो. शब्दनयथी मीमांसक दर्शन उत्पन्न थयुं. अने जैन दर्शन एटले स्याद्वाद दर्शन तो सर्वनयथी गुंफितछे. माटे अनेकांत जैन दर्शनमां सारमां सारपणुं सदा प्रत्यक्षपणे देखीए छीए–जैन सर्व दर्शनीछे. अने बीजां दर्शन ते जैनना एकएक अंशछे.

श्री आनंदघनजी महाराज कहेछे के.

जिनवरमां सघळां दर्शनछे, दर्शने जिनवर भजनारे;
सागरमां सघळी तटिनी सही, तटीनीमां सागर भजनारे.
षड्दर्शन जिन अंग भणीजे.

जिनदर्शमां सर्व दर्शनछे माटे अन्य दर्शन जिनेश्वर दर्शन अंगभूतछे. अने एकेका दर्शनमां सर्वांशे सप्तनय परिपूर्ण जैन दर्शननी

प्राप्ति थाय नहीं. कारण के तेमां जैन दर्शननी भजनाछे. एक अंग-नय पक्षथी पामीए पण सर्वांगे प्राप्ति थाय नहीं. जेम सघळी नदीओ समुद्रमां होय पण नदीओमां समुद्रनी भजना जाणवी. सारांश के- जे नदी समुद्रमां मळी तेमां समुद्रनी भरतीओटनुं पाणी आवे. एवी रीते नदीओमां समुद्र एकदेशे संभवेछे. तेवी रीते समुद्रनी उपमाने धारण करनार जिनवरनां ए षड्दर्शन ते अंग जाणवां. एकांते नयनुं कथन करतां. मिथ्यात्व लागे—कह्युं छे के—

एगंते होइ मिच्छत्तं.

एकांते मिथ्यात्वपणुं होय—माटे हितशिक्षा निर्ग्रंथ प्रवचन कथे छे के—एकांतपक्ष आत्म हितकारक नथी. व्यवहारनय अने निश्चयनय अवलंबी आत्म धर्मरूप साध्यना साधक बनवुं. साध्यनी सिद्धि करवी मुश्केलछे. वातो करवी सहजछे माटे आत्मिक हितेच्छुओए प्रमाद त्याग करवो अने व्यवहार निश्चयधर्मनुं साधन करवुं. सप्तनय सप्त-भंगी चारनिक्षेपा षड्द्रव्य, गुणपर्याय—उत्सर्ग अपवादथी परिपूर्ण स्याद्वादमतने कोइ वीरला भव्य पुरुषो सम्यग् रीत्या जाणी शकेछे. केटलाक विचित्र मार्गनी भ्रमणाओमां गोथां खायछे केटलाक ज्ञान ज्ञान पोकारी ज्ञानी नाम धरावी शुद्ध धर्मरूप क्रिया तरफ अरुचि मार्ग दर्शावे छे अने क्रियानुं उत्थापन करेछे, तेथी स्वआत्मानो उद्धार करी शकता नथी. सप्तनयोथी परिपूर्ण वीतराग धर्मने सत्गुरु अने सत्श्रद्धा विना अवगाहवो मुश्केलछे माटे भव्य पुरुषो प्रभुना धर्मनो मार्ग समजी निश्चयदृष्टि हृदयमां धारण करी व्यवहार मार्गे चालेछे.

श्रीयशोविजयजी वचनामृत.

निश्चय दृष्टि चित्त धरीजी—चाले जे व्यवहार—इत्यादि.

श्री यशोविजयजी उपाध्याय महा विद्वान् हता. संवत् १७४० नी लगभग विद्यमान हता, आत्मिक ग्रंथो दरेक दर्शनना वांच्या

हता. अध्यात्मज्ञानदृष्टि पण धरावता हता, जेमणे शास्त्रवार्ता समुच्चय आदि शतग्रंथ बनाव्या. ते महा पुरुष पण निश्चय दृष्टि हृदयमां धारण करी व्यवहार मार्गे चालवानी खास भलामण करेछे. शुं हालमां अध्यात्मनी किंचित् वात सांभळी व्यवहार मार्गथी विरुद्ध चाली डोळघालु अध्यात्मी बनी जनाराओ करतां विशेष ज्ञानी नहोता. एम केम कहेवाय ? ना तेओ महा ज्ञानी हता. माटे व्यवहार धर्म मार्गनुं यथाविधि यथाशक्ति आराधन करता हता–

भगवान् सर्वज्ञानी कहेछे के–

जइ जिणमयं पवज्जह, तामा ववहारनिथ्थए मुयह;
ववहारनओ छेए, तिथ्थुच्छेओ जओ भणिओ १

जो तुं जिनदर्शनने अंगीकार करे तो व्यवहार अने निश्चयने मूकीश नहीं. कारण के–व्यवहार नयनो उच्छेद कर्याथी तीर्थनो उच्छेद कर्यो कहेवायछे, माटे महात्मा थवानी इच्छा होय तो प्रभुनी शिक्षा धारवी. मानवी,

केटलाक ज्ञाननी आकांक्षा विना अंध श्रद्धावाननी पेठे क्रिया करेछे. ते क्रिया जड जाणवी तेमनो धर्मव्यवहार फोनोग्राफवत् जाणवो.

कोइ एम कहेशे के–बराबर वस्तुनुं स्वरूप समजीने अमे क्रिया करीशुं–ज्यां सुधी ज्ञान नथी त्यां सुधी क्रिया शा कामनी ? प्रत्युत्तरमां समजवानुं–एम बोलवामां पण समजवानी घणी तारतम्यता समाइछे. प्रथम विकल्प थशे के कया ज्ञाननी प्राप्तिथी क्रिया करवी. मतिश्रुतज्ञाननी प्राप्तिथी वा केवलज्ञाननी प्राप्तिथी.

मतिश्रुतज्ञान थया बाद क्रिया करवी एम कहेतां पण विचारवानुं के—गणधरोना जेवुं मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, तेवुं ज्ञान हालना वखतमां नथी. त्यारे कहो के चउदपूर्वी वा दशपूर्वधारी जेवुं मति ज्ञान तेवुं ज्ञान पण हालना वखतमां नथी त्यारे हालमां मतिज्ञान

श्रुतज्ञान तरतमताए थोडुं अपेक्षाए कहेवाय. हवे ज्ञाननेज माननारा कहो के, केवुं ज्ञान थयाथी क्रिया करशो, ते बतावो, वा कहो के, ज्यां मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान होय त्यां क्रिया होय के नहीं. अने वळी विचारो के मतिज्ञानी अने श्रुतज्ञानी क्रिया विना शुं करे. माटे क्रियानो स्वीकार करवो योग्यछे. क्रिया विना एकलुं ज्ञान शुं करे. क्रिया ज्ञानिनी पासे होयछे शास्त्रमां पण—

ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः

ज्ञान अने क्रियाथी मोक्षछे, ज्ञानाभ्यासरूपक्रिया विना ज्ञाननो पण क्षयोपशम थतो नथी. त्यां पण क्रियानी जरूरछे. कोइ एम कहेशे के, मति वा श्रुतज्ञान थयुं एम प्रत्यक्ष जणाशे एटले क्रिया करीशुं. तेना उत्तरमां समजवानुं केवलज्ञान प्रत्यक्षज्ञानछे, मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान परोक्षज्ञानछे. मति वा श्रुत छे के नहीं ते अनुमानथी जाणी शकाय. केवलज्ञानी कंइ कहेवातो कोइ आवनाना नथी. माटे भव्य जीवोए ज्ञान श्रद्धाथी जाणी धर्मध्यानादि कारक क्रियामां प्रवर्तवुं—

आलेखक—कोइ स्थळे ज्ञाननी विशेषता वा क्रियानी न्यूनता लखे तोपण ते कोइना आदरभणीया कोइना निषेध भणी नथी किंतु बन्नेना स्वीकार माटेछे एम समजवुं. एकज स्थळे सर्वनुं स्वरूप एकज वखते वर्णवी शकातुं नथी. तेथी जेजे स्थळे जेनुं जेनुं स्वरूप वर्णन करवामां आवे ते नयनी सापेक्षताए ते ग्रहण करवुं. व्यवहार धर्म अने निश्चयधर्म सदा जयवंता वर्तेछे. सद्गुरुपासेथी एनुं स्वरूप समजवुं. मति मंदताथी शंकादि उत्पन्न थायतो पण सर्वज्ञ वीरना वचनमां सत्यता भरीछे. मतिदोष काढी सत्शास्त्रनो गुरुगमता पूर्वक अभ्यास करवो. केटलीक वातोमां तो श्रद्धाज राखवी पडेछे. केवलज्ञानथी जाणेला पदार्थोनुं स्वरुप तेने अल्पमति ज्ञानी

जीव बराबर शी रीते समजी शके, माटे जिनवचनमां जरा मात्र शंकानो अवकाश नथी. एम श्रद्धा करवी मोक्षार्थी जीवने घटेछे.

उपर प्रमाणे यथा मतिलेशथी व्यवहार निश्चयधर्म वा धर्म क्यां रहेछे ते दर्शाव्युं.

सप्तम विषय.

हुं संसारमां जन्म मरण पामुंछुं तेनुं शुं कारण ?

प्रत्युत्तर–कर्म, कर्म ए आतमा नथी. आत्माथी भिन्न द्रव्यछे. आत्मानी साथे अनादिकालथी लाग्युंछे. जेनी आदिनथी तेनो अनादिकाळ समजवो–

प्रश्न–कर्म आत्मानी साथे पोते पोतानी मेळे लाग्यांछे वा कोइए लगाड्यांछे.

उत्तर–कर्म पुद्गल स्कंध स्वरूपछे. जडछे. खरवा मिळवा रूपक्रिया करेछे, अनादिकालथी आत्मानी अशुद्धि परिणतियोगे कर्म ग्रहायछे, परमात्मा आत्मानी साथे कर्म लगाडतो नथी. अर्थात् आत्मा पोते अशुद्ध भावथी कर्मने ग्रहेछे. अशुद्ध परिणति आत्माथी न्यारी नथी तेथी आत्माज पोते कर्मनो कर्त्ता तथा भोक्ता कहेवायछे.

आत्मानी साथे अन्य कोइ कर्म लगाडतुं नथी. केटलाक जीवो इश्वर जीवनी साथे कर्म लगाडेछे एम मानेछे पण ते युक्तिहीन तथा सर्वज्ञनामत विरूद्ध वातछे. कारण के परमेश्वरने शुं प्रयोजन छे के ते जीवोनी साथे कर्म लगावे. अलबत रागद्वेष रहीत प्रभुने कंइपण प्रयोजन नथी के ते जीवोनी साथे कर्म लगाडी शके. वळी परमेश्वर कहो के परमात्मा सिद्ध, तेओए कर्मनो नाश कर्योछे, कर्मनो सर्वथा प्रकारे नाश थतां सिद्ध परमात्मा कहेवायछे, त्यारे

समजवानुं के, जे सिद्ध, परमेश्वर कर्मातीतछे आक्रियछे कोइपण प्रकारनी क्रिया करता नथी. ते बीजाने कर्म लगाडवानी क्रिया करे ते शशशृंगवत् असत्यवात ठरेछे.

प्रश्न–त्यारे शुं सिध्ध परमात्मा कोइपण प्रकारनी क्रिया नथी करता.

प्रत्युत्तर–ना, पौद्गलिक कोइपण प्रकारनी क्रिया सिध्ध परमेश्वर करता नथी, पोताना शुध्धस्वभावे तेमनी सदाकाळ स्थितिछे. कर्मछे ते तो पौद्गलिकछे. पौद्गलिक भावथी भिन्न प्रभुयाने सिध्धछे. भिन्न पुद्गलद्रव्यनी क्रियाने प्रभु परमेश्वर करता नथी, प्रभुतो अरूपीछे एवा प्रभुथी कर्म जीवोने लगाववुं त्रिकालमां पण बनेज नहीं.

सिध्ध परमात्मा शुध्ध स्वस्वभावे सक्रियछे एटले स्वभाव रमणतारूपवा षड्गुणगुणहानिवृध्धिरूपक्रियाना कर्त्ता सिध्धात्माछे.

प्रश्न–सिध्ध परमेश्वर, जीवो कर्म सारां वा नठारां कर्म करेछे. तेनो इन्साफ आपेछे के नहीं.

प्रत्युत्तर–सिध्ध परमात्मा वा जेने निरंजन निराकार ब्रह्म वा इश्वर कहेछे ते कर्म प्रपंचथी अत्यंत भिन्नछे. ने तेथी ते जीवोने कर्यां कर्म प्रमाणे इन्साफ (न्याय) करी सुखदुःख आपता नथी. सारांशे जीवोए जे कर्म कर्यां छे तदनुसारे सुख दुःख भोगाववा जीवोने सारा खोटा उंच पशु, पंखी, माणस, अंधादिना अवतार परमेश्वर आपता नथी.

प्रश्न–त्यारे जीवो सारां वा खोटां कर्म करे. ते पोतानी मेळे शी रीते भोगवे.

उत्तर–जे क्रियानो कर्त्ता जीव पोतेछे ते क्रियानुं फळ भोगवनार पण जीव पोते जाणवो. जेम कोइ मनुष्य तालपुट विष भक्ष-

णनी क्रिया पोत करे तो ते क्रियाथी प्राणनाशरूप थतुं फल पण पोते भोगवेछे. हवे कहो के तेमां न्याय कर्त्ता कोण इश्वर वा क्रियानो कर्त्ता, इश्वरे मनुष्यना प्राणनो नाश कर्यो वा तालपुट विषे प्राणनो नाश कर्यो. अलवत कहेवुं पडशे के विषमांज एवी शक्ति रहीछे के ते प्राणनो नाश करेछे, प्रत्यक्ष ते सिध्ध वातछे. इश्वर न्याय करेछे एम मानवुं ते केवल मृषा, प्रमाणविरूध्ध कल्पना मात्रछे, निरंजन निराकार इश्वर सिध्धात्माने शुं प्रयोजन छे के कर्मना फलोदयने भोगवावे.

वळी ते उपर बे विकल्प करीएछीए के कर्म पोते फल आपवामां स्वतंत्रछे के परतंत्र प्रथम पक्षमां कर्म पोतेज सारू वा खोटुं आपवामां स्वतंत्रछे. एम स्वीकारतां इश्वर जीवोने कर्याकर्म प्रमाणे न्याय आपेछे ते वात खोटी आकाश कुसुमवत् ठरी. कर्ममां ज सारूं वा नठारुं फल आपवानी शक्ति रहीछे तो ते प्रमाणे कर्मथी सुख दुःख फल मळशे. पोतानी मेळे जेम पुरूषनुं वीर्य अने स्त्रीनुं रेतस् ए बेन संयोगमांगर्भ उत्पन्न करवानी शक्ति रहीछे तथा जेम अग्निमां स्वाभाविक दाहकशक्ति रहीछे तेथी अग्निनो अंगारो हाथमां लइएतो पोतानी मेळे हाथ बळे, हाथने बाळवामां दाहकत्त्वरूप न्याय पोते करेछे. तेमां इश्वर कंइ न्याय करतो नथी. तेम कर्म पोते स्वतंत्र रीतथी फल आपवा समर्थछे. त्यां इश्वरने न्याय कर्त्ता मानवो केवल भ्रमणा अने अज्ञान अने मिथ्यात्व समजवुं. कर्ममांज शातावा अशातारूप फल आपवानी शक्ति छे एम सत्य छे, अने एम ज्ञान द्दष्टिथी देखायछे. सर्वज्ञने असत्य वदवानुं कंइ कारण नथी हवे बीजो पक्ष लइए, कर्म फल आपवामां परतंत्र छे एटले ते इश्वरना तावामांछे. इश्वरनी इच्छा प्रमाणे कर्म फल आपी शकेछे एम मानीएतो इश्वर अन्यायी प्रपंची दयाहीन ठरेछे.

आशंका तेम करतां इश्वर अन्यायी दयाहीन प्रपंची शीरीते ठरे वारु?

समाधान–कर्म फल आपवामां परतंत्रछे. तेम लागवामां पण परतंत्र, जे परतंत्र होय ते सदाय फलोदयमां तथा लागवामां परतंत्रज रहेछे, जेम तरवार बीजाने लागवामां तथा तेनो प्राण लेवामां सदाय परतंत्र रहीने कार्य करेछे. मनुष्य हाथमां तरवार ग्रहीने अन्यने मारे त्यारे तेना प्राणनो नाश थायछे, तरवार पोतानी मेळे उंची थइ मारवानी क्रिया करी शकती नथी, कारण के ते कर्त्ताथी प्रवर्तेछे माटे परतंत्रछे. तेम कर्म इश्वरना तावामां रही प्रवर्ततां होय तो प्रथम जीवोने इश्वरे कर्म लगाडयां एम कहीएतो पहेला जीव कर्मरहीत हता. त्यारे तेमने शा माटे कर्म लगाड्यां ? कंइपण अपराध विना कर्म लगाड्याथी इश्वर अन्यायी पातकी ठरे. वळी कर्मरहीत पहेला जीवो हता तेओने कर्म लगाडवाथी इश्वर प्रभुनुं शुं कल्याण थवानुं हतुं अलबत कंइ नही, वळी इश्वरनामां जीवोने कर्म लगावानी शक्ति नित्यछे के अनित्यछे, जोते कर्म लगाडवानी शक्तिने नित्य मानीए तो सदाय इश्वरजीवोने कर्म लगाडया करशे. जीवो कदी कर्मरहीत थशे नहीं. तो प्रभुने भजवुं इत्यादि सर्व व्यर्थ कल्पना मात्र थइपडे. वळी इश्वरमां कर्म लगाडवानी शक्ति अनित्यछे एम कहीए तो अनित्य शक्तिनो आधारी भूत इश्वरपण अनित्य ठरेछे, निराकार साकार इश्वर मानवामां कोइ प्रमाण नथी. निराकार इश्वर सिद्धने मानतां निराकार इश्वरने कोइपण जातनी इच्छा नथी तेथी ते कर्म लगाडवानी उपाधिमां केम पडे.

वळी निराकार इश्वरने जो इच्छा कहीए तो इच्छा अधुराने होयछे. पण पूर्णने होती नथी. इच्छा मानवाथी इश्वरनी पूर्णतानो

नाश थायछे. वळी समजवानुं के—इच्छा राग विना होती नथी अने ज्यां राग होयछे त्यां सदाय द्वेष रह्योछे. रागी द्वेषी होयते कर्म सहीत होय अने कर्म सहीत होयते संसारी कहेवायछे, संसारी थवाथी इश्वरपणुं नष्ट थयुं, कर्म कलंक नाश करी निरंजन निराकार पद् पामवाथी इश्वरताछे— कर्म ए कंइ बोलवा मात्र शब्द नथी, कर्म पुद्गल परमाणुओनो स्कंधथी बनेलुंछे. अने ते रूपीछे. कर्म लागवाथी आत्माना गुणो ढंकायाछे. हवे कहो के—कर्मथी रहीत एवा इश्वरमां कर्म लगाडवानी शक्ति मानवी ए केटली भूलनी वातछे, जे पोते कर्म रहीत थयाछे ते बीजाने केम कर्म लगाडे, कर्म लगाडवानी शक्ति इश्वरमां कल्पवी ते आकाश कुसुमवत् असत्य कल्पना मात्रछे. तेमज इश्वरनामां सुख दुःख भोगाववानी शक्ति मानवी ते पण कल्पना मात्र शश शृंगवत् वातछे.

कर्म पोतानी मेळे लाग्यां एम मानतां इश्वर कर्त्ता हर्ता नथी एम सिध्ध थयुं. हवे जीवने कर्म पोतानी मेळे लाग्यां एम मानतां तर्क थशेके—कर्म लगाडया विना पोतानी मेळे शी रीते लाग्यां अने ते क्यारथी लाग्यां—तेनुं समाधान सूक्ष्म विचारथी थशेके—कर्म अनादि काळथी जीवने लाग्यांछे. जीव अनादि काळथीछे. जेनी आदि होय उत्पन्न थवापणे ते वस्तुनो अंत पण होयछे, जे वस्तुनो आदि अने अंतछे. ते अनित्य होयछे अने जे अनित्य होयछे ते कार्यछे अने जे कार्य पणे वस्तुछे ते विनाशीछे जेम घट उत्पन्न थयानी आदिछे तो तेनो अंत एटले नाश होयछे, आत्मा कहो के चेतन वा जीव तेनी उत्पन्न थवानी आदि नथी अर्थात् आत्मा द्रव्यार्थिकनयापेक्षाए कोइनाथी उत्पन्न थयो नथी, अने जे वस्तु उत्पन्न थइ नथी ते अनादि कालथीछे, जेम आकाश. जे वस्तु अनादि काळथीछे तेनो अंत पण नथी, माटे जीव पण अनादि अनंतछे. आत्माना असंख्यात

प्रदेशमय व्यक्ति द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए अनादि अनंतछे, कोइ पण कालमां आत्माना असंख्यात प्रदेश पैकी एक प्रदेश पण खरवानो नथी. आत्मा कहो के जीव ते त्रिकालमां पोताना रूपे सत्छे अने जे वस्तु सत्छे ते नित्यछे, आत्मा सत्छे माटे ते नित्यछे,

प्रागभावाप्रतियोगित्वं नित्यत्वं

प्रागभावनुं जे अप्रतियोगी होयते नित्य जेटला कार्य रूप पदार्थो घट पट दंडादिकछे ते पर्यायार्थिक नयनी अपेक्षाए अनित्य जाणवा—कारणके घटपटादिक पदार्थो प्रागभावना प्रतियोगीछे. आत्मा वा चेतन प्रागभावनो अप्रतियोगीछे माटे आत्मा नित्य जाणवो—द्रव्यार्थिक नय द्रव्यत्व पणाने ग्रहेछे माटे द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए आत्मा नित्यरूप जाणवो. संसारमां चार गतिमां परिभ्रमण करनारा अनंत आत्माओनुं द्रव्यपणुं त्रिकाल एक स्वरूपछे माटे ते द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए नित्य जाणवा, हवे आत्मा अनादि अनंत नित्यछे, तेम सिध्ध कर्युं, ते आत्माने अनादिकाळथी कर्म लाग्यांछे ते वातनुं विवेचन करायछे. आत्मा अनादिकाळथी छे एम सर्वज्ञ श्री वीरप्रभुना वचनथी जाण्युं तेम कर्म पण अनादिकाळथी आत्माने लाग्युंछे. एम सर्वज्ञ श्री महावीरना वचनथी जणायुं, वीर प्रभु सर्वज्ञ अने रागद्वेषथी सर्वथा रहित हता माटे तेमना वचननो पूर्ण विश्वास भव्यजीवने थाय एमां कंइ आश्चर्य नथी,

आप्तोक्तं वाक्यं प्रमाणं

श्री वीरप्रभु त्रिकाल सर्वज्ञानी आप्त हता. माटे तेमनुं वाक्य प्रमाणीभूत जाणवुं. कर्म अनादिकालथी जीवने लाग्यां एमां आगम प्रमाण पण सिध्ध ठर्युं. कोइ जीव राजा थायछे, कोइ रंक थायछे, कोइ जन्मथी अंधा बधिर अवतरेछे कोइ—रोगीतो कोइ—भोगी इत्यादि सर्व पुण्यपापनुं फल प्रत्यक्ष देखवामां आवेछे माटे तेमां

प्रत्यक्ष प्रमाण पण सिध्ध करेछे. (भोगायतनं शरीरं) सुख दुःख भोगववानुं स्थान शरीरछे, अने ते प्रमाणे दरेक जीव क्षणिक सुख तथा दुःख शरीरादिकथी भोगवेछे एम प्रत्यक्ष जोवामां आवेछे. तो ते सुख दुःखनुं कारण कर्म-पुण्य पापरूप आत्मानी साथे लाग्युं छे एम अनुमान थायछे. जेम कोइ शहेरपासे नदीछे तेमां जलनी रेल आवीछे. शहेरनी आसपासतो मेघ वरस्यो नथी. ते उपरथी एम अनुमान थायछे के-ज्यां त्यां अत्यंत मेघनी वृष्टि थवी जोइए. कारणके नदीमां रेल रूप कार्य देखायछे ते मेघनी वृष्टि विना होय नहीं अहीं तो मेघनी वृष्टि थइ नथी. तेथी अनुमान थायछे के पर्वतमां दूरे खूब मेघ वृष्टि थइ हशे, तेम कर्मनी बाबतमां पण अनुमान थायछे के- भोग रोग सुख दुःख रूप कार्य फलतो प्रत्यक्ष देखवामां आवेछे माटे तेनुं कारण कर्म होवुं जोइए. पुण्य पाप विना शाता तथा अशाता वेदनीय होय नहीं, ए अनुभव सिध्ध वातछे, वळी कहेछे के-जेम कोइ वृक्षना कोटरमां अग्नि सळगेछे अंदरना भागमां अग्नि बळेछे बाहिर देखाती नथी बाहिरतो फक्त धूम देखायछे. ते उपरथी अनुमान थायछे के-

यत्रयत्र धूम स्तत्रतत्र वन्हिः

ज्यां ज्यां धूम होयछे त्यां त्यां अग्नि होयछे, वृक्ष अंदरथी धूम बहिर निकळतो देखायछे माटे वृक्षना कोटरमां अग्निछे एम अनुमान थी सिद्धि थायछे. तेम सुख, पूर्णेच्छा, भोग, रोग, शोक, वियोग, अंधत्व, बधिरत्व, दरिद्रत्वरूप, कार्यरूप, फल देखायछे माटे तेनुं कारण पुण्य पापरूप कर्म आत्मानी साथे लाग्युंछे एम सिद्ध थायछे, सर्व विद्वानो कर्मनुं अस्तित्व स्विकारेछे तेम कर्म ग्रंथमां कर्मनुं स्वरूप विस्तारथी ज्ञानीए वर्णव्युंछे तेमज कम्मपयडी, भगवतीसूत्र, पन्नवणासूत्र, विपाकसूत्र विगेरे सूत्रो तथा ग्रंथोथी कर्मनुं यथातथ्य स्वरूप सम-

जायछे अने ते अनुभवमां आवेछे. कर्मनी प्रकृतिनुं स्वरूप निर्ग्रंथ प्रवचनमां सूक्ष्मपणे वर्णन कर्युंछेः तेवुंवर्णन अन्य दर्शनमां ते प्रमाणे परिपूर्ण पण नथी. कोइ कर्मने किस्मत कहेछे, कोइ कर्मने प्रकृति कहेछे, पण कर्मनुं अस्तित्व मान्याविना छूटको थतो नथी.–

श्लोक.

कृतकर्मक्षयोनाऽस्ति, कल्पकोटीशतैरपि ॥
अवश्यमेव भोक्तव्यं, कृतं कर्म शुभाशुभं ॥ १ ॥

कृतकर्मनो क्षय नथी. कोटीकल्पशतोए पण कर्म अवश्य शुभाशुभ भोगववुं पडेछे, जन्मजरा अने मृत्यु पण कर्मथी थायछे. चोराशी लाख जीवयोनिमां अवतरवुं पण कर्मथी थायछे. एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिंन्द्रिय, पंचेंद्रियना अवतार पण कर्मथी थायछे, कर्म अनेक प्रकारेछे. कर्मना मूळ आठ भेदछे. तेनी उत्तर प्रकृति एकशतअठावनछे. देवगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति, नारकगति, ए चार गतिमां अवतार पण शुभाशुभ कर्मथी छे कहुंछे के–

गाथा.

जंजेण कयंकम्मं, पुव्वभवे इहभवे वसंतेणं ॥
तं तेण वेइअव्वं, निमित्तमित्तो परो होइ ॥ १ ॥

जे जीवे पूर्वभवमां तथा आभवमां वसतां जे कर्म कर्याछे. ते कर्म ते जीवे भोगववा योग्यछे. सुखदुःखमां परजीव तो निमित्त मात्रछे. कर्मनो कर्त्ता पण जीवछे तेम कर्मनो भोक्ता पण जीवछे. देखो सूयडांगसूत्र–सम्मतितर्कमां परभावमां रमतो जीव परनो कर्त्ता तथा भोक्ता बनेलोछे–केटलांक कर्म भोगवीने खेरवेछे. अने जीव केटलांक कर्म नवां ग्रहण करेछे–एम अनादि काळथी जीव कर्मने ग्रहण करतो तथा कर्मने छंडतो वर्तेछे, मातानुं रुधिर अने पुरुषना

वीर्य संयोगे गर्भमां जीवनुं उत्पन्न थवुं अने प्रतिदिन वृद्धि पा
इत्यादि सर्व कर्मनो प्रपंचछे गर्भमां पण जीव ओजाहारग्र

प्रश्न–गर्भमां जीव शावडे आहार ग्रहण करेछे.

प्रत्युत्तर–आहार त्रण प्रकारनाछे. १ ओजाहार, २ लोमाह
(रोमाहार) कवलाहर–पूप एटले मालपूआने ज्यारे घ
तळेछे त्यारे मालपुओ सर्वथी घीनी साथे परिणमी जाय
तेम गर्भमां जीव आहारने खेंची शरीररूपे परिणम
शरीरनी वृद्धि करेछे. रोमथकी जे आहारने ग्रहण करवो
रोमाहार कहेवायछे. हवानुं ग्रहण शरीरमां रोमथी थाय
मुखथकी जे आहारनुं ग्रहण करवुं. ते कवलाहार कहेवाय
मनुष्य पशु पंखी जलचरने कवलाहार प्रत्यक्ष देखवामां अ
छे, एम गर्भमां ओजाहारनुं ग्रहण छे.

प्रश्न–केटलाक भोळा लोको अज्ञानताथी एम मानेछे के–गर्भम
बाहिर नीकळ्या बाद–जीव शरीरमां प्रवेशेछे. अने पश्च
छठ्ठा दीवसनी रात्रीए सरस्वति बाळकनुं भविष्य कपाल
लखेछे अने कहेछे के–छठीना लेख लख्या मटे नहीं तेनुं वे

प्रत्युत्तर–गर्भमांज जीव उत्पन्न थायछे. ते माटे प्रवचन सारोद्ध
नवतत्त्व विगेरे ग्रंथो जोवा छठीना लेख सरस्वति लखेछे
मानवुं पण मिथ्या कल्पनामात्रछे–कर्म साथे बंध पामेलो ज
गर्भमां उत्पन्न थायछे, अने त्यां वृद्धि पामी नव मास थ
बाद बाहिर नीकळेछे, कोइ गर्भमांज मरण पामेछे. इत्या
सर्व कर्मनुं फळछे.

कर्मनो सर्वथा प्रकारे क्षय थवाथी जन्मजरा मरणनी मा

प्रश्न—कर्मनो क्षय थवाथी मुक्तिपद मळेछे त्यारे जेटला जीव कर्मनो क्षय करेछे ते परमेश्वर कहेवाय के नहीं.

प्रत्युत्तर—हा, जेटला जीव, कर्मनो क्षय करेछे तेटला जीव परमात्मा सिद्ध, बुद्ध, कहेवायछे, कर्मथकी सर्वथा प्रकारे रहीत थवुं. तेनुं नाम मोक्ष कहेवायछे.

प्रश्न—कर्म सहित जीव मोक्षमां जाय के नहीं ?

प्रत्युत्तर—कर्मसहित कोइ जीव मोक्षमां गयो नथी अने जशे पण नहीं.

शिष्य—हे सद्गुरो—कोइ मति अज्ञानीयोए नवीन कल्पना उत्पन्न करी एम कहेछे के मुक्तिमां केटलांक वर्ष सुधी जीव रही पश्चात् संसारमां आवे छे. आ बाबत शुं समजवुं.

सद्गुरु—मुक्तिमां गया बाद जीव पुनर्संसारमां पाछो आवतो नथी. जीवने एक स्थानथी अन्यत्र लेइ जनार कर्मछे. अने ते कर्मनो संपूर्ण नाश थाय त्यारे मुक्ति स्थानमां जीव सिद्ध रूपे वीराजेछे. त्यांथी संसारमां आवी शकातुंज नथी. कारण के जीवनी साथे कर्म संबंध छतां गमनागमनछे. कर्मना अभावे मुक्ति स्थित मुक्तात्मानुं गमनागमन थतुं नथी, श्री वीरप्रभु एम सर्वज्ञ दृष्टिथी वदेछे—चकलाचकलीनी पेठे मुक्तिना जीवो गमनागमन करता नथी—मुक्त जीवो अक्रियावंतछे. माटे ते गमनागमननी क्रिया करता नथी.

प्रश्न—मुक्त आत्मामां सर्वशक्तिमानपणुं छेके नहीं,

उत्तर—हा मुक्तात्मामां पोताना स्वरूपथी सर्व शक्तिपणुं रह्युंछे. पण पुद्गल.द्रव्यनी शक्तिथी मुक्तात्मानी शक्ति भिन्नछे. आकाश द्रव्य अरूपीछे. आकाश जेम अनंत प्रदेशीछे अने ते जेम स्वस्वरूपे स्थिर वर्तेछे. तेम सिद्ध परमात्मा स्वस्वरूपे शुद्ध थया छता स्थिर वर्तेछे, स्थिरवर्तवाथी आत्मिक सर्व शक्तिपणुं प्रगट

मात्र घटतुं नथी. गमनागमन परमाणुओनुंछे. परमाणुओना संबंधथी थएला पुद्गल स्कंधो कर्मरूप परिणमी आत्माना प्रदेशोनी साथे लाग्याछे ते ज्यारे कर्म नाश थायछे. त्यारे मुक्तात्मा सिद्धबुद्ध कहेवायछे. मुक्तात्मानी सर्व शक्ति आत्माना असंख्य प्रदेशोनी व्यापीने रहीछे. मुक्तात्मानी शक्ति स्वद्रव्य बाहिर जती नथी. माटे आत्मस्वभावे सर्व शक्तिपणुं सदा बनी रहुंछे, सिद्ध अक्रिय होवाथी गमनागमननी क्रिया करे नहीं.

प्रश्न–कोइ एम कहेछे के–इश्वर अवतार लेइ दैत्योनो नाश करेछे ए वात खरी के खोटी–

उत्तर–कर्म रहीत निर्मल परमात्माने इश्वर कहेवामां आवेछे ते परमात्मा अवतार ग्रहण करता नथी कारणके कर्मातीतने अवतरवुं आदि उपाधि नथी–पण कर्म सहित जे संसारी जीवछे ते अवतार ग्रहण करेछे अने जन्म जरा मरणनां दुःख पामेछे.

प्रश्न–त्यारे इश्वरनां लक्षण कहो.

प्रत्युत्तर–जेनामां रागद्वेष सर्वथा होतो नथी तेने इश्वर कहेछे' वळी इश्वरना चार प्रकारछे–नाम इश्वर, स्थापना इश्वर, द्रव्य इश्वर, अने भावइश्वर इश्वर एवुं गुणी वा निर्गुणीनुं इश्वर एवुं नाम स्थापवुं ते नाम इश्वर, तथा कोइ पण वस्तुमां इश्वरनो आरोप करवो ते स्थापना इश्वर–जे जीवमां इश्वरपणुं आविर्भावे वर्ते नहीं ते द्रव्येश्वर–जे जीवमां रागद्वेषना क्षयथी इश्वरत्व आविर्भावे वर्तेछे ते भावेश्वर, ए चार भेद इश्वरनाछे. तेमांथी पूर्वोक्त जे इश्वर भावइश्वर तरीके कथायछे. ते इश्वरनुं संसारमां पुनर्जन्मवुं थतुं नथी. जीव ते पण इश्वर सत्ताएछे. इश्वरपणुं कर्माच्छादितपणे होवाथी कर्म सहीत संसारी जीव संसारमां जन्म जरा मरण करेछे अने चतुरशीति लक्ष जीवयोनिमां पुनः पुनः परि-

भ्रमण करेछे-जीव पोते कर्म करेछे अने तेनो भोक्ता पण पोते एकलोछे. कह्युंछे के-

गाथा.

एक्को करेइ कम्मं, फलमवि तम्मिक्कउं समणुवहइ
एक्को जायइ मरइय, परलोयं एक्कउंजाइ ॥ १ ॥

भावार्थ सुगम होवाथी लख्यो नथी, व्यवहारनये जीव कर्मनो कर्त्ताछे-शुद्धनिश्चयथी स्वस्वरूपे रमतो जीव परनो एटले द्रव्यकर्म तथा भावकर्मनो कर्त्ता नथी.

ज्ञानी शुद्ध आत्मस्वरूपमां रमतो कर्मनो नाश करेछे-जे आश्रवना हेतुओ छे ते ज्ञानीने संवररूपे परिणमेछे. कह्युंछे के-

श्लोक.

यथा प्रकारा यावंतः संसारावेश हेतवः
तावंतस्तद्विपर्यासाः निर्वाणावेशहेतवः

कर्मना बे भेदछे. एक शुभाश्रव बीजो अशुभाश्रव. प्रथम शुभाश्रवने पुण्य कहेछे, अने अशुभाश्रवने श्रीजिनेंद्रदेव पाप तरीके कथेछे. पुण्यनी बेतालीस प्रकृतिछे अने तेम पापकर्मनी ८२ ब्यासी प्रकृतिछे. आत्माना शुभ परिणामथी पुण्य तथा अशुभ परिणामथी पापकर्म बंधायछे. रागद्वेषने भावकर्म कथेछे. रागद्वेषनो जय करवो ए शूरा पुरूषनुं कृत्यछे. रागद्वेष जीत्या विना देवपणुं कथातुं नथी. चतुर्दश रज्ज्वात्मक लोकमां सर्व संसारी जीवोमां रागद्वेष व्यापी रह्योछे. महादेव बत्रीसीमां कह्युं छे के-

श्लोक.

रागद्वेषौ महामल्लौ, दुर्जितौ येन निर्जितौ;
महादेवं तु तं मन्ये, शेषा वै नामधारकाः १

आ संसारमां दुर्जय रागद्वेषरूप महामल्लछे. तेवा महामल्लोने जेणे जीत्याछे तेने महादेव मानुंछुं, बाकीना तो नामना महादेवछे. रागद्वेषने जीतवाथी वीतरागता प्रगटेछे, सत्यतात्त्विक सुख वीतरागावस्थामांछे. रागदशाथी दुःखछे अने वीतरागदशाथी सुखछे. एम सर्वज्ञ वीरपरमात्मा सारमां सार कथेछे. श्रीवीरप्रभुए ध्याननी तीक्ष्णताथी रागद्वेषनो क्षय कर्योछे. श्रीप्रसन्नचंद्र राजर्षिए रागद्वेष शत्रुनो आत्मध्यानथी क्षय कर्यो. रागद्वेषज संसारनुं मूळछे. ज्ञान दर्शन अने चारित्रगुणनी क्षायिकभावे प्राप्ति रागद्वेषना क्षय विना नथी. द्वेष करतां पण रागनी सत्ता विशेषतः प्रवर्तेछे. कारण के जड वस्तुपर पण रागदशाथी ममत्वभाव उत्पन्न थायछे. आत्मिक ज्ञानयोगे मोहनीय कर्मनो उपशमभाव वा क्षयोपशमभाव वा क्षायिकभाव प्रगटेछे. ज्ञानावरणीय कर्मना, क्षयोपशमभाव वा क्षायिकभावना प्रादुर्भावने मोहनीय कर्म अटकावेछे.

कर्मबंधमां पण रागद्वेषनी प्राधान्यता समयमां वर्णवीछे. चार घातीकर्ममां पण मोहनीय कर्मनी सत्ता प्रबलपणे प्रवर्तेछे. देवगुरु धर्मनी श्रद्धा सम्यक्त्व पण मोहनीय कर्मना, उपशम, क्षयोपशम तथा क्षायिकभावथी थायछे, मोहनीय कर्म पण द्विधा प्रवर्तेछे. दर्शन मोहनीयना क्षयथी दर्शन प्रगटेछे अने चारित्र मोहनीयना क्षयथी चारित्र प्रगटेछे. वेदनीयकर्म, आयुष्यकर्म, गोत्रकर्म अने नामकर्म एह चार कर्म अघातीयांछे, ए चार कर्ममां औदयिकभाव फक्त प्रवर्तेछे. औदयिकभावे अघातियां चार कर्म भोगवीने आत्मा खेरवेछे. प्रत्येक भवमां द्रव्य, क्षेत्र, काळ, भावथी औदयिकभावनी जीव जीव प्रति भिन्नता वर्तेछे. इंद्रिय, गतिकायनी अपेक्षाए औदयिकभावमां जीव जीव प्रति असंख्यभेदे भिन्नतानी तारतम्यता प्रवर्तेछे. औदयिकभावे चार अघातीयां कर्मनी कर्मबंधनमां निमित्त

कारणता वर्तेछे. अध्यानता रागद्वेषनी कर्मबंधनमांछे. मोहनीय कर्मनी बंधस्थीति उत्कृष्टी सित्तेर कोडाकोडी सागरोपमनी जाणवी. मोहनीय कर्म मदिरा समानछे. जेम मदिरापानथी मत्त थएल मनुष्य अविवेकी बनी कृत्याकृत्य जाणी शकतो नथी. तेम मोहना उदयथी मूढ थएल मनुष्य कृत्याकृत्यने समजी शकतो नथी, भक्ष्याभक्ष्यमां प्रवर्तेछे, परभावमां मदोन्मत्तपणे प्रवर्तेछे अने पापकर्मयोगे आत्माने कर्मदलिकथी भारे करेछे. मोहोदयथी कोइनी हितशिक्षा श्रवणे सुणतो नथी. युवावस्थामां तो मोहोदयता अतिशय वर्तेछे. मोहनीय कर्मरूप बाजीगर-संसारी जीवोने पूतळांनी माफक नचावेछे अने जन्म, जरामरण, रोगशोक, तृषा, क्षुधा, छेदनभेदननां दुःख आपेछे. छतां जीवो मूढताथी संसारमां सार मानी रागदशामां मस्तान थइ वर्तेछे. अहो केटली अज्ञानता. क्षणिक सुखमां चिंतामणि रत्न समान मनुष्यभव जीव हारी जायछे अने पुनः पुनः संसारमां परिभ्रमण करेछे. कर्मराजा संसाररूप नगरमांथी जीवने जरा मात्र खसवा देतो नथी. अनंत शक्तिधारी आत्मा पण कर्म पिंजरमां रह्योछे. क्यां पुद्गलनी शक्ति अने क्यां आत्मानी शक्ति तेनो तो हे भव्यो विचार करो-

प्रश्न-हे गुरु महाराज कर्म ए पुद्गल द्रव्य छे के पुद्गल द्रव्यना पर्यायछे.

उत्तर-कर्म एह पुद्गल परमाणु द्रव्यना पर्यायरूप स्कंधोछे अने ते आत्म प्रदेशोनी साथे क्षीरनीरनी पेठे परिणमेछे-पुद्गल द्रव्यनो स्कंध रूप पर्याय कर्म जाणवुं-कर्म जडछे. पण तेमाथी आत्माना गुणो ढंकायछे तेथी आत्मा दुःख पामेछे.

प्रश्न-अनादिकाळथी जे कर्म आत्मानी साथे लाग्युं छे तेनो शी रीते अंत आवे.

उत्तर—कर्म बंधननी मूळ सत्ता जे रागद्वेषछे तेनो क्षय करवाथी कर्मनो अंत आवेछे. मतिश्रुतज्ञानना क्षयोपशमभावे कोइक भव्यजीव षड्द्रव्यने जाणी जीवद्रव्यने अन्य पंचद्रव्यथी भिन्न जाणी सम्यक् शुद्ध बोधथी आत्मध्यानमां प्रवर्ते.अने रागदशाना हेतुओने त्यागी संयम आदरी निश्चयथी स्वस्वभाव स्वगुण स्थिरतारूप चारित्रमां उपयोगथी वर्ते तो जीव कर्मनो क्षय करेछे. अने तीर्थंकरोक्त परमपदनी प्राप्ति करेछे. अनंत जीवो कर्मनो संक्षय करी परमपद पाम्या अने पामशे. एम श्री प्रवचन वदेछे.

जे भव्यो वीतरागना पंथने चाहेछे ते भव्यो रागद्वेषनो क्षय करी ते पदने पामेछे अने पामशे. कर्मनो ग्रहण कर्ता पण जीवछे अने तेनो नाशकर्त्ता पण जीवछे.

परमां रागद्वेषनी परिणतिथी कर्मबंधन अने स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल अने स्वभावथी आत्मगुणमां प्रवृत्ति करवाथी कर्मनो नाश थायछे. मिथ्यात्व, अविरति, कषाय अने योगथी कर्मबंधन थायछे. अनादि काळथी जीव संसारमां परिभ्रमण करेछे तेनुं कारण कर्म जाणवुं. भेदज्ञान थवाथी आत्मा अने परनो भेद थायछे. अने भेदज्ञानथी समकित प्रगटेछे. ज्ञानभाव विना मोहोदयतानो नाश थतो नथी. कह्युं छे के,

श्लोकः

ज्ञानेन भिद्यते कर्म, छिद्यंते सर्व संशयाः
आत्मीयध्यानतो मुक्ति, रित्येवं कथितं जिनैः॥१॥

ज्ञानथी कर्मनो नाश थायछे. अने सर्व संशयो छेदायछे अने आत्मध्यान पण ज्ञान विना थतुं नथी. माटे ज्ञानथी आत्मध्यान करतां मुक्तिनी प्राप्ति श्रीजिनेश्वरोए कथीछे. ज्ञानथी वैराग्य

थायछे अने वैराग्यथी चारित्र जीव आदरेछे, अने तेथी जीवकर्मनो क्षय करी मोक्षमां जायछे. माटे मुक्तिमार्गमां ज्ञाननी तथा तेनी साथे वैराग्यनी पण मुख्यताछे. शास्त्रमां कह्युं छे के–

श्लोक.

ज्ञानस्यैवहि सामर्थ्यं, वैराग्यस्यैव वा किल;
यत्कोऽपि कर्मभिः कर्म भुंजानोऽपि न बध्यते. १

ज्ञाननुं एवुं सामर्थ्य छे के वा वैराग्यनुं खरेखर एवुं सामर्थ्य छे के जेथी कोइपण कर्मोवडे कर्म भोगवतो छतो पण कर्मथी बंधातो नथी. तात्पर्य के ज्ञान अने वैराग्यथी कर्म भोगवतां पण कर्मबंध थतो नथी.

माटे कहेछे के–

ज्ञानीको भोग सवि निर्जराको हेतु हे.

ज्ञानीनो सर्वभोग निर्जरार्थछे. औदयिकभावे प्राप्त थएला पंचेंद्रिय विषयभोगोने भोगवता पण ज्ञानी कर्मनी निर्जरा करेछे, अने अज्ञानी उलटा बंधायछे. हुं ज्ञानीछुं एम मानी बेसवाथी कंइ ज्ञानीपणुं आवतुं नथी. वा कोइ एम कहेशे के आ ज्ञानी नथी एम कथवाथी ज्ञानीपणुं टळतुं नथी. ज्ञानीपणुं ज्ञानीगम्य वा ज्ञानीना अनुभवमां समजायछे.

ज्ञानना पण घणा भेदछे. आत्मज्ञान विना कर्म कलंक टळतुं नथी. ज्ञाननो महिमा अनंतछे.

कृष्ण अर्जुनने कहेछे के–

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन.

हे अर्जुन ! ज्ञानरूप अग्नि सर्व कर्मने बाळी भस्म करेछे. ज्ञान विना चारित्र नथी अने चारित्र विना मुक्ति नथी. क्रिया पण ज्ञानिनी पासेछे. ज्ञान विना शुंतप, शुंक्रिया माटे आत्मतत्त्वनुं ज्ञान

करवुं श्रेयस्करछे. आत्मज्ञान विना कोइ तर्या नथी अने तरशे पण नहीं, राजा, करोडाधिपति, आदि सर्व करतां ज्ञानीनी महत्वताछे. ज्ञानी सूर्य करतां पण मोटोछे. कारण के सूर्य बाह्य प्रकाश करेछे किंतु अंतर्प्रकाश करी शकतो नथी. अने ज्ञानी तो अंतर्प्रकाश करे छे. ज्ञानीनी सर्व क्रिया, वर्तन सापेक्षपणे वर्तेछे. अने अज्ञानीनुं वर्तन निरपेक्षतया वर्तेछे. ज्ञानी अवश्य चोथाठाणे गणे तो होयछे अने अज्ञानी बी. ए. एल. एल. बी. आदि पद्विओथी दुनीयादारीमां महा विद्वान् कहेवातो होय तो पण समकित विना पहेले गुणठाणे वर्तेछे. ज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशमभावथी वा क्षायिकभावथी ज्ञाननो आविर्भाव थायछे. सम्यक्तत्त्व श्रद्धान् विना ज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशमभाव पण मिथ्यात्वरूपे परिणमेछे. एम श्रीवीर प्रभुनुं कथनछे.

ज्ञानावरणीय कर्म पंचप्रकारेछे—मतिज्ञानावरणीय कर्म १, श्रुतज्ञानावरणीय कर्म २, अवधि ज्ञानावरणीय कर्म ३, मनःपर्यव ज्ञानावरणीय कर्म ४, केवल ज्ञानावरणीय कर्म ५.

ज्ञानावरणीय कर्ममां उपशम भाव नथी. ज्ञानावरणीय कर्मनो औदयिकभावछे. ज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम विचित्र असंख्य प्रकारे तरतमयोगथी वर्तेछे. द्वादशांगीनुं गुंथन गणधरजी क्षयोपशमभावे करेछे.

मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञानमां क्षयोपशम भाव लाभेछे. केवलज्ञान क्षायिकभावे उत्पन्न थायछे. ज्ञानावरणिय कर्म अष्ट कर्ममां प्रथमछे. तेनुं कारण के विशेषतः ज्ञानावरणिय कर्म आत्मानुं भान भूलवेछे. ज्ञान विना तत्त्वनुं भान थतुं नथी. माटे प्रथम तेनो निक्षेप कर्योछे. ज्ञान विना जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा, बंध अने मोक्षनुं स्वरूप जणातुं नथी.

षड्द्रव्य, सातनय, सप्तभंगी, प्रमाण निक्षेपनुं यथातथ्य स्वरूप ज्ञान विना समजातुं नथी. ज्ञान विना धर्म अधर्मनुं स्वरूप जणातुं नथी. ज्ञान विना चारित्र शुं छे तेनुं पण भान थतुं नथी.

मति ज्ञानावरणीय अने श्रुत ज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम सर्व जीवोमां सरखो लागतो नथी. कोइएक वस्तुनुं स्वरूप विशेष समजेछे कोइ समजतुं नथी. त्यां मति ज्ञानावरणीयकर्मनी क्षयोपशमताज कारणीभूतछे. पूर्वभवमां जे प्रकारे मतिज्ञान अने श्रुत ज्ञाननुं आराधन कर्युं होयछे. ते प्रमाणे आ भवमां मनुष्य जन्म पामी शरीरनी रचना, मगजनी रचना ज्ञानतंतुनी प्रबलता आदि सामग्रीसाधन मतिज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशमभावमां प्राप्त थायछे अने ते साधनोद्वारा उद्यम करवाथी मतिज्ञाननी वृद्धि थायछे.

मतिज्ञानना अष्टाविंशति अने ३४० त्रणसो चालीश भेद नंदिसूत्रमां प्ररुप्याछे. ज्ञाननी ब्राह्मी लीपी जे श्रुतज्ञान अक्षरस्वरूपेछे तेनी आशातना करवाथी ज्ञानावरणीय कर्म बंधायछे. आशातनाना हजारो भेदछे. ते गीतार्थने विनयथी पूछी समजण लेवी.

सुवर्णना प्यालामां जलनां जेटलां बिंदु पडेछे तेटलां कायम रहेछे. तेम योग्य संस्कारी जीव जेटलुं गुरुद्वारा श्रुतज्ञान मेळवेछे तेटलुं तेने शुद्धरूपे परिणमेछे अने तेनुं स्मरण रहेछे.

जेम तपावेला लोहना गोळा उपर जलबिंदु त्रण चार दश वार पडे तो कंइ तेनुं जोर चालतुं नथी तेम मूढ अज्ञानी जीवना हृदयमां सद्गुरु वचनामृतनो वास थतो नथी उलटो तेनो नाश थायछे.

एक शिक्षक शिष्योने एकज वखते सरखी रीते कोइ विषयनो बोध आपेछे तेमां कोइ विद्यार्थिने तो बिल्कुल तेनी यादी रहेती नथी. कोइने यत्किंचित् रहेछे. कोइने पूर्ण यादी रहेछे त्यां श्रुत ज्ञानावरणीय कर्मनी क्षयोपशमताज कारणीभूतछे, कोइ एक श्लोक

भणीने स्मरणमां राखेछे. कोइ एक कलाकमां पांच श्लोक भणेछे. कोइ पच्चीश श्लोक कोइ शतश्लोक कोइ सहस्रश्लोक एक कलाकमां याद करेछे कोइ आखा दीवसनो एक श्लोक पण याद करी शकतो नथी. त्यां श्रुतज्ञानावरणीयकर्मनी क्षयोपशमताज कारणीभूतछे. हालना समयमां कोइ शतावधानी कोइ द्विशतावधानी देखवामां आवे छे. तेनुं पण कारण मति अने श्रुतज्ञानावरणीय कर्मनी क्षयोपशमतानी विचित्रताछे. अने ते प्रमाणे मगजनी रचना ज्ञानतंतुनी प्रबलता अने अप्रबलतानी तारतम्यताए घटना थायछे. अने ते प्रमाणे द्रव्य क्षेत्र काळभावथी प्रबल अप्रबल साधनोनी प्राप्ति थायछे. श्रुतज्ञानना अभ्यासथी तथा श्रुतज्ञानीनो विनय भक्ति बहुमान करवाथी श्रुतज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम थायछे. श्रुत अने श्रुतज्ञानीनी आशातना करवाथी तथा उत्सूत्रभाषण करवाथी श्रुतज्ञानावरणीय कर्मनो बंध थायछे. माटे भव्य जीवोए क्रोध लोभ मान पूजा स्वार्थादिक आवेशथी उत्सूत्र भाषण करवुं नहीं. उत्सूत्र भाषणथी जमाली तथा मरीचिनी पेठे भवपरंपरानी प्राप्ति थायछे. अल्पज्ञानयोगे उत्सूत्र भाषण थयुं होय तो ज्ञान थतां मिथ्या दुष्कृत देवुं. पण मान पूजा लज्जादिकथी मिथ्यादुष्कृत देतां प्रमाद करवो नहि. भवभीरु भाग्यवंत जीव अनेकांत पंथने समजी प्राणांते पण मिथ्याप्ररूपणा करतो नथी. उत्सूत्र भाषण समान कोइ पाप नथी. माटे कदी अल्पज्ञपणाथी उत्सूत्र प्ररूपणा करवी नहि, कलियुगमां सूत्रोनी प्ररूपणामां गुरुगम विरह, मान, पूजा, स्वार्थ, मतांधपणाथी, उत्सूत्रभाषण करी अज्ञानी जीवो अनेक प्रकारना मत उठावेछे अने कुगति कुश्रुतयोगे कुतर्क करी भिन्न भिन्न पंथनी काळी दृष्टि रागी जीवोने समजावीने वीरप्रभुनां सत्य वचननो लोप करी आत्माना अजाणपणाथी भवपरंपरानी वृद्धि करी जन्मजरा मरणनां दुःख त्रिविध योनिमां अवतार ग्रही भोगववा प्रयत्न करेछे.

सूत्रोमां कोइ वचन तो उत्सर्ग मार्गनां छे. कोइ वचन अपवाद मार्ग बोधकछे. कोइ भय वचनछे. कोइक तो व्यवहार मार्गने बोधेछे. कोइक तो निश्चयनय मार्गने बोधेछे. एवो सूत्र सिद्धांतरूपी श्रुत सागरनो सार–महाश्रुतज्ञानी विना कोण पामी शके. अलवत ज्ञानी पामी शके.–कहुंछे के–

गाथासूत्र.

विहिउज्जम वन्नय भय, उसग्ग ववाय तदुभय गयाइं;
सुत्ताइं बहुविहाइं, समइं गंभीर भावाइं ॥ १ ॥
एसिं विसयविभागं, अमुणंतो नाण चरणकम्मुदया;
मुझइ जीवोतत्तो, सपरेसि मसग्गहं कुणइ ॥ २ ॥

जैनसूत्रो उत्सर्ग अपवादथी परिपूर्ण सदाकाल विजयवंत वर्तेछे. सप्तनयोनुं यथार्थ स्वरूप जाण्या विना धर्मोपदेश सम्यग् रीत्या दे‍इ शकतो नथी. केटलांक सूत्रो उत्क्रमकथकछे, माटे अपेक्षा समज्या विना प्ररूपणा करवी नहि. भाग्यवंत जीवोए गीतार्थनुं शरण अंगीकार करवुं योग्यछे. दुःषम समयछे. माटे गीतार्थद्वारा अनेकांत मार्ग समजवो. श्रुतज्ञानिनी तथा श्रुतज्ञाननी आशातना करवाथी नरकादि गतिमां घणा जीवो गया अने घणा जशे.

णमो बंभलीवीए.

आ सूत्रनो सम्यग् अर्थ गुरु परंपरया केवी रीते थायछे. अने तेमां श्रुतज्ञाननो विनय बहुमान भक्तिनुं केटलुं रहस्य समायुंछे. हवे तेनो कुतर्कनी स्वच्छंदताए विपरीत अर्थ करवामां केटली विरुद्धता वर्तेछे. ते विद्वज्जनो माध्यस्थदृष्टिथी विचार करशे तो समजाशे. श्री यशोविजयजी उपाध्याय पोताना रचेला स्तवनमां सप्रमाण अनुभव सहित शुद्ध व्याकरण दोषरहित सम्यग् अर्थ दर्शावेछे. तेनो

समजु लोको विचार करी असत् आलंबन परिहरी सदालंबन अंगीकार करशे. शतज्ञानीनो एकमत अने शत अज्ञानिना शतमत व्यवहारमां प्रसिद्धछे.

जगत्मां सूक्ष्मगंभीरअर्थपरिपूर्ण धर्मतत्त्वना समजनारा भव्यो अल्प होयछे, अने तेमां पण भावार्थ समजी धर्मतत्त्वनो आदर करनारा अल्प होयछे, अने तेमां पण अनुभवी तो अल्पमां अल्प होयछे.

हाल पंचमकाळछे, पंचविष भेगां थयांछे. प्रायः बहु पापी जीवोनुं अत्र उत्पन्न थवुं थायछे. वळी तेमां मिथ्यात्वी अने पापानुबंधी पापवाळा घणा जीवोनी उत्पत्तिनो समयछे. एवा पंचमकाळमां धर्मी जीवो करतां पापी मिथ्यात्वी जीवोनो मोटो भाग होय तेमां शी नवाइ ! ! ! अहा दुःषमकाळ त्हारो केवो प्रभाव ?

त्यारे हवे शुं करवुं ? धर्म कर्या विना बेसी रहेवुं ? ना तेम करवुं योग्य नथी. भगवान्नुं शासन दुःपसहसूरि सुधी चालशे. धर्म पण त्यां सुधी छे केटलाक मतिहीन प्रमादी जीवो हालमां मुक्ति नथी एम समजी धर्मकरणी करता नथी. आ विपरीत समजवुं तेमनुं भूल भरेलुंछे. हाल पण अप्रमादयोगे सातमा गुणठाणानुं स्पर्शन भाग्यवंतो करे तेमां सप्रमाण हेतुछे. जेटली जेटली कर्म प्रकृतिथी मूकावुं ते ते अंशे मुक्तपणुं अने धर्म समजवो. कह्युंछे के—

जे जे अंशेरे निरुपाधिकपणुं, ते ते अंशे धर्म ॥
सम्यग् दृष्टिरे गुणगणाथकी, जीव लहे शिवशर्म ॥

श्री यशोविजय उपाध्याय भेद ज्ञान थतां समकितनी प्राप्ति थतां उपशमभावे वा क्षयोपशमभावे वा क्षायिकभावे धर्मनी साध्यता सिद्धि बतावेछे, चोथा गुणठाणाथी प्रत्येक गुणठाणे षड्गुण हानि वृद्धि असंख्यात भेदे प्रत्येक जीवोने रहीछे. ए वात गीतार्थोना अनुभवमां सत्यछे,

धर्म श्रवणथी भेदज्ञान थायछे अन तेथी स्वपरनो विभाग करतां सम्यक्त्वनी प्राप्ति थाशछे. तेमां श्रुतज्ञाननो महा उपकार समजवो, त्रिकाल सर्वज्ञ वीरप्रभुए केवलज्ञानथी सर्व पदार्थोने जोया अने वाणीथी ते पदार्थोनुं स्वरूप कथ्युं. ते भगवान्नी स्वपर प्रकाशक वाणीनेज श्रुतज्ञान मूत्रसिद्धांतरूप कयेछे हाल पण भगवान्नी वाणी जयवंती वर्तेछे.

आसन्नभव्यो भगवद्वाणीरूपगंगा प्रवाहमां स्नान करी संसारना तापथी शांति पामेछे अने पामशे.

महाविदेह क्षेत्रमां अनादिकाळथी समकितश्रुत अने मिथ्याश्रुत वर्ते छे.

सुश्रुतनो हे भव्यो आदर करो वखत वही जायछे, वखत अमूल्यछे. गयो वखत पश्चात् आवनार नथी. भव्य जीवोए वारंवार श्रुतज्ञाननो अभ्यास करवो.

अवधिज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम थवाथी अवधिज्ञान उत्पन्न थायछे. अवधिज्ञानना षड्भेदछे. अने वळी असंख्यात भेदे प्रवर्तेछे. मनःपर्यवज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशमथी मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न थायछे, मनपर्यवज्ञान बे प्रकारेछे.

केवलज्ञान क्षायिकभावे उत्पन्न थायछे. शुक्लध्यानना वीजो पायो ध्यावतां वारमे गुणठाणे केवलज्ञानावरणीयकर्मनो सत्ताथी पण सर्वथा क्षय थाय छे.

मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान परोक्षछे. अवधिज्ञान अने मनःपर्यवज्ञान देश प्रत्यक्षछे. केवलज्ञान सर्वथी प्रत्यक्षछे.

आ प्रमाणे ज्ञाननी प्राप्ति थतां आत्मा परमात्मस्वरूप बनेछे. ज्ञाननी प्राप्ति थतां दर्शनावरणीयादि कर्मनो सर्वथा क्षय थायछे. जे जे कर्मप्रकृतिनो जे जे गुणठाणे क्षय थवानो होयछे ते ते गुण-

टाणे तेनो क्षय थायछे. ज्ञानप्ररूपणा नंदिसूत्रमां हेतु न्याय पूर्वक दर्शावीछे. माटे आत्मार्थि जीवोए त्यांथी विशेष अधिकार समजवो अहाज्ञानना केवी शक्ति ! ! ! चक्षुद्वारा देखेला पदार्थोनो मनमां केवो विचार थायछे. बीजानामनना विचार पण ज्ञानथी जाणी शकाय छे. ज्ञानना एकनी एकथी बीजा जीवमां विशेपता देखवामां आवेछे. केवलज्ञानमां सर्वज्ञाननो समावेश थायछे. संप्रतिकाळे ज्ञानना क्षीणताछे. अने तेथी मतभेद घणा थया अने थशे जेम ज्ञानना अल्पता तेम मतमतांतर विशेप अने ज्ञानना वृध्धि तेम मतमतांतर अल्प जाणवां. मतभेदना कदाग्रह विना जे जे वांचवुं. सांभळवु. मनन करवुं ते सफळछे.

क्षयोपशमभावे अधुना मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान समकिती जीवोने वर्तेछे. एम कथवुं अनुभवगम्य सप्रमाणछे, मति अज्ञानी अने श्रुत अज्ञानी जीवो आ क्षेत्रमां विशेपछे. मति अने श्रुत ज्ञानी जीवो अल्प अने तेमां पण विरति पाम्या जीवो अल्प अनुभवगम्य सिद्धांतानुसारछे.

हे भव्य मति ज्ञान अने श्रुतज्ञाननो गहन विपयछे. अल्पज्ञपणाथी सूक्ष्म तत्त्वस्वरुप निगोद स्वरूप समजी शकाय नहीं तो तेमां ज्ञानावरणीय कर्मनो दोप समज. ग्रंथकर्त्ताने दोप आपीश नहीं सूक्ष्म तीक्ष्ण मति ज्ञान विना सूक्ष्म वातनो बोध थतो नथी. एम कहेवुं सप्रमाणछे. केवलज्ञान अने केवल दर्शनथी जे पदार्थ स्वरूप जाणवा देखवामां आवे तेनुं स्वरूप मतिज्ञानथी यथार्थ साक्षात् कदी जाणी शकाय नहि. एम अनुभवथी ज्ञानीओ कयेछे. माटे शंका मनमां लावीश नहिं. जिन प्रवचनपर आस्था राख. जिनेश्वरें जे वचनो कथ्यांछे ते अन्यथा नथी. एम श्रद्धा कर. अने आत्मानुभव सद्गुरुद्वारा कर के जेथी मुक्तिमार्गनो अधिकारी थाय. पूर्वो-

क्त मोहनीय अने ज्ञानावरणीय कर्मनुं स्वरूप तथा तेना नाशथी आत्मगुणोनो लाभ देखाडी हवे प्रस्तुत कर्मविषयनुंज वर्णन करवामां आवेछे. कर्म संबंधी सामान्य वर्णन कर्युं. कर्म जडछे अने ते आत्माना गुणोनो घातकर्त्ता छे. सर्व जीव कर्मासक्त छे. कर्मनो नाश करवो एज कर्तव्य छे. कर्मनुं स्वरुप समज्या विना कर्मनो नाश थतो नथी. श्रीवीरप्रभुए घोर परिसह सहन करी कर्मनो क्षय कर्यो. तो तेमनी वाणीना आधारे आपणे पण ज्ञान दर्शन चारित्रनुं आराधन करवुं, लक्ष्यमां राखवुं. मोक्ष मार्ग विकट छे. प्रमाद घणो, उपयोग अल्प, आयुष्य अल्प, दुःषमसमय, सत्समागम अल्प, धर्म साधनो अल्प, कर्मसाधनो विशेष, अहो केवी दुर्दशा, कर्मनुं जोर विशेष, धर्मध्याननुं जोर अल्प. आ शुं थयुं, शुं करवुं. हे वीरप्रभु तारी वाणीनुं शरण, जगत्मां तमारो केटलो उपकार! तारो आधार, तारो विश्वास. कर्मनी दुःखप्रदविचित्रप्रकृतियोनो नाश करवा केवा प्रकारनुं लक्ष्य जोड़ए ? अधमता अने प्रमादथी जीवो क्यांथी स्वस्वरूप पामे ? धर्म उद्यम अल्प छे. कर्मोपार्जन उद्यम अहर्निश चाल्या करेछे. तपासोतो खरा ! रागनुं जोर तमारामां विशेष छे वा वैराग्यनुं, जोर विशेप छे, कर्मनी कठीन ग्रंथीनो भेद आत्मार्थी पुरुष पुरुषार्थथी करेछे. कर्मनुं क्षेत्र चतुर्दश रज्वात्मक प्रमाण छे, अर्थात् कर्मनी राजधानी चउद राजलोकमां छे. तो पण कर्मथी डरवानुं नथी कर्म नाश थवानुं नथी एम स्वप्नमां पण विचारवुं नहि, कारणके तेम मानी बेसवाथी उलटुं कर्मनीज वृद्धि थायछे. माराथी राग छूटवानो नथी वा मारा कर्ममां लख्युं हशे ते प्रमाणे थशे. एम प्रमादनी वृद्धि अर्थे वा सरागदशानी वृद्धि अर्थे वचन वदशो नहि. अनुद्यमनां वचनो जे बोलवामां आवेछे ते चारित्र मोहनी आदिना उदयथी समजवुं. जरा सूक्ष्मदृष्टिथी विचारो के

उद्यमथी कयुं कार्य सिद्ध थतुं नथी ? अलवत उद्यमथी सर्व कार्य सिद्ध थाय ते. हवे ते कर्म संबंधी विशेष विवेचन करीए छीए.

१ कर्मराजा
२ कर्मराजानो प्रधान मोह
३ संसारनगर
४ कर्मराजानो पुत्र अज्ञान
५ कर्मराजानी पुत्री निंदा

कर्मराजाना सुभटो—मिथ्यात्व, अविरति, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, कलह, भय, अभ्याख्यान, अशुभयोग, आर्तध्यान, रौद्रध्यान, इर्ष्या विगेरे कर्मनुं कार्य ए छे के दरेक संसारी जीवो उपर सत्ता चलाववी. हवे एक दीवस कर्मराजा पोते संसारनगर तरफ ध्यान आपी जुएछे के संसारी जीवो हाल केवी हालतमां छे अने ते आपणी आज्ञामां छे के नहीं ? जोतां जोतां कर्मराजाने मालुम पड्युं के, अरे हाय वीतरागना भक्तो तथा तेमनी वाणीरूप आगमोथी घणा जीवोए मारु स्वरूप जाणी लीधुं. अने ते जीवो मने ते शत्रु तरीके लेखवी मारी नगरीमांथी नीकळवानो उपाय श्रीवीतरागना भक्तोने पुछेछे अने मोक्ष नगरी के जे धर्मराजानी राजधानी त्यां जवा इच्छेछे. केटलाके मोक्ष नगरी तरफ जवा सारु प्रयाण शरु कर्युछे. अरे मारा नगरमांथी जीवो केटलाक काळे सर्वे जता रहेशे. केम करु, एम उंडा विचारमां गुम थइ बेठो छे. त्यारे तेनी पासे मोहप्रधान आवी पूछेछे के, हे कर्मराजा तमे केम उदास थइ बेठा छो ? मारा जेवो प्रधान छतां तमने शी मोटी चिंता आवी पडीछे ते कृपा करीने कहो.

कर्मनृपतिभाषण

कर्मराजा मोहप्रधानने कहेछे के, अरे हवे मारा राज्यमांथी

दिनप्रतिदिन जीवो मोक्ष नगरीमां चाल्या जायछे.

धर्म राजाना सुभटो आपणी नगरीना जीवोने समजावी पोतानी नगरीमां खेंची जायछे. मुख्यताए तेमां मोटो भाग जीवोने मोक्ष नगरीमां लइ जनार तीर्थंकरोनोछे. अने तेमना कायदा प्रमाणे वर्तनार साधुओ एवा तो कावेलछे के-ते साधुओनी आगल आपणा क्रोधादिक शत्रुओनुं कंइ चालतुं नथी. आपणा सुभटोने पण हरावी जीवोने पोते मोक्ष नगरीनो मार्ग जणावी आपणी नगरी खाली करेछे. हाय, हवे शुं करुं. अरे ओ मोह प्रधान तुं जलदी आपणा सुभटोने तथा मारा पुत्रने बोलाव, अने अविवेक सभामां कचेरी भर, मोहप्रधान कर्मराजानुं वचन अंगीकार करी सर्व सुभटोने बोलावी सभानी बेठक करी. कर्मराजा सभामां आवी ममता सिंहासन उपर विराजमान थया. हवे कर्मराजा पोताना सर्व सुभटोने तथा पुत्रपुत्रीओने नीचे मुजब वचनो कहेछे के-

अरे मारा मोह प्रधान तुं मारो प्रिय प्रधानछे. हिंसातो मारी बेनछे. निद्रा मारी पुत्रीछे, अज्ञान मारो पुत्रछे, चउदराज लोकनुं राज्य आपणा ताबामांछे. आपणुं राज्य अनादिकालथी संसार नगरमां चालेछे. सर्व जीवोने आपणे पोताना वशमां राखी धर्म राजानी मोक्ष नगरीमां लेइ जवा देवा नहि. ते तमारी मुख्य फरजछे. आपणुं राज्य घटे नहि ते तमारे ध्यानमां लेवुं जोइए.

मारा सुभटो सांभलो ! आपणो मोटो शत्रु धर्म राजाछे. ज्ञान दर्शन चारित्र ए त्रण एना पुत्रछे. धर्म राजानो उपयोग रूप प्रधान छे, क्षांति,आर्जव,मार्दव,मुक्ति,संयम,सत्य, शौच, आकिंचन, ए दश धर्म राजाना अत्यंत बलवान सुभटोछे, समकित रूप धर्म राजानो पुत्र एवो तो बलवानछे के जेनाथी आपणो मिथ्यात्व सुभट रण संग्राममां भागी जायछे, पंच महाव्रत रूप जोद्धाओ एवातो बलवा-

नछे के अविरति नामना आपणा योद्धाने थरथरावेछे. आपणा नगरनो भंग करनार श्री चोवीस तीर्थंकरो तथा तेमनाथी उत्पन्न थयेला १साधु २साध्वी ३श्रावक ४श्रावीका रूप चतुर्विध संघ आपणाथी छुटी पडी धर्म राजाना नगरमां जवा उपडयोछे. तीर्थंकरना भक्तो, साधु महाराजाओ, आपणा संसार नगरमां रहेनार संसारी जीवोने एवातो उपदेश आपेछे के—ते उपदेश सांभळ्या पछी आपणा नगरमां ते जीवो रहेता नथी, अने संसारने ते स्मशान सरखो गणेछे, आपणी मायाना अने कुटुंब परिवारने बंधन समान गणेछे, मायाना पास त्रोडी वैराग्य रूप बख्तर धारण करी संसारनो त्याग करेछे, अनादिकाळथी आ प्रमाणे आपणा नगरमांथी जीवो मोक्ष नगरमां चाल्या जायछे. ते जोइ मने अत्यंत चिंता थायछे. धर्म राजानुं मोक्ष नगर आपणा संसार नगर करतां नानुंछे ते चौद राज लोकने अंते आवेलुंछे ते नगरमां रहेनारा जीवो अत्यंत सुखी होयछे मोक्ष नगरीमां गयेला जीवोनो आपणाथी कशो भय रहेतो नथी.

मोक्ष नगरमां गया जीवो पाछा आपणा नगरमां आवी शकता नथी आपणुं तेमना उपर कशुं जोर चालतुं नथी. अरे मारी नगरीनी खराब अवस्था थइ गइ! तमो आटला बधा सुभटो छतां मारी आवी दशा थई, हवे मारे शुं करवुं,कोनी आगळ जइ पोकार करवो.

आ प्रमाणे कर्म राजानां वचनो सांभळी मोह प्रधान आस्वासना आपेछे.

हे कर्म राजा तमो केम चिंता करोछो, कर्म राजाजी तमारुं नगर कदी खाली थइ शकवानुं नथी. अनादिकाळथी तमारी एवी सत्ता बेठेलीछे के प्रायः कोइक जीव मोक्ष नगरीमां जइ शके, आपनो हुं प्रधान तथा अज्ञान नामनो पुत्र, एटली तो संसारी जीवो

उपर सत्ता चलावेछे के, विचारा जीवने संसार एज सार मान्या विना छुटको थतो नथी. कर्म राजाजी अमारां दरेकनां पराक्रम नीचे मुजबछे ते सांभळो.

हुं मोह प्रधान अनादि काळथी आपनी कृपादृष्टि तळे हाजरछुं. परभावरूपी झाळमां दरेक संसारी जीवोने में फसावी दीधाछे. एकेंद्रिय जीवो उपर पण मारी सत्ता व्यापेली छे, द्वीन्द्रिय जीवो उपर पण मारी सत्ता व्यापेलीछे, त्रीन्द्रीय जीवो उपर पण हुं सत्ता चलावुंछुं चतुरिन्द्रि जीवोपर पण मारा वशमांछे, पंचेंद्री जीवो चार प्रकारनांछे १ देवता २मनुष्य ३तीर्यंच ४नारकी ए चार प्रकारना जीवो पण मारा आधीनछे, देवताओ पण देवीओ उपर मोहना पासथी आशक्त रहेछे. आ मारी देवी, आ बीजानी देवी,एवी मोह थगा करावनारछुं. मारी उत्कृष्टि स्थीति मोहनीय, कर्मनी सित्तेर कोडाकोडी सागरोपमनीछे, नानुं बालक तेनामां पण हुं व्यापिछुं. युवावस्थावाळा जुवान पुरुषोमां तो हुं निर्भय पणे व्याप्त छुं जो मोहना होय तो दरेक मनुष्यो संसारमां सार मानेनहीं, रात्री अने दीवस हुं दरेक जीवोनी साथे व्याप्तछुं, मोह मदथी घेला थयेला जीवो जाणी शकता नथी के अमो मोहना पाशमां छपडायाछीए-एवी मारी सत्ताछे जोगी जती, संन्यासी, गोसाइ, अतीत, फकीर विगेरे कहेछेके मोह खराबछे, मोह करना नहि एम बीजाने उपदेश आपेछे तेवा पुरुषोने पण हुं मारी मोह झाळमां फसावी दउंछुं.

फकीर फकीराइ लेइ बेठा होयछे तोपण धन स्त्रीनामां हुं प्रवेश करी तेने लडचावी संसारमां पाडुंछुं राजाओ के जे शूरवीर कहेवायछे तेने पण स्त्री,धन, पुत्र, राज्य, विगेरेना मोहमां फसावी देउछुं. जे राजाओ सिंह समान शूरा होयछे, अने जे रणसंग्राममां हजारो मनुष्योने कापी नाखेछे. तेवाने पण हुं पुत्र मोहमां फसावी

रोवर.वुं छुं. सिंहसमानशूरा राजाओने पण मोहमां फसावी स्त्रीओना पगे लगाडुंछुं. हजारो सुभटोनां बाण वागतां पण जेनी चक्षुमांथी अश्रु आव्यां नथी. एवा राजाओनी चक्षुमांथी स्त्रीना मरणथी अश्रु कढावुंछुं. जो हुं राजाओमां व्यापी नहि रहुं तो तेओ आ संसार मांजीवनी हिंसा विगेरे केम कुकर्म करे?पृथ्वीना लोभथी परस्पर राजाओने हुं लडावुंछुं, स्त्रीना मोहथी परस्पर राजाओने लडावनार अने दुनीआमां जीवोनो नाश करनार हुं मोह प्रधान छुं. ज्यां मारो संचार होयछे त्यां क्रोधादिक सुभटो पण वास करेछे. मोक्ष नगरीमां जतां अगीयारमा गुणठाणा सुधी मारु प्रबल जोरछे. कोइ विरलो जीव माराथी बची जायछे. अरे तमो तीर्थंकरना भक्तो साधुओने पूछोके तमो कोनाथी विशेष डरोछो. प्रत्युत्तर मळशे केमोहथी अमो डरीए छीए. जुओ चकलो, चकली, मोर, पोपट, कबुतर, सिंह, शृंगाल, विगेरे तिर्यंच जीवो पण मोहावेशथी केवी स्थिति प्राप्त करेछे.

चकलो, चकली,पोतानां इंडांपर केवो मोहधारण करेछे. मयूर मयुरीनो विरह थतां केवुं आक्रंद करेछे. गौ महिषी पोतानां बच्चांने जुओ मोहना आवेशथी केवां चाटेछे: कूकडी कुरकुरीयांने पोतानां मानी केवुं हेतधारण करेछे. वळी धनना मोहथी प्राणीओ मरी परभवमां मूषक सर्प विगेरेना अवतार धारण करेछे. पुत्रना मरणथी मातपिताने अत्यंत रूदन करावनार हुं छुं. स्त्रीना मरणथी तेना पतिने शोक करावनार हुं छुं. सत्यनेपण असत्य तरीके देखाडनार हुं छुं. मारा वशमां आवेला जीवोने चोराशीलाख जीवायोनिमां भटकावनार हुं छुं. मारा वशमां पतित प्राणीओ हिंसा करेछे. असत्य वदेछे. चोरी करेछे. परस्त्री सेवन करेछे. इत्यादि सर्व मारी सत्ताथी थायछे.

पृथुराजे स्त्रीना मोहथी जयचंद्र साथे भारे क्लेश कर्यो. पृथुराज उपर शाहबुद्दीन घोरी चढी आव्यो, तेमां अंते मृत्यु पाम्यो कर्णघेलाए स्त्रीना मोहथीराज्य खोयुं,मनुष्यपरदेश भ्रमण करेछे.जळमां प्रवेशेछे, इत्यादि सर्व मारुं कार्यछे. अनंत जीवोने हुं संसारमां अनादिकाळथी भटकावुं छुं. अने भटकावीश. धर्मराजानो विवेक रूपी योद्धो पण माराथी बीवेछे. कया जीवमां हुं व्यापी रह्यो नथी.

वीतरागदेवना साधुओने लाग साधी मारा फंदमां फसावी दउछुं. जुओ मारी केवी शक्ति!जीवोने संसारमां सार देखाडी चारित्र लेवरावंतो नथी. सर्व जीवोने संसारमां अनादिकाळथी फेरवुं छुं अने वळी फेरवीश अधर्मी बनावुंछुं. अनेक प्रकारनो वेपो करी जीवोनो हुं माराफंदमां फसावुं छुं. कोइनामां व्यक्तपणेतो कोइनामां अव्यक्तपणे हुं वसुंछुं,सर्व संसारी जीवोनेहुं पूतळांनी माफक नचावुं छुं, मारी घेनमां सर्व जीवो मुंझाणाछे. ज्यां त्यां हुं मोह व्यापी रह्यो छुं मोह घाटीनुं भेदन करवुं महा दुष्करछे.एम दरेक महात्माओ पुस्तकमां लखेछे. दरेक जीवनुं भान भूलावनार अने परस्वभावमां रमण करावनार हुं मोह जीवोमां पेठो के ते बीचारा परवश थइ जायछे मारा आगळ सर्व जीवो कीटक समानछे, मारी शक्तिथी ज्ञानीओ पण गभरायछे, हुं सदाकाल चोराशी लाख जीवयोनिमां रहेला जीवोनी पासे रहुंछुं. महादेव सरखाने पण पार्वतीना मोहमां फसावनार मारा विना बीजो कोण! देशाभिमानथी दुनीयानी प्रजाने परस्पर वैर करावनार मारा विना बीजो कोइ नथी. मोह गर्भित वैराग्यमां पण मारु अस्तित्वछे, मतमतांतर मिथ्यात्वादिनी वृद्धि माराथी थायछे. जुओ मारी शक्ति. !!!

आवां मोह सचिवनां वचन सांभळी कर्मराजाए मोह प्रधानने शाबाशी आपी कह्युं के धन्यछे मारा शूरा मोह प्रधान मारे तारा

जेवो बीजो कोइ प्रिय नथी.

हवे कर्मनृपतिनो पुत्र अज्ञान स्वकीय स्वरूप सभा समक्ष कथेछे. अरे हुं मोहराजानो पुत्रछुं. अज्ञान मारूं नामछे, पंडित लोक मारा वैरीछे. चउद राजलोक मारू स्थानछे. सर्व जीवोने में अंध कर्याछे. ज्ञानावरणीय कर्म करी हुं सर्व जीवोमां वसुंछुं, धर्मराजा तथा मोक्षनगरीनुं भान हुं थवा देतो नथी. सत्यासत्यनुं स्वरूप जीवोने जाणवा देतो नथी, सत्यदेव गुरूधर्मनुं ज्ञान मारी सत्ताथी जीवो करी शकता नथी.

तीर्थंकरनां सूत्रो तथा तेमनी आज्ञा प्रमाणे मोक्ष नगरी प्रतिगमन करनार मुनिवरो पण मारा वशमां रहेला जीवोने समजावी शकता नथी. जे समजु छे तेने साधुओ समजावी शके, पण हुं ज्यां वसुं छुं त्यां तेओ गमे तेटलो उपदेश आपे तोपण उखरभूमां वर्षानीपेठे निष्फळ जायछे. चारगतिना जीवो मारा वशमांछे. पशुपंखी आदिजीवोनी में केवी अवस्था करीछे; माटे हे कर्मनृपति मारा जेवा पुत्रो छतां आपने चिंता करवी योग्य नथी.

अज्ञान पुत्र आ प्रमाणे कहीने मौन रह्यो, त्यारे कर्मनृपतिनी निंदा नामनी पुत्री सभासमक्ष कहेवा लागी के—

निंदाभाषण.

हे पिताजी ! हुं आपनी निंदा नामनी पुत्री छतां आप केम उदास थाओछो. सर्व जीवोने हुं वश करुछुं. अदेखाइ नामनी मारी माताए जन्म आप्योछे सर्व जीवोना गुणोने हुं तेमां पेसतां भस्म करुछुं. ज्यां माता अदेखाइनो प्रवेश थयो. त्यां हुं त्वरित हाजरी आपी प्रवेश करुछुं.

मुनियो पंडितो के जे अमृत सरखां वचन वदेछे तेना मुखमांथी खराब वचनोरूपी विष्टा कढावुंछुं. जे मनुष्यो परपुरुषना

गुणनी प्रशंसारुप जळथी पोताना आत्माने पवित्र करेछे. ते पुरुषो मारा वशमां थवाथी परनिंदारुप कर्मकादवथी तेओने मलीन करुं छुं. निंदा चतुर्थ चंडालछे एम सर्व लोको जाणेछे छतां निंदा कर्या विना छूटको थतो नथी.

सामासामी एक बीजानी निंदा करावी परस्पर वैर करावुंछुं, लडावुंछुं, अने नरक निगोदमां जीवोने घसडी लेइ जाउछुं. लोको सर्वेना करतां मने विशेष बळवान् गणेछे, कारण के परस्पर एक बीजानी निंदा करवाथी एक बीजानां मस्तकोने पण दडानी माफक मनुष्यो उडावी देछे, माटे हे कर्मराजाजी!!! तमारी पुत्री छतां तमो केम चिंता करोछो.

आवां निंदानां वचन सांभळी अदेखाइ नामनी कर्मराजानी स्त्रीनो पुत्र कुसंप नामनो हतो ते बोलवा लाग्यो के—हे पिताजी मारा जेवो आपणा सुभटो छतां धर्मराजाना सुभटोनुं कंइ चालवानुं नथी. चार गतिना जीवोमां हुं व्यापी रह्याछुं, मारा सरखुं कोइनुं बळ नथी, वकील वकीलने कुसंप, राजाराजाने कुसंप, मुनि मुनिने कुसंप, वेश्या वेश्याने कुसंप, भीखारी भीखारीने कुसंप, वेपारी वेपारीने कुसंप, कूतरा कूतराओने कुसंप. एम सर्व जीवोने मांहोमांहे कुसुंप करावनार हुं छुं, हे कर्मराजाजी हुं कुसंप नामनो महायोद्धो हिंदुस्तानना रहेवाशीओमां पेठो त्यारथी हिंदुस्ताननना लोकनी दुर्दशा थइ गइछे.

जयचंद्र अने पृथुराजने लडावी मारनार पण हुंछुं. मुसलमानोए दिल्हीनी गादी लीधी ते पण मारा प्रतापथी. कारग के ज्यारे हिंदुस्तानना राजाओने मांहोमांहे कुसंप थयो त्यारे मुसलमानोए हिंदनुं राज्य सर कर्युं. मोक्षमार्गमां चालनार साधुओनो पण कुसंप करावी कुमार्गे चलावनार हुंछुं ज्यां पेठो कुसंप त्यां

जरा नहि जंप, ए वचन हुं सत्य करुंछुं. कुसंपथकी मांहोमांहे मनुष्य लडेछे एक बीजानां मस्तक छेदेछे, एक बीजानी निंदा करेछे, क्रोध, मान, माया अने लोभ पण ज्यां हुं कुसंपछुं त्यां वासो करे छे, चोरासी लाख जीवयोनीना जीवोने हुं अनादिकाळथी मारा वशमां राखुंछुं. हाल हिंदुस्तान देशनी नबळी स्थीति करनार पण हुंछुं. ज्यां में प्रवेश कर्यो त्यांथी संप नामनो योद्धो पण पोबारा गणी जायछे, कोइ वखत कोइ देशमां वधारे रहुंछुं अने कोइ वखत कोइ देशमां थोडो रहुंछुं, जीवो बिचारा संप करवाने घणी मेहेनत करे, कोन्फरन्स भरेछे, सभाओ स्थापेछे अने बीजाओने कहेछे, के भाइओ संप करो पण मारुं मूळ काढवुं घणुं मुश्केलछे, ज्यांथी कुसंप काढवानी तैयारी संप योद्धाओनी होय त्यां तो कुसंप भयरहीत रहेछे. मोटा मोटा मुनिराजो भाषणो आपीने थाक्या पण मारुं मूळ कोइ उखेडी शक्युं नहि. वखते मुनिओमां पण हुं लाग जोइने पेसी जाउंछुं अने मुनि मंडळमां पण कुसंपनी सत्ता चलावुंछुं, जे जीवो मारा वशमांछे तेमने काष्टनी पूतळीनी पेठे चारगतिमां नचावुंछुं, मारी अदेखाइ माता विना हुं एकलो रही शकतो नथी.

अमेरिका इंग्लांड वगेरमां कुसंप नथी तो ते लोको सुखीछे पण ज्यारे हुं त्यां पगलां भरीश त्यारे ते लोकोना बार वगाडीश, संपीने जीवो वर्ते ते मने सारुं लागतुं नथी. नबळा मनना माणस उपर हुं विशेष सत्ता चलावुंछुं. विशेष शुं. पर्वत उपर, रणमां, अग्नि विगेरेमां हुं जीवोने प्रवेश करावुंछुं. हे कर्मराजाजी मारा जेवो पुत्र छतां आप केम चिंता करोछो.

आवुं कुसंपनुं वचन सांभळी अदेखाइ नामनी तेनी माता सभा समक्ष भाषण करवा लागी के, हे मारा प्राणप्रिय नमो मारा छतां केम चिंता करोछो.

अदेखाइ परस्पर करावची ए मारो धर्मछे. गुणीना गुण देखी माणसो अदेखाइ करेछे. चारगतिना जीवोमां हुं आविर्भावे वा तिरोभावे वसुंछुं.

वेपारी वेपारीने, राजा राजाने, वकील वकीलने, साधु साधुने हुं मांहोमांहे अदेखाइथी कर्मबंध फळ प्राप्त करावुंछुं.

मारा वश थएला जीवो नरक निगोदमां जइ दारुण भोगवेछे इत्यादि अदेखाइना वचन सांभळी कर्मराजा खुशी थयो. तेवामां सभामां विराजमान मिथ्यात्व नामनो कर्मराजानो योद्धो बोली उठयो के, हे कर्मराजाजी मारा छतां आप केम चिंता करोछो. हुं मिथ्यात्व नामनो योद्धो संसारमां प्रख्यातछुं, कर्मबंध जीवोने करावनार मुख्यताए हुं छुं, मारी सत्ता संसारी जीवोपर सारी रीते बेठेलीछे. मारु मुख्य काम ए छे के, भव्य जीवोने शुद्ध देव शुद्ध गुरु अने शुद्ध धर्मनी श्रद्धा थवा देवी नहीं, कोइ विरला प्राणी तीर्थंकरनो कहेलो सत्य मार्ग जाणी शकेछे, जुओ में केटला जीवोनी एवी ता बुद्धि करी नाखी छे के ते विचारा पंच महाभूत स्वरूप जीवछे ते थकी अन्य आत्मा नथी एवुं विचारा मानी चार्वाकमतरूप राक्षसना मुखमां प्रवेश करेछे

में केटलाक जीवोने एवा तो फसाव्याछे के– ते पामर जीवो जीव अजीव पुण्य पापने स्वीकारता नथी, मोक्ष मानता नथी. खावुं पीवुं, हरवुं, फरवुं इत्यादि कार्यमां धर्म मानेछे–केटलाक जीवोने एवा तो में फसाव्याछेके–अज्ञानपणामां सुख मानेछे. अने तेओ अज्ञानवादी प्रभावेछेके–अज्ञानमां सुखछे ज्ञानथी राग द्वेष उत्पन्न थायछे. एम मानी पामर चतुर्गति संसारमां अनंतशः परिभ्रमण करेछे.

वळी में केटलाक जीवोने एवातो फसाव्याछे के– बौध धर्म

स्त्रीकारी पोताने सुखी मानेछे अने ते पामर प्राणी मारा पासमां थी छूटी शकवाना नथी.

वळी में केटलाक जीवने एवी रीते फसाव्याछे के ते इशुए चढावेला इशुख्रीस्त धर्मरुप अन्याय कूपमां गाडरीया प्रवाहनी पेठे टपोटप कूदी पडेछे अने त्यां अत्यंत दुःख भोगवता सदा काळ जीवन गुजारेछे. वळी में केटलाक जीवोने एवा तो मुंझाव्याछे के बीचारा धनना, स्त्रीना, पुत्रना लोभमां तत्त्व मानेछे अने ते पोताना आत्मानुं हित साधी शकता नथी. वळी में केटलाक जीवोने एवा तो फसाव्याछे के-सत्य जैनधर्म पाम्या छतां पण तेमां शंकादिक करी आपणी सत्तामां वर्तेछे. वळी हुं तत्त्व समज्या जीवोने पण मिथ्यात्वमां घेरुछुं. जेटला संसारमां मतमतांतर उत्पन्न थायछे ते मारी सत्ताथीज थायछे. संसारी सर्व जीवोने हुं मारा वशमां राखुंछुं. माराथी छटकी कोइ वीरपुरुष मुक्तिमां जइ शकेछे. हुं सर्व जीवोमां व्यापीने रह्योछुं. इत्यादि मिथ्यात्व योद्धानां वचन सांभळी कर्मराजा हर्ष पाम्यो. तेवामां अविरति नामना मोहराजाना योद्धाए भाषण कर्यु के अरे सभाजनो हुं कोने संसारमां भटकावतो नथी. चोथा गुणठाणा सुधी तो मारु स्वतंत्र राज्यछे देवताओ तथा नारकी जीवो तथा तिर्यंच जीवो प्रायः सर्व मारा वशमां वर्तेछे.मनुष्योमां पण आर्यजनो कोइ मारा झपाटामांथी बची गया हशे. आवुं अविरतिनुं बोलवुं सांभळी कषाय नामनो योद्धो छाती ठोकीने बोली उठयो के, अरे ज्यां सुधी कषाय एवुं मारुं नाम दुनियामां विद्यमानछे त्यां सुधी कोइनो भय राखवो नहीं, मारुं रहेठाण चौद राजलोकमांछे, हुं कोइ जीवने मुक्तिनगरीमां जवा देतो नथी, सर्व जीवो कषायना वश थइ पोतानुं आत्महित करवुं चुकेछे. सामासामी जीवोने हुं लडावी मारुंछुं एक बीजानां मस्तक

कपावुंछुं. सामासामी वेर करावुंछुं, माता, पुत्र, स्त्री विगेरनो निकट संबंध करावी आपनार हुंछुं संसारी जीवोने उपरना गुणठाणे चडवा देतो नथी. संसाररुपी वृक्षनुं बीज हुंछुं. हुं अनादिकाळथी संसारमां वसुंछुं. कोइपण काळे संसारमांथी मारुं रहेठाण दूर थवानुं नथी. आ प्रमाणे कषाय सुभटनां वचन सांभळी कर्मराजा खुशी थयो. त्यारे योग नामनो सुभट बोल्यो के मारुं पराक्रम कोण नथी जाणतुं. हुं सर्व जीवोने पाप बंधावी चोराशी लाख जीवयोनिमां भटकावुंछुं हुं सूक्ष्म रीते दरेक जीवोने व्यापीने रहुंछुं हुं आत्मानी परमात्मादशा थतां विखूटो पडुंछुं, माटे हे कर्मराजाजी तमो जरा मात्र पण भय पामशो नहि. इत्यादि सुभटोनुं बोलवुं सांभळी कर्मराजाने जुस्सो चढयो. हिंमत आवी.

सर्व सुभटोने कर्म राजाए हुकम कर्यो के तमो हवे सर्व संसारी जीवोने वशमां राखो के जेथी धर्मराजाना सुभटोनुं कंइ पण चाली शके नहि. अने सर्व जीवोमां व्यापी संसारी जीवोने धर्म करतां अटकावो.

आवां कर्मराजानां वचन सांभळी सर्व सुभटो जुस्साभेर पोत पोतानुं कार्य बजाववुं तत्पर थया.

हवे आ वखते धर्म शुं करेछे ते नीचे मुजबः—

धर्मराजा

विवेकसभा, दयामाता, धैर्यपिता, शांतिस्त्री, उपयोगमंत्री, समकितसेनापति, क्षमापुत्री, ब्रह्मचर्यपुत्र, क्षमादिधर्मनृपतिनासुभटो, मुक्तिनगरी.

एकदीवस धर्मराजा विचार करेछे के—अहो हुं सर्व जीवोने मुक्तिनगरीमां क्यारे लेइ जइश. अनादिकाळथी हुं संसारी जीवोने मुक्तिपुरीमां लेइ जाउंछुं. तोपण अद्यापि पर्यंत पार आवतो नथी.

कर्मराजाना सुभटो जीवोने एवातो सपडावेछे के-भाग्ये जावो मारा नगरमां आवी शके-सर्व जीवोमां कर्मराजाना सुभटो व्यापी रह्याछे. कर्म सुभटोए संसारी जीवोने एवी रीते अंध कर्याछे के-ते जीवो मुक्तिनगरीमां आववा इच्छा पण करता नथी. अरे हवे केम करवुं. आम धर्मराजा उंडो विचार करी चिंता करेछे.

त्यारे उपयोगमंत्रीए इंगिताकारथी जाणीने पूच्छयुं के-हे प्रभो आज आप मोटी चिंतामां पडया होय तेम देखाओछो. ते चिंता शीछे ते कृपा करीने कहो—

एम उपयोग मंत्रीनी प्रार्थनाथी धर्म नृपतिए सर्व हकीकत कही संभळावी—

त्यारे उपयोग मंत्री बोल्यो के-हे प्रभो मारा छतां आपने चिंता करवी घटे नहि. विवेकसभा भरावी धर्मराजा निस्पृह सिंहासन उपर बिराजमान थया. मुख्य उद्देशथी धर्म राजाए वातचर्ची अने कह्युं के-हे सुभटो तमो आळसु थइ केम बेशी रह्याछो. कर्म राजाना सुभटो सर्व जीवोने भमावीचारगतिमां परिभ्रमण करावेछे. सत्यमोक्षमार्गनी समजण पडवा देता नथी. तमो मारा खरा सुभटो होय तो कर्मराजानो नाश करी भव्यजीवोने मुक्तिपुरीमां लेइ जाओ. आ मारी सभा समक्ष हितशिक्षाछे. आवां नीतियुक्त मिष्ट वचनामृतनुं श्रवण करी धर्मराजानो अनादिकाळनो उपयोग मंत्री गंभीर वाणीथी सभा समक्ष कहेवा लाग्या के-

हे धर्मनृपति, हुं निरंतर आपनी सेवामां हाजरछुं. ज्यां आप धर्मराजा त्यां हुं उपयोग अवश्य.

आपनो सर्व कारभार हुं करुंछुं. माटे कहेवायछे के-उपयोगे धर्म-उपयोगविना आप धर्मनृपति नथी. एम अनुवाद प्रसिद्धछे. हुं आविर्भावे तथा तिरोभावे आपनी साथे सदाकाळ जीवोमां वसुंछुं.

मारी शक्ति प्रगट थतां मोहादि शत्रुओ नाश पामेछे. जीवने क्षपक श्रेणि उपर हुं चढावुंछुं. क्षपकश्रेणि चढतां कर्मशत्रुनो नाश थायछे. मोक्षपुरीमां पण प्रत्येक आत्मानी साथे भिन्नाभिन्न स्वरूपे हुं वसुंछुं. माराथी दरेक आत्माओ स्वपरने जाणी शकेछे मारो नाश कोइथी थतो नथी. माटे हे धर्मराजाजी आप जरामात्र चिंता करशो नहि. आवां उपयोग मंत्रीनां वचनो सांभळी धर्मराजा खुशी थयो, त्यारे धर्मराजानी माता दया सभा समक्ष बोलवा लागी के–हुं ज्यां सुधी विद्यमानछुं. त्यां सुधी कोइनुं कंइ चालनार नथी. हुं सर्व जीवोमां प्रथम वासकरुंछुं. हुं ज्यां छुं त्यां तारी हयातीछे. द्रव्य अने भावथी मारु बे प्रकारे वसवुं थायछे. दया, धर्मनी माता जगत्मां कहेवायछे. तुं मारो पुत्रछे हुं ज्यां छुं त्यां त्हारी हयाती कहेवायछे, माराथी हिंसा विगेरे कर्म राजानो परिवार दूर नाशेछे, सर्व प्राणीयोमां थाडी घणी स्थीति करुंछुं, अने मोक्षपुरी जीवो न पमाडुछुं, माटे हे पुत्र सुखेथी राज्यधुरा धारणकरो. इत्यादि दयाना वचनो श्रवण करी धर्मराजाना मनमां धैर्य स्फुर्युं. तेवामां धैर्य पिता धर्म पुत्र उपर स्नेहदृष्टि वर्षावतां वचनामृतनो वरसाद वरसाववा लाग्यो हे धर्मपुत्र धैर्यथी तारी उत्पत्ति छतां तमे केम अधीरा बनोछो. कर्मशत्रुओ साथे हुं हिंमतथी लडी जीवोने क्षपकश्रेणि प्राप्त करावी आपुंछुं. हे धर्म तारा सुभटोने धैर्य आपुंछुं अने रणसंग्राममां कर्मनो पराजय करुंछुं, कर्मराजानी साथे युद्ध थायछे, अने तेना नगरमांथी अनेक जीवोने मुक्तिनगरीमां लेइ जइए छीए. माटे धैर्य धारण करो. त्यारबाद शांति स्त्री पोताना स्वामी धर्मराजाने नम्रतापूर्वक विनयथी कहेवा लागी के–हे स्वामिनाथ आप चिंता केम करोछो, मारो हुं धर्म सदाकाळ वजावुंछुं, हुं सर्व जीवोने मोक्ष नगरी तरफ खेचुछुं. सर्व जीव कर्मना आधीन थया छे तोपण मारी संगत करवा चाहेछे. हुं तेमने शांति मेळववा लल-

चावी कर्म प्रपंचथी दूर रहेवा वारंवार मनोद्वारा कहुंछुं जे जीवो संसारनी हवाथी दूर रहेछे अने संसारने वळता अग्नि समान गणेछे ते जीवोमां हुं वास करुंछुं अने ते जीवोने शाश्वतपद प्राप्त करवामां स्हायी बनुंछुं. घणा जीवो मारी स्हायथी मुक्तिनगरीमां गया जायछे अने जशे. माटे आप निश्चिंत रहो. त्यारबाद सकल धर्म सेनानो उपरी "सम्यक्त्व सेनापति" धर्मराजाजीने नमन करि मधुरवाणीथी सभाजनने आश्चर्य पमाडतो कहेवा लाग्यो के हे धर्मराजाजी आपनी सेनानो हुं उपरीछुं. मारो वास सकळ भव्यात्माओमांछे. मारा विना कर्मना राजा योद्धाओ रणभूमिमांथी पाछा हठता नथी, सकळकर्म सैन्यनो हुं नाश करुंछुं. जे आत्मामां हुं उत्पन्न थाउंछुं त्यांथी मिथ्यात्व योद्धो नाशी जायछे. पछी भव्यात्मा सरळताए गमन करतो छतो मुक्ति नगरीमां पहोंचेछे. मिथ्यात्वनो नाश करवो एज मारुं मुख्य कामछे. जे जीवो मिथ्यात्वना जोरे दुनीया परमेश्वरे बनावीछे, पाछो प्रलयकालमां दुनीयानो नाश थायछे परमेश्वर जीवोने सुख दुःख आपेछे एम मानी चारगतिमां भटकनारा जीवोने सुखदुःख आपेछे ते जीवोनो हुं उद्धार करुंछुं. हुं ते जीवोमां वास करी तेमनी सारी बुद्धि करुंछुं परमेश्वर जगत्नो बनावनार नथी, जगत् अनादिकाळथीछे जीवो सर्व परमात्मा सदृशछे, कर्मनायोगे जुदी जुदी गतिमां भमेछे जीवोने कर्म अनादिकाळथी लाग्युंछे. जीवो अनंतछे अनादिकाळथीछे कर्म नाश थतां जीवनी मुक्ति थायछे. आ प्रमाणे जीवोनी सारी बुद्धि करी मिथ्यात्वनो संग दूर करावी मोक्षनगरी तरफ गमन करावुंछुं. केटलाक जीवो मिथ्यात्व योद्धाना संसर्गे ब्रह्म ब्रह्म स्वीकारी अन्यने माया तरीके कल्पी भवब्रह्मांडमां भटकेछे. तेमने हुं शुद्धश्रद्धा अर्पि आत्मत्त्विार्थे आत्मा अने तेने

भटकावनार कर्मछे एवी श्रद्धा करावी कर्म नाश करवा तरफ ते जीवोनी वृत्ति लइजुंछुं. वळी हुं इशु–परमेश्वरनो दीकरोछे तेने सेवो ते तारशे इत्यादि भ्रमपाशमां फसाएला जीवोने विवेकचक्षु अर्पि सत्य मोक्षमार्ग देखाडी आत्मतत्त्वनुं भान करावी शुद्ध बुद्धिथी परमात्मपद प्राप्त करे तेम योजुंछुं, वळी हुं केटलाक जीवोने आत्मा क्षणिकछे. क्षणमां क्षणमां जुदो जुदो आत्मा उत्पन्न थायछे. एम माननारा जीवोनुं मिथ्यात्व संहरी सत्यमति अर्पी आत्मा क्षणिक नथी. आत्मरूप व्यक्तिनो नाश थतो नथी ज्ञेयना पलटवे ज्ञाननुं पलटाववुं थायछे तेथी आत्मामां थतो उत्पाद व्यय तेनी अपेक्षाए पर्यायार्थिक नयमते आत्मा अनित्यछे एम सम्यक्बोध जीवने अर्पुछुं अने द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए आत्मा नित्यछे एम शुद्धबोध समर्पी भव्य जीवोने मुक्ति नगरी दुःप्राप्य प्राप्त करावुंछुं. वळी हुं केटलाक जीवो मिथ्यात्व सुभटनो संग पामी पंचभूत विना व्यतिरिक्त आत्मा नथी एम स्वीकारीछे तेवा जनोने शुद्ध श्रद्धा सद्गुरु संगे करावी आत्मा पंचभूत थकी न्यारोछे सुख दुःख भोक्ताछे कर्मनो कर्ताछे एम सम्यक्त्व रत्न अर्पी मोक्ष मार्ग वाही करुंछुं. वळी जे जीवो नित्य एकांत आत्मतत्व मानी आत्माने कर्मबंध स्वीकारता नथी आत्माकर्मनो कर्त्ता नथी अने भोक्ता नथी इत्यादि वक्ताओने पण अपेक्षाए सत्य समजावुंछुं कर्मनो कर्त्ता अने भोक्ता आत्माछे, आत्मा एकांत नित्य नथी एकांत नित्य वस्तु आत्मा जो होय तो पछी नाना विध शरीरमां वशनारा जीवो सुखी दुःखी अवस्थावाळा देखायछे ते केम बनी शके, माटे आत्मा एकांत नित्य नथी, जो एकांत नित्य आत्मा मानीए तो पछी शिर्षमुंडन व्रतारोप विगेरे पण शा कारणथी करवुं जोइए. माटे आत्मा स्वव्यक्तिथी नित्यछे अने

पर्यायना पलटवे करी अनित्यछे नित्य अने अनित्य एवे धर्मवाळो आत्माछे. तेने कर्म लागेछे कर्मपण मिथ्यात्व अविरति कषाययोगे करी लागेछे ए कर्मनो नाश थतां आत्मा परमात्मपद प्राप्त करेछे ए आदि शुद्धज्ञान अर्पी साध्यमुक्तिपदार्थे जीवोने मेळवुं. अने स्वस्वरूपने प्राप्त कराववुं केटलाक जीवो स्त्री पुत्र धन आदिथी पोताने सुखी मानेछे ते जीवोनी दृश्य क्षणिक पदार्थोमांथी सुखनी बुद्धि दूर करी अदृश्य आत्मतत्त्वमांज सुखछे एम शुद्धबोध देइ आ क्षणिक पदार्थोमां मिथ्या भ्रम थतो दूर कराववुं अने काम क्रोध लोभ भय हास्य शोक विगेरेथी जीवोने पृथक् करी स्वस्वरूपे निष्ठा कराववुं.

अहितमां हितबुद्धि अने हितमां अहित बुद्धिरूप जे मिथ्याज्ञान तेनो हुं नाश करूंछुं दरेक जीवोने हुं सम्यक्ज्ञान अर्पुं छुं अनंता जीवोनुं भूतकाळे मुक्ति प्रति लक्ष दोर्युं अने वर्तमानकाळे लक्ष दोरूंछुं अने भविष्यकाळे ... हुं दरेक जीवव्यक्तिमां वसुंछुं मिथ्यात्व सैन्य माराथी नाशभाग करेछे. जेम सूर्यनो उदय थतां अंधकारनो नाश थायछे अने ते अंधकार क्यां गयो तेनी ... मालूम पडती नथी तेम सूर्यसम मारा प्रकाशथी मिथ्यात्व भागी जायछे हुं भव्य जीवोमां सदा वसुंछुं. सम्यक्त्व विना कोइ माणस मुक्ति पामी शकतो नथी कर्मराजानुं सैन्य माराथी दूर नासेछे माटे हे धर्मराजाजी! तमो सुखेथी निश्चिंत रहो आ प्रमाणे सम्यक्त्व सेनापति वद्या बाद धर्मराजानी क्षमा नामनी पुत्री सविनय पिताजीने नमन करी मधुर भाषाए कहेवा लागी के—हे धर्मपिताजी हुं एक आपनी नानी पुत्रीछुं आपनी पवित्र सेवा हुं दरेक आत्माओमां स्थिति करती बजावुंछुं. हुं अनादिकाळथी भव्य जीवोमां वसुंछुं. हुं

पामेछे हुं पोतानो पण पोतानी मेळे प्रकाश करुंछुं माटे लोको सूर्यनी उपमा मने आपेछे, कर्म रिपु सकळ सैन्यनो हुं कल्पांत काल वायुनी पेठे क्षणमां नाश करुंछुं. में अनंता जीवोने मुक्ति नगरी प्राप्त करावी, करावुंछु, ने करावीश, माटे हे पिताजी! मारा बेठा आप चिंता करो ते अनुचितछे, आ प्रमाणे ज्ञानपुत्रे भाषण कर्युं. त्यारबाद ब्रह्मचर्यनामनो धर्मराजानो पुत्र महा पराक्रमी प्रख्याति पामेल सविनय पिताजीने नमन करी गंभीर वाणीथी बोल्यो के आ दुनियामां—ब्रह्मचर्य नामे करी हुं प्रसिद्धताने पाम्यो छुं.

परस्पर मैथुन संबंधनो हुं त्याग करावुंछुं. हुं अनादिकाळथी जीवोमां वास करुंछुं ज्यां मारो विरति नामनो नेता वसेछे तेनी साथे हुं पण वसुंछुं. ज्ञान तथा वैराग्य मित्र मने साहाय्य आपेछे. नवविध ब्रह्मचर्य गुप्ति धारक जीवो कामनो पलकमां पराजय करे छे. मारा वासथी प्रत्येक मनुष्योना शरीरनी आरोग्यता वृद्धि पामेछे, धर्म कृत्यमां धैर्यता प्रेरकहुंछुं सर्व व्रतोमां समुद्रनी उपमाने हुं धारण करुंछुं. मारा वासथी मनुष्यो वचन सिद्धि कीर्तिमान् अष्ट सिद्धि आदि प्राप्त करेछे. मोहादि शत्रुओ पराङ्मुख थायछे. आसन्न भव्य जीवोमां हुं विशेषतः वास करुंछुं, मारु अवलंबन करी अनंत जीवो मुक्ति गया जायछे. अने जशे, माटे हे पिताजी! आप चिंतात्यागी धैर्य धारण करो अने सर्व सुभटोने धैर्य आपो.

आम ब्रह्मचर्यना कथन पश्चात् संवरसंज्ञक महारथि योध शौर्य वाणीथी सभा समक्ष बोल्यो के—हे धर्म राजाजी! हुं सत्तावन रूप करी कर्मारिनो समूलतः नाश करुंछुं जे छिद्र द्वारा कर्म सैन्य जीवोमां प्रवेशेछे ते छिद्रोनो हुं रोध करुंछुं. तेथी कर्म सैन्यनुं कंइ

चालतुं नथी, मन वचन अने कायाना व्यापारो जे अशुद्ध परिणतिमां परिणम्याछे तेनो हुं नाश करुछुं.

मारी हयातीमां पाप अने पुण्य आत्माने लागी शकतां नथी. कर्मनो पराजय करी क्षपक श्रेणि उपर चढावी त्रयोदशम गुणस्थानक प्राप्त करावी मुक्ति नगरमां प्रवेश करावुंछुं मारो वास पंचेंद्रिय गर्भज मनुष्योमां विशेषतः आविर्भावेछे. क्रोध, मान, माया, लोभ, अने हास्यषट्कनो त्वरित नाश करुंछुं आर्तध्यान अने रौद्रध्यान रूप योद्धाओनो हुं क्षणमां नाश करुंछुं. कृष्ण लेश्या, कापोत लेश्या, नील लेश्या, विगेरेनो समूलतः नाश करुंछुं, आत्मानो हुं शुद्ध स्वभाव अर्पुंछुं, कर्म रहीत करी जीवोने शिवस्थान प्रति मोकलवानुं हुं कार्य बजावुंछुं, मारा अवलंबनथी अनंतजीवो मुक्तिपद पाम्या अने पामशे, पण अभव्य जीवोने हुं मुक्तिपद पमाडी शकतो नथी. निरुपाधिमय मारो स्वभावछे, माराथी कर्मशत्रु थरथर धुजेछे. ज्यां मारो प्रवेश त्यां उपशम विवेक विनय शांति विगेरेनो प्रचार थायछे, इत्यादि वाणी वदी संवरयोद्धो तुष्णीभाव पाम्यो त्यारे निर्जरानामनो महायोद्धो विनयपूर्वक धर्मराजाने नमन करी बोल्या के-हे धर्मराजाजी! आप सेवकनी वाणी प्रसन्नचित्तथी सांभळो. हुं आपनो योद्धोछुं

हुं आपनुं कार्य सदाकाल बजावुंछुं, बाह्य अने आभ्यंतर एवे रूपांतरने हुं पामुंछुं अनंतकर्मनो नाश हुं क्षणमां करुंछुं. निकाचित कर्म पण माराथी क्षय पामेछे आत्माओमां मारुं रहेवानुं स्थानछे. काष्टसमूहने जेम अग्नि बाळी भस्म करेछे तेम कर्मरूप काष्ठसमूहने पण हुं बाळी भस्म करुंछुं. तद्भव मुक्ति पामनार तीर्थंकरो पण मारो आश्रय करी कर्म नाश करे छे. नरसुरपद्वीओनां सुख पण मारा आलंबनथी पमायछे, माराथी मनुष्यो अष्टसिद्धि अने नवनिधि प्राप्त करेछे.

पण याद राखवुं के जे जीवो मने सेवेछे. तेओनां क्रोध, छिद्र देख्या करेछे. अकाम अने सकाम ए बे भेदे मारु प्रवर्तनछे. चार हत्याकारक जीवोनो पण माराथी उद्धार थायछे. अनंताजीवो कर्म क्षपावी मुक्तिपद पाम्या अने पामशे तेमां मारो प्रभाव जाणवो. माटे हे धर्मराजाजी ! आप स्वस्थ थाओ. आपणुं सैन्य एवुंतो बळवान् छे के त्यां कर्मराजानुं कांइ चालवानुं नथी.

आ प्रमाणे धर्मराजाना सुभटोए पोतपोतानुं पराक्रम वर्णव्युं. त्यारे धर्मराजा अत्यंत हर्षायमान थयो अने मनमां समज्यो के मारु सैन्य प्रबलछे.

आ प्रमाणे अत्र धर्मनृपनी सभामां वृत्तांत चालेछे त्यारे कर्मराजानी सभामां ते प्रमाणे धामधूम चाली रहीछे. मिथ्या चेतना नामनी कर्म राजानी दासीए कर्मने धर्मनी सभामां बनेली सर्व हकीकत कही. त्यारे सम्यक् चेतना दासी धर्मनी अग्रे कर्म नृप सभामां बनेली सर्व हकीकत कही. परस्पर युद्ध कार्यनी सर्व सामग्रीओ तैयार थवा लागी. धर्मनृपे पोताना सुभटोने कह्युंके—मारा प्रिय सुभटो ! तमो शत्रु सैन्यनो पराजय करो, मारुनाम अमर राखशो, वळी तमारा जेवा शूरा सुभटोनुं पराक्रम रण संग्राममां मालुम पडशे. माटे चतुराइथी युद्ध करवुं.

ते प्रमाणे कर्म राजाए पण सर्व सुभटोने वीर रसनां वाक्यो कथी शूर चढाव्युं. सुभटो पण परस्पर पराक्रम बतावबा आतुर थइ रह्या—परस्पर युद्ध चाल्युं तेमां श्रद्धा रूपी सुभटे मिथ्यात्व रूपी योद्धाने हराव्यो. समकित सेनापतिए मोह प्रधाननी शक्तिनो नाश कर्यो, क्षमा पुत्रीए क्रोधनो नाश कर्यो, जीव चोथा गुणठाणा आदि गुणस्थानक चढवा लाग्यो. विरतिए अविरतिनी शक्ति नाश करी.

ज्ञाने अज्ञाननो नाश कर्यो. दयाए हिंसानो नाश कर्यो, शांतिथी तृष्णा नाश पामी. कर्म राजानुं सैन्य नाश पामतुं पाछुं हठवा लाग्युं. ब्रह्मचर्य पुत्रे अब्रह्मचर्यनो सर्वथा नाश कर्यो—परगुण प्रशंसाए निंदानो नाश कर्यो. ज्ञाने कषायनो पण स्थिर परिणामने साहाय्य आपी नाश कराव्यो. धर्म ध्यान रूप योद्धाए आर्तध्यान अने रौद्र ध्याननो नाश कर्यो. संतोषे तृष्णानो नाश कर्यो, क्षायिक समकित पामी जीव स्वस्वभाव शक्ति पामी आत्म रूप प्रकाशवा लाग्यो. हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंछा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसक, वेद रूप कर्म सैन्यनो नाश अप्रमाद तथा ध्यान योद्धाए कर्यो. पंच प्रकारनी निद्रानो तथा चक्षु दर्शनावरणी आदिचारनो तथा ज्ञाना वरणीय कर्मनो तथा अंतरायनो नाश उपयोग मंत्रीनी साहाय्यथी शुक्लध्याने कर्यो. आत्मा तेरमे गुणठाणे जइ अनंत चतुष्टयथी शोभवा लाग्यो. अंते अघाती कर्मनी प्रकृतिनो पण नाश करी मुक्ति पुरीमां गयो. एम धर्म राजानो जय जयकार थयो अने कर्म राजानुं सैन्य नाश पाम्युं. आत्मा परमात्म दशा पामी निर्भय थयो. अनंत जीवो एम कर्मनो नाश करी मुक्तिमां गया अने अनागत काले अनंत जीव मुक्तिमां जशे. कर्मनो नाश उपयोग दशाए अनंता जीवो करेछे अने करशे. जीव कर्मनो नाश करतो क्षायिक भावनी नवलब्धियो पामेछे.

क्षायिक भावनी नव लब्धियोनां नाम.

१ क्षायिकसमकित, २ क्षायिकचारित्र, ३ अनंतज्ञान, ४ अनंत दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग अने वीर्य ए रीते नवलब्धियोनी प्राप्ति गुणठाणानी हद प्रमाणेछे.

हवे संबंध दर्शाववानां कथायछे के—उद्यमथी कर्मनो क्षय थायछे. उपशमभाव क्षयोपशमभाव अने क्षायीकभावनी प्राप्ति पण उद्यमथी

थायछे. शास्त्राभ्यासनो उद्यम करतां पंचप्रकारे स्वाध्याय करतां ज्ञानावरणीयकर्मनो क्षयोपशम थायछे. तेम प्रत्येक घातीकर्मनो नाश उद्यमथीछे. धर्मध्यान अने शुक्लध्यानरूप उद्यमथी ज्ञानीओ कृत्स्न कर्मनो क्षय करेछे. चारित्रनो खप करतां चारित्र मोहनीयनो पण नाश थायछे. माटे पंचमकाळमां पण भव्यजीवोए पुरुषार्थ करवो. पुरुषार्थना पण अनेक भेदछे. माटे सत्यपुरुषार्थ ग्रहवो जोइए. समकितनी प्राप्ति विना सवळी परिणति थती नथी. अने समकित विना पुरुषार्थ निष्फल जाणवो. समकित मोक्षनगरनुं द्वारछे. समकितविना कोइ जीव मोक्षमां गयो नथी. अने जवानो नथी. समकित विना ज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम पण अज्ञान तरीके लेखायछे. एटले मतिज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम मति अज्ञान तरीके गणायछे. श्रुतज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम श्रुतअज्ञान तरीके लेखायछे. अने अवधिज्ञानावरणीय कर्मनो क्षयोपशम विभंग ज्ञान तरीके गणायछे. अने ज्यारे समकितनी प्राप्ति थायछे त्यारे तेनो क्षयोपशम सवळो परिणमेछे. अने ते मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधि ज्ञान तरीके गणायछे. समकित विना अभव्य जीव मुक्ति पामतो नथी. बाह्य चारित्र पाळीने अभव्य जीव नवग्रैवेयक पर्यंत जायछे किंतु समकितविना भावचारित्र पामी शकतो नथी अने तेथी ते चतुर्गतिमां पुनः पुनः परिभ्रमण करेछे, समकितनो महिमा अपूर्वछे, पंच प्रकारना मिथ्यात्वनो नाश थवाथी समकितनी उत्पत्ति थायछे. पंच प्रकारना मिथ्यात्वनो नाश जिनागम सांभळवाथी थायछे, सद्गुरुनी श्रद्धा भक्तिथी उपदेश श्रवण करतां मिथ्यात्व नाश पामेछे, समकितनी प्राप्ति माटे आगळ षट्स्थानक कहेवामां आवशे. समकितना पंचप्रकारछे.

१ उपशम समकित, २ क्षयोपशमसमकित, ३ क्षायिकसमकित,

४ वेदसमकित, ५ सास्वादनसमकित, अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया अने लोभ तेमज समकित मोहनीय मिश्र मोहनीय, मिथ्यात्व, मोहनीय ए सात प्रकृति सर्वथा क्षय थतां क्षायिक समकितनी प्राप्ति थायछे.

श्री जिन वचनज तत्त्वरूपछे वीतराग होवाथी एम सामान्य रुचिवाळा जीव ने द्रव्य सम्यक्त्व पणुं स्फुट थायछे. अने नय निक्षेप प्रमाणना विचारथी तत्त्व श्रद्धावाळा जीवने भाव सम्यक्त्व पणुं स्फुट थायछे अहिं द्रव्य शब्दार्थ कारणता अने भाव शब्दार्थ कार्यता रूप जाणवो एम श्री हरिभद्रसूरि कहेछे.

श्री उत्तराध्ययन सूत्रानुंसारे दशविध सम्यक्त्व कहेछे.

१ सत्य अर्थनी साथे संमतिवडे जीवाजीवादि नव पदार्थ संबंधी जे रुचि ते निसर्ग रुचि जाणवी.

२ परोपदेशवडे प्रयुक्त जीवाजीवादि पदार्थ विषयनी जे श्रद्धा ते उपदेशरुचि कहेवायछे.

३ रागद्वेष रहित एवा पुरुषने आज्ञा वडे धर्मानुष्ठानमां रुचि थाय तेने आज्ञारुचि समकित कहेवायछे.

४ सूत्रना अध्ययन तथा अभ्यासथी उत्पन्न थएला विशेष ज्ञान वडे जीवाजीवादि पदार्थना विषयमां रुचि थाय तेने सूत्र रुचि समकित कहेछे.

सूत्र रुचि उपर गोविंदाचार्यनुं दृष्टांत जाणवुं.

५ एकपद वडे अनेकपदतथा तेना अर्थना अनुसंधान द्वारा जलमां तेलना बिंदुनी जेम रुचि प्रसरि जाय तेबीजरुचि सम्यक्त्व कहेवायछे.

६ जेने सर्व सूत्रना अर्थनुं ज्ञान उत्पन्न थाय ते अभिगम रुचि सम्यक्त्व कहेवायछे. त्यारे अत्र शंका थशे के अभिगम रुचि

अने सूत्रमां शोफेर—प्रत्युत्तरमां समजवानुं के—आ अभिगम रुचि अर्थ सहित सूत्रना विषयमां आवेछे. अने ते सूत्ररुचि केवळ सूत्रना विषयमांज आवेछे एटलो ते बन्नेमां भेदछे. केवल सूत्र मूल कथायछे.

७ सर्व प्रमाण तथा सर्व नयथी उत्पन्न थएल सर्व द्रव्य अने सर्व भावना विषयनी रुचिने विस्तार रुचि सम्यक्त्व कहेवायछे तेथी विशेष लाभ प्राप्ति थायछे.

८ ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप अने विनय वैयावृत्य आदिना आचरण संबंधी रुचि ते क्रियारुचि कहेवायछे.

९ जेणे कुदृष्टिनो अभिग्रह कर्यो ना होय अने जे प्रवचनमां प्रवीण न होय तेवा पुरुषने मात्र निर्वाण पद संबंधी रुचि ते संक्षेप रुचि जाणवी जेम उपशम संवर अने विवेक आ त्रण पदनी रुचि चिलाती पुत्रने थइ हती तेम समजवुं.

१० धर्मपद श्रवणथी उत्पन्न थएली जे धर्मपदवाच्य संबंधी रुचि ते धर्मरुचि कहेवायछे.

समकितरत्ननी प्राप्ति दुर्लभछे—समकित पाम्या पश्चात् संसार समुद्र चुलुक प्रमाण समजवो. आ संसारचक्रमां अनंतशः परिभ्रमण करी अनंतवार अनंतदुःख पाम्यो. अनेक देहो धारण कर्या. प्रत्येक भवमां अनेक दुःख भोगव्यां. जन्म जरा मरणादि दुःखोनो भोक्ता घणीवार थयो. पण पार आव्यो नहि. जीव पुनः पुनः परस्वभावमां रमण करी कर्म ग्रहेछे. आत्मस्वभावमां रमण करवाथी कर्म नाश पामेछे. कम्मपयडी आदि ग्रंथोमांथी विशेष स्वरूप जाणवुं. कर्मनो नाश करी मोक्षनगरमां जवानी इच्छा होय तो अनुभव ज्ञाननो खप करो. मतिश्रुत ज्ञाननुं उत्तर भावी अने केवळज्ञाननुं पूर्वभावी अनुभवज्ञानछे. दृष्टांत जेम सूर्य केवलज्ञानछे

अने सूर्योदय थतां प्राक् जे अरुणोदयछे ते दृष्टांते अनुभवज्ञान जाणवुं. अनुभवज्ञान साक्षात् परमात्मपदनी प्राप्ति करावेछे. भव्यजीवो अनुभवज्ञानथी जाणेछे. अनुभवज्ञान साक्षात् सूर्य समानछे. शास्त्रोनुं अध्ययन करतां, ध्यान करतां अनुभवज्ञाननी प्राप्ति थाय छे. अनुभवज्ञानीओ उपयोग पोताना आत्माना असंख्यात प्रदेशे स्थापी पुद्गलवस्तुमां उंघेछे. मारो शुद्ध आत्मस्वभाव तेज मारुं धनछे. बाकी आ बाह्य देखातुं धन मारु नथी. एम भिन्नता पाडी शुद्ध गुणमां परिणमेछे अनुभवज्ञानी सिद्धांतनो साररूप मकरंद पीवेछे. अनुभवज्ञानी समता भुवनमां सदा सुखमां म्हाल्हेछे. अरूपी आत्माने दृष्टिगोचर करवानुं स्थान अनुभवज्ञानछे माटे सम्यग् ज्ञानना अर्थी जीवोए पुनः पुनः सत्शास्त्र अने सद्गुरूनो परिचय करी अंतर्वृत्ति करी बाह्यवृत्तिनो त्याग करवो.

कह्युं छे के—

बाह्यवृत्तिए गुणठाणे चढवुं, ते तो जडना भांमा;
संयमश्रेणि शिखरे चढावे, अंतरंग परिणामारे. लोका भोळवीया मत भूलो. १

ए उपरथी सार लेवानो के—बाह्यवृत्ति नाम बहिरात्मदशाथी गुणस्थानके चडवुं एम तो जडजीवोनी भ्रमणाछे, अंतरंग परिणामरूप अंतर्वृत्ति संयमश्रेणिना शिखरे चढावेछे. माटे भव्य लोको भोळवीया तमे भूलो नहीं सत्य तत्त्वमां रमण करो. अने ध्याननी इच्छा करो. आत्मगुणनी विचारणा करो. आत्माना स्वभावमां ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्यादि अनंतगुणछे, वळी गुण गुण प्रति भिन्न भिन्न स्वभाव आत्मामां रह्याछे, ज्ञाननो जाणवारूप स्वभाव, दर्शननो देखवारूप स्वभाव, चारित्रनो स्थिरतारूप अने वीर्यनो स्फुरणा शक्तिरूप स्वभाव एम अनंतगुणो आत्मामां तिरोभावे रह्याछे. पण

शक्तिभावथी आत्मानुं कार्य सरे नहिं. जेम अरणि काष्टमां शक्ति-भावे रहीछे पण अरणिना काष्ठने बाथ भीडवाथी टाढ नाश पामे नहि ते दृष्टांतना अनुसारे शक्तिभावे रहेलो आत्मानो धर्म ज्ञानथी जाणी वीर्यथी प्रगट करीए तो चतुर्गतिनां अनंतशः जन्म जरा मरण टळी जाय. आत्माना गुण पर्यायनुं व्यक्तिरूपे प्रगटवुं तेज स्वभाव लाभ जाणवो.

प्रश्न–घातीकर्मनो नाश शावडे त्वरित थाय.

उत्तर–ज्ञान अने ध्यानथी प्रमादना त्यागपूर्वक आत्मोपयोगे स्थिरताथी कर्मनो नाश थायछे. पर्वतनी गुफामां निबिड अंधकार होयछे तेनो नाश दीपकथी थायछे तेम अज्ञान तथा कर्मनो नाश पण आत्मज्ञानथी थायछे. मोटी तृणनी गंजी पण अग्निना स्वल्प कणीयाथी नाश क्षणमां पामेछे तेम अनंत भवोपार्जित घातीकर्मनो नाश पण आत्मज्ञानथी स्वल्पकाळमां थायछे. श्रीपाळना रासमां देशनानी ढाळमां कह्युं छे के–

श्री यशो विजय उपाध्याय.

क्षण अर्धे जे अघटळे, तेन टळे भवनी कोडीरे,
तपस्या करतां अतिघणी, नहीं ज्ञान तणीछे जोडीरे.

ज्ञानी पुरुष अर्धक्षणमां जे पापनो नाश करेछे ते कोटी भव पर्यंत कठीन विचित्र छठ अठम मास बे मास विगेरेनी तपश्चर्या करतां टळे नहीं. माटे ज्ञाननी कोइ जोडी एटले ते समान कोइ नथी माटे आत्मज्ञाननी प्राप्ति करवा प्रयत्न करवो. ज्ञान रूपी अग्नि सर्व कर्मने बाळी भस्म करेछे. षड्द्रव्य सात नय तथा निक्षेप द्रव्यादिकना ज्ञानथी स्वपर विभाग थायछे अने पोताना घरमां प्रवेश करेछे अर्थात् असंख्य प्रदेशरूप जे घर तेमां आत्माउपयोगपणे परिणमी अशुद्धतानो परिहार करेछे, पोताना घरमां आवतां आ-

त्याए अनुभवदृष्टिथी सर्व सिद्धि जोइ त्यारे विचार्युं के-अहो में अनंत भवचक्र काळ अज्ञान रूप निद्रामां निर्गमाव्यो. मारी भूले हुं जन्म जरा मरणनां दुःख पाम्यो हवे भ्रांति भागी आ शरीररूप नगरीमां असंख्य प्रदेशी आत्मानी प्रतीति थइ, असंख्य प्रदेशीरूप आत्मा हुं अरूपी छुं. श्वेत, पीत, रक्त, कृष्ण, ए पुद्‌गलनुं रूप छे पण हुं तो पुद्‌गलथी भिन्नछुं माटे रूपातीतछुं, मारामां गंध स्पर्श नथी. शब्दथी मारु ज्ञान थाय छे पण हुं शब्दथी न्यारो छुं मारु कोइ नाम नथी. तेथी हुं अनामी कहेवाउछुं.

हुं कीर्ति वा अपकीर्तिवाळो नथी-कारण के बहिरात्मदशामां कीर्तिनी वासना जीवने रहेछे अने तेथी ते अनेक प्रकारना कीर्ति माटे उद्यमो करेछे. पण तेथी कंइ कल्याण थतुं नथी. जेम वंध्याने स्वप्नानी अंदर पुत्रनो प्रसव थयो. अने ते पुत्रने मोटा थतां परणाव्यो. वंध्या बहु आनंद पामी. एवामां वंध्यानो पुत्र मरण पाम्यो त्यारे वंध्या रोवा पीटवा लागी. केश तोडवा लागी. वंध्यानी आंख उघडी गइ अने जुवे छे तो कंइ नथी. मिथ्याभास थयो एम जाण्युं तेम अज्ञानी जीव साधु वा गृहस्थना वा कोइपण अवस्थामां कीर्तिनी वासनाथी अनेक कार्यो करेछे. किंतु आंख मींचाया बाद कंइ पण तेमांनुं देखातुं नथी. माटे ज्ञानयोगी आत्मा कोइ कीर्ति करे वा कोइ अपकीर्ति करे तोपण समभावे रहेछे. कारण के-ज्ञानयोगी आत्मा जाणेछे के कीर्तिनाम कर्मना बंधनथी जगत्‌मां कीर्ति प्रसरेछे. अने अपकीर्तिनाम कर्मोदयथी अपकीर्ति प्रसरे छे-माटे ते कीर्ति अने अपकीर्ति बन्ने पौद्‌गलिकछे. कोइनी कीर्ति प्रसरवाथी ते धर्मी कहेवातो नथी. तेम अपकीर्ति प्रसरवाथी ते अधर्मी कही शकातो नथी. अंतरंग शुद्धात्म वृत्तिथी धर्मी कहेवायछे. अने अंतरंग अशुद्धात्म वृत्तिथी अधर्मी जाणवो. मान पूजा आदि वास-

नाओथी पण आत्मा भिन्नछे. कारण के मान अने अपमान एह बहिरात्मा दशावाळाने एटले जेणे दुनीयादारीमां सुखदुःखनी बुद्धि धारण करीछे तेवा जीवने वर्तेछे, पण जेणे शरीरथी भिन्न आत्मा निराकार ज्योतिमय जाण्योछे तेवा अंतरात्म दशावाळा जीवने माननी वासना रहेती नथी. शुद्धात्मा सदा मानवंतछे. पुद्गलरूप देह कंइ मान्य योग्य नथी. वळी कोइ अपमान करे तो समजे के-देहनुं अपमान के तेनी अंदर रहेला आत्मानुं अपमान नथी. देह तो जडछे अने आत्मा तो अदृश्यछे, तेथी तेनुं अपमान थइ शकतुं नथी. माटे ज्ञानयोगी महात्माने मान अपमान बे सरखांछे. वळी ज्ञान योगीनी कोइ निंदा करे. वा कोइ वंदन करे तोपण ते समभावमां वर्ते छे. कारणके ज्ञानी जाणे छे के-मारो आत्मा अलक्ष्यछे. पोताना स्वभावे शुद्ध निर्लेपछे. एम उपयोगमां वर्ततो कोइना उपर राग वा कोइना उपर द्वेष करतो नथी. कनक अने पाषाणने पण ज्ञानी आत्मा सरखा जाणेछे, कनक अने पाषाण पृथ्वीकायनां दळीयां पौद्गलिकछे. अने ते कनक पाषाणरूप अचित्त पुद्गल स्कंधरूपीछे. अने हुं आत्मा तो अरूपीछुं. कनक पाषाण पुद्गल स्कंध जडछे अने हुं आत्मा तो ज्ञान गुणमयछुं, मारी अने एनी भिन्न जातिछे. वळी कनक पाषाणमां सुख नथी. तो ते उपर केम दृष्टि आपुं ? एम समजी ज्ञानी आत्मार्थी समभावमां रहेछे. अने शुद्धात्म स्वरूपमां उपयोग दृष्टि आपेछे.

संसारना संसर्गमां आवतो पण ज्ञानी आत्मा जलमां कमलनी पेठे भिन्नपणे वर्तेछे, हर्ष शोक धारण करतो नथी. एम प्रमादस्थाननुं निवारण करतो विरतिव्रत अंगीकार करतो अंतरथी द्रव्यक्षेत्र काळभावथी आत्म स्वरूप विचारतो अने तेम आत्माना गुणपर्यायने भिन्नाभिन्नपणे विचारतो मति अने श्रुतज्ञानना क्षयोपशमे वीर्य श-

क्ति फोरवतो संयम श्रेणि आरोहण करतो घातीकर्मनो क्षय करी यावत् अघातीकर्मनो क्षय करी पंचम गति जे मुक्तिस्थान तेमां सादि अनंतमा भांगे विराजे छे. त्यां मुक्तिस्थानमां शरीरनो त्रीजो भाग टाळी बे भागनी अवगाहना रहेछे. मुक्तिमां स्वामी सेवकभाव नथी, मुक्तिमां गएल आत्मा पश्चात् संसारमां आवतो नथी; अने तेथी जन्म जरा मरणनां दुःख पामतो नथी, आ प्रमाणे कर्मना नाशे मुक्ति पासेनी पासेछे किंतु आत्मध्यानरूप पुरुषार्थमां प्रमाद थवाथी पुनः पुनः संसारमां परिभ्रमण करवुं पडेछे मन, वचन अने कायाना योगो स्थिर करी आत्म स्वरूपमां स्थिर थवुं अने बाह्य मार्गमां वृत्ति देतां आगळ बध्या करवुं. तेम करवाथी आनंदनी खुमारी प्रगट थशे अने स्थिरता योगे चारित्र मोहनीयनो नाश थशे, अने आत्मा मतिज्ञान अने श्रुतज्ञानना क्षयोपशमयोगे प्रत्यक्ष गुण स्थानकनी हदे विचित्र अनुभव प्रगट करतो देखाशे अने आत्मतत्त्वनो निर्धार भास थशे. आ अचळ सिद्धांतनी श्रद्धा तथा तेनो आदर जे आत्मा अल्पभवमां मुक्ति जवानोछे तेने प्राप्त थायछे. अने परमपद प्राप्तिनी तीव्रेच्छा प्रगट थया विना तेना उपर लक्ष्य लागतुं नथी अने ते प्रति लक्ष्य लाग्या विना आत्म कल्याण नथीज. जे भव्यने जे वस्तुनी इच्छा होयछे ते प्रति तनो उद्यम वर्तेछे. सर्व करतां शुद्ध स्वरूपनी इच्छा श्रेष्ठ गुणावहा जाणवी. हवे ते आत्मगुणनी प्राप्तिकरवा मन शुद्ध करवुं जोइए. मननी शुद्धता थया विना सच्चिदानंद प्रति वलण थतुं नथी, प्रथमतो मन इंद्रियोना विषयमां भटकतुं होयछे तेने पाछुं वाळवुं अने आत्मरमणमां जोडवुं एम थवाथी राग द्वेषादिक शत्रुओ तेनी मेळे नाश पामशे. आम वर्तन करवाथी गुणोनी प्राप्ति थायछे कोइ भव्यो बोलवामां एवुं बोले के—जाणे महा तत्त्वज्ञान

प्राप्त थयुं पण अंतरमां कंइ होतुं नथी, माटे वर्तन आत्म स्वभावमां थवुं जोइए, एम करवाथी अनुक्रमे आत्मा कर्माष्टकनो नाश करी मुक्तिपद पामेछे. अतीत काळे अनंत जीवो मुक्ति गया जायछे अने जशे इति सप्तम विषय संपूर्ण.

८ अष्टमविषय.

संसारमां आत्मा क्यारथीछे-- ?

संसारमां आत्मा अनादिकाळथीछे. जेनी आदि होयछे ते उत्पत्तिमान पदार्थ होयछे. अने जे उत्पत्तिमान् होयछे ते कार्यरूप कहेवायछे, अने जे पदार्थ कार्यरूप होय ते समवाय निमित्तआदि कारणोनी सामग्रीद्वारा उत्पन्न थायछे अने तेथी ते कार्यरूप पदार्थ अनित्य कहेवायछे. अने जे पदार्थ अनित्य होयछे ते विनाश पामे छे. आत्माने कोइए उत्पन्न कर्यो नथी अने तेथी ते अनादि कहेवायछे.

जे पदार्थनी आदि नथी तेनो अंतपण नथी. ते प्रमाणे आत्मा अनादि छे अने अनंतछे. जे वस्तुनो कोइ बनावनार नथी ते वस्तु नित्य कहेवायछे. तेम आत्मा तेनो बनावनार कोइ नथी तेथी आत्मा नित्य कहेवायछे. जे नित्य वस्तु होयछे ते त्रण कालमां नाश पामती नथी. तेम आत्मा पण नित्यछे तेथी त्रणे कालमां नाश पामतो नथी, जे वस्तु उत्पन्न थायछे ते कारण पूर्वक होयछे, जेम घटवस्तु मृत्तिका दंड चक्र कुलालादि पूर्वकछे. अने जे वस्तुनो कोइ उत्पन्न कर्त्ता नथी- ते कारण विना स्वयं सिद्ध होयछे जेम आकाश ते प्रमाणे आत्मा पण कारण विनानोछे. अ-र्थात् ते कोइनाथी बन्यो नथी.

ईश्वरवादी–सर्व जीवोने इश्वरे बनाव्याछे तो जीवोनो कर्ता इश्वर कारणी भूत मानवो जोइए.

तत्त्ववादी–जीवोनो कर्त्ता इश्वर नथी, इश्वर अरूपीछे. रागद्वेष रहीतछे, संसारनी खटपट रहीतछे. तेवा इश्वरने जीवो बनाववानुं शुं प्रयोजन ते बतावो अने ज्यारे इश्वरे जीवो नहोता बनाव्या ते पूर्वे इश्वर शुं करतो हतो वळी बतावो के जीवोनुं उपादान कारण कोण अने जीवरूप कार्यनुं निमित्त कारण कोण ?

प्रथम सामान्य माध्यस्थ बुद्धिथी विचारतां पण मालुम पडेछे के रागद्वेष रहीत एवा प्रभु वा जे ईश्वर सिद्ध तेमने जीवो बनाववानुं कंइ प्रयोजन नथी, एकने सुखी बनाववो अने एकजीवने दुःखी बनाववो एवुं अन्यायनुं कार्य ईश्वर करतो नथी. जीवो बनाव्या विना पूर्वे ईश्वरने गमतुं नहोतुं ते पण कंइ कही शकातुं नथी, अने जीवो बनाव्या पूर्वे ईश्वर कर्तृत्व शक्ति रहीत हतो के केम ते कही शकातुं नथी. कर्तृत्त्व शक्ति ईश्वरनी अनादिनी मानो तो जीवो पण अनादि ठर्या. त्यारे वदतोव्याघातदूषण प्राप्त थयुं. कर्तृत्व शक्ति ईश्वरनी जो अनादि न मानो तो शक्तिनी अनित्यताए ईश्वर पण अनित्य ठर्यो. वळी जीवोनी पूर्वे ईश्वर छे ते पण सिद्ध थतुं नथी. वळी जीवोनुं उपादान कारण पण ईश्वर कही शकातो नथी, कारणके उपादान कारणथी कार्य भिन्न नथी. यथा तंतवः पटस्य जेम पटनुं उपादान कारण तंतु ते पटरूपज छे तेम जो जीवोनुं उपादान कारण ईश्वर मानीए तो सर्व जीवोथी अभिन्न ईश्वर ठर्यो. अने ज्यारे सर्व जीवमय ईश्वर ठर्यो त्यारे राजा पण ईश्वर पापी पण ईश्वर चोर पण ईश्वर बिडाल पण ईश्वर सर्व पण ईश्वर पोतानी मेळे ईश्वर उपाधिमय बन्यो कोनुं भजन करवुं. कोनुं

बंधन, कोनी मुक्ति, ते पण असत्य ठर्युं, तप जप दान क्रिया सर्व असत्य ठरी. माटे जीवोनुं उपादानकारण ईश्वर सिद्ध थतो नथी. तेम निमित्त कारण पण ईश्वर कही शकातो नथी, कया कया मसाला लावीने ईश्वरे जीव बनाव्यो. जो कहेशो के पंचभूतरूप मसालाथी जीव बनाव्यो तो ते वात पण आकाश कुसुमवत् असत्य ठरेछे. कारण के पंचभूततो जडछे. अने आत्मा तो ज्ञान गुणी छे माटे ते पंचभूतनुं कार्य नथी. माटे जीवनुं उपादान कारण पंचभूत कदी ठरतां नथी. अने निमित्त कारण जीवनो ईश्वर ठरतो नथी. माटे जीव अकारण होवाथी नित्य सिद्ध ठर्यो. अने तेथी ते अनादिकाळथी छे एम सिद्ध ठर्यो. श्री केवलज्ञानी वीरप्रभुए जीवो अनादिकाळना छे एम सत्य कथ्युंछे. हवे ब्रह्ममांथी जीवोनी उत्पत्ति माननाराओ प्रति प्रश्न पूर्वक तेमनी भूल दूर करायछे.

शिष्य—हे सद्गुरो कोइ एम कहेछेके आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत् अर्थ आ दुनीयामां प्रथम ब्रह्म एकज हतुं अने तेमांथी आ सर्व प्रपंच बन्योछे आ वातमां शुं सत्य समायुंछे. ते कृपा करीने कहेशो ?

सद्गुरु—हे सौम्य श्रवण कर. ब्रह्ममांथी जीवो माया विगेरे सर्व प्रपंच बन्यो एम मानवुं युक्तिहीनछे. ते नीचे मुजब. ब्रह्मथी दुनीयानो प्रपंच भिन्न मानशो तो एकांत भिन्न प्रपंचरूप वस्तु ब्रह्मथकी उत्पन्न थायछे तेम मानवुं मंडूक जटावत् असत्य ठरेछे, कारण के जेम घटथकी एकांत भिन्न पटनी उत्पत्ति जोवामां आवती नथी. एम प्रत्यक्ष विरोध आवेछे, वळी ब्रह्मथकी एकांत अभिन्न जगत्रूप प्रपंच मानशो तो ते पण युक्ति विकल आकाश कुसुमवत् असत्य ठरेछे.

ब्रह्मथी एकांत अभिन्न जगत् प्रपंच ब्रह्मस्वरूप ठर्यो, त्यारे माता, स्त्री, पुत्र, सर्प, सिंह, आदि सर्व ब्रह्मरूप ठर्युं, त्यारे तेनाथी भिन्न वा तेथी मुक्त थवाशेज नहि, वळी अमो ब्रह्मवादीने पुछीए छीए के–ब्रह्म जे ते जगत् प्रपंचनुं उपादान कारणछे के निमित्त कारण ? प्रथम पक्षमां जो ब्रह्मने उपादान कारण मानवामां आवे तो कारण जेवुं होय तेवुं कार्य थाय जेम पटनुं उपादान कारण तंतु रक्त होय तो पट पण रक्त थायछे. तेम जो ब्रह्म सत्छे अने उपादान कारणछे तो उत्पन्न थनार जगत् प्रपंचरूप कार्य सत् थवुं जोइए. अने ते कदी नाश पण पामे नहि, पण जगत् प्रपंच सत् नथी एम प्रत्यक्ष विरोधापत्ति प्राप्त थती देखायछे वळी ब्रह्मने रूपी वा अरूपी मानतां विरोध दर्शावेछे. प्रथम पक्ष ब्रह्मने रूपी मानतां आगम विरोध आवेछे. द्वितीय विकल्पमां ब्रह्मने अरूपी मानतां ब्रह्मथी उत्पन्न थनार जगत् प्रपंच रूप कार्य अरूपी थवुं जोइए. पण घटपटादि वस्तुरूपी देखायछे ए पण महाविरोध आवेछे. वळी ब्रह्मने नित्यमान तां ब्रह्मथी उत्पन्न थनार जगत् प्रपंच पण नित्यपणे उपलब्ध थवो जोइए पण जगत् प्रपंच तेथी उलटो विनाश पामतो देखायछे, तेथी तेम मानतां पण विरोध प्राप्त थायछे, माटे जगत् उपादान कारणपणे मानेलुं ब्रह्म नित्यपणे पण कहीशकातुं नथी. ब्रह्मने अनित्य मानतां आगम विरोध आवेछे वळी ब्रह्मने एक अने ते सर्वत्र व्यापकछे एम मानशोतो जीवोनो बंध मोक्ष मानवो असत् ठरेछे. तेम सुख दुःख पण असत् ठरशे. इत्यादि विकल्पोथी ब्रह्मनी सिद्धि पण थती नथी. तो वळी ब्रह्ममांथी जीवो उत्पन्न थया तेम मानवुं ते तो सर्वथा असत्य ठरेछे.

प्रश्न–आनंदं ब्रह्मणो विद्वान् नबिभेति कुतश्चन–ब्रह्मना आनंदने जाणनार पुरुष कशाथी भय पामतो नथी. एम बृहद् आर-

ण्यक तथा तैत्तिरीय श्रुतिमां कह्युंछे तेनुं केम ?

उत्तर-ब्रह्म शब्दार्थनुं सम्यग् ज्ञान न थवाथी तत्त्वनी प्राप्ति थती नथी. केटलाक वादीओ ब्रह्म विषे सर्व जीवोनो लय थायछे. अने वळी ब्रह्ममांथी सर्व जीवो उत्पन्न थायछे एम समजी तत्त्व पामी शकता नथी कारणके-सम्यग् ज्ञान विना सम्यग् क्रिया थइ शकती नथी. अने ते विना भवांत थतो नथी. अर्थात् कर्मनो नाश करी मुक्तिपद पमातुं नथी. पण आत्मारूप ब्रह्मनो भावार्थ ज्ञानथी सम्यक समजनार कशाथी भय पामतो नथी. माटे सम्यग्दृष्टिपणुं प्राप्त थतां एकांत हठ टळेछे.

प्रश्न-श्लोक भिद्यते हृदयग्रंथीः छिद्यंते सर्व संसयाः

क्षीयंते चास्य कर्माणि, तस्मिन् दृष्टे परावरे. १

ब्रह्मने साक्षात्कार जाणवाथी हृदय ग्रंथी भेदायछे. अने सर्व संशयो छेदायछे. कर्मो नाश पामेछे. ते ब्रह्मने देखतां-आम मुंडकोपनिषद् विगेरेथी जणायछे तोब्रह्मने असत्य केम कहेवाय?

उत्तर-हेभव्यजीव हजी अमारु कथन तमाराथी समजायुंनथी—ब्रह्मशब्दनो अर्थ ज्ञानवान् आत्मा अनेते ज्ञानीजीव प्रतिशरीर भिन्नभिन्न-तेमज कर्मरहीत ज्ञानीजीवो—व्यक्तिथी भिन्नभिन्नछे तेवारुपे अमो ब्रह्मने सत्य मानीएछीए—पणजे एक ब्रह्म अने तेमांथी जगत् पेदाथवुं तेवा ब्रह्मशब्दना अर्थने अमो सत्यरुपे मानतानथी. तेनासंबंधे अत्रसंभापण थायछे —अत्रसमजवानुंके—सर्वत्र ब्रह्मछे, ब्रह्मथकीअन्य कोइपदार्थ नथी एम मानवुं ते ज्ञानविरुद्धछे-अने एम कोइमानेतो तेमां अन्यनुं जोरनथी—पण समजवानुंके—उपरना श्लोकथी द्वैतपणानी एटले बे तत्त्व—जीव अने अजीव तेनी सिद्धि थायछे—अस्य

कर्माणि क्षीयंते—आनां कर्म नाशपामेछे. आनां एटले आत्माना आत्मानी साथे ज्ञानावरणीयादी अष्टकर्म अनादिकाळथी क्षीर नीरवत् लाग्यांछे. ते कर्म, आत्मानुं स्वरूप स्याद्वादपणे देखी आत्म स्वभावमां रमवाथी नाशपामेछे. आत्मा अने कर्म एम बे वस्तुनी सिद्धि थइ, एक आत्मद्रव्यनी द्वितीय कर्मरूप पुद्गल द्रव्यनी अनायासे सिद्धि थइ, कर्मजड अने,अजीवछे, तेथी जीवतत्त्व एम बे तत्त्वज्ञानी प्रभुश्रीमहावीरस्वामीए कथ्यां छे तेनी सिद्धि थइ कदापि सामो प्रश्न एम करवामां आवे के कर्म पण ब्रह्मथी भिन्न नथी अने ते ब्रह्मस्वरूपछे. तो उत्तर तरीके कहेवामां आवशे के कर्म ज्यारे ब्रह्मस्वरूप ठर्युं. त्यारे कर्मनो नाश थतां ब्रह्मनो पण नाश थशे.

वळी विचारोके कर्म छे ते ब्रह्मथकी भिन्न छे अभिन्न? प्रथम पक्षमां ब्रह्मथकी कर्मएकांत भिन्न मानतां पटथी एकांत भिन्न घटनी पेठे बे पदार्थ ब्रह्म अने कर्म भिन्न छे तेनी सिद्धि थइ, द्वितीयपक्षमां ब्रह्मथी कर्म अभिन्न छे एम मानतां ब्रह्म अने कर्म एक स्वरूप थइ जशे अने कर्मनो नाश पण थशे नहि.

वळी विचारो के कर्मसत् छे के असत् छे.कर्मअसत् मानवामां आवे तो सत्ब्रह्म अने असत् कर्मनो संयोग थाय नहि, कारण के सत्नी साथे जे वस्तुरूपे ना होय तेनो संयोग घटे नहि. अने बेनो संयोग मानवामां आवशे तो बे पदार्थ भिन्न स्वभाववाळा भिन्न ठर्या, त्यारे एक एव ब्रह्म आवाक्यनो नाश थयो एम अवश्य सिद्ध ठरेछे. स्याद्वादपणाथी तो ते सर्व जिन दर्शनमां यथार्थ घटेछे अने आत्मानी सिद्धि थायछे अने कर्मनी सिद्धि थायछे. आत्मा ज्ञानादिके करी सत्छे अने कर्मरूप पुद्गलनी अपेक्षाए असत्छे. पण पुद्गल द्रव्य पोताना स्वरूपे सत्छे. आत्मा अने कर्मनो संयोग अनादिका-

र्थी छे. आत्मा अने कर्म बे क्षीरनीरवत् परिणामीछे, आत्मा ज्यारे स्वस्वभावमां रमण करेछे. त्यारे कर्मरूप पुद्गलो आत्माना प्रदेशोथी विखरेछे, अने आत्मामां रहेलुं अनंतज्ञान आविर्भावे प्रकाशेछे. अने आत्मा परमपद पामतां अचल थायछे. जन्म जरा मृत्युनो नाश करी अजरामर पद पामेछे तेषां नपुनरावृत्तिः शिव अर्थात् मोक्ष पामेला जीवो संसारमां पाछा आवी जन्म धारण करता नथी. वळी सर्व जीवो ब्रह्मना अंशछे एम मानीएतो पुण्य पाप बंध मोक्ष आदि घटी शकतुं नथी कारण के–सर्वस्य ब्रह्मस्वरूपत्वात् सर्व पदार्थने ब्रह्मस्वरूप मान्याथी धर्म अधर्म मुक्ति विगेरे असत्य ठरेछे. तेषां आ वाक्य प्रयोग षष्ठीना बहु वचननोछे, तेथी आत्मा अनंतछे एम प्रतिपादन कर्युंछे. ने फरीथी संसारमां आवता नथी. एम कहेवाथी प्रलय काळ थया बाद केटलाक मानेछेके मुक्तिमांथी संसारमां जीव पाछा आवेछे तथा दयानंद सरस्वति जे आर्य समाजनो प्रकाशकछे ते स्वकल्पनाथी एम मानेछेके मुक्तिमांथी जीव संसारमां पाछो आवेछे. एम ते वादियोनुं मानवुं असत्य ठरेछे. अने ते मिथ्या ज्ञानछे एम सिद्ध कर्युं. वळी नीचेनी वेदश्रुतियो पण सम्यग्ज्ञान विना असमंजस भासेछे.

तथाच

इदं सर्वं यदयमात्मा, सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥
अयमात्मा ब्रह्म, अहं ब्रह्मास्मि ॥

इत्यादि वेद श्रुतियोपण सम्यग्ज्ञान विना प्रमाणीभूत नथी. सर्वं एटले सर्व खलु एटले निश्चयथी आ ब्रह्मछे. घट, पट, दंड, चक्र, वृक्ष, सर्प, जगत् सर्व ब्रह्मछे तो सिद्ध थयुं के स्त्री पण ब्रह्म स्वरूप. माता पण ब्रह्मस्वरूप. पुत्री पण ब्रह्मस्वरूप. पोते वक्ता पण ब्रह्मस्वरूप त्यारे कोने नमस्कार करवो ? कोनुं स्मरण करवुं? अने वळी स्मरण करवानुं शुं प्रयोजन ? तेनी सिद्धि ठरती नथी. आ पण

ब्रह्मस्वरूप, अने विष्णु पण ब्रह्मस्वरूप. सर्प पण ब्रह्मतो प्रत्येकने नमस्कार करवो जोइए. पण ब्रह्मवादी पण सर्वने ब्रह्मस्वरूप मानी भेदभाव राखेछे ते आकाश जेवडी मूल गणाय, माटे ब्रह्मने एक मानतां पूर्वोक्त दूषण प्राप्त थायछे. सम्यग्दृष्टि तेवोज अर्थ सम्यग्पणे ग्रहण करेछे. आ सर्व जगत् अनंतजीवोथी परिपूर्ण व्याप्तछे, अने जे आ शरीरमां छे ते आत्माछे, अने आत्मा ज्ञानमयछे. दुनीयानी सर्व वस्तुओ ज्ञानमां विषयीभूत थायछे. अनंतज्ञेयनो ज्ञाता अनंत ज्ञानमय आत्माछे तेने ब्रह्म कहो वा चैतन्य कहो. वा परमात्मा कहो, नामभेद पण अर्थतो एकनो एकछे–सिद्ध परमात्माओ सदृश शरीरमां रहेलो आत्मा पण सर्व रुद्धिमयछे पण कर्मावरणथी सर्व रुद्धि तिरोभावेछे–आत्मा अजछे. अविनाशीछे. अनादि अनंत, अक्षय, अक्षर, अनक्षर, अचल, अटल, अमल, अगम्य, अरूपी, अकर्मा, अबंधक, अनुदय, अनुदगीक, अयोगी, अभोगी, अरोगी, अभेदी, अवेदी, अछेदी, अलेपी, अखेदी, अकपाइ, अलेशी, अशरीरी, अणाहारी, अव्याबाध, अनवगाही, अगुरूलघुपरिणामी, अप्राणी, अयोनि, असंसारी, अमर, अपर, अपरंपर, ज्ञानगुणापेक्षाए व्यापक अनाश्रित, अकंप, अनाश्रव, अशोकी, असंगी अनाहारी लोकालोक ज्ञायक, अनंत सुखमय, आदि गुणोथी विराजमान प्रत्येक शरीरमां रहेला आत्माओ छे. किंतु कर्मनायोगे सर्व रुद्धि ढंकाणी छे, आ शरीरमां पण कर्मथी बंधाएल हे आत्मातुंछे. जेवा सिद्ध भगवान् छे तेवो तुं छे एम सम्यग् अर्थ ग्रही प्रयत्न करायतो मुक्तिपद पामी शकाय. पण सम्यग्ज्ञान विना संसारी जीवो मोहमायामां मस्तान थइ संसारमां परिभ्रमण करेछे. माटे सत्य तत्त्वनी प्राप्ति करवी. एज मोक्षमार्ग जाणवो. श्री सर्वज्ञ प्रभुए धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, जीव द्रव्य

अने काळ आ षड्द्रव्य कथन कर्यांछे. केवळज्ञानमां जेवुं जाण्युं तथा केवल दर्शनमां जेवुं सामान्योपयोगथी देख्युं. ते प्रमाणे पदार्थोनुं प्रतिपादन कर्युंछे. तेनुं ज्ञान थवाथी सत्य आत्मतत्त्वनी प्राप्ति थायछे. मिथ्याज्ञानथी मिथ्यात्वनी वृद्धि थायछे.-यत उक्तं

श्लोक.

नमिथ्यात्वसमः शत्रु, र्नमिथ्यात्वसमंविषं ॥
नमिथ्यात्वसमोरोगो, नमिथ्यात्वसमंतमः ॥ १ ॥
द्विषद्विषतमो रोगै, र्दुःखमेकत्र दीयते ॥
मिथ्यात्वेन दुरंतेन, जंतोर्जन्मानिजन्मनि ॥ २ ॥
वरं ज्वालाकुले क्षिप्तो, देहिनात्मा हुताशने ॥
नतु मिथ्यात्वसंयुक्तं, जीवितव्यं कदाचन ॥ ३ ॥

मिथ्यात्व समान कोइ शत्रु नथी. कारणके मनुष्यरूप शत्रुओ बाह्यरुद्धि वा बाह्यप्राणनो नाश करेछे. अने मिथ्यात्वरूप शत्रु तो आत्मानी अनंतिरुद्धिनो नाश करेछे. अने मिथ्यात्व समान कोइ मोटुं विष नथी. अने मिथ्यात्व समान कोइ रोग नथी. अने मिथ्यात्व समान कोइ अंधकार नथी. ज्वालाथी देदीप्यमान अग्निमां वळी मरवुं ते सारु किंतु मिथ्यात्वपणाथी जीववुं सारु नथी. वळी उपरना बीजा श्लोकमां जणाव्युं के-शत्रु विषरोग तेथी तो एकवार दुःख पमायछे अने दुःखे करी जेनो नाश थायछे एवा मिथ्यात्वथी तो भवोभव दुःखनी परंपरा प्राप्त थायछे, माटे सम्यग्ज्ञाननी प्राप्ति माटे प्रयत्न करवो, श्रीवीरप्रभुए जीवो अनादिकाळनाछे एम केवलज्ञानथी जाणी प्ररूपणा करीछे ते सत्य मानवी. श्रद्धा करवी.

९ नवमविषय.

आत्मा निर्मलपद (मोक्ष) शाथी पामे;

ज्ञान दर्शन चारित्राणि मोक्षमार्गः ज्ञान दर्शन अने चारित्र मोक्षनो मार्गछे. श्रीतत्त्वार्थसूत्रमां ज्ञान दर्शन चारित्रनुं विशेषतः प्रतिपादन कर्युंछे. त्यांथी जिज्ञासुजनोए तेनुं स्वरूप गुरुगमद्वारा धारवुं. अत्र ए त्रणनो विशेष विस्तार करवाथी ग्रंथ गौरवता वृद्धि पामे माटे कर्यो नथी. पूर्वे ज्ञाननुं सामान्यतः वर्णन कर्युंछे. दर्शननुं पण वर्णन कर्युंछे. चारित्रनुं पण सामान्य स्वरूप आगळ कहेवाशे. अष्टकर्मना समूहनो जे नाश करे तेने चारित्र कहेछे. चारित्रना बे प्रकारछे. व्यवहार चारित्र द्वितीय निश्चय चारित्र तेमां व्यवहार चारित्रना बे भेदछे. १ देशविरतिरूप-द्वितीय सर्व विरतिरूप.

तेमां श्रावकनां बारव्रत अंगीकार करवां. तथा तेनुं पालन करवुं तेने देशविरति चारित्र कहेछे.

सर्वथी पंचमहाव्रतनो शास्त्राज्ञापूर्वक स्वीकार करवो अने वीतराग आज्ञा प्रमाणे वर्तन करवुं तेने सर्वथी चारित्र कहेछे-सर्व विरतिरूप भागवती दीक्षाथी कर्मनो नाश थायछे-शास्त्रोमां दीक्षानुं बहु माहात्म्यछे कह्युंछे के,-तथाच

श्लोक.

सर्वेषामपि पापानां, प्रव्रज्या शुद्धिकारिका ॥
जिनोदिता ततः सैव, कर्तव्या शुद्धिमिच्छता ॥१॥
ददति ब्राह्मणादिभ्य, एके पाप विशुद्धये ॥
गोदानं स्वर्णदानंच, भूमिदानान्यनेकधा ॥ २ ॥

आत्मशुद्ध्यर्थमेवान्ये, कारयंति व्रतानपि ॥
जुह्वत्यग्नौ पशूंस्तत्र, अश्वादींश्च सहस्रशः ॥ ३ ॥
अमेध्यभुग् गवामेके, पृष्ठभागं स्पृशंतिच ॥
गवां मूत्रं पिबंत्यन्ये, अन्ये पंचगव्यं तथा ॥ ४ ॥
शुद्ध्यर्थं स्नांति तीर्थेषु, प्रविशंत्यन्ये हुताशने ॥
तथापि नैवशुध्यंति, विनादीक्षां जिनोदितां ॥५॥
किंच शौचं विनाशुद्धिं, जायते न कदाचन ॥
सत्वाहिंसादिकं तच्च, यतः प्राहुर्मनीषिणः ॥ ६ ॥
सर्वजीवदयाशौचं, शौचं सत्यप्रभाषणं ॥
अचौर्यं ब्रह्मचर्यंच, शौचं संतोष एवच ॥ ७ ॥
कषायनिग्रहः शौचं, शौचमिंद्रियनिग्रहः ॥
प्रमादवर्जनं शौचं, ध्यानं शौचं तथोत्तमं ॥ ८ ॥
दुष्टयोगजयः शौचं, शौचं वरविवेकिता ॥
तपो द्वादशधाचैवं, शौचमाहुर्मनीषिणः ॥ ९ ॥
सर्वज्ञोक्तदीक्षायां, एतत् सर्वदयादिकं ॥
शौचं संपूर्ण मेवास्ति, सदांतरात्मशुद्धिकृत ॥१०॥

भावार्थ–सर्व पापोनी शुद्धिकारिका दीक्षाछे. माटे जिनेश्वरे कथेली दीक्षा आत्मशुद्धि इच्छनारे अंगीकार करवी. दीक्षा अंगीकार करवाथी सर्वथा प्रकारे कर्मनो नाश थायछे.

केचित् जीवो ब्राह्मण विगेरेने स्वर्णदान गोदान भूमीदान वि-गेरे आपेछे अने केटलाक आत्मानी शुद्धिने माटे व्रतो करेछे अने

करावेछे. अने होममां पशुओने होमेछे. केटलाक आत्मकल्याण माटे गायनुं अमेध्य भक्षण करेछे, तथा तेना पृष्ट भागने स्पर्शेछे अने वळी गायनुं मूत्र पीवेछे, तथा पंचगंवनुं भक्षण करेछे. केटलाक आत्मशुद्धि माटे गंगा यमुना आदि तीर्थोमां स्नान करेछे. केटलाक अग्निमां प्रवेश करेछे, तोपण ते अज्ञानपणाथी आत्मशुद्धि प्राप्त करता नथी. पण ज्यारे वीतराग सर्वज्ञे कथेली भागवती दीक्षा अंगीकार करवामां आवेछे त्यारे आत्मा निर्मल थायछे.

वळी ते भागवतीदीक्षामां शौचविना शुद्धि थती नथी. हवे ते शौच दर्शावेछे. सर्वजीवदयाशौचं-सर्व जीवोनी दया करवी तेने शौच कहेछे. दया विना धर्म होतो नथी. अहिंसा परमोधर्मः अहिंसा मोटो धर्मछे. अने शास्त्रमां पण कह्युंछे के-

नय तिहुअणेवि पावं, अन्नं पाणाइवायओ गरूयं ॥
जं सव्वेविय जीवा, सुहेसिणो दुरकभीरूय ॥ १ ॥

त्रणलोकमां हिंसा करतां मोटुं कोइ पाप नथी. सर्वे जीव सुख इच्छेछे. अने दुःखथी बीवेछे.

श्लोक.

नसादीक्षा नसाभीक्षा, नतद् दानं नतत्तपः ॥
नतत्ज्ञानं नतद्ध्यानं, दयायत्र न विद्यते ॥ १ ॥

भावार्थ-एवी कोइ दीक्षा, भिक्षा, दान, तप के ध्यान नथी के-जेमां दया नहीं होय.

श्लोक.

अहिंसैव मता मुख्या, स्वर्गमोक्ष प्रसाधनी ॥
अस्याः संरक्षणार्थंच, न्याय्यं सत्यादिपालनं

स्वर्ग अने मोक्ष आपनारी दयाज (अहिंसा) दयाज मुख्य-पणे मनायलीछे. अने एने राखवा माटेज सत्यादिकनुं पालन व्याजवी गणायछे. वळी आचारांग सूत्रमां कह्युछे के,–तथाच पाठः

सेवेमि जेअइया जेय पडुपन्ना जे आगमिस्सा अरहंता भगवंतो ते सव्वे एव माइक्खंति, एवंभासंति, एवंपन्नवंति, एवंपरूवंति, सव्वेपाणा, सव्वेभूया, सव्वेजीवा, सव्वेसत्ता, नहंतव्वा, नअज्जावेयव्वा, नपरितावेयव्वा, नउद्दवेयव्वा, एसधम्मे सुद्धे निइए सासए समिच्चलोयं खेयन्नेहिं पवेइयं.

आचारांगसूत्र भावार्थ

हुं कहुं छुं के जे तीर्थंकर भगवान थइ गया अने जे हाल वर्ते छे, अने जे आवता काळमां थशे ते सर्व आ रीते कहेछे जणावेछे तथा वर्णवे छे के सर्वप्राण, सर्वभूत, सर्वजीव, अने सर्व सत्त्वने हणवा नहि, तेमना उपर हकुमत चलाववी नहि. तेमने कबजे करवा नहि. तेओने मारी नाखवा नहि, अने तेओने हेरान करवा नहि, आवो पवित्र अने नित्य धर्म लोकोना दुःखने जाणनार भगवाने बताव्योछे.

अने वळी कह्युं छे के.–

जयंचरे जयंचिठे, जयमासे जयंसए ॥
जयं भुजंतो भासंतो, पावं कम्मं न बंधइ ॥ १ ॥

श्री शय्यंशभसूरि कहेछे के यतनाथी चालवुं. जीवनी दया सचवाय तेम उभा रहेवुं. यतनाथी बेसवुं, अने यतनाथी सूवुं. अने यतनाथी बोलवुं, एम करतां पाप कर्म बंधाशे नहि. वळी कह्युंछे के–

गाथा.

मल मइल पंक मइला. धूली मइला न ते नरा मइला

जे पावपंक मइला, ते मइला जीवलोयंमि ॥ १ ॥
खणमित्तं सलिलेहिं, सरीरदेसस्स शुद्धिजणगंजं
कामंगंति निसिद्धं, महेसिणंतं नणु सिणाणं ॥२॥

भावार्थी=मलथी मेला, कादवथी मेला थएला, अने धूलथी मेला थएला माणसो मेला नहि गणाय. पण जे पापरूप पंकथी मेला थएल होय ते जीवो आ लोकमां मेला जाणवा–

वळी स्नानमां जलवडे क्षणभर शरीरना बहिर्भागनी शुद्धि थायछे, अने जे जल स्नान कामनुं अंग गणायछे ते जलथी महर्षियोने स्नान करवानो निषेधछे—

उक्तंच श्लोक.

स्नानं मददर्पकरं, कामांगं प्रथमं स्मृतं ॥
तस्मात् कामं परित्यज्य, नैव स्नांति दमे रताः १

स्नान ए मद अने विषयाभिलाषनुं कारण होवाथी कामनुं पहेलुं अंग गणायछे. माटे कामने त्याग करनार अने इंद्रियोने दमवा तत्पर थएला यतिजनो बीलकूल स्नान नथी करता. केटलाक लोको समज्या विना एम बोलेछे के जैनना मुनियो स्नान करता नथी. तेमने कहेवानुं के जैनना साधु शास्त्राज्ञा मुजब वर्तेछे तेथी विषयाभिलाषजनक स्नाननुं तेमने कंइ प्रयोजन नथी. ब्रह्मचारी सदाशुचिः ब्रह्मचारी पुरुष सदा पवित्रछे. तेने न्हाणा स्नाननी कंइ जरूर नथी वळी श्रीकृष्ण, पांडु पुत्रने नीचे मुजब उपदेश आपेछे.

श्लोक.

आत्मानदी संयमतोयपूर्णा, सत्यावहा शीलतटा दयोर्मिः
तत्राभिषेकं कुरु पांडुपुत्र, नवारिणा शुद्ध्यति चांतरात्मा १

भावार्थ–आत्मारूपी नदीछे तेमां संयमरूपी पाणीपरिपूर्ण भरेलछे, त्यां सत्यरूप शीलरूप तेना तटछे, त्यां दयारूप तरंगोछे माटे हे पांडुपुत्र तेमां स्नान कर. कारण के शरीरनी अंदर रहेलो अरूपी आत्मा कंइ पाणीथी शुद्ध थतो नथी हवे त्यारे पवित्र कोण कहेवाय ते जणावेछे.

गाथा.

अखंडिय वयनियमा, गुत्ता गुत्तिंदिया जियकसाया·
अइशुद्ध बंभचेरा, सुइणो इसिणो सयानेया १

भावार्थ–अंगीकार करेलां व्रत अने नियमने अखंडित राखनारा अने जेणे पोतानी इन्द्रियो वश करीछे तथा वळी क्रोध, मान, माया, लोभ, ए चार कषायोने जीतनारा तथा निर्मल ब्रह्मचर्य पाळनार मुनियो (ऋषियो) सदा पवित्र जाणवा.

तथा वळी कह्युंछे के—

श्लोक.

नोदकक्लिन्नगात्रोऽपि, स्नात इत्यभिधीयते;
स स्नातो योदमस्नातः स वाह्याभ्यंतरः शुचिः १

भावार्थ–पाणीथी भींजायल शरीरवाळो कंइ न्हाएलो नहि कहेवाय. किंतु जे पोतानी पांच इंद्रियोनो वश करनारो थइ अभ्यंतर अने वाह्यथी पवित्र होय तेज न्हाएलो कहेवाय. वळी कह्युंछेके—

श्लोक.

चित्तमंतर्गतं दुष्टं, तीर्थस्नानैर्न शुद्ध्यति;
शतशोऽपिजलैर्धौतं, सुराभांडमिवाशुचिः १

भावार्थ—अंतरनुं दुष्ट चित्त कंइ तीर्थ स्नानथी शुद्ध थतुं नथी केमके मदिरानुं वासण सेंकडो पाणीथी धोइए तोपण ते अपवित्र ज रहेछे. माटे सारांश के—जळथी मात्र स्नान कर्याथी पवित्रता प्राप्त थती नथी. परंतु दयारूप शौचथी पवित्रपणुं प्राप्त थायछे. माटे दीक्षा अंगीकार करी प्रथम अहिंसा व्रतनुं पालन करवुं जोइए. कोइ पण जीवनी हिंसा करवी नहि. मुनिने वीस वशानी दया होयछे. अने श्रावकने सवावशानी दया होयछे. मांसनुं भक्षण करनार, मांस वेचनार, जीवो, पापी जाणवा संसारनो त्याग करनारा मुनीश्वरो अहिंसा व्रतनुं पालन करी शिव पाम्या अने पामशे. जीवनी हिंसा करवाथी थएल दारुण दुःख यशोधर चरित्रथी जाणवुं. हवे दीक्षा अंगीकार करी बीजुं सत्य बोलवुं, मृषावाद एटले जूठुं कदी बोलवुं नहिं. तद्रूप सत्यव्रतनुं परिपालन करवुं. त्रीजुं महाव्रत अंगीकार करी कोइनी नजीवी वस्तु पण कह्या विना लेवी नहीं. पोतानी वा पारकी सर्व स्त्री वर्गनो त्याग करवो. मनमां पण भोग भोगववानी इच्छा करवी नहीं. स्त्रीना सामुं सराग दृष्टिथी जोवुं नहि. नव प्रकारे ब्रह्मचर्य व्रतनी गुप्ति पाळवी अने मैथुननो सर्वथा त्याग करवो तेने चोथुं ब्रह्मचर्यव्रत कहेछे. सर्व व्रतो नदीओ समान छे अने ब्रह्मचर्यव्रत समुद्र समानछे, ब्रह्मचारी पुरुषोनी कीर्ति वधेछे, ज्यां जायछे त्यां तेने मान मळेछे. देवताओ पण ब्रह्मचारी पुरुषोने साहाय्य करेछे. मंत्रनी सिद्धि पण शीलव्रत पाळनारने तुरत फळेछे. देवताओ, यक्षो, राक्षसो पण ब्रह्मचारी मुनिने नमस्कार करेछे. ब्रह्मचारी मुनीश्वरने वचन सिद्धि संप्राप्त थायछे, ब्रह्मचारी पुरुषनो संकल्प सिद्ध थायछे. कोइ मनुष्य सुवर्णनां मोटां देरासर करावे अने कोइ ब्रह्मचर्यव्रत अंगीकार करे तो पण ब्रह्मचारी पुरुषनी बरोबर सुवर्णनां देरासर

करावनारने फल थतुं नथी. चारित्रनुं मूळ ब्रह्मचर्यव्रतछे ज्यां ब्रह्मचर्यव्रत नथी त्यां चारित्रनी शुद्धि क्यांथी अर्थात् ब्रह्मचर्यविना चारित्र नथी. ग्रहस्थ पुरूष पण पोतानी स्त्री विना अन्य स्त्रीनो त्याग करेछे. ब्रह्मचर्यमां घणा गुण समायाछे, सुदर्शनशेठने शूळी पण सिंहासनरूपे थइ तेमां ब्रह्मचर्यनुं माहात्म्य जाणवुं. नवनारद ब्रह्मचर्यना प्रतापथी सत्य सुखलीला पाम्या. वळी पारकी स्त्रीना उपर राग करनार रावणने लक्ष्मणे मार्यो, अने रावण मरी नरकमां गयो. अने सीता सतीनो यश जगत्मां गवायो. विषय लंपटी जीवो सदाकाल आकुल, व्याकुल दुःखी रहेछे. लंपटी जीवो आ भवमां पण दुःख पामेछे. अने परभवमां पण दुःख पामेछे. लंपटी जीवोनी जगत्मां अपकीर्तिथायछे अने विषयलंपटी जीवो पकडाय छे तो सरकार तेनो मोटो दंड करेछे. अने जगत्मां तेनुं अपमान थायछे. विषय लंपटी जीवो एवा तो आंधळा होयछे के—तेमने धर्म वा अधर्मनी समजण पडती नथी. माटे भव्य जीवोए ब्रह्मचर्यव्रतनुं सम्यक् परिपालन करवुं. वारंवार मनुष्य जन्म मळनार नथी. स्त्रीनुं शरीर सात धातुथी भरेलुंछे तेना शरीरमां लोही मांस, हाडकां, भेद, मज्जा, मूत्र, विष्टा भरेलीछे, नाकमांथी लींट वह्या करेछे. आंखमां पीयाना थोक वाजेछे. केशमां जुओ, लीखोना समूह पड्या करेछे. शरीरद्वारोथी अशुचि वह्या करेछे. वळी जुवान अवस्था उतर्या वाद वृद्धावस्था थायछे. त्यारे शरीर खराब लागेछे. शरीरनो रंग उतरी जायछे. अलबत तेना सामुं पण जोवानुं मन थतुं नथी एवी स्त्रीना शरीरमां शो सारछे के तेना उपर राग थाय. वळी स्त्री जाति कपटथी भरेलीछे. भर्तृहरि जेवा राजाने मूकी तेनी राणी चाकरनी साथे संबंधवाळी थइ हती. ते वात ज्यारे भर्तृहरिराजाए जाणी त्यारे मनमां घणो

खेद थयो अने विचारवा लाग्यो के–अहो जे पिंगलाने हुं पटराणी तरीके मानतो हतो अने जे मारी प्राणप्रिया हती. अने हुं जेना उपर पूर्ण विश्वास राखतो हतो ते पिंगलाराणी पण अंते मारी थइ नहि. अने तेणीए कामना आवेशथी नीचनी साथे संबंध कर्यो माटे तेने धिक्कार थाओ. अहो जगत्‌ना जीवो कामावेशथी पुण्य पाप गणता नथी. एवा कामने पण धिक्कार पडो अने आ संसारमां हुं जेने सारभूत मानतो हतो एवी पिंगला पण मारी थइ नहि. अहो ज्ञानीओए संसारने असार कह्योछे तेमां जरा मात्रपण असत्य नथी. एम चिंतवी तापसी दीक्षा अंगीकार करी पर्वतनी गुफामां चाल्यो गयो, अने तेमणे भर्तृहरि शतकनी रचना करी. माटे संसारमां सारभूत धर्म विना अन्य कशुं जणातुं नथी. माटे भव्यजीवोए पण सांसारिक मोहमायाथी दूर रही आत्मिक धर्माराधनमां तत्पर थइ धर्माराधन करवुं, अने स्त्रीविषयाभिलाषनो त्याग करवो. शास्त्रमां विषयने विषनी उपमा आपीछे त्यारे वळी एक महात्मा कहेछे के, विषयने विषनी उपमा आपवी ते योग्य नथी. कारण के, विष तो एक भवमां भक्षतां प्राण हरी दुःख आपेछे अने विषयो तो अनेक भव पर्यंत परिभ्रमण करावी दुःख आपेछे. माटे विषना करतां पण मोटी उपमा आपवी जोइए. विषयथी थतुं सुख स्वप्नसुख समान मिथ्या कल्पना मात्रछे.

तथाच श्लोक.

स्वप्ने दृष्टं यथापुंसः क्षणमात्रं सुखायते
प्रबुद्धस्य नतत्किंचित् एवं विषयजं सुखं. १

स्वप्नमां देखेलो पदार्थ पुरुषने क्षणमात्र सुख आपेछे अने ज्यारे ते मनुष्य जागेछे त्यारे कंइपण देखातुं नथी ए प्रमाणे विष-

पनुं सुख क्षणमात्र आभास मात्रछे अंते वस्तुतः विचारतां कंइ सुख नथी. वळी विषयी पुरूषोनी केवी स्थिति थायछे ते जणावेछे.

श्लोक.

विषयेषु विषीदंतो, न पश्यंति हिताहितं
शृण्वंति न हितं वाक्यं, अंध बधिरसंनिभाः १

विषयोमां विषाद पामेला जीवो हित वा अहितने देखता नथी. तेम वळी हितवाक्य कोइ कहे तो ते सांभळता नथी. खरे-खर विषयलालचु जीवो अंध अने बहेरा सरखाछे. अने वळी कहेछे के,

श्लोक.

विषयेषु रतोजीवः, कर्म बध्नाति दारुणं
तेनासौ क्लेशमाप्नोति, भ्राम्यन् भीमे भवोदरे २

विषयोमां आसक्त थएल जीव दारूण कर्म बांधेछे अने तेथी ते जीवो भयंकर संसारमां परिभ्रमण करतो क्लेश पामेछे. वळी विषयमां मोह पामेला जीवो शुं करेछे ते कहेछे.

श्लोक.

अहो मोहस्य माहात्म्यं, विद्वांसोऽपियतो नराः
मुह्यंति धर्मकृत्येषु. रताः कामार्थयोर्दृढं १

अहो मोहनुं प्राबल्य केवुं छे के जे विद्वान् मनुष्यो पण काम अने अर्थमां आसक्त थया छता धर्मकृत्यमां मुंझायछे. आवुं मोहनुं जोर तोडी श्रीजंबुकुमार कोटी धन, स्त्री, परिवारनो त्याग करी दीक्षा अंगीकार करी. तेमज धन्नाकुमार तथा शाळीभद्रे मोहनो नाश कर्यो. श्री स्थुलीभद्र के जे पाटलीपुरमां शकटाल मंत्रीना पुत्र हता अने जे बार वर्ष वेश्याना घेर रह्या हता. तेमणे स्त्रीनो त्याग करी दीक्षा अंगीकार करी. अने वेश्याने गृहे चातुर्मास

कर्यु. त्यां वेश्याए पोतानुं शरीर देखाय अने विषयाभिलाप थाय तेम नाच कर्यो, कामोत्पादक अनेक प्रकारनां गायनो गायां. तो पण मुनिवर्यश्री स्थुलीभद्र जरा चलायमान थया नहीं अने विषयमां रागी एवी वेश्याने पण वैरागी बनावी. अने ते वेश्याने श्रावकनां चार व्रत उच्चराव्यां. अहो आश्चर्यनी वात छे के, कामनो नाश करवा महामुनियो पर्वतनी गुफाओमां तथा एकांत जग्याओमां गया, केमके त्यां काम आवी शके नहि माटे. त्यारे स्थुलिभद्र मुनिवर तो कामना गृहमां प्रवेशी कामनो नाश कर्यो. अहो केटलुं तेमनुं सामर्थ्य ? एवी रीते भव्यजीवोए उत्तम चरित्र श्रवण करी विषय, काम, मोहनो नाश करवो. अने ते प्रति जरा मात्र पण इच्छा करवी नहीं अने मन, वचन, कायाथी शुद्ध ब्रह्मचर्य व्रत पाळवुं.

हवे पांचमुं सर्वतः परिग्रह परिमाण विरमण व्रत कहेछे. श्री मुनीश्वर महाराजा धनधान्यादिक नव विध परिग्रहनो त्याग करे छे, कारण के विकल्प संकल्पनुं कारण परिग्रहछे. परिग्रहथी क्रोध, मान, माया, लोभनी उत्पत्ति थायछे. जेम वहाण अतिशय भारथी समुद्रमां बुडेछे परिग्रहनी वृद्धिथी रागद्वेषनी वृद्धि थायछे. परिग्रहथी दुनीयामां मनुष्य एटली बधी गुंचवणमां आवी पडेछे के तेने जरामात्र पण शांति मळती नथी. वळी धनधान्यादिकनी वृद्धिथी मोटाइ वधेछे. मनमां मान आवेछे. वळी अदेखाइ पण प्रगट थायछे. वळी परिग्रहनी प्राप्तिना कारणथी प्राणातिपात, असत्य, चोरी, आदि पापस्थान कोनुं सेवन करी कर्मार्जन करी जीव अधोगतिमां अवतरी त्यां छेदन भेदन ताडन तर्जन शोक, वियोग क्षुधा, तृषा, आदि विविध दुःखो भोगवेछे. वळी परिग्रहथी अज्ञानीजीव धर्म साधन करी शकतो नथी परिग्रह मेळववामां केवळ

दुःखज समायुंछे. वळी परिग्रह धन उपर ममता भाव राखी मनुष्य मरण पामी सर्प, उंदर, गीरोलीना अवतार पामेछे. वळी परिग्रहनी ममताथी मातपिता भाइ परस्पर लडी मरेछे. वळी परिग्रह धनरूप वृद्धि पामेछे त्यारे तेने साचववानी पण चिंता रहेछे. रखेने चोर विगेरे लइ जाय एवी चिंता तेना मनमां रहेवाथी सुखे करी उंघपण आवती नथी, परिग्रहथी आरंभ, समारंभ करी कर्मोपार्जन जीव करेछे. परिग्रहधारी खरेखर जडवस्तुने पोतानी मानी छेतरायछे. माटे वैरागी आत्मार्थी जीवो परिग्रहनो त्याग करी दीक्षा ग्रही पंचमहाव्रत अंगीकार करेछे. अने पुत्र स्त्री मातपिता विगेरे संसारी कुटुंबनो संबंध छोडेछे अने स्वस्थ चित्ते हुं एकलो छुं. आत्माथी अन्य मारू नथी अने हुं कोइनो नथी एम अदीन मना थइ आत्माने शिखामण आपेछे. सद्गुरूने धारण करेछे. संयमनी रक्षा अर्थे वस्त्र, पात्र, पुस्तक, रजोहरण, मुखवास्त्रिका, धारण करेछे. संयमनां उपकरण राखवाथी परिग्रह कहेवातो नथी. कह्युंछे के

मुच्छापरिग्गहोवुत्तो, नायपुत्तेण ताइणा;

श्री ज्ञानपुत्र वीरप्रभुए मूर्च्छाने परिग्रह ग्रह्योछे. माटे हठ कदाग्रह करवो नहीं. एम मुनीश्वर परिग्रहनो त्याग करी निर्विकल्प मन करी आत्मज्ञानमां मग्न रहेछे, अने मुनीश्वर विचारे के आ बाह्य परिग्रह त्यागी मुनि आत्मानी रूद्धि तरफ लक्ष आपी जुवेछे तो त्यां अनंतज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र, आदि रूद्धि भरेली छे अने ते रूद्धि अविनाशीछे. पोतानाथी कदी जुदी पडवानी नथी अने ए रूध्धि प्राप्त थवाथी सहज शांति अनुभवायछे, एम आत्मा ए जाण्युं त्यारे आ बाह्य जड रूध्धिरूप परिग्रहनो त्याग कर्यो. अने आत्मिक रूध्धि मेळववा प्रयत्न करवा लाग्या, ध्यानादिकनो अभ्यास करवा लाग्या, ए पांचमुं परिग्रह विरमणव्रत दी-

क्षा अंगीकार करी मुनिवर्यो मनवचन अने कायाथी परिग्रह धारण करवो नहीं परिग्रह धारण कराववो नहीं. अने परिग्रह धारण करता होय तेनी अनुमोदना करवी नहीं.

छठुं रात्रीभोजन विरमणव्रत कहेछे. रात्रीना समयमां मुनीश्वर अशनपान, खादिम अने स्वादिम ए चार प्रकारना आहारनो त्याग करेछे. श्रीवीरप्रभुए रात्रीभोजनमां महा दोष कथ्योछे, माटे आत्मार्थी जीव रात्रीभोजन करे नहि. योग शास्त्र, वर्धमान देशना, आदि ग्रंथोमां तथा सूत्रोमां रात्रीभोजन करवाथी महादोष वताव्याछे. वळी अन्य दर्शनीओना शास्त्रमां पण रात्रीभोजन करवाथी दोष वताव्याछे. माटे मुनिवर्यो दीक्षा ग्रही रात्रीभोजननो त्याग करेछे. ए रीते पंच महाव्रत अने छठुं रात्रीभोजन विरमणव्रतनुं अत्रतो संक्षेपथी स्वरूप प्रसंगोपात देखाडयुं. आ प्रमाणे मूल व्रत अंगीकार करे, अने चरण सित्तरी करण सित्तरीरूप उत्तर भेदनुं आराधन निर्ग्रंथ मुनिवर्य करे. श्रीसिद्धसेन दिवाकरसूरिकृत प्रवचन सारोद्धारमां चारित्रना मूळ भेद उत्तरभेदनुं तथा चारित्रना उपकरणोनुं विशेषतः वर्णन कर्युंछे त्यांथी जिज्ञासुए विशेष अधिकार जाणवो. हवे दीक्षा अंगीकार करी कषायना निग्रहरूप शौच मुनीश्वर धारण करेछे. क्षमाथी क्रोधनो पराजय करेछे. अने नम्रताभावथी माननो पराजय करेछे अने सरलताथी मायानो नाश करेछे. अने संतोषथी लोभनो नाश करेछे. वळी पांच इंद्रियोना विषयो जीतवारूप शौच मुनीश्वर धारण करेछे. प्रमादनो त्याग करवो ते रूपशौचने दीक्षा अंगीकार करी धारण करेछे. प्रमादथकी चौद पूर्वी पण संसारमां पडया माटे आलस्य, निद्रा, विकथा, पारकी निंदा आदि प्रमादनो नाश करी मुनीश्वर अप्रमत्तपणे रहेछे. वळी मुनीश्वर ध्यानरूप शौच जे

सर्व शौचोमां उत्तमछे तेने धारण करेछे. धर्मध्यान अने शुक्लध्यान ए बे ध्यान आत्मकल्याणकारीछे. तेमां शुक्लध्यान मुक्ति प्रदाताछे. मन वचन अने कायाना दुष्ट योगनो जय करवो तेने शौच कहेछे वळी हेय, ज्ञेय अने उपादेयनो विवेक तेने उत्तम विवेक कहेछे. ते शौचने दीक्षा अंगीकार करी मुनिवर्यो धारण करेछे. बार प्रकारे तप करवो ते पण शौच जाणवो, श्री सर्वज्ञ कथित दीक्षामां दयादिक सर्व कृत्य शौचरूप शरीरनी अंदर रहेला आत्मानी शुद्धि करनारछे. निश्चय चारित्र आत्मस्वभावमयछे एटले आत्माथी भिन्न नथी ते चारित्रनी प्राप्ति माटे व्यवहार चारित्रकारणीभूतछे.

आ संसारमां केटलाक जीवो धर्मनुं नाम पण जाणता नथी अने तदनुकूल प्रयत्न पण करता नथी. संसारमां मोटा कहेवाणा एटले पोताने धन्य मानेछे. पण पोते जीवादिक तत्त्व जाणता नथी अने सांसारिक कार्योमां अहर्निश गुंथाया रहेछे, पण धर्माराधन परायण थता नथी. धर्मनुं आराधन करी आत्माने कर्मबंधनथी छोडाववो एज उत्तम पुरूषोनुं लक्षण छे. बाकी धन, पुत्र, लक्ष्मीनी वृध्धिथी पोतानी वृध्धि मानी अहंभावमां वर्तवुं ते तो अधम पुरूषोनुं लक्षणछे. श्री भरतराजा, राम, पांडवो विगेरेए अंते आ संसारने असार समजी आत्महितमां प्रवृत्ति करी तेम भव्य जीवोए पण अधुना सारमां सार दीक्षानुं अवलंबन करवुं जोइए. दीक्षा ग्रह्या विना आश्रवमार्गनो रोध थतो नथी. आ संसारने ज्ञानी पुरूषोए बळता अग्नि समान कह्योछे, बाजीगरनी बाजी जेवुं आ संसारनुं स्वरूप जाणी विवेकी मनुष्य चारित्रमार्ग ग्रहण करेछे. मारु मारु मानता एवा अनेक जीवो मायाना वश ज्ञानलक्ष्य सत्य आत्मस्वरूप भूली यमराज वश थया अने थायछे. जेम समुद्रमां पाणीना अनेक तरंगो उत्पन्न थायछे अने पश्चात् विलय

पामेछे तेनी पेठे अनादिकालथी आ संसारसमुद्रमां देव मनुष्य तिर्यंच अने नारकी तरंगे करी जीव अनेकशः शरीर छोडतो अने अनेकशः शरीर धारण करतो वर्तेछे. पण अज्ञान दशाथी पामर जीवनी मुक्ति थइ नहीं. पण ज्यारे आत्मानुं स्वरूप जाणवामां आवेछे त्यारे आत्मा संयममार्गयोगे धर्मना आविर्भाव अर्थे प्रयत्न करेछे, ज्यारे चारित्रमोहनीय प्रकृतिनो क्षय थायछे त्यारे चारित्र आत्मामां प्रगटे छे. कोइ जीव चारित्र मोहनीयने उपशमावेछे. कोइ चारित्र मोहनीयनो क्षयोपशम करेछे. कोइ जीव क्षायिकसमकितयोगे आठमा गुणठाणाथी क्षपकश्रेणि आरोहण करी चारित्र मोहनीयनो क्षायिक भाव करेछे. कोइ जीव उपशम श्रेणि चढी चारित्र मोहनीयकर्मनी प्रकृतिने अगीयारमा गुणठाणे उपशमावेछे अने त्यांथी पाछा पडे छे. अने यावत् मिथ्यात्व गुणठाणा सुधी आवेछे.

कोइ उपशम समकित पामी आठमागुणठाणाथी उपशमश्रेणिए चढेछे अने कोइ क्षायिक समकित पामी आठमा गुणठाणाथी उपशम श्रेणि चढी अगीयारमे गुणठाणे जइ मरे तो अनुत्तर विमानमां जायछे. अने कोइ उतरता गुणठाणे पण मरण पामेछे. अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया अने लोभ तेमज समकित मोहनीय अने मिश्रमोहनीय अने मिथ्यात्वमोहनीयनो क्षायिकभाव कर्या पूर्वे आवता भवनुं आयु बांधी पाछळथी क्षायिक समकित पाम्यो होय ते जीवने बद्धायुक्षायिक समकित जाणवुं. आयुष्य बंधनी अपेक्षाए आवुं क्षायिक समकित कयुं छे, तत्त्वज्ञान बहुश्रुतवा केवली जाणे. ते अशुद्ध क्षायिक समकिती जीव उपशम श्रेणि करे एम कहेवायछे. क्षायिक समकित जीव दशमा गुणठाणे यथाख्यात चारित्र पामी बारमा गुणठाणे ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अने अंतरायकर्मनो क्षायिकभाव करी अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतवीर्य अने क्षायिकभावना

पंचलब्धि पामेछे. ते नीचे मुजब, अनंतदानलब्धि,अनंतलाभलब्धि, अनंतभोगलब्धि, अनंतउपभोगलब्धि अने अनंतवीर्यलब्धि संप्राप्त थायछे. अंतरायकर्म क्षय थयुंछे एवा परमपरमेश्वर पुरुष सदा सुखी छे. मुख्यपणे तो ते लब्धियोनी प्राप्ति आत्मस्वभावेछे. केमके तेनी क्षायिकभावे प्राप्तिछे. अने जे अनंत सामर्थ्य आत्मामां अनादिथी शक्तिरूपे हतुं ते व्यक्तिरूपे थइ प्रकाशेछे, अने आत्माना अनंतगुणोनो आविर्भावतेरूप दान, आत्मा पोते पोताने आप्युं ते दानलब्धि जाणवी. तेमज अनंत आत्म सामर्थ्यनी संप्राप्तिमां किंचित् मात्र वियोगनुं कारण रह्युं नथी. तेथी अनंतलाभ लब्धि कहेवायछे.

वळी अनंत आत्मसामर्थ्यनी संप्राप्ति संपूर्णपणे परमानंद स्वरूपे अनुभवायछे. तेमां किंचित् मात्रपणे वियोगनुं कारण रह्युं नथी तेथी अनंतभोगलब्धि जाणवी.

तथा अनंत आत्म सामर्थ्य संपूर्णपणे परमानंद स्वरूपे समये समये परिणमेछे तोपण तेमां किंचित् मात्र पण वियोगनुं कारण रह्युं नथी. तेथी अनंत उपभोगलब्धि कहेवा योग्यछे. तेमज अनंत आत्मसामर्थ्यनी प्राप्ति संपूर्णपणे थया छतां ते आत्मसामर्थ्यना योगथी आत्मशक्ति थाके के तेनुं सामर्थ्य न झीली शके, वहन न करी शके,एम छेज नहीं. सदाकाल ते सामर्थ्यछे तेमां जरा मात्र पण न्यूनाधिकपणुं थवानुं नथी. एवी जे वीर्य शक्ति त्रिकाल संपूर्णपणे वर्तेछे ते अनंतवीर्यलब्धि कहेवा योग्यछे.

क्षायिकभावनी दृष्टिथी जातां उपर कह्या प्रमाणे ते लब्धिनो परमपुरुषने उपयोग होयछे. वळी ए पांचलब्धि हेतु विशेषथी समजावा अर्थे जुदी पाडीछे नहीं तो अनंतवीर्यलब्धिमां पण ते पांचेनो समावेश थइ शकेछे. एम तेरमा गुणठाणे क्षायिकभावनी नवलब्धि भोगवतो परमपुरुष शैलेशीकरण करी चउदमा गुणठाणे अप्रा-

तीकर्मनी ते गुणठाणे खपाववा योग्य जे प्रकृतियो बाकी रही इती ते चउदमा गुणठाणे खपावी सिद्धशिलानी उपर एक योजनना चोवीश भाग करीए तेना त्रेवीस भाग नीचे मूकी चोवीसमा भागे अवगाहनाए संयुक्त ते मोक्षस्थानमां आदिअनंतमे भांगे विराजमान थायछे, चारित्रथी पूर्वोक्त मोक्षस्थाननी प्राप्ति थायछे.

अथ दशमविषय.

१० कर्मनो कर्ता तथा भोक्ता आत्मा, कर्मनो नाश शी रीते करे ?

प्रत्युत्तर–आत्मा स्वरूपमां रमण करे तो कर्मनो नाश थायछे,

परस्वभावमां रमण करतो आत्मा कर्म बांधेछे अने, स्वस्वभावमां रमण करतो कर्मनो नाश करेछे, अनंतजीवोए भूतकालमां कर्मनो नाश कर्यो अने अनंतजीवो भविष्यकाळे करशे, जीव बे प्रकारनाछे. १ भव्यजीव २ अभव्यजीव.

जेनामां मोक्ष जवानी योग्यताछे तेने भव्यजीव कहेछे. अने जेनामां बिलकुल मोक्ष जवानी योग्यता नथी तेने अभव्यजीव कहेछे. अभव्य जीव कदी मोक्ष पामी शकतो नथी.

आत्मा कर्मनो नाश शी रीते करे तेनुं घणुंखरुं विवेचन पूर्वे प्रायः कथ्युंछे तेथी अत्र स्थळे विशेष विवेचन कर्युं नथी. हवे विचारोके–मोक्षतत्त्व बंधविना संभवे नहीं. अने जेनछे बंध ते कर्म एम आत्मा अने कर्मनो संबंध जेवो जिनदर्शनमां घटेछे. तेवो अन्यत्र घटतो नथी. कर्मथी मुक्त आत्मा सिद्धस्थानमां सादि अनंतभंगीए रहे छे, त्यां परमात्मपणे समये समये अनंतसुखनो भोक्ता आत्मा बनेछे. कोइ दर्शनी दुःखात्यंताभावरूप मुक्तिमानेछे पण तेम नथी. आत्माने कर्मनायोगे दुःख थायछे. ते विभाविकछे

एटले विभाविक वस्तु स्वरूप जे दुःख ते आत्माथी दूर थायछे. अने आत्मामां सुखछे ते स्वभाविकछे. स्वभाविक वस्तु कदी टळती नथीः तेम आत्मामां जे सुखछे ते स्वभाविकछे एटले आत्मानो सुख शुद्धगुणछे अने आत्मागुणीछे. माटे तेनाथी दूर थतो नथी. कोइ वादी जडस्वरूप मुक्ति मानेछे मुक्तदशामां आत्माने कोइपण वस्तुंनुं भान नथी. आम ते वादीनुं मानवुंछे ते अज्ञान विशिष्टछे. कारणके—जडस्वरूप मुक्ति होत तो कोइ मुक्ति पामवानी जरामात्र पण इच्छा करे नहीं. परंतु स्याद्वाद सत्यदृष्टिथी समजो के मुक्तिपद पामेलो आत्मा केवलज्ञानथी दरेक पदार्थने जाणेछे. समस्त वस्तुनुं ज्ञान सिद्धात्मामां समये समये प्रवर्तेछे, वळी सामान्य उपयोगरूप केवलदर्शनथी सिद्धात्मा सर्वजगत्ने देखेछे. अने मुक्तात्मा अव्याबाधगुणथी अनंत सुख भोगवेछे, माटे जडस्वरूप मुक्ति नथी. ज्ञान स्वरूप जे आत्मा ते जडरूप बनी जाय तो ते मुक्ति कहेवाय नहीं, वळी आत्मा ज्ञानगुणथी भिन्न थाय नहिं. कारणके—आत्मानो स्वभाविक ज्ञानगुणछे. ते ज्ञानगुण आत्माथी त्रिकाले पण जुदो पडे नहीं.

वादी—जो मुक्तिमां आत्माने ज्ञानगुणवाळो मानीए तो मुक्तात्मा ज्ञानथी सर्व जगत्जीवोने थतुं दुःख जाणे, त्यारे ते दुःख मुक्तात्माने थाय, माटे ज्ञानगुण मुक्तिमां मानवो अयुक्तछे.

सुगुरु—हे सत्य तत्त्वाकांक्षी भव्य—जरा विचार करशो तो मालुम पडशे के—मुक्तात्माने अनंतज्ञानथी तेमां किंचित् विरोध आवतो नथी. जेम दृष्टांत—कोइ मनुष्य कोइस्थाने पडेलुं तालपुटविष जाणे अने तेने देखे तेथी तेने कंइ दुःख थतुं नथी, तेम सिद्धपरमात्मा केवली भगवान्ने पण जगत्ना जीवोने दुःखी जाणवाथी ते दुःख पोताने लागतुं नथी. तेम जगत्ना जीवोमां सातावेदनी जोर.थी.. शातावेदनीय कंइ सिद्धप्रभुना

आत्माने लागती नथी—कारणके वस्तुओ थकी पोतानो आत्मा न्यारोछे, तेथी ते विरोध सिद्धभगवान्मां घटतो नथी.

आशंका—सिद्धात्माओ अनंत सुख समये समये भोगवेछे ते केवल ज्ञानथी के, केवलदर्शन गुणथी—

समाधान—सिद्धात्माओ केवलज्ञानथी सर्व वस्तु जाणेछे अने केवलदर्शनथी सर्व पदार्थोने देखेछे. अने सिद्धात्माओ सुख भोगवेछे ते अव्यावाध नामना गुणथी भोगवेछे तेथी पूर्वोक्त विरोधनो सर्वथा नाश थायछे.

ते उपरथी सिध्ध स्पष्ट भासेछे के जडस्वरूप मुक्ति नथी परंतु शुद्ध चैतन्य स्वरूप मुक्तिछे.

कोइवादी आकाशनी पेठे सर्वत्र व्यापिनी मुक्ति मानेछे ते पण यथार्थ घटना वहिर् छे. कारणके, मुक्तआत्मा आकाशनी पेठे सर्वत्रव्यापक नथी. सर्वत्रव्यापक आत्माने मानतां वंध मोक्ष व्यवस्था घटती नथी. जेम आकाश सर्वत्र व्यापक छे तो ते कोइनाथी वंधाय पण नहीं अने वंधावाना अभावे मोक्ष पण घटे नहीं. तेम आत्माने कर्मपण सर्वत्र व्यापक मानवाथी वंधाय नहीं अने वंधाभावे मोक्ष पण कहेवाय नहि एम दोष स्पष्ट भासेछे, माटे सर्वत्र व्यापिनी मुक्ति सिद्ध ठरती नथी. सर्वव्यापिनी मुक्ति मानतां प्रथम सर्वत्रव्यापक आत्मा मानवो पडशे. अने सर्वत्रव्यापक एवा आत्माने वंध मोक्ष घटतो नथी. वळी सर्वत्रव्यापिनी मुक्ति मानवामां अनेक विरोध आवेछे, माटे त्रिशलातनये श्री सर्वज्ञमहावीरे प्ररूपेली मुक्ति यथातथ्य सत्य छे. अने ते प्रमाणे मानवामां कोइ जातनो विरोध आवतो नथी.

वळी कोइ मतवादी मुक्तिमां स्वामी सेवक भाव स्वीकारेछे ते पण युक्तिहीनछे, कर्म क्षयथी सर्व आत्माओ मुक्तिमां सरखा

छे. सर्व आत्माओ पोतपोताना स्वरूपे परमानंद सुखविलासी छे. सर्व सिद्धात्माओमां केवलज्ञान अने केवलदर्शन छे. कोइ नानुं मोटुं नथी. अष्टकर्म खप्याथी अष्टगुण सिद्धना जीवोमां प्रगट्या छे. पोताना गुणना कर्त्ता प्रत्येक सिद्ध भगवान् छे. विभावदशाथी रहित स्वस्वभावभोगी थयाछे माटे परनुं कर्त्तापणुं लेश मात्र नथी. वळी सिद्धना जीवोने शरीर नथी, लेश्या नथी, मन नथी, काया नथी, एक पुद्गल परमाणु सरखो पण सिद्धना जीवोमां रह्यो नथी अलेशी, अशरीरी, अचल, सिद्धना जीवोछे.

एम मानेछे के, मुक्तिमां केटलाक वर्ष पर्यंत रहीने जीव पाछो संसारमां आवेछे. पण ते योग्य नथी. कारणके कर्मनो नाश थतां सिद्ध स्वरुपता प्रगटे छे ते अवस्था सादि अनंतमे भांगेछे. एटले सिद्धमां गयानी आदि छे पण अनंत नथी अर्थात् सिद्ध थया पछी संसारमां आवता नथी. संसारमां आववानुं कारण कर्म छे ते कर्मनोतो प्रथमथीज नाश करी मुक्ति गयाछे माटे संसारमां अवतार लेवानुं काम बिलकुल नथी. वळी कोइ कहेशेके, सिद्धना आत्माओने नवां कर्म लागे ते पण ज्ञानहीन वचनछे कारणके, कर्म लागवानुं कारण आत्माने राग अने द्वेष छे अने रागद्वेषनो सर्वथा नाश करी सिद्धात्मा थया छे माटे नवां कर्म पण सिद्ध परमात्माने लागतां नथी. सदाकाल शुद्ध स्वरूपे निज भोगवेछे, तेथी सिद्धना आत्माओ कदापि काले संसारमां पाछा जन्म धारण करता नथी. सिद्धना जीव अनवतारी छे. कोइ एम कहेशेके. ज्यारे ते परमात्मा थया अने सिद्ध शिलानी उपर सिद्ध क्षेत्रमां रह्याछे अने त्यांथी पाछा दुनीयामां आववाना नथी. अने जगत्‌ना लोकोने दुःखमांथी बचावता नथी त्यारे तेमणे शो परोपकार कर्यो कहेवाय; तेना उत्तरमां समजवानुं के,

मुक्तात्मा बे प्रकारनाछे. एक केवलज्ञान संपादन करी आयुष्य वि-
शेषे रहेला अने बीजा चउदमुं गुणस्थानक स्पर्शी सिद्ध स्थानकमां
गयेला. हवे तेरमा गुणस्थाककवर्ती केवलज्ञानी महात्माओ भाषा
वर्गणाना पुद्गलयोगे उपदेश आपी तत्त्वस्वरुप समजावी जगज्जी-
वोनुं कल्याण करेछे. अने सिद्धमां गया बाद सिद्धस्वरूपे थतां
जगत् जीवो सिद्धनुं ध्यान करी स्वस्वरुप प्रगटावेछे एटले तेमां
पण कल्याण प्राप्तिमां जगज्जीवोप्रति सिध्ध परमात्मा निमित्त कार-
णीभूत छे, ते विना द्रव्यदयारुप उपकार करवा अर्थे ते सिध्ध प-
रमात्मानी स्वाभाविक शक्ति नथी कारणके ते वीतराग थयाछे,
सर्वजीवना कल्याणमां उपादान कारणनी अपेक्षाएतो पोतेज
कारणछे. अन्य तो तेमां निमित्त कारण छे. आ वात सूक्ष्मदृष्टिथी
सद्गुरू पासे समजतां यथातथ्य समजाशे.

कोइ जीव तो इंद्र आदि देवतारूपे थवुं तेनेज मुक्ति मानेछे.
कारण के तेनाथी आगळ सूक्ष्म ज्ञानदृष्टिथी जोवायुं नहि तेज कारण
छे, जेम के इशुख्रीस्त आदि मतवाळा एम मानेछे के परमेश्वर सु-
वर्णना सिंहासन उपर बेठोछे अने तेना मस्तके मुकुट विगेरेछे एम
कहेवाथी समजायछे के ते देवयोनि पैकी कोइ देवने परमेश्वर
मानी विश्वासयोगे एममाने छे. कारण के पूर्व भवनो रागी अने
संबंधी कोइ देव आ प्रमाण करी शके अने तेथी भ्रांतिमां फसावुं
पडे. एम ख्रीस्ति धर्ममां होय तो ते अप्रमाण कही शकाय नही,
माटे सर्वांशे परिपूर्ण अनुभवगम्य जिनदर्शनमां जे मुक्तिस्वरूपछे
ते सत्यछे.

मुक्तिमां अनंत सिद्धोनी अवगाहना भेगी होयछे.

शिष्य–हे गुरो ! अवगाहनानुं शुं स्वरूपछे अने ते अवगाहनारूपी
छे के अरूपी ?

गुरू-हे विनेयशिष्य ! आत्मा ज्यारे शरीर त्यागीने मुक्तिमां जाय छे त्यारे शरीरना त्रण भाग करीए तेमांथी एक भाग त्यागीए. $\frac{2}{3}$ प्रमाणमान आकाशप्रदेशमां आत्मा असंख्य प्रदेशथी व्यापीने रहेछे ते अवगाहना जाणवी. अने ते अवगाहना अरूपीछे.

शिष्य-एक सिद्धक्षेत्रमां अनंत आत्माओ केम करी समाय ?

गुरू-एक ओरडामां एक दीपक करीए छीए तो पण तेनी ज्योति समायछे. तेम हजारो दीपक कर्या होय तो ते दीपकोनी ज्योति (प्रकाश) पण समायछे. तेमां कंइ हरकत पडती नथी. वळी दीपकना प्रकाशनां पुद्गलरूपीछे तो पण समाइ जायछे तो अरूपी एवा अनत आत्माओ सिद्धक्षेत्रमां समाय तेमां किंचित् पण विरोध जणातो नथी.

शिष्य-त्यारे सिद्धात्मा त्यांथी अलोकमां केम जइ शकतो नथी;-

गुरू-सिद्धात्मा अक्रियछे. गमनागमन क्रियाथी विराम पाम्याछे तेथी उपर जइ शकता नथी. कारण के अक्रियपणुंछे अने अलोकमां धर्मास्तिकाय पण नथी. माटे सिद्ध त्यां जइ शकता नथी. धर्मास्तिकाय तो फक्त गमनमां प्रवर्तेला पदार्थोने साहाय्य आपी शकेछे.

शिष्य-त्यारे आ आधिव्याधिउपाधिमय जगतमां शुं सारछे. शाथी अनंत दुःख नाश पामे ?

गुरू-शिवपद आराध्य, जगत्मां समजवुं. अने तेज साध्य करवा लायकछे. ते पदनी संप्राप्तिथीज सर्व अखंड शाश्वत सुखनी प्राप्ति थायछे. श्री गुणस्थानक क्रमारोहमां कह्युं छे. यथा

श्लोक.

यदाराध्यं चयत्साध्यं, यद्ध्येयं यच्चदुर्लभं;
चिदानंदमयं तत्तैः संप्राप्तं परमं पदं. १

भावार्थ–जे शिवपद आराध्य, साध्य, ध्येय, दुर्लभछे, ते पद ने ज्ञानीओए शुक्लध्यानथी प्राप्त कर्युंछे.

आत्मा तेज ब्रह्मस्वरूपछे. आत्माज शिवस्वरूपछे, आत्माज परमात्मरूपछे. सिद्धत्वपणुं आत्मानो शुद्ध पर्यायछे, सम्यग् मोक्ष स्वरूप वीतराग वचनोथी प्रतीत थायछे, ज्यारे बंधतत्त्वनो नाश थायछे. त्यारे मोक्षतत्त्वनी उत्पत्ति थायछे. मोक्षतत्त्वथी आत्मा भिन्न नथी. मोक्षमयी आत्माछे. ज्ञान, दर्शन अने चारित्रथी मोक्ष प्राप्तिछे. ज्ञान, दर्शन अने चारित्र गुणमय आत्माछे.

अज्ञानी जीव आत्मानो शुद्ध स्वभाव नहीं जाणतो छतो राग द्वेषादि करेछे, त्यारे ज्ञानी जीव आत्मस्वभाव जाणतो छतो राग द्वेषनो त्याग करी कर्मथी रहीत थइ मोक्षपद प्राप्त करेछे. ज्ञानी आत्माना स्वरूपमां सदाकाल रमण करी अखंडानंदानुभव प्राप्त करेछे. जेम हंसने मान सरोवरमां रतिछे तेम आत्मज्ञानीने आत्मस्वरूपमां रति होयछे. जेम चकोर चंद्रमांज प्रीति धारण करेछे. तेम आत्मज्ञानी आत्मस्वभावरमणतामां प्रीति धारण करेछे. सीतानी जेम राममां प्रीति तेम आत्मार्थीनी आत्मस्वरूपमां प्रीति रमणता भासनता वर्तेछे. आत्मज्ञानीने शास्त्रकर्त्ता श्रमण कयेछे. श्रीआनंदघनजी महाराज पण कहेछे के–

आतमज्ञानी श्रमणकहावे, बीजा तो द्रव्यलिंगीरे.

वळी श्रीयशोविजयजी उपाध्याय कहेछेके, समाधिशतकमां–

यथा

केवल आतम बोधहे, परमारथ शिवःपंथ
तामे जिनकुं मगनता, सोहि भाव निर्ग्रंथ.

परमार्थ शिवनो पंथ केवल आत्मज्ञान छे तेमां जे भव्यात्माने मग्नताछे ते भाव निर्ग्रंथ जाणवा. निक्षेप भेदथी निर्ग्रंथ चार प्र-

कारनाछे. १ नाम निर्ग्रंथ. २ स्थापना निर्ग्रंथ. ३ द्रव्य निर्ग्रंथ. ४ भावनिर्ग्रंथ. पूर्वोक्त चार निर्ग्रंथमां भाव निर्ग्रंथसर्वतः मोक्षसाधक जाणवा. कारणके, भावनिर्ग्रंथपणानी प्राप्ति विना कदापि काळे मोक्षपदनी प्राप्ति थती नथी. सर्वपर वस्तु विषयोथी मनने खेंची आत्मस्वरूपना ध्यानमां मनने स्थिर करे. श्वासोश्वासे आत्मानुं स्मरण करी भव्य जीवो कर्म खपावी परमात्मपद प्राप्त करेछे. ज्ञानी पुरुष आत्ममांज स्थिरता करे. अने आत्मभावना सदाकाल. भावी अनंत सुखमय पोताने लेखे नीचे प्रमाणे आत्मभावना भावे.

गाथा.

एगो मे सासउ अप्पा, नाण दंसणं संजुओ,
सेसामे बाहिराभावा, सव्वे संजोग लरकणा,

भावार्थ—एक मारो आत्मा शाश्वत छे. त्रिकालमां पण आत्मानो नाश थतो नथी. वळी आत्मानुं स्वरूप दर्शावेछे. ज्ञानदर्शन संयुतः ज्ञान अने दर्शनादि अनंतगुणमय आत्माछे.

आत्माथी दृश्यमान सर्व पदार्थो भिन्नछे. सर्व पौद्गलिक पदार्थो संयोग विनाशी धर्मवाळाछे. ते पौद्गलिक पदार्थमां मारापणुं कंइ नथी. रूपीपदार्थथी भिन्न हुं आत्मा शुद्धचैतन्यमय लक्षण लक्षितछुं. आत्मानो प्रकाश करवाने अन्य पदार्थनी जरूर नथी. आत्मा पोतानी मेळे पोताना स्वरूपनो प्रकाश करेछे. कंचुकना त्यागथी जेम सर्प नष्ट थतो नथी. तेम शरीर नाशथी आत्मा नष्ट थतो नथी. त्रिकालमां आत्मा पोताना शुद्ध स्वरूपथी भ्रष्ट थतो नथी.

मूर्ख मूढ मनुष्य शुक्तिमां रजतनी भ्रांति धारण करी जेम मिथ्याभ्यास धारण करेछे तेम बहिरात्मा, परपुद्गलवस्तुमां आत्मत्व बुद्धिथी भ्रांति धारण करी मिथ्या चतुर्गति भ्रमणरूप क्लेश पात्र बनेछे.

सहज स्वाभाविक आत्मिक गुणानंतनी आविर्भावतारूप सिद्ध-तानुं हेतु सम्यग्ज्ञानछे. सम्यग्ज्ञाननी प्राप्ति विना भवसंततिनो उच्छेद थतो नथी. तेम सम्यग्दर्शननी प्राप्ति विना सम्यग्ज्ञान कही शकातुं नथी. अनेकांत स्याद्वाद सत्तामय आत्मस्वरूपादि पदार्थोनुं यथार्थ भासनपणुं, श्रद्धानपणुं थाय त्यारे समकित कथायछे अने समकित पूर्वक जे जाणपणुं ते सम्यग्ज्ञान कहेवायछे. सम्यग्ज्ञाननी प्राप्ति रूपसूर्य जे भव्यजनना हृदयमां प्रगट्योछे तेने मिथ्यात्वरूप अंधकार आच्छादन करी शकतुं नथी. ज्ञानरूप सूर्योदयथी सर्व पदार्थोनो भास थायछे, त्यारे मोक्षमय आत्मा स्वयमेव प्रकाशेछे. अने कर्मनो नाश थायछे. नवतत्त्वमां जीवतत्त्व आदेयछे, संवर निर्जरा मोक्ष ए त्रण तत्त्व उपादेयछे, पुद्गल द्रव्य अजीवछे. पुण्य पाप पुद्गल स्कंधोछे. ते पुद्गल स्कंधोने आत्मा पोताना स्वरूपमां रमतो दूर करेछे. ज्यारे आत्माना असंख्यप्रदेशोनी साथे कर्मरूप पुद्गल स्कंधोनो एक परमाणु सरखो पण रहेतो नथी. त्यारे आत्मा निरा-वरण निर्ममपद प्राप्त करी सादि अनंत स्थिति पामेछे. एक समयमां गुणस्थानातीत थएल आत्मा आकाश प्रदेशनी समश्रेणिए अन्यप्र-देशोने स्पर्श्याविना सिद्धिस्थानमां विराजेछे. त्यां सिद्धमां किंचित् दुःख नथी. दुःख सर्व पुद्गलना संयोगथीछे. निर्मल परमात्माने परमाणु मात्रनो संबंध नथी. तेथी त्यां लेश पण दुःख नथी. आधि व्याधि अने उपाधि ए त्रण प्रकारनां दुःखथी रहित आत्मा अनंत सुखमय वर्तेछे. सर्वथा प्रकारे दुःखनो अभाव मुक्तिस्थानमां छे. अनंत सिद्धजीवो लोकना अग्रभागे विराज्याछे. अने तेओ सदा-काल आत्मस्वभावमां रमण करेछे. अनंत ज्ञानदर्शन चारित्ररूप रत्नत्रयीनी लहेरमां स्वगुण भोगवेछे, त्यांथी कदापिकाळे संसारमां पाछा आवी जन्म मरण धारण करता नथी. सर्व जगत्ने ज्ञानथी

जाणेछे पण तेथी ते सिद्धना जीवो सदाकाल न्यारा प्रवर्तेछे.

प्रश्न—सिद्ध भगवान् कोइ दुःखीने देखी दया मनमां लावे के नहीं ?

उत्तर—सिद्ध भगवानने मन नथी. दुःखी मनुष्यादि सर्वने जाणेछे पण तेओ कर्मथी रहीत थवाथी अक्रिय थयाछे. तेथी कंइ पण कार्य करता नथी. अने दुःखी मनुष्यनुं दुःख दूर करवा संसारमां आवता नथी. सर्व जीव पोताना करेलां शुभाशुभ कर्मथी सुखी दुःखी थायछे, कोइनुं दुःख दूर करवा कोइ समर्थ नथी. करेलां कर्म पोतानेज भोगववां ज पडेछे. केटलाएक मतवादी एम कहेछे के, सिद्ध परमात्मा अन्य जीवोनां दुःख दूर करवा संसारमां अवतार लेछे एम तेमनुं कथनछे. निरंजन निराकार परमात्मा गमनागमननी क्रिया रहित थयाछे कर्मनो नाश करवाथी. माटे परमात्मा अवतार ग्रहण करेछे एम जे कोइ कहेछे ते अज्ञानी जाणवो. सिद्धना जीवो पोतानी अवगाहना लेइ सदाकाल अनंत सुखमां मग्न रहेछे, निश्चय चारित्र सिद्धना जीवोमां स्थिरतारूप समये समये अनंत छे. सिद्धता विना सांसारिक दशामां परस्वभावमां रमणता करवाथी किंचित् पण सुख नथी कह्युंछेके—

हुं एनो ए माहरो, ए हुं एणी बुद्धि;
चेतन जडता अनुभवे, न विमासे शुद्धि. आतम॥१॥

सांसारिकभाव एज हुं छुं, अने ते माराछे. आ बाह्य पदार्थो तेज हुं एवी बुध्धिथी चेतन जडनो संगी थइ जडता अनुभवेछे अने पोताना आत्मानी शुद्धि विमासतो नथी. एवी संसार दशामां राग, द्वेष, कलह, ममतानो संगी थएलो जीव कंइ पण सुख पामी शकतो नथी. कोइपण जीव बाह्य पदार्थोथी सुख पाम्यो नथी. अने पामवानो नथी. आ प्रमाणे आत्मार्थी पुरुषो समजी दृढ नि.

श्रयथी आत्मध्यान स्थिरतारूप समाधिमां लीन थायछे. कोइ योगी ध्यानारूढ थतां तेना ध्यानमांथी मन भटकी जइ आडुं अवळुं चाल्युं जायछे छे तेने शिक्षा आपतां योगी कहेछेके-

श्लोक.

मनः कुत्रोद्योगः सपदि वदमेगम्यपदवीं ॥
नरेवा नार्यांवा गमनमुभयत्राप्यनुचितम् ॥
यतस्ते क्लीवत्वं प्रतिपदमहो हास्यजनकं ॥
जनस्तोमं मागा स्त्वमनुसरहि ब्रह्मपदवीम् ॥ १ ॥

हे मन तारी क्यां जवानी इच्छाछे. तारे ज्यां जवानुं होय ते मने कथन कर. नरमां जवुं छे के नारी विषयमां जवुंछे. नर वा नारी ए बे ठेकाणे जवुं पण अयोग्यछे. कारण के तारु क्लीवत्वपणुं छे माटे पदपदप्रति नर वा नारीना विषयमां तारु गमन हास्य उत्पन्न करावनारछे. पुल्लिंग वा स्त्री जातिमां तुं नपुंसक थइने जाय छे ते योग्य नथी माटे मनुष्यना समूहमां मा भटक, तुं नपुंसक तेवुं ब्रह्म पण नपुंसकछे माटे तुं ब्रह्मपदने अनुसर अथवा ब्रह्मपदमां लीन था. वळीपरमात्मतत्त्व रमणतामां योगी लीन थइ समाधिभावने पामेछे, परमात्मतत्त्व आनंदरूपछे ते दर्शावेछे. परमानंद पंचविंशत्यां

श्लोक.

आनंदरूपं परमात्मतत्त्वं, समस्तसंकल्पविकल्पमुक्तं;
स्वभावलीना निवसंतिनित्यं,जानाति योगी स्वयमेवतत्त्वं
परमाल्हाद संपन्नं, रागद्वेषविवर्जितम् ॥
सोऽहंतुदेहमध्येऽस्मिन्, योजानातिसपंडितः ॥ २ ॥

भावार्थ—परमात्मतत्त्व स्वाभाविक सदाकाल आनंदरूपछे. वळी शुद्ध निश्चयनयथी जोतां परमात्मतत्त्व केवा प्रकारनुंछे ते जणावे छे के—समस्त प्रकारना संकल्प अने विकल्पथी रहितछे, एवा परमात्मतत्त्वमां सहज स्वरुपमां लीन थएला भव्यो सदाकाल वसेछे, एवुं परमात्मतत्त्व योगी पोतानी मेळे अनायासे जाणेछे. उत्कृष्ट आल्हादथी संपन्न अने रागद्वेषरहित आत्मा आ शरीरमां वस्योछे तेज हुं परमात्माछुं एम जे जाणेछे ते पंडित जाणवो. परमात्मस्वरूप एवो आत्मा संसारमां परिभ्रमण करेछे तेनुं शुं कारण छे ते दर्शावेछे.

गाथा.

आया नाणसहावी, दंसणसीलोविसुद्धसुहरूवो ॥
सो संसारे भमइ, एसो दोसो खु मोहस्स १

आत्मा ज्ञानस्वभावी अने अनंत दर्शनगुणमयछे वळी ते निश्चयथी विशुध्ध तथा अनंत सुखवान् छतां संसारमां परिभ्रमण करेछे तेमां मोहनो दोषछे. माटे आत्मार्थी भव्य जीव मोहनो जय करे. मनमां विचारे के आ दुनीयामांनी सर्व जड वस्तुओ मारी नथी अने हुं तेनो नथी एम भावतां मोहरिपुनो जय करी शकाय छे. त्यारे हवे मारु शुं एम जिज्ञासा शिष्यने थतां गुरू महाराज कहे छे के—

श्लोक.

शुद्धात्मद्रव्यमेवाहं, शुद्धज्ञानगुणो मम
नान्योऽहंसिद्धबुद्धोऽहं, निर्लेपोनिष्क्रियः सदा ॥१॥

सकल पुद्गलना आश्लेषथी रहीत ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य, अव्याबाधादि अनंत गुणपर्यायमयअसंख्य प्रदेशीशुध्ध

आत्मद्रव्य हुं छुं. सूर्य चंद्रादिकनी सहाय विना मारो शुध्ध ज्ञान-रूप प्रकाश समये समये वर्तेछे. त्रण लोकना पदार्थनी उत्पादव्यय ध्रौव्यतानी अनंतता मारा शुध्धज्ञानमां ज्ञेय स्वरुपे परिणमी समये समये भासेछे, ते ज्ञानगुण मारोछे. हुं ज्ञाननुं पात्र छुं. धर्मास्ति-कायादिकथी हुं भिन्न छुं. तनु-धनादिक पदार्थो माराथी भिन्नछे. स्वद्रव्यादिकथी युक्त रत्नत्रयीनो स्वामी आत्मा तेज हुंछुं. आवुं भेद ज्ञानरुप अस्त्र मोहनो नाश करेछे माटे सर्व परभावथी भिन्न एवा आत्मामां रमणता करवी. वळी जे भेदज्ञानीछे ते औदयिक भावमां लेपातो नथी. जेम आकाश कादवथी लेपातुं नथी तेम अत्र समजवुं.

वळी अध्यात्म बिंदु ग्रंथमां कह्युं छे के—

श्लोक.

स्वत्वेनस्वं परमपिपर त्वेनजानन्समस्ता
न्यद्रव्येभ्यो विरमणमिति चिन्मयत्वं प्रपन्नः
स्वात्मन्येवाभिरतिमुपनयन् स्वात्मशीली स्वदर्शी ॥
त्येवंकर्त्ता कथमपिभवेत् कर्मणो नैपजीवः ॥ १ ॥

जेणे आत्मामां आत्मपणुं जाण्युंछे. अने पुद्गलादिकमां पर-पणुं जाणी समस्त अन्य पदार्थोथी विराम पाम्योछे अने ज्ञानमय-पणाने पाम्योछे. पोताना आत्मामां आनंद पामी स्वस्वरुपनो दर्शी थयोछे एवो आत्मा शी रीते कर्मनो कर्त्ता बनी शके? अर्थात् एवी अध्यात्मदशामां रमण करनार जीव कर्मनो कर्त्ता बनतो नथी. पण पोताना आत्मस्वभावनो कर्त्ता थायछे. आत्माना स्वरुपमां रमण करनार योगीश्वरने जे सुख थायछे ते अनवधि सुख जाणवुं. पर-स्वभावथी रहित एवा मुनीश्वरने जगत् तृणवत् जाणवुं. अर्थात्

मुनीश्वरने जगत् निस्सार लागेछे. अने आत्मस्वरूपमांज सार लागेछे. कह्युं छे के—ज्ञानसारमां देवचंद्रकृत टीकामां

गाथा.

तिणसंथारनिसिन्नो, मुणिवरो भठरागमयमोहो ॥
जंपावइ मुत्तिसुहं, कत्तो तं चक्कवट्टीवि ॥ १ ॥

भावार्थ—नष्ट पाम्याछे राग, द्वेष, मद, मोह, ते जेना एवा मुनिवर्य तृणना संथारमां बेठा छता जे सुख पामेछे ते सुख चक्रवर्तिने पण क्यांथी होय, अर्थात् मुनिवर्यने आत्मस्वभावे रमण करतां जे सुख थायछे ते सुखनो लेश मात्र चक्रवर्तिने नथी. परभावमां रमण करनार चक्रवर्ति सुरपतिने आत्मिक सुख प्राप्त थतुं नथी. कह्युं छे के—ज्ञानसारमां देवचंद्रकृत टीकामां.

गाथा.

जेपरभावे रत्ता, मत्ताविसयेसुपाव बहुलेसु ॥
आसापासनिबद्धा, भमंति चउगइ महारन्ने ॥

जे भव्यो परभावमां मग्नछे. पंचेंद्रियना विषयोमां जे मत्त थया छे, अने आशापाशथी जे बंधायाछे ते चतुर्गतिरूप महाअरण्यमां परिभ्रमण करेछे, परभावमां आसक्त जीवो समये समये सात वा आठ कर्म ग्रहण करी पुनः पुनः पुनर्जन्म धारण करेछे. माटे परभावमां रमवुं ते आत्माने योग्य नथी. जडवस्तुमां किंचित् पण सुख नथी. परमां थतो रागभाव तेने परिहरी पोताना आत्मामां जे खोज करेछे ते परम सुख पामेछे. यथा समाधिशतक—

रागादिकजबपरिहरी, करे सहजगुणखोज;
घटमें भी प्रगटे तदा, चिदानंदकी मोज " १ ॥

वळी भव्यपुरुषोए समजवुं के-अहं अने ममपणुं पोताना आत्मामां नथी. ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप रत्नत्रयीनो स्वामी हुंछुं अन्य किंचित् वस्तु मारी नथी. आत्मिक धन तेज मारुछे. अन्य मारु नथी. आत्मस्वरूप जडमां कल्पे तो जन्मनी वृध्धि थायछे. अने आत्मस्वरूप आत्मामांज धारी निश्चय करे, स्वस्वभावमां रमे तो मोक्षनी प्राप्ति थायछे. यथा समाधिशतक-

आपभावना देहमें, देहंतरगति हेत ॥
आपबुद्धि जो आपमें, सोविदेहपददेत ॥ १ ॥

भावार्थ-सारमां सार के-आतमना स्वद्रव्यादिक चतुष्टयमां आत्मत्वपणुं धारण करी एक चित्तथी आत्मध्यान करे ते संसार चक्रमांथी छूटेछे. आत्मा पोतेज परमात्मरूप बनेछे. ते बतावेछे.

समाधिशतक.

भविशिवपददे आपकुं, आपहि सन्मुखहोइ ॥
तातेंगुरुहे आतमा, अपनो ओर न कोइ ॥ १ ॥

आत्मा पोते पोताना सन्मुख थायछे, त्यारे पोते पोताने शिवपद आपेछे. ते माटे निश्चय नयथी जोतां आत्मा पोते पोतानो गुरु छे, आत्मानो अन्य कोइ गुरु नथी. निश्चयनयथी पोतानो गुरू आत्मा छे, पण तेवुं समजीने व्यवहारथी परमोपकारक सद्गुरुनुं आलंबन मूकवुं नहि. पोतानी साध्यदशामां सद्गुरुनुं आलंबन पुष्टिनिमित्त कारणछे. सद्गुरुना आलंबनथी आत्मानी शुध्धपरिणति थायछे. राग द्वेषमां परिणमवुं ते परपरिणति छे. बहिरात्मा परपरिणतिने पोतानी करी मानेछे. संयम अंगीकार करीने पण जे भिक्षु रागद्वेष परिणामयुत परपरिणतिमां राचेछे, माचेछे ते द्रव्यसाधु जाणवो. कह्युंछेके-

परपरिणतिपोतानीमाने, क्रियागर्वे गहेलो ।
उनकुं जिनकह्यो केम कहीए, सो मूरखमे पहेलो--परम

जैनभावे ज्ञाने सबमांहि, शिवसाधन सद्दहीए;
नाम भेखसुं काम न सीजे, भाव उदासी रहीए--परम

ज्ञान सकलनय साधन साधो, क्रिया ज्ञानकी दासी;
क्रिया करत धरतु हे ममता, आइ गलेमे फांसी--परम

इत्यादि समजी स्वस्वभावमां रमण करवुं. एज सारमां सार आत्महित कर्तव्यनी पराकाष्ठा जाणवी. सर्व पुद्गलभावमांथी प्रीति हठावी एक आत्मामां प्रीति जोडवी. सर्व जगत् प्रपंच दुःखमय छे एम आत्मार्थीए सतत अंतःकरणमां भावना भाववी. प्रथम बाल जीवने बाह्य वस्तुमां सुख ज्यां त्यां लागेछे अने अंतर्मां उतरवुं ते महा दुःख लागेछे, पण ज्यारे द्रव्यानुयोगनुं ज्ञान थायछे अने आत्मतत्त्वनी सम्यक् श्रध्धा थायछे त्यारे अंतरमां एटले आत्मस्वरुपमां सुख लागेछे अने बाह्य जगत्मां दुःख भासेछे. अमृतरस भोजनना करतां पण ज्ञानीने आत्मस्वभावमां अनंतगुणु विशेष सुख लागेछे. अमृतरसभोजननुं सुख क्षणिक छे अने आत्मसुख तो नित्यछे माटे ते अनुपमेय छे. आत्मसुखनुं वर्णन करोडो जिह्वाथी लाखो वर्ष सुधी वर्णन थतां पण कदापि पुरु थतुं नथी. आत्मिक सुख अवर्ण्य छे.

अनुभवज्ञाननी ज्यारे प्राप्ति थायछे त्यारे आत्मिकसुखनी सत्य निश्चय प्रतीति थायछे. अनुभवज्ञान विना सत्य सुखनी प्रतीति थती नथी श्री चिदानंदजी महाराज पण अनुभवज्ञान विषे आनंदमां आवी पदद्वारा विवेचन करेछे. यथा.

पद.

अवधु पियो अनुभवरसप्याला, कहत प्रेममतिवाला.अ०

अंतर सप्त धातरस भेदी, परमप्रेम उपजावे

पूरवभाव अवस्था प्रगटी, अजबरूप दर्शावे. अ०

नखशिख रहत खुमारिजाकी, सजलसघनघन जेंसी;

जिण ए प्याला पिये तिणकुं, और बात हे केंसी. अ०

अमृत होय हलाहल जाकुं, रोगशोगनवी व्यापे;

रहत सदा घरगाय नशासें, बंधन ममता कापे. अ०

सत संतोष हैयामां धारे, जनमनां काज सुधारे;

दीनभाव हीरदे नाहि आणे, अपनो बिरुद संभारे. अ०

भावदया रणथंभ रोपके, अनहद तुर बजावे;

चिदानंद अतुली बलराजा, जीतअरि घर आवे. अ०

वळी तेमज श्री आनंदघनजी महाराज पण कहेछेके—

आतम पियाला पीओ मतवाला, चिन्ही अध्यातम वासा;

आनंदघन चेतन व्हे खेले, देखे लोक लोक तमासा.

आशा ओरनकी क्या कीजे.

अनुभवगम्य एवुं आत्मिक सुख बाह्येंद्रियथी कदी जणातुं नथी. बहिरात्मी प्राणीओ आत्मिकसुखनो गंध पण अनुभवी शकता नथी. साकरनो स्वाद जेम विषनो कीडो जाणी शकतो नथी तेम अज्ञानी जीव आत्मिकसुखने लेश पण जाणी शकतो नथी. शाश्वत एवुं आत्मिक सुख साध्य जाणी तेनी प्राप्ति अर्थे सदाका-ल चारित्र धर्मनी आराधना ज्ञानी मुनिवर्यो एकाग्र चित्तथी क-

रेछे, ज्यांसुधी वाह्य पौद्गलिकसुखनी इच्छा हृदयमां प्रगटेछे त्यां सुधी समकितनी प्राप्ति थती नथी. ज्ञानीओ बाह्यभावने स्वप्नवत् भ्रांति समान जाणी सत्यआत्मिकसुखने माटे प्रयत्न करेछे. परपुद्गलवस्तुमां आत्मिकधर्म नथी. स्वस्वरूपमां रमणता करवी तेमांज लयलीनता करवी, मनवचन अने कायाना योगनी प्रवृत्ति परवस्तुमां थायछे ते निवारवी, अने बहिर्वांचा अने अंतर्वांचानो त्याग करी भव्यो मुक्ति पामे माटे आत्मिकधर्मनुं स्वरूप प्राप्त करवुं जोइए. ज्ञानथी आत्मिकधर्मनो पूर्ण राग प्रगटेछे ते संबंधी कहेछे.

॥ दुहा. ॥

लाग्यो चोल मजीठनो, रंग ते कबु न जाय;
धर्म रंग लाग्यो थको, कदी न दूर थाय ॥ १३९ ॥

भावार्थ—ज्ञानदर्शन चारित्र सहित आत्मानुं स्वरूप समजतां परपुद्गल वस्तु उपरथी राग उतरी जायछे, अने आत्माना स्वरूपपर राग थायछे. आत्मा विना कोइपण वस्तु प्रिय लागती नथी. आत्माना गुण पर्यायमांज रंगावानो राग थायछे. एम आत्मानी ज्ञानदृष्टि स्वस्वरूपने योग्य गणेछे ने परवस्तुने हेय गणेछे. आवी दशा थतां आत्मा परवस्तुओमां अहंममत्व भावथी छुटेछे. विरति सन्मुख थएलो आत्मा गुणस्थानकपर चढेछे. दशमा गुणठाणाए राग पण छुटी जायछे अने तेरमा गुणठाणाए केवलज्ञान दर्शन चारित्रनो भोगी बनेछे अने अन्ते सिद्धबुद्ध बनेछे. आवी परमात्मदशानुं स्वरूप देखाडनार सद्गुरु महाराजछे. माटे सर्व उपकारीमां मुख्य एवा गुरुना उपर प्रीति धारण करवी जोइए ते दर्शावेछे.

" दुहा. "

पुत्र पुत्रीदारा थकी, अधिको गुरुपर प्यार;
प्राणाधिक गुरुप्रेम जास, ते भवजल तरनार ॥१४०॥
एकज देव गुरू पिता, तेमां नही संदेह;
धर्मगुरू ते एकछे, अन्य मुनि गुणगेह. ॥१४१॥
धर्मगुरूनी चाहना, धर्मगुरूनी भक्ति;
धर्मगुरू हृदय वदो, सेवो निजनिज शक्ति ॥१५२॥
सेवे शाश्वव संपदा, देखे दळद्र दूर ॥
वंदे वंद्यपणुं वरे, गिरूआ गुरू जरूर. ॥१४३॥

भावार्थः—पुत्र पुत्री अने स्त्री उपर मनुष्यने घणो प्यार होयछे तेना करतां पण अत्यंतराग सद्गुरूपर थवो जोइए. पोताना प्राण करतां पण सद्गुरू उपर अत्यंत प्रेमधारण करे. हृदयमां गुरूशब्द स्मरणनो मंत्र जाप करे. गुरूनी आज्ञा शीर्षपर धारण करे. एवो भव्यजीव जन्म जरा मरणथी पूर्ण समुद्र तरी शकेछे. अने मुक्ति पुरी प्राप्त करेछे. भव्यजीवोए समजवानुं के पिता एक होयछे सद्देव पण एक होयछे, तथा समकितप्रदधर्माचार्य सद्गुरू पण एक होयछे. समकितप्रदधर्माचार्य मुनिनो जे उपगार छे तेना तुल्य अन्य मुनिओनो उपगार नथी. अन्य मुनिओनो यथायोग्य भक्ति विनय साचववो. धर्म गुरूना सिवाय आचार्य उपाध्याय पण आत्माना मुख्य उपगारी नथी, माटे धर्मगुरू उपर विशेषतः भक्ति प्रीति धारवी. अने तेमनुं बहुमान करवुं. स्वकीय शक्तितः धर्मगुरूनुं आराधन करवुं. धर्मगुरूनी सेवाथी त्वरित शाश्वत शिवसंपदानी प्राप्ति थायछे. सद्गुरूने देखवाथी दारिद्र

दूर थायछे. सद्गुरुने वांदवाथी आत्मामां वंद्यपणुं प्रगटेछे. गुरुनी गुरुता अलौकिकछे. गुरुनी गुरुता वर्णी शकाय तेम नथी. भव्य जीवो गुरुनी सेवा करतां गुरुनी गुरुता प्राप्त करेछे. श्री सद्गुरु कथित अनंतगुणधामभूत चेतनमां सदाकाल रमवुं ते दर्शावेछे.

दुहा.

अज अविनाशी जीवछे, अखंड आनंद पूर;
अंतर्दृष्टि देखतां, चेतन नहींछे दूर. ॥१४४॥
चेतनगत तुज धर्म देख, बाहिर क्यां कर ख्याल;
बाहिर्दृष्टि देखतां, भवनी अरहट्ट माल. ॥१४५॥
ध्यान धारणा धारीने, देखो आत्मस्वरूप;
बहिरूपाधि त्यागतां, शिवशाश्वतचिद्रूप ॥१५६॥
मूढ बन्यो मानव कहे, ओ जाणे जगमूढ ॥
आतम ज्ञानी सुख लहे, ए अंतरनुं गूढ. ॥१४७॥
रागद्वेष परिणामनी, ग्रंथि त्यां छेदाय ॥
शून्यदशा पुद्गलतणी, सहेजे शांति पाय. ॥१४८॥

भावार्थ—अज अने अविनाशी एवो आत्माछे. आत्मा अनादि कालथीछे माटे ते अज कहेवायछे. अने अनंतछे माटे अविनाशी कहेवायछे. अखंड अने आनंदथी परिपूर्ण आत्माछे यत्र आनंदछे तत्र आत्माछे. आनंदनो ज्ञाता तथा आनंदनो भोक्ता आत्माजछे. अंतर्दृष्टिरूप ज्ञानदर्शनथी देखतां आत्मा शरीरमांज रहेलोछे. पोतानाथी दूर नथी आत्मानी शोधखोळ माटे परदेश जवा जरूर नथी. शरीरमांज व्यापी रहेलो आत्मा ज्ञानदृष्टिथी

शोधतां जणायछे. बाह्यदृष्टिथी देखतां जडवस्तु जणायछे. अने जड-वस्तुमां आत्मपणुं नथी. जडवस्तुथी भिन्न अरूपी आत्मानो निर्धार करी स्वस्वभावमां रमवुं योग्यछे. जडवस्तुनो धर्म परिहरीने आत्मानो धर्म देखवो जोइए. मनवाणी अने कायाना वेपारमां आत्म धर्म नथी. आत्मानो धर्म त्रियोगनी क्रियाथी तथा लेश्याथी पण भिन्नछे. धारणा तथा ध्यानरूप संयम अवलंबीने हे भव्यजीव आत्मानुं स्वरूप देख. संयममां विघ्नभूत बहिरुपाधि परिहरीने स्वस्वरूपमां रमतां शाश्वतकल्याण ज्ञानमय आत्मा थायछे. आत्मज्ञानी आत्मामां रंगायछे त्यारे तेने बाह्यवस्तु भ्रांतिमय लागेछे. तेथी तेने बाह्य वा वेपारमां आचारमां प्रेम रहेतो नथी तेथी जगत् लोको आत्मज्ञानीने (उन्मत्त) गांडो बनी गयो एम जाणेछे, त्यारे आत्मज्ञानी एम जाणेछे के जगत्ना लोको आंधळाछे. पोतानी ऋद्धि आत्मामां नहीं देखतां जडवस्तुमां राचीमाची रहेछे. अरे तेवा अज्ञानी जीवो जन्मजरा मरणनां दुःख पामे तेमां शुं आश्चर्य ? एवं ज्ञानीने अज्ञानीनी दृष्टिमां भेद पडेछे, अने एक बीजाने भिन्न दृष्टिथी देखेछे. आत्मज्ञानी अनंत ज्ञान दर्शन चारित्रनो धामभूत आत्माने मानतो आत्मामांज स्थिरउपयोगथी रमणता करी क्षणेक्षणे अनंतानंद भोगवेछे. आवी शुद्धदशामां रागद्वेषना परिणामनी ग्रंथी छेदायछे, अने रागद्वेषना अभावे शून्यपणुं वर्तायछे. अने आत्मानी सहजशांति प्रगट थायछे. ज्ञानीने आवी सहज शांतिदशामां जे भान वर्तेछे ते जणावेछेः—

“ दुहा. ”

भासे एकज आतमा, सोऽहं सोऽहं ध्यान;
तत्त्वमसि आकारमां, चिदानंद भगवान् ॥१८९॥

आत्मदशा तेवी थइ, थिरता निज गुणमांहि;
वश वर्त्युं मन मांकडुं, दुःख देखे नहि क्यांहि.१५०

भावार्थः—उत्कृष्टनिर्मलध्यानदशामां शुद्ध आत्मस्वरूप भासे छे. सोऽहं शब्दथी आत्मध्यान करायछे. आत्मा तेज हुं इत्येवंसोऽहं शब्दनो परमार्थछे ते ज्ञानदर्शन चारित्रमय तेज तुं आत्माछे. बीजो नथी. एम तत्त्वमसि शब्दनो परमार्थछे. सोऽहं अने तत्त्वमसि वाक्यथी अनेकांतधर्ममय चेतननुं ध्यान धरतां आत्मा केवलज्ञान अने क्षायिक सुख प्रगटावेछे, अने त्रण जगतमां पूज्य थायछे. सोऽहं अने तत्त्वमसिना ध्यानमां पोतानो आत्माज चिदानंद भगवान्‌रूप भासेछे. निर्मलध्यानमां शुद्ध आत्मदशा थतां आत्माना गुणोमां स्थिरता थायछे अने मनमर्कटनी चंचलतारूप संकल्पविकल्प बंध पडेछे. अर्थात् मन वशमां थायछे. तादृशीध्यानदशामां दुःखना ओघ विलय पामेछे. कोइ ठेकाणे तेने ते काले दुःख देखातुं नथी. भव्यजीवोए निर्मलध्यानदशामां स्वजीवन गाळवुं जोइए. अंतर्दृष्टि थया विना जे जीवो बाह्य आचारमां धर्म मानेछे अने आत्माना धर्म तरफ लक्ष राखता नथी ते पोते धर्म पामी शकता नथी, ने बीजाने धर्म पमाडी शकता नथी.

“ दुहा ”

रागे बाह्या जीवडा, आप मतीला मुंड;
धूर्ते ढोंगी पापीया, लेइ साधुनुं झूंड. १५१

खावुं पीवुं पहेरवुं, वेशे माने धर्म;
सत्य धर्म नवि दाखवे, बांधे उलटां कर्म. १५२

सत्य देव नवि ओळखे, दे मिथ्या उपदेश;
पेटभरु कदाग्रही, कुगुरु पामे क्लेश. १५३

मनमाया मूके नहीं, पहेरे त्यागी वेष;
भगवा वस्त्र ओढवे, लोको देशो देश. १५४

धननी आशा राखता, ठगे ठगारा लोक;
टीलां टपके धर्म क्यां, आत्म विना सहु फोक. १५५

भावार्थ—अहंममत्वमां तल्लीन बनेला केटलाक, आत्मा अने परमात्मानुं स्वरूप नहि जाणनार ढोंगी पापिजीवो साधुनुं वृन्द लेइ गामोगाम फरी धन उघरावी दुनियाने ठगेछे, पण वस्तुतः जोतां विचारा ते ठगायछे. केटलाकतो खावामां; पीवामां अने वस्त्रवेषमांज एकांते व्यवहार निश्चयनय अवबोध्या विना धर्म माने छे. धर्मनुं शुं स्वरुप छे ते सापेक्षदृष्टिथी पोते जाणी शकता नथी तो अन्यने शी रीते जणावी शके. धर्मना नामे ढोंग करी मिथ्या उपदेश आपी पोते बुडेछे. अने अन्य जनोने पण संसाराब्धिमां बुडाडेछे. अष्टादश दोषरहित सत्य देवने ते जाणी शकता नथी. सत्यज्ञानना अभावे स्वच्छंदताथी मनमां जेम आवे तेम मिथ्या उपदेश आपेछे. एतादृश उदरपूर्तिस्वार्थसाधक अज्ञान, कुगुरूओ बहिरात्मभावथी भवपरंपरा ग्रही क्लेश पामेछे. मनमां रहेलुं मिथ्या वस्तुओनुं ममत्व मूके नहि अने त्यागीनो वेष पहेर्यो तेथी शुं थयुं. बाह्यत्याग अने अन्तर् त्याग ए बे त्यागनी जरुरछे. उपरना फक्त बाह्य त्यागथी त्यागीपणुं कहेवातुं नथी. तेमज ज्ञानगर्भितवैराग्य विना केटलाक परिग्रहादिक उपाधिमां रक्त होय छतां बाह्यत्यागनो अनादर करी अन्तर त्यागी केहरावे ते पण अनेकान्तनय विरुद्ध छे. माटे बाह्यथी फक्त देखाता त्यागी भगवां वस्त्र पहेरी कुपंथनी जालमां लोकोने फसावेछे. धननी आशा धारक कुगुरुओ अलौकिक ठग जाणवा. आत्मज्ञान थया विना उपरनां टीलांटपकां मात्रथी

करवामां आवेतो तेथी कंइ आत्मानी रुद्धि प्राप्त थती नथी, तेमज जन्मजरा मरणना बंधनमांथी छूटातुं नथी. सप्तनय अने चारनिक्षेप पूर्वक आत्मज्ञान थायतो मिथ्यात्व देवगुरु धर्मना असद् विचारोनो नाश थाय. सत्यज्ञान थतां आत्मज्ञानिनी केवी दशा थायछे ते जणावेछे.

" दोहा. "

फोक करीने लेखवे, सघळो दुनिया खेल;
योगाभ्यासी थइ खरे, टाळे सघळो मेल. १५६
टळे कर्मनो मेल सहु, करतां निजगुण खोज;
निजघटमा प्रगट तदा, चिदानन्दनी मोज. १५७
अन्तर ऋद्धि ज्ञानथी, प्रगटपणे निरखाय;
बाहिर रुद्धि बापडा, भोळा जन भरमाय. १५८
तनु धन योवन कारमुं, विद्युत्ना चमकार;
परभव साथ न आवतुं, मोह्या मूढ गमार. १५९
शानी रुद्धि कारणे, जीव हणे केइ लाख;
जीवन तेनुं धूळसम, जाणो छेवट राख. १६०

भावार्थ–आत्मज्ञानिसन्त सांसारिक मोहक पदार्थोनी रचनानें मिथ्या जाणेछे. मोहक जड पदार्थोमां आत्मत्व लेश मात्र नथी. एवं सत्य निश्चय करी योगाभ्यासमां प्रवृत्त थायछे. यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान अने समाधिथी अष्टकर्मरूप मलिनतानो नाश करेछे, ध्यान अने समाधिद्वारा शोध करतां आत्मा पोतेज परमात्मा बनेछे, परमात्मा बनतां अनन्तगुण

आविर्भाव थायछे, केवलज्ञानथी सर्व रूद्धि प्रत्यक्ष देखायछे एम आत्मज्ञानिमां परिपूर्ण निश्चय थायछे. आत्मज्ञानी विचारेछे के अज्ञानि पामर जीवोज उपाधिमय सुवर्णादिक बाह्यरूद्धिमां आसक्त होयछे. एवं सत्य अने असत्यतो ज्ञानी निर्णय करेछे. सम्यक्त्व जडवस्तुओ जेवीके तनु धन यौवनपणुं आदिने विद्युत्‌ना चमकारानी पेठे क्षणिक गणेछे, परभव तेमांनुं कंइ साथे आवतुं नथी. अहो मोहमग्नमूर्खजीवो ! जडवस्तुओमां राची रहेछे. जे वस्तुओपर राग धारण करेछे ते वस्तुओ मृत्युबाद कदी साथे आवती नथी. ज्यारे आ प्रमाणे छे तो आत्मानी रूद्धिविना बाह्य जड रूद्धिमां केम मूढनी पेठे राचीमाची रहुं. अलबत तेमां मूर्च्छा धारवी ते योग्य नथी एम ज्ञानी निश्चय करेछे, अज्ञानी पामर जीव बाह्य लक्ष्मीनी प्राप्ति माटे अनेक प्रकारना हिंसक व्यापारोमां लक्ष जीवोनो नाश करेछे. अज्ञानी जीव मत्स्य, सूकर, पशु, पंखीना जीवोनो आ जीविका माटे नाश करेछे. तादृशअज्ञानिजीवोनुं जीववुं पाप माटे जाणवुं. एतादृश पापी जीवो मृत्यु पामी नरकादि दुर्गतिमां जायछे. तेवा पापी जीवोनुं जीवन धूळ करतां अनिष्ट पृथ्वीमां भारभूत जाणवुं. तेवा पापिजीवो उपर करुणादृष्टिथी जोवुं योग्यछे. उपदेशादिकथी पापियोनो उद्धार करवो जोइए. राखमां पडेलुं घृत यथा नकामुं छे तद्वत् पापिजीवोनुं आयुष्य स्वपरापेक्षाए तेवी पापदशा वर्ते तावत् पर्यंत नकामुं जाणवुं. बाह्यमांज सुखनी बुद्धि धारण करनाराओनी अशुभ प्रवृत्ति दर्शावेछे.

" दुहा. "

असत्य वाणी बोलीने, जन वंचे धन हेत;
अशुभ कर्म पोठी भरी, जन्म जन्म दुःख लेत. १६१
चोरी चाडी चुंगली, परनिन्दा अपमान;

स्वार्थिक जन संसारमां, नरक गति मेमान. १६२
आत्म प्रशंसा दाखवे, करे घणो अभिमान;
धर्म मर्म पामे नहीं, पापी जन नादान. १६३
परापकर्षे चित्तडुं, परने देवे आळ;
पापारंभ करे मुदा, देवे क्रोधे गाळ. १६४
पाप पुण्य समजे नहि, ले नहि सद्गुरु बोध;
नास्तिक वादी जीवडा, करे शुं चेतन शोध. १६५
मत एकान्ते जे ग्रहे, ते अज्ञानी जीव;
भ्रमण करे भवमां अरे, ले नहि शाश्वत शिव. १६६

भावार्थ—अज्ञानी मोही जीव, असत्य वचन वदीने धनादिक माटे मनुष्योने छेतरेछे, चोरी, चाडी, चुगली करेछे. पापाचरणोथी पापकर्म ग्रहण करेछे, परजीवोनी निन्दा करेछे, परनुं अपमान करेछे. स्वार्थिक मनुष्य संसारमां अनेक जन्म दुःख परंपरा पामे छे, बाह्यदृष्टिधारकजीव स्वकीय प्रशंसा करेछे, अज्ञानी बाह्य धन सत्तादिकथी मनमां अत्यंताभिमान धारण करेछे, बाह्यदृष्टिजीव जडमांज धर्म मानेछे तेथी आत्मधर्मनो मर्म समजतो नथी. मनुष्यजन्म पामी जे आत्मतत्त्वनी शोध करतो नथी अने मोहक पदार्थोमांज अहंममत्व धारण करेछे एवो जीव मोक्षथी पराङ्मुख रहेछे, आत्मधर्मनी प्राप्ति दुर्लभछे, नवतत्त्वनुं सूक्ष्मज्ञान थया विना आत्म ज्ञान थतुं नथी, बाह्यदृष्टिजीव अन्यने नीचो पाडवा प्रयत्न करेछे. तेमज कृत्याकृत्य विवेक पराङ्मुख थइ परजीवने आळ चढावेछे. परजडवस्तुमां ममत्वथीबंधाइ अनेक प्रकारना पापारंभ करेछे. क्रोधथी परने गाळी देछे, अज्ञानी जीव पाप पुण्यमां समजतो नथी.

तेमजमोहांध बनवाथी सद्गुरुनो उपदेश श्रवण करतो नथी. सद्गुरूपदेश श्रवण करनारने श्रेष्ठ मानतो नथी, मिथ्यात्वमां अंध थएला जीवो आत्मानी शोध करी शकता नथी. नास्तिकवादी एकान्तमत धारण करेछे. एगंतो होइ मिच्छत्तं, एकांतपणाथी मिथ्यात्वछे. मिथ्यात्वी (अज्ञानी) मिथ्यात्वना योगे भवमां परिभ्रमण करेछे, सम्यग्दृष्टि थया विना सम्यक्चारित्रमार्ग प्राप्त थतो नथी. सम्यग्दृष्टिजीव सम्यक् चारित्र पामी शिवसुख संपत्ति प्राप्त करेछे. मिथ्यात्वीजीव वस्तुने यथार्थपणे जाणतो नथी. ईश्वरने मानेछे तोपण ते विपरीत पणे जाणीने मानेछे ते प्रसंगतः जणावेछे, तेमां कोइक तो ईश्वर जगत्नो बनावनार मानेछे तेनो मत प्रथम दर्शावेछे.

॥ दुहा. ॥

कर्ता ईश्वर मानता, जगमां केइक लोक;
सुखदुःख इश्वर आपतो, ए पण वाणी फोक १६७

भावार्थ—जगत्मां केटलाक मनुष्यो जगत्नो बनावनार ईश्वर मानेछे, केटलाक मनुष्यो खुदाने जगत्नो बनावनार मालीक मानेछे, त्यारे ख्रीस्तियो ते खुदानी मान्यता नहीं स्वीकारतां इशुनो परमेश्वर जगत्नो बनावनारछे एम स्वीकारेछे: ख्रीस्तिलोकोनी आवी मान्यताथी विरुद्ध पडी केटलाक हिंदुस्थानना हिंदुओ ब्रह्माने जगत्नो बनावनार मानेछे त्यारे केटलाक ते पक्षथी विरुद्ध विष्णुभगवान् जगतनो बनावनारछे एम मानेछे. त्यारे केटलाक ते पक्षथी विरुद्ध पडी महादेवने जगत्नो रचनार स्वीकारेछे: त्यारे केचित् शक्तिथी जगत् बन्युंछे एवं स्वीकारेछे. ख्रीस्तियो दुनिया सातहजार वर्ष लगभगनी बनेली मानेछे. त्यारे मुसल्मानो तेथी विशेषवर्ष कहेछे. ब्रह्मा जगत्कर्तावादी तेथी भिन्न रीते कहेछे. शक्तिपंथवाळा तेथी भिन्नपणुं स्वीकारेछे. आर्यसमाजीओ जगत् अनादिछे एम

मानीने पुनः जगत्नो बनावनार ईश्वर सर्वथी भिन्नरीत्या कथेछे, खीस्ति मुसल्मान अने हिंदुओ जगत्नो बनावनार भिन्न भिन्न स्वीकारेछे, सर्व पोतपोतावा पक्षने सत्य मानी अन्यपक्षनुं खंडन करेछे. मुसल्मानो पूनर्जन्म स्वीकारता नथी. पशुपंखीमां खुदानीरु (जीव) छे एम मानेछे त्यारे खीस्तिधर्मवाळाओ तो पुनर्जन्म मानता नथी. तेमज पशुपंखीमां आत्मा नथी एम मानेछे. पशुपंखीने मार्यामां खीस्तियो दोष मानता नथी. हिंदुधर्म पाळनाराओ पुनर्जन्म मानेछे तेमज पशुपंखीमां आत्मा मानेछे अने पशुपंखी मार्यामां पाप गणेछे, जैनधर्म पाळनाराओ पुनर्जन्म मानेछे अने एकेन्द्रियादिक सर्व जीवोनी दया पाळवी तेने मुख्य धर्म स्वीकारेछे. हिंदुओमां के.टलाक वेदनो बनावनार ईश्वरछे एम मानेछे. त्यारे के.टलाक कहेछेके वेदनो बनावनार कोइ नथी एम पौरुषेय अने अपौरुषेयनो विवाद चाली रह्योछे. के.टलाक हिंदुओ कर्मकाण्डने मुख्यधर्मः तरीके गणेछे. त्यारे के.टलाक ज्ञानकाण्डने मुख्य गणेछे. वेदमाननाराओ पैकी के.टलाक जगत् स्वप्न समान भ्रांतिरूप मानी तेनो कर्ता ईश्वरछे एम मानता नथी. त्यारे के.टलाक जगत्नो कर्ता ईश्वरछे एम मानेछे. ज्ञानकाण्डमां पण अद्वैतवाद माननाराओ जगत् अनादि मानेछे. अर्थात् तेनो बनावनार कोइ मानता नथी. जे वस्तुनी आदि नथी अर्थात् अनादिछे तेनो बनावनार कोइ नथी. जेनो कोइ बनावनारछे ते वस्तु अनादि कहेवाती नथी. ज्यारे जगत् अनादिकालथी छे एम मान्युं तो ईश्वर कर्तृत्ववाद रहेतो नथी. वेद पश्चात् उपनिषदो बनी एम मानवामा आवेछे. पश्चात् व्यासऋषि तेमणे तथा भगवद्गीता तथा अष्टादश पुराण बनाव्यां एवं के.चित् मानेछे. आर्यसमाजीओ अढार पुराण व्यासजीनां बनावेलां मानता नथी. आधुनिक बनेलां मानेछे. एम पुराणो संबंधी चर्चा चाली रहीछे. सना-

तनपक्षवाळा तथा आर्यसमाजीओने भगवद्गीता मान्यछे. तेमां पण केटलाक श्लोको प्रक्षिप्त भगवद्गीतामांछे एम आर्यसमाजीओ मानेछे. भगवद्गीतामां पण ईश्वर जीवोने सुखदुःखनो न्याय आपतो नथी. एवं मान्युंछे. तथा जगत्कर्तापणुं ईश्वरमां नथी एवुं स्वीकार्युंछे.

शिष्य–हे सद्गुरो भगवद्गीताना कया अध्यायमां तेम दर्शाव्युंछे ते जणावशो–

सद्गुरु–स्वच्छ चित्तथी श्रवण कर.

भगवद्गीता अध्याय पंचम १४ चतुर्दश श्लोक ॥

श्लोक.

न कर्तृत्वं न कर्माणि, लोकस्य सृजति प्रभुः
न कर्मफल संयोगं, स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥ १४ ॥
नादत्ते कस्यचित् पापं, नचैव सुकृतं विभुः
अज्ञानेनाऽऽवृतं ज्ञानं, तेन मुह्यन्ति जंतवः ॥ १५ ॥

प्रभु, ईश्वर परमात्मा लोकनां कर्मोने बनावता नथी तथा लोकनुं (जगतनुं) कर्तृत्व पण ईश्वरमां नथी. अर्थात् दुनियाने ईश्वर परमात्मा रचता नथी. तेमज जीवोने पुण्य पापनो संयोग करावनार ईश्वर नथी. तेमज पुण्यपापनुं फल आपनार पण ईश्वर नथी त्यारे जगत् कर्म विगेरेनुं शुं समजवुं तेना प्रत्युत्तरमां जणावेछे के जीवोने कर्मना स्वभावथी सुखदुःख थया करेछे. जगत् अनादिकालथी छे एम तेनो स्वभावछे. जेवां जीवो कर्म करेछे तेवां फल स्वभाव प्रमाणे भोगवेछे. ईश्वरने तेमां लेवा देवा नथी. तेम छतां जीवो ईश्वरने कर्त्ता मानी मुंझायछे. पन्नरमा श्लोकमां स्पष्ट जणावेछेके. ईश्वर कोइनां पाप पुण्य ग्रहण करतो नथी कोइ जीवे पाप कर्युं होयतो ते टाळवा समर्थ नथी. उपनिषद्मां कह्युंछे के–

श्लोक.

कृत कर्मक्षयो नास्ति, कल्पकोटीशतैरपि;
अवश्यमेव भोक्तव्यं, कृतं कर्म शुभाशुभं. ॥ १ ॥

कोटी कल्पशते पण पुण्य पापरूप जे कर्म कर्याछे ते भोगवव्या विना छुटको नथी. त्यारे ईश्वर जीवोनुं पाप पोते शी रीते ग्रहण करे, ईश्वर जीवोना पापपुण्य लेतो नथी. जीवो शुभ कर्म अने अशुभ कर्म करी स्वयं कर्मना उदयथी तेनुं फल भोगवेछे, ईश्वर पेदा करेछे. ईश्वर संहरेछे एम अज्ञानथी आच्छादित दृष्टिवाळा जीवो मानीने मुंझायछे, जगत् कर्ता ईश्वर आ प्रमाणे जोतां सिद्ध थतो नथी. अन्यत्र पण भगवद्गीतामां ईश्वर अने प्रकृति (जगत्) अनादिकालथी छे एम कह्युंछे ज्यारे बे अनादिकालथी छे त्यारे प्रकृतिनो कर्त्ता ईश्वर शी रीते सिद्ध ठरे: अर्थात् सिद्ध ठरतो नथी. तत् पाठः भगवद्गीता अध्याय १३ त्रयोदश—

श्लोक.

प्रकृतिं पुरुषं चैव, विद्धयनादी उभावपि;
विकारांश्चगुणांश्चैव, विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥ १९ ॥

पुरुष (परमात्मा) प्रकृति (जगत् आबे अनादिकाळथीछे एम जाण. सत्व रजो अने तमोगुण तथा विकारो प्रकृतिज छे एम जाण आ उपरथी पण सिद्ध थायछे के अनादिकालथी आत्मा अने कर्मछे. तेम जगत् पण अनादिकाळथी छे. अद्वैतवादी ब्रह्मसत्यं जगत् मिथ्या एक अद्वितीय ब्रह्मज मानेछे. ते जगत्नो कर्त्ता ईश्वर अन्य मानतो नथी आ जगत् देखायछे ते भ्रांति मात्रछे. त्यारे तेनो बनावनार ईश्वर केम कहेवाय: एम अद्वैतवादियो मानेछे. जैनदर्शन जगत्ने जगत्-स्वरुपे सत् मानेछे. पण जगत् अनादिथीछे, सत्वात्

सत्पणाथी जे वस्तु सत् होयछे ते अनादिथी छे. जेम षड्द्रव्य. जिनदर्शनमां षड्द्रव्य सत्छे. हवे मूळ विषय जगत् कर्ता ईश्वर संबंधी निराकरणनोछे. वेदांत ग्रंथाधारे जोतां पण केटलेक स्थाने ईश्वर कर्तृत्व स्वीकार्युंछे. अने केटलेक ठेकाणे जगत्नो बनावनार ईश्वर नथी एम स्वीकार्युंछे. अन्य दर्शनपण जिन दर्शनना सिद्धांतनो केटलाक अंशे अनुसरेछे. हवे जिनदर्शनमां जगत्कर्तृत्व ईश्वर संबंधी केवी मान्यता छे ते बतावेछे.

" दुहा. "

ईश्वरना बे भेदछे, जीव सिद्ध बे जाण;
कर्त्ता निज निज कर्मना, जीवो मनमां आण ॥१६८॥
निजने सुखदुःख आपतो, जीवज करी नवकर्म;
कर्त्ता भोक्ता जीवछे, ईश्वर कर्त्ता मर्म. ॥१६९॥
चेतन ईश्वर जाणीए, नय व्यवहार प्रमाण
अशुद्ध नय ईश्वर कथ्यो, सापेक्षा मन आण. ॥१७०॥
कर्त्ता परपरिणामथी, चेतन ईश्वर जोय;
शुद्ध निश्चय नयथकी, कर्म करे नहिं सोय. ॥१७१॥
सुख कर्त्ता निज भावथी, दुःख कर्ता परभाव;
परपरिणतिना नाशथी, कर्त्ता निजगुण दाव. ॥१७२॥
सापेक्षा समजे नहीं, पक्ष ग्रहे एकांत;
ईश्वर कर्त्ता मानता, निरपेक्षाथी भ्रान्त. ॥१७३॥
कर्म मेल जेने नहीं, निराकार भगवान्;
कर्युं प्रयोजन ईशने, कर निश्चयथी ज्ञान. ॥१७४॥

परमप्रभु शिव सिद्धमां, इच्छा नहीं अभिमान;
शुं ते कर्त्ता सृष्टिनो, माने भूली भान. ॥१७५॥
उपादान जेवुं अहो, तादृश कार्य कहाय;
निराकार ईश्वरथकी, जडसृष्टि न रचाय. ॥१७६॥
उपादान कारणथकी, जाणो कार्य अभेद;
उपादान ईश्वर कहों, सृष्टिरूप ते खेद. ॥१७७॥
निमित्त हेतु इशजो, उत्पत्तिमां होय;
ईश्वरशक्ति नित्यके, अनित्यते अवलोय. ॥१७८॥
उपादान कारण विना, निमित्तथी शुं थाय;
उपादान कोने कहो, ज्ञाने सत्य जणाय. ॥१७९॥
कार्य पूर्व तो होयछे, कारणनो सद्भाव;
उपादान कारण विना, बने न एह बनाव. ॥१८०॥
उपादानथी भिन्नछे, निमित्त कारण भाइ;
भिन्न भिन्न शक्तितणी, क्यांथी एक सगाइ. ॥१८१॥
सृष्टिनुं कारण कदा, ईश्वर नहीं कल्पाय;
नाहि तो रासभ पण कहो, सद्युक्तिधर न्याय ॥१८२॥
पृथ्व्यादिक परमाणुओ, ग्रही सृष्टि निर्माय;
ईश्वरमां यदि मानीए, चेतन क्यांथी आय. ॥१८३॥
परमाणु समुदायथी, जडनुं कार्यज थाय;
चेतन तेथी भिन्नछे, अरणि वन्हि न्याय. ॥१८४॥

पुद्गल द्रव्य अनादिछे, तथा जीव पण जाण;
निश्चयथी बे भिन्नछे, भिन्नशक्ति पण आण ॥१८५॥
जडमां चेतन परिणमे, जाणो नय व्यवहार;
अनेकान्तमत ज्ञान वण, लहो न सम्यक्सार. ॥१८६॥
काल अनादि द्रव्य षट्, कर्त्ता ईश्वर केम;
ईश्वरशक्ति नित्यवा, अनित्य शुं त्यां एम. ॥१८७॥
कर्तृत्वशक्ति नित्य तो, नित्य जगत् निर्माय,
कर्त्ता शक्ति अनित्य तो. क्षणमां विणशी जाय ॥१८८॥
कर्तृत्वशक्ति याद्दशी, ताद्दश कार्यज थाय;
नित्यानित्य विकल्पथी, बे पक्षे दूषाय. ॥१८९॥
ईश्वर साकारी कहो, तोपण दोषित थाय,
पूर्वापर विचारतां, दोषो बहुला आय. ॥१९०॥
नैयायिकवादी कहे, कर्त्ता ईश्वर सत्य;
पण युक्तिथी लेखतां, लागे तेह असत्य. ॥१९१॥
ईश्वर इच्छाथी कदा, सृष्टि नहीं निर्माय;
निमित्त इच्छा जो कहो, केम स्वभाव न थाय. ॥१९२॥
का त्रिनिगमना त्यां लहो, करो कदाग्रह दूर;
स्वभावयुक्तिथी ग्रहो. तो नहि दोष जरूर ॥१९[illegible]
उपादान मध्ये रही, तिरोभाव जे शक्ति,
तेथी आविर्भावता, परिपूर्ण निजव्यक्ति. ॥१[illegible]

शुद्धशक्तिछे वस्तुमां, वर्ते काल अनादि;
आविर्भाव करावना, निमित्तहेतु उपाधि. ॥१९५॥
आविर्भाव जे धर्मनो, कार्यरूप ते थाय;
घटनुं कारण मृत्तिका, अनन्य कार्य कहाय. ॥१९६॥
घटनो नाश कर्याथकी, होय न कारण नाश;
कारण नित्यपणे रहे, मृत्तिकारूप खास. ॥१९७॥
काल स्वभावने नियति, कर्म उद्यम ए पञ्च;
कार्य प्रति कारण सदा, धरो न मनमां खंच. ॥१९८॥
राग दोष जेने नथी, ते ईश्वर कहेवाय;
तेने इच्छा जो कहो, तो ईश्वरता जाय. ॥१९९॥
कृत्य कृत्य ईश्वर थया, तेथी शुं इच्छाय;
इच्छा ज्यां त्यां रागद्वेष, रागदोष दुःख पाय. ॥२००॥
रागदोष सहचारिणी, इच्छा भवनुं मल;
ईश्वरने इच्छा कहो, हहा मोह प्रतिकूल. ॥२०१॥
इच्छा नहीं त्यां सुखशुं, कहेशे जन जो कोय;
शर्म अनंतु समाधिमां, इच्छा त्यां नहि होय. ॥२०२॥
जडवस्तुज ईश्वरथकी, बने नहि कोइ काल;
जड स्वभाव न इशमां, धर मनमांहि ख्याल. ॥२०३॥
ईश्वर शक्ति अनन्तछे, जडनी शक्तिज लेश;
सृष्टि बनेछे इशथी, युक्ति लहो ए वेश. ॥२०४॥

ईश्वर कर्त्ता वादिनुं, वदवुं युक्ति हीन;
जड ईश्वरना धर्म बे, वर्ते निशदिन भिन्न. ॥२०५॥
भिन्न धर्म बेना सदा, भिन्नधर्मी पण दोय;
निराकार साकार एक, रूपी अरूपी जोय. ॥२०६॥
चेतन शक्ति अनन्त छे, पुद्गलशक्ति अनन्त;
चेतनशक्ति ज्ञातृता, जडता पुद्गलतंत. ॥२०७॥
निजस्वभावे शक्ति त्यां, कोइ नहीं परतंत्र;
निश्चयनयथी जाणीए, ज्ञानी एम वदंत. ॥२०८॥
अनन्त शक्ति अस्तिता, निज द्रव्ये वर्ताय;
पर अपेक्षाए ग्रही, नास्तिता एम थाय. ॥२०९॥
अनन्त शक्ति अस्तिता, नास्तिताज अवलोय;
षड्द्रव्ये व्यापी सदा, निश्चयथी ए जोय. ॥२१०॥
चेतनथी जड जो बने, तो खरशृंग जणाय;
स्वप्न सुखलडी सत्यरूप, सत्य विचारो न्याय. ॥२११॥
अनन्त शक्ति इशनी, ईश्वरमांहि समाय;
कूपनी छाया कूपमां, तद्वत् जाणो न्याय. ॥२१२॥
जडनी शक्ति अनन्त छे, पुद्गल धर्म जोय;
वर्णादिक तेमां रह्या, अन्य न कर्त्ता कोय. ॥२१३॥
आत्मापेक्षाथी अहो, जडनी शक्तिज लेश;
सापेक्षा अवबोधीने, लहो न मनमां क्लेश. ॥२१४॥

तालपुट विष लेशथी, हस्ती प्राण हणाय;
निजनिजना धर्में वडुं, अनेकान्तमतन्याय. ॥२१५॥
ईश्वरथी सृष्टि बने, कदी नहीं कहेवाय;
समजु समजे सानमां, सदूयुक्ति मन लाय. ॥२१६॥
जीव कहो चेतन कहो, अर्थ एकनो एक;
ईश्वरसम छे आतमा, कर्त्ता इश न टेक ॥२१७॥
लक्ष चोराशी योनिमां, अटता जीव अनन्त;
कर्माष्टकना योगथी, पामे दुःख अनन्त. ॥२१८॥
काल अनादिथी ग्रही, जीवे कर्मनी राश;
बांधे छोडे कर्मने, करतो परनी आश. ॥२१९॥
भवितव्यतायोगथी, थावे कर्म विनाश.
अविचल आत्मस्वरूपनो, सहेजे थाय विकास.॥२२०॥
इशु विभु परब्रह्म छे, परमेश्वर सुखधाम;
सोऽहं सोऽहं पद लह्युं, तेने करुं प्रणाम. ॥२२१॥
जीवो कर्म क्षपणथकी, अनन्त ईश्वर थाय;
एकाऽनेक सिद्धात्मनी, ज्ञानी कुंची पाय; ॥२२२॥
कर्म खप्याथी सारिखा, समजे ज्ञानी विवेक;
व्यक्ति स्वरूपे भिन्नता, गुणव्यपेक्षा एक. ॥२२३॥
रागदोष जेने नथी, नहि रमता परभाव;
अनन्त आत्मस्वरूपमां, रमता शुद्ध स्वभाव ॥२२४॥

परम प्रभुसम ध्यानथी, स्वकीय चेतन धार;
ध्याता ध्याने ध्येयरूप, सिद्ध बुद्ध निर्धार. ॥२२५॥

तादृक् ईश्वर सिद्धने, वन्दु वार हजार;
तेना सम्यग् ज्ञानथी, लहिये भवजलपार ॥२२६॥

सम्यग् ज्ञानक्रियाथकी, मोक्ष न होय परोक्ष;
आत्मज्ञान ध्यानादिथी, त्वरित पामो मोक्ष. ॥२२७॥

भावार्थ—ईश्वरना बे भेदछे. अष्टकर्मसहित संसारि जीव ते पण अपेक्षाए ईश्वरछे, अष्टकर्मनो संपूर्ण नाश करी जे मुक्ति पाम्या ते सिद्ध परमात्मा ईश्वर कहेवायछे, जीवो कर्मरूप सृष्टिना कर्त्ता परपरिणतियोगे जाणवा, शाता अने अशाता वेदनीय कर्म ग्रही आत्माज पोताने सुख दुःख आपेछे. कर्मसृष्टिनो कर्त्ता तथा तेनो भोक्ता जीवरूप ईश्वर जाणवो. जीवरूप ईश्वर संसारिकअवस्थामां कर्मसृष्टिनो कर्त्ता जाणवो. सृष्टिकर्तृत्व जीवरुप ईश्वरने परभाव रमणतानी अपेक्षाए घटेछे एम रहस्य अनुप्रेक्षा करवा योग्यछे. जीवरूप ईश्वर, कर्मरूप सृष्टिनो कर्त्ता व्यवहारनयथी जाणवो. अशुद्धनयथी जीवरूप ईश्वर परवस्तुनो कर्त्ता निमित्तपणे जाणवो. हे भव्य आवी अपेक्षाथी ईश्वर कर्तृत्वरहस्य हृदयमां धारण कर. शुद्ध निश्चयनयथी कर्मरूप सृष्टिनो कर्त्ता ईश्वर नथी. आत्मिक सहज सुखनो कर्त्ता अशुद्ध स्वभावथी आत्माछे. दुःखनो कर्त्ता परस्वभावथी आत्माछे. ज्यारे संपूर्ण अशुद्ध परिणति (परपरिणति) नो आत्मध्यानथी नाश थायछे त्यारे आत्माना अनंतगुणनो आत्मा स्वयं कर्त्ता थायछे.

जे भव्यो सापेक्षता समजता नथी. अने एकांत पक्ष ग्रहण

करेछे ते शुद्ध परमात्मारूप ईश्वरने जडवस्तुनो कर्त्ता मानी भ्रांतिमां पडेछे. कर्मरूप मलिनता जेनामां नथी एवा सिद्धबुद्ध परमात्माने शुं प्रयोजनछे के सृष्टिनी रचना करे. हे भव्य पक्षपात त्यजी माध्यस्थ दृष्टिथी अवबोध.

परमप्रभु, परमब्रह्मरूप ईश्वरमां रजोगुण, तमो गुणादि नथी. इच्छा नथी, अभिमान नथी, वेदांतमां पण कह्युंछे के–न च स पुनरावर्तते मुक्तिमां गएला आत्माओ शुद्धबुद्ध थइ पश्चात् संसारमां जन्म लेता नथी. रागद्वेषरहित सिद्ध (ईश्वर) जडसृष्टिनो कर्त्ता कदा बनी शकतो नथी. जडसृष्टि रचवानो सिद्धबुद्धमां स्वभाव नथी ते माटे.

प्रश्न–सिद्ध परमात्मा जडसृष्टिना कर्त्ता नथी मानता त्यारे अन्य कोइ सृष्टिना कर्त्ता छे के नहीं.

उत्तर–सिद्ध परमात्मा–ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य, सुख आदि आत्माना अनंत शुद्ध गुणरूप सृष्टिना कर्त्ताछे. क्षायिकभावे आत्माना शुध्धरूप सृष्टिना कर्त्ता सादि अनंतमा भंगेछे. परमाणु आदि जडसृष्टित्व स्वभावना बीलकुल कर्त्ता नथी. जे आत्माना शुध्ध क्षायिक धर्मना कर्त्ता थया ते कर्मरूप सृष्टिना कर्त्ता कदा थता नथी.

माटे विवेकदृष्टिथी भव्यात्मन् सत्यतत्त्व विचार,

यादृक् उपादान कारण होयछे तादृक् कार्यनी उत्पत्ति थायछे, जेम मृत्तिकारूप उपादान कारण जेवुं होयछे तेवुं घटरूप कार्य बनेछे. उपादान कारण कार्यरूप बनेछे. घटकार्यमां कुंभकार निमित्त कारणछे. घटरूप कार्यमां उपादानकारण मृत्तिकाछे. अने निमित्तकारण कुंभकार. दंडचक्र वगेरेछे. तेम जो कर्मरहित परमात्माए जगत् बनाव्युं एम कोइ माने तो तेमां उपादान अने निमित्त

कारण कोण? निराकार ईश्वरने जगतनुं उपादान कारण मानतां जगत्‌रूप ईश्वर बन्यो. ए पण महादूषण आवेछे. सिध्धान्त एवो छे के निराकारथी साकारनी उत्पत्ति थती नथी. माटे निराकारथी जडसृष्टि रचाती नथी एम सिध्ध ठरेछे.

वळी नियम एवोछे के उपादान कारणथी कार्यनो अभेदछे, जेम मृत्तिकारूप उपादानथी घटरूप कार्यनो अभेदछे. मृत्तिकाथी घट भिन्न नथी. तेवीज रीतिथी निराकार ईश्वरथी जड सृष्टि मानवामां आवे तो जगत्‌रूपज ईश्वर बन्यो, सृष्टिरूप कार्यथी ईश्वरनो अभेद थयो माटे जडसृष्टिरूप ईश्वर मानवामां आवे तो अनेक दूषणरूप खेदनी प्राप्ति थायछे,

सृष्टिकार्यमां ईश्वरने निमित्त हेतु मानतां बे विकल्प उत्पन्न थायछे, ईश्वरनी शक्ति नित्यछे के अनित्यछे? उपादान कारण विना फक्त निमितकारणथी कोइ कार्य बनतुं नथी. कार्यनी पूर्वे उपादान तथा निमित्तनो सद्भावछे. उपादान विना निमित्तभूत ईश्वरथी सृष्टिरूप कार्य बनी शके नहीं, ईश्वरनी इच्छा निमित्त हेतु कोइ माने तो ते पण योग्य नथी, कारण के ईश्वरनेइच्छा होती नथी. अपूर्णने इच्छा होयछे. कृतकृत्य परमात्माने अंशमात्र पण इच्छा होती नथी. प्रमाण युक्ति अनुभवथी विरुद्ध सृष्टिहेतु ईश्वर कल्पातो नथी. तेम छतां यदि ईश्वर मानवामां आवे तो रासभने केम मानवामां न आवे? पृथिवीआदि परमाणुओनुं ग्रहण करीने ईश्वर सृष्टि रचेछे एम जो मानवामां आवे तो जीवो क्यांथी आव्या. जीवो अनादिकालनाछे एम कहेवामां आवे तो सृष्टिपण अनादिकालथीछे एवं केम मानता नथी. अनादिकालना जीवो सृष्टि विना अन्यत्र रही शकता नथी माटे सृष्टि पण अनादिकालथी छे एम स्पष्ट भासेछे. परमाणुओना कार्यथी चेतन (आत्मा) भिन्नछे माटे अगणिमां वनि रहेछे तेवी रीते आत्मा

पण देहमां रहेछे पण पंचभूतथी भिन्नछे. जड अने चेतन ए बे वस्तु आ प्रमाणे विचारतां अनादिकालथी छे एम सिद्ध थायछे. जीव अने जडनी परस्पर शक्तियो पण भिन्नछे. जडवस्तुमां चेतन कर्मनावशे परिणमेछे ते व्यवहारनयथी जाणवुं. निश्चयथी जडमां चेतन परिणमतो नथी, आ प्रमाणे अनेकान्तनयज्ञान थया विना तत्त्वनुं यथार्थ भासन थतुं नथी.

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल अने जीव एम षड्द्रव्यथी जगत् कहेवायछे. अनादिकालथी षड्द्रव्यछे. ते षड्द्रव्य, द्रव्यार्थिकनयथी नित्यछे अने पर्यायार्थिकनयथी अनित्यछे. ते षड्द्रव्यथी भिन्न कोइ वस्तु नथी. तो षड्द्रव्यनो कर्त्ता ईश्वर केम मानी शकाय. अर्थात् न मानी शकाय. हवे बे विकल्प करवामां आवेछे. जगत्कर्तृत्व शक्ति ईश्वरमां नित्य छे के अनित्यछे ? जगत्कर्तृत्व शक्ति नित्य मानवामां आवे तो ईश्वर सदाकाल जगत् बनाव्या करशे. एवं महादोष आवेछे, तेमज जगत्कर्तृत्व शक्ति अनित्य मानवामां आवे तो जगत्कर्तृत्व शक्ति क्षणमां अनित्य होवाथी विणशी जतां सृष्टि पण क्षणमां नाश पामी जाय. पण तेम प्रत्यक्ष अनुभव विरूद्धछे माटे बे पक्षथी ईश्वरशक्ति जगत् कर्तृत्वमां सिद्ध थती नथी. एम नित्यानित्य पक्षथी ईश्वरशक्ति दूर थायछे.

जगत् कर्त्ता ईश्वरने साकारी मानवामां आवे तो अनेकदोषो उत्पन्न थायछे. साकार ईश्वर एकदेशावस्थित होवाथी सर्वत्र सृष्टि बनावी शके नहीं साकारकुंभकारवत् साकारकुंभकारनी पेठे कर्म विना देह होय नहीं. अने देहवडे ईश्वर साकार देवतानी पेठे कहेवाय तो कर्म सहित ठर्यो. सकर्माईश्वर ठरवाथी अन्य जीवोनी पेठे कर्मना परतंत्र रह्यो, अने स्वतंत्र थयो नहीं. त्यारे ते जगत् बनाव-

वामां कथं समर्थ थाय.

नैयायिक कहेछे के सृष्टिनो कर्त्ता ईश्वर सत्य छे पण ते पूर्वोक्त युक्तिथी विचारतां सत्य नथी. ईश्वरनी इच्छाथी जगत् उत्पन्न थयुं एम मानवामां आवे तो अनादिकालथी जड अने चेतन बे पदार्थ छे. एम अनादिस्वभाव केम न मानवामां आवे, अर्थात् त्यां एकत्र पक्षपातिनी युक्ति कइ छे के अनादिकालनो स्वभाव न मानवामां आवे अने इच्छाज मानवामां आवे. इच्छा मोहरूप छे. ईश्वरने इच्छा कहोतो साधारण मनुष्यनी पेठे ईश्वर पण मोही ठर्यो त्यारे तेनुं ईश्वरपणुं रहेतुं नथी. माटे ईश्वरनामां इच्छा मानवी ते शसशृंगवत् असत्य छे. आत्मानी परमात्मदशामां ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य, सुखादि गुणो उपादान कारणछे. तेनो परिपूर्ण आविर्भाव तेज परमात्मपणुं जाणवुं. अनन्तधर्मनी शुद्धि प्रगटाववा निमित्त हेतुनी जरूरछे, आत्माना धर्मनो आविर्भाव तेज कार्य जाणवुं. घटनुं कारण जेम मृत्तिका अनन्य कारण कहेवायछे तेम परमात्म दशारूप कार्यमां ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप अनन्य कारण उपादानछे. घटनो नाश थवाथी मृत्तिकानो नाश थतो नथी. अर्थात् कारण सदाकाल वर्तेछे. अत्र काल, स्वभाव, नियति, कर्म, अने उद्यम पंच कारणथी कार्योत्पत्ति थायछे. पंच कारणमांथी एक कारणनी उत्थापना करतां मिथ्यात्व प्राप्त थायछे. आ बाबतमां लेशमात्र पण शंका करवी योग्य नथी.

राग अने द्वेषनो सर्वथा जेणे क्षय कर्योछे ते ईश्वर परमात्मा कहेवायछे. एवा शुद्ध परमात्माने जो इच्छा कहेवामां आवे तो ईश्वरतानो नाश थायछे. सर्व प्रकारनी इच्छानो जेणे नाश कर्योछे एवा ईश्वरने जगत् करवानी इच्छा क्यांथी होय. अलबत्त कदी होय नहीं, रागद्वेषसहचारिणी इच्छाज संसारनुं मूलछे. अने तेवी इच्छा

ईश्वरने कहेवी ते मोहचेष्टित जाणवुं. अहो अज्ञाननी केटली शक्ति.

कोइ एम कहे के–ज्यां इच्छा नथी त्यां शुं सुख ? अलवत कंइ नहीं. आवी रीते बोलनारे समजवुं के योगीन्द्रमहात्मा समाधिमां अनन्त सुख वेदेछे, पण ते समये तेने इच्छा नथी माटे इच्छा होय त्यां सुख एवी व्याप्ति घटती नथी.

दृस्यजडवस्तु कदापि ईश्वरथी बनी शके नहीं. ईश्वरमां जडस्वभाव नथी. जडवस्तुनो कर्त्ता वान्याय आपनार ईश्वर नथी. हे भव्य हृदयमां अवधार.

कोइ एम कहेशे के–ईश्वरनी शक्ति अनन्तछे अने जडपदार्थनी शक्ति अल्पछे माटे ईश्वरथी सृष्टि बनेछे. आ युक्ति पण वेश नथी ते जणावेछे. ईश्वरनी शक्ति चैतन्यभावे अनन्तछे तेम जडनी शक्ति जडभावे अनन्तछे. ईश्वरना धर्म अनन्तछे जेम जडतत्त्वना धर्म पण अनन्तछे. आत्मा अने जड बे तत्त्व भिन्नधर्मीछे. जडपुद्गल द्रव्य साकारछे अने आत्मतत्त्व निराकारछे. प्रत्येक तत्त्व स्वस्वभावे स्वतंत्रछे. वस्तुतः कोइ द्रव्य परतंत्र नथी. प्रत्येक द्रव्यमां अनन्त अस्तिधर्म अने परनी अपेक्षाए अनन्तनास्तिधर्म रह्योछे. अस्तिधर्म अने नास्तिकधर्मनी अनन्तता षड्द्रव्यमां व्यापी रहीछे. अन्य द्रव्यनो कर्त्ता अन्यद्रव्य वस्तुतः नथी.

चेतनथी जो जडनी उत्पत्ति उपादानपणे थाय तो खरशृंगनी पण उत्पत्ति थाय. पण खरने शृंग थतांज नथी ते प्रमाणे ईश्वररूप चैतन्य मूर्तिमांथी जडवस्तु थती नथी. त्यारे ईश्वरमांथी जगत् थयुं एवं प्रलाप करवो ते अंधश्रद्धानी बुद्धि विना अन्य समजातुं नथी. स्वप्न सुखडीथी पेट भराय तो ईश्वरमांथी जडनी उत्पत्ति थाय.

आ प्रमाणे सिद्धांत वदवाथी प्रश्न थशे के अहो ज्यारे परमात्माथी जगत्नी उत्पत्ति थती नथी, त्यारे तेमनी अनन्त शक्ति शा

कामनी ? तेना प्रत्युत्तरमां जणावेछे के-ईश्वरनी ज्ञानादिक अनन्त शक्तियो ईश्वरमांज समायछे. कूपनी छाया कूपमां समायछे ते प्रमाणे अत्र न्याय समजवो. जडद्रव्योनी अनन्त शक्ति जडमां व्यापी रहीछे. पुद्गलद्रव्यना वर्णादिकनी शक्ति पुद्गलद्रव्यने त्यजी अन्यत्र जती नथी. पुद्गलद्रव्यनो निश्चयथी अन्यद्रव्य कर्त्ता शीरीते होइ शके,

आत्मद्रव्यनी अपेक्षाए पुद्गलद्रव्यनी शक्ति अल्प गणायछे. पण वस्तुतः जेम आत्मद्रव्यनी आत्मस्वरूपे अनन्ति शक्तिछे तथा पुद्गलद्रव्यनी शक्ति पण तेना स्वरूपे अनन्तछे. सापेक्षा अवबोधतां कोइपण प्रकारनी हानि आवती नथी. तालपूटविषलेशथी हस्तिना प्राणनो नाश थायछे, एक लेशमात्र तालपुटविषथी हस्तिनो प्राण नाश थाय त्यारे कहोके पुद्गलनी शक्ति केटलीछे: आत्मानी शक्ति अपेक्षाए मोटीछे तेमज पुद्गलनी शक्ति पुद्गलनी अपेक्षाए मोटीछे. आ उपरथी सिद्ध थायछे के शुद्धबुद्धपरमात्माथी सृष्टि बनी शके नहीं, माध्यस्थदृष्टिवाळा पुरुषो सहजमां तत्त्व अवबोधी शकेछे. ईश्वर सर्वज्ञ परभावरूप सृष्टिनो कर्त्ता नथी. एवी प्रतिज्ञा युक्तिमतीछे.

चोराशीलक्षजीवयोनिमां जीवो परिभ्रमण करेछे. अज्ञान राग द्वेष प्रयोगे जीव संसारमां परिभ्रमण करेछे. कर्मबीज संसारमां परि-भ्रमण थायछे. कर्यां कर्म प्रमाणे सुख दुःख थायछे त्यारे शामाटे हे ईश्वर तें मने दुःख आप्युं एम असत् वदवुं जोइए. अनादिका-लथी जीवनी साथे कर्मनो संबंधछे. भावकर्म रागद्वेषयोगे जीव द्रव्यकर्मने ग्रहण करेछे. तेने भोगवी विखेरेछे. पञ्चकारणनी सामग्री मळे त्यारे कर्मनो नाश थायछे. कर्म नाश थतां अविचल आत्म स्वरूपनो सहेजे विकाश थायछे.

इश्, विभु, परमब्रह्म, परमेश्वर, सुखधाम ब्रह्मनी स्थिति शुद्ध

सत्ताने अंगीकरी, माने अद्वैत एम;
संग्रहनय एकान्तथी. तरे भवोदधि केम. २३८
प्रथम विषम दृष्टान्तथी, साध्यसिद्धि शुं थाय;
प्रतिबिम्बरूपितणुं, अरूपि शुं ते पाय. २३९
प्रतिबिम्ब पुद्गलतणुं, जल चन्द्रे दृष्टान्त;
जीव अरूपी वस्तुमां, प्रतिबिम्ब नहि भ्रान्त. २४०
प्रतिबिंबथी जाणशो, प्रतिबिंबक छे भिन्न;
प्रतिबिंबकना भावथी, प्रतिबिंब छे खिन्न. २४१
प्रतिबिंबित चन्द्रनुं, भिन्नपणुं त्यां छेक;
कथं साध्यनी सिद्धि छे, छे नहीं चेतन एक. २४२
व्यापक आतम एकनुं, अंशपणुं नहीं होय;
भिन्न भिन्न जीवांशथी, आतम एक न जोय. २४३
आतम एकथी सर्वने, शर्म दुःख समकाल;
सुख दुःख आच्छादक कह्यो, द्वैतपणुं त्यां भाळ. २४४
घटाकाश उपाधिथी, ग्रह्यो गगननो भेद;
तेवी उपाधि अत्र नहीं, सुख दुःख वारक वेद. २४५
समकाले सुख दुःखनो, जीवोने प्रतिभास;
अधिक न्यून प्राप्तितणो, मळे नहीं अवकाश. २४६
मळे नहीं अवकाश तो, तेनुं कारण कोण;
भिन्न भिन्न चेतन विना, घटे नहि कंइ और. २४७

व्यक्तिथी सहु भिन्न छे, सत्ता ए सहु एक;
आतमतत्त्व अवबोधथी, मानो एकाऽनेक. २४८

सर्वत्रज व्यापक कहो, युक्ति घटे नहि कोइ;
सम्मतितर्के जाणशो, कह्युं विचारी जोइ. २४९

सर्वत्रज व्यापक कहो, पिण्डे किम बंधाय;
देहे व्यापी जो कहो, अव्यापक पद पाय. २५०

व्यापक नहि बंधाय छे, गगन पङ्कनी पेर;
सर्वत्र सुख दुःखनी, प्राप्तितणुं छे झेर. २५१

सर्वत्र व्यापक कहो, कदा नहीं बंधाय;
मानो तो छे अज्ञता, सद्युक्ति न जणाय. २५२

अव्यापक छे आतमा, तेमां नहीं संदेह;
व्याप्यने व्यापक बोधथी, थाशो निःसंदेह. २५३

शैलेशीकरणे करी, व्यापक आतम लोक;
असंख्य शुद्ध प्रदेशथी, जाणो भविजन थोक. २५४

अव्यापक व्यापक लहो, चेतन गुणनी खाण;
अनेकान्त अवबोधथी, पामो शिवपुर ठाण. २५५

सादि आदि भंगे करी, व्यापक चेतन जाण;
स्याद्वाद दृष्टि थकी, साचुं मनमां आण. २५६

केवलज्ञाने आतमा, व्यापक सहुमां जोय;
स्वपर प्रकाशक आतमा, प्रदीप पेठे होय. २५७

तिमिरारि प्रगटे तदा, तमनो शो छे भार;
ज्ञानदीपक उद्योतथी, रहे नहि अंधकार. २५८

अद्वैत स्वरूपी आतमा, जडथी भिन्न विचार;
द्वैतपणुं पण तेहमां. एक अनेकाधार. २५९

अक्षररूपे आतमा, अनक्षर गुणवान्;
आत्माऽसङ्ख्य प्रदेशमां, स्थिरता शुद्ध वखाण. २६०

भास्यो आपोआपमां, टळ्युं महा अज्ञान;
अपूर्व वीर्यज उल्लस्युं, यदा थयुं निज भान. २६१

जड इन्द्रियो शुं करे, तेनाथी हुं भिन्न;
जडस्वरूपे तेह छे, क्षणिक नाशी दीन. २६२

मन वाणी मारां नहीं, जडनुं छे ते काज;
तेनी संगे राचतां, नहीं रहे मुज लाज. २६३

हसुं रसुं कोनाथकी, कोनापर ममभाव;
मृगजलोपम वस्तुमां, शो ममतानो दाव. २६४

नहीं मारु जड वस्तुमां, राचुं शुं संसार;
शाथी शाने माटे में, लीधो मही अवतार. २६५

फोगट फंदामां पडयो, जरा न शर्म जणाय;
सवळे पन्थे चालतां, मनमां शुं खमचाय. २६६

नथी तनु ते तुं सदा, शरीर माटीघाट;
पींपळपानपरे खरे, चेत चेत ते माट. २६७

सहुने देखुं ज्ञानथी, सहु म्हाराथी दूर;
प्रतिबंध कोनो नहीं, सिंह इव हुं शूर. २६८

रागदोष निन्दा कथा, तेनुं भाग्युं जोर;
स्वाभिमुख थइ चेतना, प्रगटयो अनुभव तोर. २६९

शत्रुथी छेदाउ नहीं, नहि शस्त्रे भेदाउ ?
शत्रुमित्र सम भावना, भ्रमणा क्यांथी पाउ? २७०

कर्मवशे सहु प्राणिया, भ्रमण करे निर्धार;
पुत्र मित्र ललनापणे, सगपणनो आचार. २७१

सगपण साचुं नहि कदा, स्वारथियो संसार;
जगमां को केनुं नहीं, संवेग मनधार. २७२

सर्व जीव छे सिद्ध सम, निर्मल अविचल देव;
त्रिकरण योगे तेहनी, मित्रभावना सेव. २७३

द्रव्यार्थिकथी नित्य छे, कदी न होवे नाश;
असंख्यप्रदेशिव्यक्तिथी, ध्रुव स्वरूपी खास. २७४

पूर्वजन्म अभ्यासथी, जीव नित्यता सिद्ध;
वाल युवा वृद्धा विषे, ज्ञाता एक प्रसिद्ध. २७५

क्षणे क्षणे वदलायतो, चेतन होय अनेक;
पाप पुण्य कोने घटे, तेनो करो विवेक. २७६

क्षणिक वस्तुना ज्ञानथी, क्षणिक वाद सुजाण;
वक्ता क्षणिक नहीं थयो, नित्यरूप मन आण २७७

कोइक वस्तुनो कदी, केवल नाश न होय.
चेतन नाश कह्या थकी, अन्यावस्था जोय. २७८

अन्यावस्था को नहीं, माटे चेतन नित्य.
प्रत्यभिज्ञा सुहेतुथी, नित्यज जाणो चित्त. २७९

पर्याये पलटाय छे, आतमना पर्याय.
अनित्य माटे आतमा, अनेकान्तमतन्याय. २८०

शुभाशुभ आश्रव ग्रही, धरतो नाना देह.
शाताशाता भोगवे, नय व्यवहारे एह. २८१

पुण्य पापना नाशथी, प्रगटे निजगुण भोग.
सूर्याच्छादक अभ्रनो, टळे महासंयोग. २८२

कर्मसंग टळ्या थकी, पामे जीव शिवठाण.
पुरुषोत्तम परमातमा, सिद्ध बुद्ध भगवान. २८३

अगम्य आत्मस्वभावनुं, अवलम्बन करनार.
आश्रव त्यागी संवरी, भवोदधि तरनार. २८४

जेने इच्छे योगिजन, अनन्यसुखनुं धाम.
नमुं नमुं ते आतमा, अनन्तगुण विश्राम. २८५

अवलम्बन शुभ आतमनुं, करतां नाशे दोष,
प्रगटे अनुभव ज्योति त्यां, चेतन वीर्ये पोष. २८६

निजपद जिनपद साम्यता, भेदभावनो नाश.
पूर्ण व्यक्तिमय आतमा, राजाने कुण दास. २८७

सर्व सिद्धनी तुल्यता, जीव अनन्ता माय.
कोकोने नडता नहीं, अरूपपद महिमाय. २८८

विषमज्वरना जोरथी, होय अरुचि अन्न.
अभव्य आदि जीवने, आत्मरुचि नहिमन. २८९

सम्यग् ज्ञान प्रभावथी, बहिरातम पद नाश.
अन्तरात्मगुण भावना, प्रगटे शिवपुर वास. २९०

परप्रवृत्ति हेतुओ, समूळ त्यां छेदाय.
अन्तर परमप्रभुपणुं, सहजे उदये आय. २९१

हुं कर्त्ता परभावनो, बुद्धि भवनुं मूळ.
अन्तरात्मपद योगथी, थाय तेह निर्मूळ. २९२

स्वद्रव्य स्वक्षेत्रथी, निजकाले निजभाव;
अस्तितत्व बहु भंगथी, निजद्रव्ये चित्त लाव. ३११

जीवादिक नवतत्वमां, प्रथमज अस्तिहिभंग;
कदी नहि जे वस्तु जग, प्रगटे नाहि धरि अंग. ३१२

धर्माधर्माकाशकाल, पुद्गल पंचम जोय;
जीवद्रव्य छठुं कह्युं, अस्ति भंग अवलोय. ३१३

भूत भविष्यत् संप्रति, त्रिकाले वर्ताय;
षड्द्रव्योमां जाणिये, अस्तिभंग स्थिरताय. ३१४

समये समये अस्तिता, अनंतगुणनी जाण;
चेतनद्रव्ये वर्तती, सिद्धान्ते व्याख्यान. ३१५

द्रव्ये द्रव्ये अस्तिता, भिन्न भिन्न कहेवाय;
द्रव्यज गुण पर्यायनी, अस्तिताज निजमांय. ३१६

पुद्गलना पर्याय जे, घटपटरूप लेख;
तदाकारछे अस्तिता, सादि सान्तथी देख. ३१७

द्रव्यार्थिक नय जाणिये, अनाद्यनंतज भंग;
पुद्गलमां व्यापी रह्यो, सादिसान्त गुण चंग. ३१८

स्यान्नास्ति बीजो कहुं, भंग अति सुखकार;
षड्द्रव्योमां व्यापियो, सापेक्षाये धार. ३१९

परद्रव्य परक्षेत्रथी, परकालज परभाव;
नास्तितता तेनी सदा, निजमां वर्ते दाव. ३२०

ग्रही अपेक्षा परतणी, घटे नास्तितता आय;
परभावे षड्द्रव्यमां, नास्तित्व स्थिरताय. ३२१

परद्रव्योनी अस्तिता, तेज नास्तिता रूप;
प्रणमे निजनिज द्रव्यमां; सापेक्षाए अनुप. ३२२

पूछे पृच्छक अत्र एम, घटे न बे एक ठाम;
तमः तेज प्रतिपक्षिनुं, घटे न एकज धाम ३२३

नैकास्मिन् ए सूत्रथी, रहे न बे एकत्र;
अस्ति नास्ति एकत्र नहि, भाखो सद्गुरु अत्र ३२४

सापेक्षाए सहु घटे, तथा सर्व समजाय;
पिता पुत्रत्व एकमां, बन्ने धर्म सुहाय. ३२५

चेतननुं अस्तित्वते, परमां नास्ति स्वरूप;
परमां नास्ति नहीं रहे, विघटे वस्तु अनूप ३२६

विना अपेक्षा अस्तिता, नास्तितता नहीं जोय;
नैकस्मिन् ए सूत्रतो, स्याद्वादे अवलोय ३२७

जे समयेछे अस्तिता, नास्तिपणुं ते काल;
एकसमयमां वर्तना, षड्द्रव्योमां भाल. ३२८

अस्ति नास्ति त्रीजो कह्यो, भंग समय सिरताज
षड्द्रव्योमां व्यापियो, जिनदर्शन साम्राज्य ३२९

अस्ति शब्द उच्चारतां, समयो वहे असंख्य;
नास्ति शब्दोच्चारमां, तथा कहे भगवंत. ३३०
एकज समये अवाच्यछे, कदी न कोइ कहंत;
अवक्तव्यज भंगछे, चोथो सूत्रे लहंत ३३१
अस्तिधर्म अनन्तछेज, वाणी अगोचर थाय;
पञ्चमभंग ते उपजे, अनेकान्त शोभाय. ३३२
नास्तिधर्म अनन्तता, वस्तुमध्ये रहंत;
अवाच्य वाणीथी कह्यो, छठ्ठो भंग कहंत. ३३३
अस्तिनास्ति बे छे सदा, अवक्तव्य ते होय;
सप्तमभंगज सर्वमां, समय समय अवलोय. ३३४
गुरुगमज्ञानअवाप्तिथी, भंगज सप्त स्वरूप;
जाणी आत्मस्वभावमां, अपहरीए भवधूप. ३३५
अतिगहनछे तत्त्वबोध, विरलाजन समजंत;
सज्जन भवसागर तरे, करी कर्मनो अन्त. ३३६
सप्तभंगीछे सिद्धमां, अनन्तगुणमां जोय;
अनेकान्तनय जाणतां, शुद्धुं समकित होय. ३३७
नवतत्त्व षड्द्रव्यनुं, सत्यज्ञान जो थाय;
तो जाणो ज्ञानिपणुं, सहेजे शिवपद पाय. ३३८
समकितादि मोहिनी, तेनो उपशम भाव;
क्षयोपशम क्षायिकपणे, प्रगटे समकितदाव. ३३९

निजगुण स्थिरता चरणथी, थाता गुण उद्योत;
स्वयंशुद्ध परमातमा, प्रगटे निर्मल ज्योत. ३४०
गुणस्थानक स्पर्शन थतां, सहजे गुण प्रगटाय.
परिपूर्ण निजव्यक्तिथी, अविचलपदवी पाय. ३४१
षट्स्थानक अवबोधथी, समकित प्रगटे चंग;
षट्स्थानक धारो सदा, गुण प्रगटे निज अंग. ३४२
अस्ति चेतनद्रव्यनी, चेतनद्रव्य अनन्त
संसारीने सिद्ध दोय, ज्ञानी एम वदन्त. ३४३
नित्यज चेतन द्रव्यछे. कर्त्ता हर्त्ता जोय;
कर्मथकी मूकाय शिव, तेनां कारण होय. ३४४

शिष्य उवाच

नथी दृश्य ते दृष्टिथी, स्पर्शे ग्रह्यो न जाय;
आत्मद्रव्यनी अस्तिता, अनुभवे न जणाय. ३४५
मानो देहज आतमा, अथवा श्वासोश्वास.
पंचतत्त्वनुं पूतळुं, अन्य कयो आभास ? ३४६
घटपट यथा जणायछे. तथा न चेतनद्रव्य;
माटे चेतन नास्तिता, मिथ्या माने भव्य. ३४७
यदि नथीजो आतमा, तपजप संयम फोक;
पुण्यपापनी कल्पना, भूले भोळा लोक. ३४८

शंका मोटी जीवनी, टाळो सद्गुरुदेव;
मतिहीन हुं जीवछुं, कापो कुमति टेव. ३४९.

सद्गुरुः उवाच

उत्शृंगलवृत्ति त्यजी, ग्रहो सुयुक्ति दीप;
समजो चेतन अस्तिता, यथाऽस्ति मौक्तिक छीप.३५०

पञ्चभूतथी भिन्नछे, अरूप निर्मल शुद्ध
देहे व्याप्यो जीवछे. मळ्युं उदकमां दुध. ३५१

हुं सुखी हुं दुःखी एम, बुद्धि देहनी नांय;
मृत कलेवरमां कदी, जरा न चेष्टा त्यांय. ३५२

कठीन शीतत्वादि गुण, पंचभूतना जोय;
चैतन्यादि त्यां नहीं, सूक्ष्मपणे अवलोय. ३५३

अरूप चेतन चक्षुथी, ग्रह्यो कदा नहि जाय;
पुद्गलस्कंधो स्पर्शथी, ग्रह्या सदा जोवाय. ३५४

श्वासोश्वास ते स्पर्शथी, सदा अहो ग्रहवाय;
बाहिर् जातो आवतो, ते चेतन शुं थाय. ३५५

ज्ञातृताश्रय जीव छे, पुद्गल नहीं कदाय;
नहीं तो घटपट वस्तुमां, ज्ञातृशक्ति ग्रहाय. ३५६

मद्यांगे मदशक्तिवत्, पञ्चभूत संयोग;
चैतन्यशक्ति उद्भवे, ते युक्ति पण फोक. ३५७

भिन्न भिन्न मद्यांगमां, मदशक्ति अवभास;
भूत भूत प्रत्येकमां, ज्ञानतणो नहि वास. ३५८
बुद्ध्यादिक आधार जे, तेहिज चेतन पेख;
आदि शब्दथकी ग्रहो, सुख दुःख कार्योल्लेख. ३५९
बुद्ध्यादिक आश्रित जिहां, त्यां गुणपात्र जणाय;
रूपादिवत् जाणीए, चेतन सिद्धि उपाय. ३६०
गुण निराश्रय नहीं कदा, आश्रय छे घटरूप;
बुद्ध्यादिक आश्रय तथा, आनन्दघन चिद्रूप. ३६१

शिष्य उवाच.

बुद्ध्यादिक आधार तो, इन्द्रियो कहेवाय;
चेतननी शी कल्पना, करवी सद्गुरुराय. ३६२

गुरुः उवाच.

उपहत इन्द्रियो थकी, विषयस्मृति न घटाय;
आश्रयनाशे स्मृतितणी, उत्पत्ति केम थाय? ३६३
कर्णेन्द्रियना नाशथी, स्मरणतणो नहि क्षोद;
स्मृत्याश्रय ते आतमा, मानो सत्यज बोध. ३६४
अनुभव्युं जे इन्द्रिये, तेनो थातां नाश;
स्मृति इन्द्रियो अन्यमां, ते पण मिथ्याभास. ३६५
थातां एमज चैत्रने, थया अनुभव जेह;
स्मृत्युत्पत्ति मैत्रने, घटे न युक्तिज तेह. ३६६

शिष्य उवाच.

भले न थावो इन्द्रियो, बुद्धि आश्रय कोइ;
बुद्धि आश्रय देह छे, कहुं विचारी जोइ. ३६७
शरीरनाशे बुद्धिनो, नाशज थातां दीठ;
भस्मीभूत शरीर तो, चेतन थाय अदीठ. ३६८

सद्‌गुरु उवाच.

बाल युवादिक भेद त्रण, तनुना एह प्रसिद्ध;
बालदेहथी भोगव्युं, स्मृति ते तेणे लीध. ३६९
तरुण तनुमां तेहनी, स्मृति कदा नहि थाय;
बालशरीरे भोगव्युं, कथं युवान जणाय. ३७०
मृतक शरीरे बुद्धिनी, स्फूर्ति कथं न थाय;
माटे बुद्ध्याश्रय कहो, चेतन स्मर्ता आय. ३७१

शिष्य उवाच.

बुद्ध्याश्रय नहि देह तो, श्वासोश्वास जणाय;
श्वास नहीं त्यां सुख दुःख, कदा न निरख्युं जाय. ३७२
श्वासोश्वासे भिन्नता, नहि ते एक स्वरूप;
बुद्ध्याश्रय तेने कहो, ए पण जडता रूप. ३७३
एकज श्वासोश्वासथी, कीधो अनुभव जेह;
अन्यश्वास स्मर्ता नहीं, बुद्ध्याश्रय नहि एह. ३७४

बुद्ध्याश्रय जो श्वासतो, त्वक्थी ते स्पर्शाय;
त्वचा ग्रहेछे श्वासने, केम न बुद्धि ग्रहाय. ३७५
सोऽयं प्रतीतियोगथी, बुद्ध्याश्रय जे होय;
आत्मतत्त्व ते जाणीए, नहि त्यां शंका कोय. ३७६

शिष्य उवाच.

देहादिकथी भिन्न जो, मानो चेतनराय;
भिन्न करी देखाडीए, असिम्यानने न्याय. ३७७

गुरुः उवाच.

वायुरूपी पण नेत्रथी, निरख्यो कदा न जाय;
जीव अरूपी चक्षुथी, कथं अहो निरखाय. ३७८

बौद्ध उवाच.

क्षणिकसंतति ज्ञाननी, ततो चेतन मान;
प्रवृत्तिरूप विज्ञाननो, आलय उपादान. ३७९
एकरूप नहीं ज्ञाननुं, क्षणे क्षणे बदलाय;
ज्ञानसन्तति आतमा, मानो सबळो न्याय. ३८०
क्षणिक सन्तति ज्ञाननी, मानंतां नहि दोष;
क्षणिक उत्तर ज्ञानमां, पूर्व ज्ञाननो पोष. ३८१

गुरुः उवाच.

ज्ञान क्षणिकनी सन्तति, चेतन नहि कहेवाय;
क्षणिक सन्तति मानतां, पुण्य पाप कुण पाय? ३८२

उपादान कारणतणो, कदा विनाश न थाय,
आलयनो जो नाशतो, वृत्ति क्यां प्रगटाय. ३८३

आलयने ध्रुव मानीए, तो ते चेतनरूप;
मानंतां दोषज नथी, करवी समजी चूप. ३८४

आलयने प्रवृत्तिमां, मानो जो यदि भेद;
उपादान कारणतणो, थाशे त्यां विच्छेद. ३८५

बने नहीं घट वस्तुथी, सूत्रतणा समुदाय;
कारण कार्यज भिन्नता, त्यां शुं कार्यज थाय. ३८६

चैत्रमैत्र इव भेद त्यां, कारण कार्यज भाव;
स्मृतिभंग त्यां होयछे, घटे शुं युक्ति दाव? ३८७

क्षणिक सन्तति ज्ञानमां, कारणकार्यभेद;
मानो तो क्षणवादनो, थाशे निश्चय छेद. ३८८

उत्तरज्ञानदशा विषे, पूर्व ज्ञान जो होय.
स्थिरबुद्धि तेथी थइ, बुद्धि नाश क्यां जोय. ३८८

आलयनी जे स्थिरता, तेतो आतम मान;
बन्धमोक्ष सहु तो घटे, चेतन गुणछे ज्ञान. ३८९

पूर्वजन्मना स्मरणथी, पुनर्जन्मता सिद्ध;
पुण्य पाप फल भोगवे, चेतन नित्य प्रसिद्ध. ३९१

चेतन नित्यज होय तो, कर्म न लागे कोय;
अनित्य माटे आतमा, क्षण क्षण नाशी होय. ३९२

आ क्षणमां जे आतमा, ते क्षण विणशी जाय;
पुण्य पाप सुख दुःखनी, घटना कहो शी थाय. ३९३

अन्य करेने अन्यने, पुण्य पापनो बन्ध;
अन्यतणो जो मोक्षतो, ए सहु मिथ्याधंध. ३९४

को कर्त्ता भोक्ता अहो, सहुथी अवळो न्याय;
नित्य आतमा मानतां, कर्त्ता भोक्ता थाय. ३९५

अभ्रसंग दूरे थतां, निर्मलरवि प्रकाश;
नित्य आतमा मानतां, होवे दोष विनाश. ३९६

जेनी संयोगे करी, उत्पत्ति नहीं थाय;
नाश होय नहि तेहनो, माटे नित्य सदाय. ३९७

अहंकृतिने क्रोधनी, केशरी फणिधरमांय;
भासे तरतमता घणी, पूर्ववासना त्यांय. ३९८

पूर्ववासना योगथी, नित्य आतमा सिद्ध;
क्षणिकचेतन बुद्धिने, देशवटो एम दीध. ३९९

आशंका शिष्य उवाच.

जीव न कर्त्ता कर्मनो, कर्मज कर्त्ता कर्म;
चेतन कर्त्ता कर्मनो, धर्म जीवनो मर्म. ४००

सदा असंगी आतमा, जलपंकजनी पेर.
कर्त्ताने भोक्तापणुं, भासे प्रकृति घेर. ४०१

ईश्वर इच्छा योगथी, कर्मतणोछे बंध;
सुख दुःख तेथी संपजे, माटे जीव अबंध. ४०२

सद्गुरुः उवाच—समाधान.

काल अनादि परिणम्यां, चेतन पुद्गल दोय;
अशुद्धपरिणतियोगथी, कर्त्ता कर्मनो होय. ४०३

जीवप्रेरणा जो नहि, तहिं ग्रहे को कर्म;
जडमां कदी न प्रेरणा, भिन्नपणे बे धर्म. ४०४

माटे चेतनप्रेरणा, थातां कर्म ग्रहाय;
परभाविक ते प्रेरणा, ग्रहीलच्चेष्टान्याय. ४०५

कर्त्ता कर्म न कर्मनो, जुओ विचारी चित्त;
घटपट करे शुं प्रेरणा, समजो न्याय पवित्र. ४०६

माटे कर्त्ता कर्मनो, चेतनछे व्यवहार;
शुद्धस्वभाविक धर्मनो, कर्त्ता चेतन धार; ४०७

मलधर्म त्यागे नहीं, एवो जीव स्वभाव;
अशुद्धपरिणतियोगथी, कर्त्ता कर्म विभाव. ४०८

परिणम्यां पयनीरवे, भिन्न करेछे हंस;
निजगुण रमतो हंस त्या, करे कर्मनो ध्वंस. ४०९

चेतननो नहीं जाणीए, जेह विभाविक धर्म;
स्वाभाविक निजधर्मछे, जाणो अनुभव मर्म. ४१०

अशुद्धपरिणतिथी कर्यां, कर्मतणोछे अन्त;
सहजशुद्धनिजधर्मथी, भाखेछे भगवन्त. ४११

सदा असंगी आतमा, निश्चयसत्ता धार;
कर्त्ता भोक्ता कर्मनो, वर्ते ते व्यवहार. ४१२

जन्मजराने मृत्युनां, दुःखनुं कारण कर्म;
शाताऽशाता कर्मथी, कर्मजालनो मर्म. ४१३

रंग्युं बीज कपासनुं, लाक्षारस संयोग;
रूमां लागी रक्तता, कर्मफलोनो भोग. ४१४

कर्माष्टक नाशे यदा, तो चेतननी शुद्धि;
आत्मस्वभावे आत्मनी, पामे तात्त्विकऋद्धि. ४१५

शिष्य उवाच, शंका

अनादिकालथी संगति, कर्म जीवनी जोय;
नाश कहो शुं कर्मनो, कारण त्यांशुं होय. ४१६

सद्गुरुः उवाच—समाधान.

कालअनादि परिणम्यो, चेतन मिथ्या भ्रान्त;
छूटे चेतन खाणमां, रजः कनक दृष्टान्त. ४१७

ईश्वर इच्छायोगथी, सुख दुःख क्यांथी होय.
ईश्वरनी जो प्रेरणा, दोषी ईश्वर जोय; ४१८

शाथी ईश्वर प्रेरणा, ईश्वरनो अन्याय;
न्यायी अपराधी सहु, ईश्वर पोते थाय. ४१९

शिष्य उवाच शंका

कर्म करेछे प्राणिया, सामग्री अनुसार;
सुख दुःख ईश्वर आपतो, जीव अकर्ताधार. ४२०

गुरुः उवाच.

कृत्य करे ते भोगवे, पोते सुखने दुःख;
खावे तेह धरायछे. प्रभु न भागे भूख. ४२१

क्षेपे निजकर वन्हिमां, ज्वलतो देखे हाथ.
स्वयंहि कर्त्ता जीवछे, कथं प्रेरणा नाथ; ४२२

अवळी बुद्धियोगथी, विषभक्षणथी नाश;
प्राणोनो जाणो अहो, ईश्वर न्याय न खास. ४२३

स्वयमेव ज्यां सुख दुःख, चेतन कर्मे पाय;
ईश्वर प्रेरण कल्पना, सुख दुःख कर्मे थाय. ४२४

सदा असंगी आतमा, निश्चय सत्ता लेख;
व्यवहारे सुख दुःखनो, कर्त्ता चेतन देख. ४२५

जीव अकर्त्ता कर्मना, नाशे सत्य जणाय;
चेतन जाणो नयथकी, शुद्धधर्म प्रगटाय. ४२६

शिष्य उवाच.

न्याययुक्ति दृष्टांतथी, कर्त्ता कर्मनो जोय;
समजे जड शुं कर्मके, फलपरिणामी होय. ४२७

उवाच गुरुः.

कर्त्ता भोक्ता जीवछे, पण तेनो नहि मोक्ष;
वीत्यो काल अनन्त पण, हजु न मुक्ति पोष. ४२९

पुण्यतणुं फल भोगवे, मानव स्वर्ग मझार;
पापतणुं फल भोगवे, दुर्गतिमां अवतार. ४३०

पापपुण्य फल भोगवे, चतुर्गतिमां जाय;
समये समये कर्मसंच, कर्मरहित नहि क्यांय. ४३१

उवाच समाधानं सद्गुरुः

अशुद्धपरिणतियोगथी, फलदं कर्म प्रमाण;
तथा निवृत्ति धर्मथी, सिद्ध टरे निर्वाण. ४३२

काल अनंतो वितीयो, जीवतणो परभाव,
आत्मरमणता योगथी, प्रगटे मुक्ति प्रभाव. ४३३

संयोगे वियोगछेज, देहादिक दृष्टान्त;
कर्मवियोगे आत्मनी, मुक्ति सुखालय कान्त. ४३४

शिष्य शंका.

मोक्षतणी जे आस्तिता, तेतो समजी जाय;
अनन्तभवनां कर्मनो, ध्वंस न क्यारे थाय. ४३५

भिन्न भिन्न दर्शन कथे, मुक्ति अनेक उपाय;
सत्य असत्य तेमां कयुं, निर्णय चित्त न थाय. ४३६

को वेष कइ जातिमां, कया पन्थमां मोक्ष;
निश्चय तेनो नाहि बने, तो शी करवी होंश. ४३७

भव प्रथम के मुक्तिवा, प्रथम जीव के सिद्ध;
इत्यादिक मन चिंतता, मोक्ष न होय प्रसिद्ध. ४३८

उवाच सद्गुरुः

चोपाइ.

ज्ञानक्रियाछे मोक्षोपाय, सूत्रे भाखे श्री जिनराय;
अग्निकणाथी, गंजीबळे, तथा ध्यानथी कल्मष टळे. ४३९

जेने लाग्यो जन्मथी रोग, औषधयोगे थाय निरोग;
कीधां अनन्तभवनां कर्म, नष्ट थतां प्रगटे शिवशर्म. ४४०

अंधारु जग व्यापी जाय, थातां सूर्योदय विणसाय;
सत्य ज्ञान त्यां शोछे भार, कर्मतणो तुं हृदये धार. ४४१

ज्ञानावरणीयादिक आठ, कर्मतणोछे सूत्रे पाठ;
मुख्य मोहिनी सहुमां होय, यथा प्रजामां नृपति जोय.

मोहिनी नाशे सर्व हणाय, नृप हार्याथी प्रजा पलाय;
कर्म टळ्याथी शिवसुख गेह, सत्यपंथमां शो संदेह. ४४३

मतदर्शनना असत्यराग, अंधा श्रद्धा ज्ञाने त्याग.
जातिलिंगमां माने मोक्ष, तेथीज मुक्ति होयं परोक्ष. ४४४

सत्यतत्त्वनी श्रद्धा थाय, समवायिपंचज प्रगटाय;
अरूप चेतन जागे ज्योत, त्रिभुवनमां ज्ञाने उद्योत. ४४५

भवमुक्तिनी नहींछे आदि, प्रवाहथी ते दोय अनादि;
अनेकान्त पन्थज समजाय, श्रद्धाथी सहु मळे उपाय. ४४६

केवलज्ञानी वाणी ग्रंथ, गुरुगम समजी ल्यो शिवपंथ;
एकशब्दनो भावज साच, एम कहे तीर्थंकर वाच. ४४७

जीव मोक्षादि शब्दज एक, साचो माटे करो विवेक;
जेनो बंधादि तेनो मोक्ष, जरा नहि त्यां लागे दोष. ४४८

शिष्य उवाच.

"दुहा."

आपे पट्स्थानक कह्यां, करुणाथी गुरुदेव;
श्रद्धाथी में सद्दह्यां, टळी अनादि कुटेव. ४४९

आज लगी अज्ञानथी, थइ न तत्त्व प्रतीत;
नमन करुंश्री सद्गुरु, कीधो शिष्य पवित्र. ४५०

धर्मरत्न आजे ग्रह्युं, देख्युं परमनिधान;
शरण शरण ह्मारु प्रभु, कोई न तुज समान. ४५१

काल अनादिथी भम्यो, पण आव्यो नहीं अन्त;
सम्यक्तत्त्व जणावियुं, नमुं प्रभो गुणवन्त. ४५२

शिष्य उवाच शंका.

अनन्तजीवो सिद्धतां, शिवमां केम समाय;
निराकरण तेनुं करो. जेथी शङ्का जाय. ४५३

उवाच गुरुः

सिद्धशिलानी उपरे, शाश्वतछे शिवठाण;
कर्म खप्याथी जीव त्यां, थावे श्री भगवान्. ४५४

एकदीपकनी ज्योतिमां, अनेकदीपकज्योत;
सिद्धअरूपी मावता, दोष न किञ्चित् द्योत. ४५५

चोपाइ.

विषयवासना विषसम खास, त्यागो बहिरातमपदवास;
शाश्वतपदनी वाञ्छा होय, तो अधिकारी धर्मे जोय. ४५६

दुःखनो आत्यंतिकविनाश, मुक्ति वैशेषिकनी खास;
मनने नित्यज माने तेह, मुक्तिमां जीव साथे तेह. ४५७

बुद्ध्यादिक नवनो ज्यां नाश, मुक्तिज एवी त्यांशुं आश;
वृन्दावन जंबुक अवतार, तेथी सारो मानव धार. ४५८

वदे वेदान्ती मुक्ति स्वरूप, जाणो जग व्यापक चिद्रूप;
घट न व्यापक चेतनराय, त्यां शुं शिवनी आश रखाय ४५९

माने मुक्तिज आर्य समाज, भाडे पाम्यो जीवजराज;
मुक्तिथी जीव पाछो फरे, मुक्ति एवी शुं दुःख हरे. ४६०

कर्म खप्याथी नहि संसार, कथं जीव पामे अवतार;
जन्म मरण ज्यां वारंवार, शान्ति तेनी नहीं लगार. ४६१

एक कहे छे मुक्ति स्वरूप, मोटो अंधारानो कूप;
जावुं जे ईश्वरनी पास, चित्त धरो ईश्वर विश्वास. ४६२

विश्वासी ईश्वरना दास, मुक्तिफोजमां भळतां खास;
इशु भलो ईश्वरनो पुत्र, ते चलवे छे जगनुं सूत्र. ५६३

शरीरधारी मुक्तिज ज्यांय, जन्म मरणना फेरा त्यांय;
मुक्ति तेवीज कदी न होय, साक्षरवादी ग्रहे न कोय. ४६४

अंधो वनमां फरतो फेर, पण चाली पहोंचे नहि घेर;
ज्ञानचक्षु हृदये प्रगटाय, मुक्ति पन्थ त्यारे देखाय. ४६५

कोइक राता छे व्यवहार, ज्ञाने राता कोइकधार;
एकएकनुं खंडन करे, पक्षापक्षेज लडी मरे. ४६६

एकान्तनयोथी पक्षापक्ष, सत्यज माने बे नय दक्ष;
नय एकेके दर्शन थयां, सापेक्ष ज्ञानिए ग्रह्यां. ४६७

सरिताओ सागरमां भळे, जिन दर्शनमां सर्वे मळे;
दर्शनमांभजनाजिनवाच,अनेकान्त वाणीजगसाच४६८

कर्माष्टकनो थावे नाश, आविर्भावे गुणनो भास;
जन्म मरणना फेरा टळे, चेतन क्षायिक धर्मे मळे.४६९

समये समये सिद्ध अनन्त, सुख सहेजे विलसे शिवकंत;
पूर्वप्रयोगे उंचा जाय, शाश्वत शिवपुरमां विरमाय. ४७०

उर्ध्व अधःतिर्च्छा नहि जाय,क्रिया रहित माटे स्थिर थाय;
ताद्दक् सिद्धने करु प्रणाम, क्यारे पामुं सुखनुं धाम. ४७१

सादि अनंतिज स्थिति वरी, सिद्धनमुं ते भावज धरी;
केवलज्ञाने जाणे सहु, तेवुं पद प्रेमे हुं चहुं. ४७२

चेतन परमातममां भेद, व्यवहारे जोतां ए खेद;
भेदभावनो ज्यां नहि लेश,निश्चयनयथी जोतां बेश.४७३

उत्तमदृष्टि आत्मस्वरूप, वहेतां प्रगटे सुखचिद्रूप;
भणोगणो वांचो सहु ग्रन्थ, चेतनदृष्टि शिवपुरपन्थ.४७४

उत्तम दृष्टि कोइक लहे, शिवपुरमांहि सिद्धो वहे;
ज्ञानादिक गुण लेखे होय, समभावे निरखे सहु कोय४७५

शत्रुमित्रमां समता भाव, शुद्धधर्मनो प्रगटे दाव;
देह छतां पण देहातीत, दशा ताद्दशी त्यां शुं भीत. ४७६

नमुं नमुं ते वरनिर्ग्रंथ, जेनी दृष्टि शिवपुर पन्थ;
पामुं एवो सद्गुरु संग, तो पामुं निजगुणनो रंग४७७

ताढज जावे तपतां ताप, साधु संगे दहीए पाप;
माटे मानो सद्गुरु आण, पामो शाश्वतपद निर्वाण.४७८

धन्य धन्य म्हारो अवतार, ज्यारे लहिशुं शिवपुर सार;
दावानळ छे आ संसार, पामुं क्यारे तेनो पार. ४७९

चिंतन एवुं चित्ते थशे, दोषो त्यारे अळगा थशे;
आत्मध्यानमां जे क्षण जाय, क्षण ते भवमां लेखे थाय४८०

देहे देहे व्यापी रह्यो, महिमा जेनो जाय न कह्यो;
नामी अनामी जेने कहुं, तेने ते देखे छे लहुं. ४८१

नहि ज्यां शब्दअने ज्यां गंध देखे नहि नास्तिकजनअन्ध
लीधां छोडयां केइक देह, पण पोते तो नित्यज तेह ४८२

जेनी आदि नहीं ने नाश, अजरामर माटे ते खास;
योगी पण भोगी कहेवाय, नमुं नमुं ते चेतनराय.४८३

जेनुं ध्यान धरंतां सुख, जन्म मृत्युनां जावे दुःख;
जेना गुण छे अपरंपार, नहि ज्यां जाति लिंग प्रकार.४८४

गुण पर्यायतणो आधार, एकरूप त्रिकाले धार;
क्रमवर्ति जाणो पर्याय, सहभावी ते गुण प्रहाय.४८५

षड् द्रव्योमां वर्तन एम, चिंतन करतां लहिये क्षेम;
शुक्लध्यान पण तेथी होय, निश्चय शास्त्रे भाख्युं जोय ४८६

षड् द्रव्योमां सर्व समाय, भाखे सूत्रे श्री जिनराय;
सूक्ष्मपणे जो थावे ज्ञान, स्वल्पभवे पामे शिव स्थान. ४८७

निश्चयदृष्टि चित्ते वहे, व्यवहारे वर्ती गुण लहे;
एकान्ते चाले व्यवहार, पामे नहीं ते भवनो पार. ४८८

सर्वज्ञ भाख्या नय दोय, होय न जूठो तेमां कोय;
निश्चयनो हेतु व्यवहार, कारण कार्यपणुं त्यां धार. ४८९

आवश्यादिक जे व्यवहार, करीये लहिये भवजल पार;
जन मन रंजन किरिया करे, भाव विना ते भवमां फरे. ४९०

भाव विना किरिया छे फोक, करीए समजी हरिये शोक;
आडुं अवळुं मनडुं फरे, धर्मक्रिया ते ज्ञानी करे. ४९१

चित्त न ठरतुं एकज ठाम, माटे किरियानुं शुं काम;
निश्चय एम न करशो कोय, उद्यम अवलंबो सुख होय ४९२

निज गुण रक्षण साचो धर्म, निजगुण विध्वंसनज अधर्म;
आतम प्रवृत्ति धर्मे वळे, निज ऋद्धि तो निजने मळे. ४९३

क्रिया बाह्यनी चेतन करे, कर्म ग्रही भव फरतो फरे;
पाप क्रियाछे भव जंजाळ, क्रिया धर्मनी मंगलमाळ ४९४

आर्त्त रौद्र किरियानो त्याग, तेथी नाहि शिवसुखनो लाग;
मुक्तिप्रापक मनमा जाण, तद्धेतु अमृत सुख खाण. ४९५

आत्मज्ञानथी छे नहि देह, चेतनधर्मी गुणगणगेह;
अरिहंतादिक पदवी जेह, तेनो धर्ता चेतन एह. ४९६

जेजे इच्छे रुचि अनुसार, तेते फळ पामे निर्धार;
भवाभिनंदी भवमां फरे, आत्मानंदी शर्मज वरे. ४९७

अव्यय निर्मळ चेतनगति, अनुपम मुक्ति स्त्रीनो पति;
कर तुं तारो स्वयंप्रकाश, पोतानो धर तुं विश्वास. ४९८

त्हारावण सारो जग कयो, त्हारावण निर्मळ को भयो;
नहि नाहि त्हारा कोय समान, धर निर्मळ पोतानुं ध्यान. ९९

त्हारा निर्मळगुणनो लेश, पामंतां नाशेछे क्लेश;
योगीजन तो देखे त्हने, मोह न आवे तेनी कने. ५००

योगी देखे आपोआप, तेने क्यांथी लागे पाप;
ध्यानगुफामां योगी वास, कर्म न आवे तेनी पास. ५०१

सौथी न्यारो योगी योग, नाहि पामे ते मोही लोक;
जागे योगीज उंघे सहु, शुं योगीनी वातज कहुं. ५०२

योगी सोहं चेतनराय, बोले देखे ते कहेवाय;
परमातमने जीवनो भेद, भागे नाशे भवनो खेद. ५०३

धन्य धन्य मानुं अवतार, स्वरूप किंचित् भास्युं सार;
अकलगति तुं चेतनदेव, कर पोतानी पोते सेव. ५०४

दानी दे तुं निजगुणदान; मानी तुं दे निजगुणभान;
त्हारुं सुख छे अव्याबाध, साधनथी तुं तेने साध्य. ५०५

समतारसनो तुं भण्डार, आतम धर्मने तुं धरनार;
नाहं नाहं तृष्णादास, नाहं नाहं पुद्गलवास. ५०६

श्री जिनवरभाषित बे धर्म, हेतु ते छे शाश्वतशर्म;
यथाशक्ति तेनो स्वीकार, करिये समजी धर्मप्रकार. ५०७

निंदो धर्मीने मा कोय, निंदानां कडवां फल होय;
श्रावक थइने तपजप करे, निंदा करतो भवमां फरे. ५०८

समजे नहि अंतरनो मर्म, टीलां टपके शानो धर्म;
शुद्धस्वरूपे निश्चय धार, धन्य धन्य तेनो अवतार. ५०९

कुलमां उपन्यो श्रावक नाम, तेथी शुं थावे निजकाम;
नाममात्रथी कार्यज सरे, धनपति भिक्षा खातो फरे. ५१०

श्रावकव्रत नहि पोते धरे, दे शीखामण साधुघरे;
गुरुनो प्रत्यनीक चंडाल, तेथी जन्म भलो शृगाल. ५११

अहो विषम कलिकाले जोय, श्रावकना गुणधारी कोय;
निंदक मानी मुनिथी क्लेश, तेने शुं लागे उपदेश. ५१२

भण्योगण्यो पण श्रावक कोय,गुरुथी अधिको नहि तेहोय;
मेरु सरसव समछे फेर, अंतर अजवालुं अंधेर. ५१३

उत्तरज्झयणे तेनी साख, गुणना माटे कर अभिलाष;
द्दष्टिरागे शानोज धर्म, द्वेषे बाह्यो बांधे कर्म. ५१४

धर्मगुरुनीज आज्ञा धार, तरवानुं ते तीर्थ विचार;
तेथी पामो भवनो पार, सार सार तेछे सुखकार. ५१५

साधुव्रतनोछे अभिलाष, माने सद्गुरुनो हुं दास;
अक्षुद्रादिक गुणनुं नाम, साचुं तेनुं श्रावक नाम.५१६

पंचमहाव्रत पंचाचार, धर्मध्यानमां वर्त्ते सार;
भवभ्रमणभय आज्ञा जिन, वर्त्ते मन जेनुं निशदीन. ५१७

बाह्योपाधि विषवत् त्यजी, सहजसमाधि ज्ञाने भजी;
जेने बोध्युं आत्मस्वरूप,नमुं नमुं प्रभु गुरु श्री अनुप५१८

पार्श्वमणि संयोगे लोह, भजे कनकता तेह अद्रोह;
जेना बोधे टळे सदाय, गुरुनी गुरुता प्राप्ति थाय. ५१९

एवा गुरुने सेवो भाइ, तीर्थ तीर्थ ते जग सुखदाइ;
वाणी जेनी बहु गंभीर, चेतन योगी ध्यानी धीर.५२०

धर्मगुरु मुज प्राणाधार, सदा शुद्ध तेनो उपकार;
गुरुनी सेवा भक्ति मळे,तो भव कल्पकप सहेजे टळे.५२१

गुरुए कीधो जे उपदेश, पामीने तेनो लवलेश;
गुरुनी भक्ति वर्णन करी, लागी गुरुभक्ति मुज खरी. ५२१

धर्मगुरुओज थया करो, ज्ञानामृतनो वहो झरो;
श्रीसंखेश्वर पार्श्वकृपाळ, निशदीन करशो मंगळमाळ. ५२२

धरणेन्द्र पद्मावती सहाय, पामी पूरो ग्रंथ कराय;
परमात्मदर्शन निर्मळ ग्रंथ, पंचशती जाणो शिवपंथ. ५२४

गाम लोदराए करी मास, मतिस्फूर्त्तिथी कर्यो प्रयास;
म्हेसाणामां पूरो थयो, शुद्धस्वभावे चेतन रह्यो. ५२५

" दुहा. "

धर्मचन्द सुत जीवणलाल, सुरतवासी जीवदयाल;
सकल संघना माटे कर्यो, ज्ञाताभवपाथोधि तर्यो. ५२६

श्री सुखसागर गुरुजी वेश, पामी आनन्द होय हमेश;
बुद्धिसागर रचना सार, मंगल सिद्धि जयजयकार. ५२७

संवत ओगणीश उपरे, साठतणी शुभसाल;
अषाड शुकला पंचमी, रचतां मंगलमाल. ५२८

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

परमात्मदर्शन.

अशुद्धि शुद्धि पत्रक.

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
३	१२	भव्यतमा	भव्यात्मा
४	२३	अववोत्र	अववोध.
६	२४	सुखन	सुखने
७	१३	सगयसूचक	समयसूचक
१३	४	साभ्यता	साम्यता
१५	३	पष्टुं	पष्ठ
१५	१५	निद्राधीन	निद्राधिन
१५	२१	अने	० नथी
१५	२२	तेने	तेणे
१६	७	रुपिसभा	ऋपिसभा
१६	२२	त्याय	त्याच
१७	९	संसय	संशय
१७	२१	तीर्थर्न	तीर्थनी
१७	२२	सद्गुरू	सद्गुरु
१८	१६	य ।।	यथा
१८	१८	ताद्दक	ताद्दक्
२०	१४	भे गुं	भेगुं
२०	१८	वच्चु	वसु
२१	७	स्थीति	स्थिति
२४	७	वृद्धि	बुद्धि
२४	१८	अनादिकु पीर	अनादि कुपीर
३१	५	कर्म किया	कर्म क्रिया

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
३१	१०	क्रिका	क्रिया
३२	१७	पुग्य	पुण्य
३६	१३	फेवलज्ञान	केवलज्ञान
३८	१६	नाग	नाम
४०	२१	थाय छे	थवाय छे
४२	२	आग्रि	अग्नि
४२	१७	वे	के
४३	५	जेगे	जेणे
४३	१४	तारण	तरण
४५	५	तत्त	तत्त्व
४५	१५	सुशोभीत	सुशोभित
४६	२४	शुद्धान्तःकरण	शुद्धान्तःकरण
५४	८	पक्डी	पकडी
५५	११	पेटीः	पेटी
६०	१९	गुरु	गुरु
६२	२४	सदगुरु	सद्गुरु
६४	१६	अन्तकरण	अन्तःकरण
६५	१४	धममाप्ति	धर्मप्राप्ति
६९	१४	द्रव्य	द्रव्य
६९	१९	स-ाय	समय
७०	१	द्रव्यार्थिक	द्रव्यार्थिक
७०	१३	सरस्वा	सरखा
७६	३	जोरि	जोर
८०	१५	पुद्गल	पुद्गल
८१	३	द्रव्ये गुणोपचार	द्रव्ये पर्यायोपचार

पृष्ठ	ओळी	अशुद्ध	शुद्ध
८२	१४	दृष्टाः	दृष्टा
८३	१०	पेठें	पेठे
८५	१	व्याधि	व्याधि
८५	६	स्याद्वाद्र	स्याद्वाद
८५	७	रागद्वप	रागद्वेष
९४	१२	लंध्ये	लंध्य
९५	६	सेंय	सोंय
९५	८	दु ख	दुःख
९५	९	आत्म	आत्मा
९५	१२	पांचे	पांचे
९९	५	ते	ता
९९	१४	श्रॉ	श्री
१००	११	वस्र	वस्त्र
१०२	१२	जी ोना	जीवोना
१०३	५	मूर्क	मूकी
१०४	१९	स्री	स्त्री
१०५	९	चिंतवनाथ	चिंतवनाथी
१०५	१७	परिपक्ता	परिपक्वता
१०५	१९	ध्यान	ध्यान
१०५	१९	भ्रान्ति	भ्रांति
१०५	२१	निधान	निधान
१०६	१२	ते	तेथी
१०९	१३	ए -ा	एम
११०	९	हेतूंता	हेतुस्ता
११७	१८	गतवन्तु	गतवस्तु

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
१२०	१	।धगता	धिगता
१२०	१०	सर्वत्रा	सर्वत्र
१२५	८	विचार	विचारे
१२५	८	तारा	तारो
१२५	१०	रा वीश	राखीश
१२६	३	किंचित्नि	किंचिन्नि
१२७	१०	तिष्टंति	तिष्टंति
१२७	१४	तिष्टंति	तिष्टंति
१२८	१७	।पृ वी	पृथ्वी
१२९	५	देश	देशे
१२९	९	श्रुं	शुं
१२९	१३	सर्व	सर्व
१३१	११	मनुणपो	मनुष्यो
१३१	१८	होतु	होतुं
१३३	३	सरुवप	स्वरूप
१३७	८	कश	केश
१४०	५	मुस्केल	मुश्केल
१४०	१२	औदारिका	औदारिक
१४०	१२	तेजस	तैजस
१४०	१५	चाल्या	चाल्यो
१४१	३	सुद्दा	शुद्धा
१४१	५	।विणु	वण
१४१	७	वृत्तिमं	वृत्तिमां
१४१	१६	जेनु	जेनुं मन
१४१	१७	ननी	नथी

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
१४१	१७	भाक्ता	भोक्ता
१४२	२२	मुनिश्वर	मुनीश्वर
१४३	३	शरीरीनु	शरीरीनुं
१४३	६	सधा	सुधा
१४४	८	सुभडो	सुभटो
१४४	९	पारो	पासे
१४४	९	हायछे	होयछे
१४४	१३	ता	तो
१४४	२२	ता	तो
१४५	२४	अनुष्टान	अनुष्ठान
१४६	१०	”	केवलज्ञान
१५३	८	आही	ओही
१५३	२०	अंगुलन	अंगुलना
१५७	३	आत्मत्व	आत्मतत्व
१५७	२२	शुंढ	शूंढ
१६०	१८	आत्तध्यान	आर्त्तध्यान
१६१	१	वा	वो
१६१	१०	करीन	करीने
१६२	७	”	तो
१६२	८	रंग	रंग
१६२	२४	सुरव	सुख
१६६	४	योग	योग
१६७	६	अभिलापि	अभिलापि
१६८	१०	कागछे	फागुछे
१६८	११	विपयाणा	विपयाणां

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
१६९	११	पाद्य	बाह्य
१७०	१०	विराजग	विराजित
१७१	१८	लोक	लोक
१७१	१८	रु ा	रूपं
१७३	१७	हे	छे
१७३	१७	कुं	न
१७४	१०	कंरुं	करुं
१७४	१०.	व्यावि	व्याधि
१७४	२१	याज्य	त्याज्य
१७५	३	हे	छे
१७५	३	कुं	न
१७६	३	वा	वा
१७६	३	हुं	०
१७८	११	श्राद्ध	श्रद्धा
१८१	७	अत्म	आत्म
१८५	१२	ध्याए	ध्यान
१८७	९	आत्म	आत्मा
१८७	१०	निष्क्रिम	निष्क्रिय
१८७	१६	,,	,,
१८७	१९	स्वरु -ा	स्वरूप
१८७	२३	निद्दष्टि	निश्चयदृष्टि
१९१	१८	तृपा	तृपा
१९४	१५	दुष्प्राप्प	दुष्प्राप्य
१९५	२२	त ंगर	तवंगर
१९८	६	धर्मा	धर्मी

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
१९८	१०	सिहलद्वीप	सिंहलद्वीप
१९९	१६	पण	पण
२००	११	नुं	नु
२०५	२५	गत	०
२०७	६	चारित्र	चारित्र
२०७	२०	कृत्सुमां	कृत्य
२०९	७	राकाइ	रोकाइ
२१०	३	राग	राग
२१०	१८	०	छे
२११	२५	शु	०
२१२	१	०	शु
२१३	१५	गिहेसु	गिहेसु
२१४	५	प्रमा -।	प्रमाण
२१६	१६	सद्भाव	सद्भाव
२१८	४	दशनापयोग	दर्शनोपयोग
२१८	१६	नाणवा	जाणवा
२२१	१	व्याक्ति	व्यक्ति
२२२	०	प्रायश्चित लेवुं	अन्यमतनो जैनदर्शनां समावेश
२२३	१	नारितत्व	नास्तित्व
२२४	२५	एकेकवी	एकेकथी
२२९	९	वलवत्तर	बलवत्तर
२३०	१६	का	कारण
२३१	१९	देननी	देवनी
२३२	२५	जन	जिन
२३२	११	सामिलें	गोमिले

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
२३६	११	भावने	भाव ते
२३६	१९	लारण	कारण
२३८	१	उत्पत्तो	उत्पत्तौ
२४१	४	तिक्ष्ण	तीक्ष्ण
२५३	१५	वेना	वेनना
२५९	५	कवलाहर	कवलाहार
२६२	१६	द्वेष ो	द्वेपने
२६३	३	स य	सत्य
२६३	७	नर्यी	नथी
२६३	१९	आयुण्य कर्म	आयुष्य कर्म
२६३	२४	तारतम्य	तारतम्यता
२६४	१	माहनीय	मोहनीय
२६४	१७	आत्मनी	आत्मानी
२७६	१०	मधान	मधाने
२७६	२५	जोद्धाओ	योद्धाओ
२७७	११	नमर	नगर
२७७	१४	जीवोनो	जीवोने
२७८	०	धम	धर्म
२७८	४	आ	आ
२७८	८	चतुरिन्द्रि	चतुरिंद्रय
२७८	११	धशा	दशा
२७८	१४	मोहना	मोह
२७८	१७	पास	पास
२७९	१	रोवरवु छुं	रोवरावुं छुं
२७९	१७	कू ा ी	कूतरी
२८०	१	मोहे	मोहे
२८०	५	र जा	राजा
२८०	१५	जीव	जीव

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
२८०	२३	वृद्ध	वृद्धि
२८१	२५	विष्टा	विष्ठा
२८२	१५	कृसंप	कुसंप
२८४	२१	मुख	मुख
२८४	२२	तेओ	तेमां
२८४	२२	म्नभावेछे	भगावेछे
२८४	२५	बोध	वौद्ध
२८६	४	संसार	संसार
२८७	१	जावो	जीवो
२८७	२०	लाग्या	लाग्यो
२८८	१२	थाडी	थोडी
२८८	१३	न	ने
२८८	१४	दयाना	दयानां
२८८	१५	वर्षावर्ता	वर्षावतो
२८८	२४	जोवोने	जीवोने
२८८	२४	खेचुछुं	खेचुंछुं
२८९	१	०	के
२९०	१०	सम्यक्	सम्यग्
२९१	१५	नाश	नाश
२९२	७	प्रतिष्टा	प्रतिष्ठा
२९३	२१	स्याद्वाद	स्याद्वाद
२९३	२४	मारा ।	माराथी
२९५	९	वांड्	कांड्
२९८	१०	तरीक	तरीके
२९८	१२	वरणोय	वरणीय
३०३	१२	—	मसव
३०५	२	पचम	पञ्चम
३०५	४	स्वामी-	स्वामी.

पृष्ठ	लीटी	अशुद्धि	शुद्धि
३०५	१३	येगे-	योगे
३०५	१५	सिद्धात-	सिद्धान्त
३०६	१८	वस्तु	वस्तु
३०८	९	–	ठर्यो
३११	१०	–	स्वरूप
३१६	१०	ब्रह्मचर्यं	ब्रह्मचर्यं
३१७	१७	तत्ज्ञानं	तज्ज्ञानं
३१८	७	सु द्रे	सुद्धे
३३५	९	कारणक	कारणके
३३६	१५	सिद्धत्मा	सिद्धात्मा
३५४	४	कवी	केवी
३५५	१	आविर्भाव	आविर्भावे
३६१	१८	एकात	एकान्त
३६४	१३	मल	मूल
३६६	२०	स्वरूपमा	स्वरूपमां
३६९	१३	निमित	निमित्त
३७२	६	दृश्य	दृश्य
३७४	८	उपनिषदा	उपनिषदो
३७५	१	सहु छ	सहु छे.
३८३	४	त्या	त्यां
३८८	३	उत्शंगल	उत्शृंखल
३९४	१३		मूल धर्म
३९४	१६	त्या	त्यां
३९१	११	अना।दि	अनादि
३९८	८	चिंतता	चिंतता

ज्यां ईश्वरमां ह्रस्व छपाइ होय त्यां दीर्घ वांचवी.

बीजी जे अशुद्धि छद्मस्थ दृष्टिथी सुधारतां रही गइ होय ते सुधारीने वांचवी.

योगनिष्ठ मुनि बुद्धिसागरजी कृत ग्रन्थोनी यादी.

अने ते मळवानां ठेकाणां—

પુસ્તકનું નામ.	મળવાનું ઠેકાણું.
૧ જૈન ધર્મ અને ખ્રીસ્તિ ધર્મનો મુકાબલો.	ધી જૈન ફ્રેન્ડલી સોસાઇટી-મુંબઇ.
૨-૩ શ્રી રવિસાગરજી અને શોકવિનાશક.	વડોદરા મામાની પોળ શા કેશવલાલ લાલચંદને ત્યાં.
૪ પડ્દ્રવ્ય વિચાર. ૫ વચનામૃત.	પાદરા. શા. મોહનલાલભાઇ હીમચંદ વકીલ.
૬ અધ્યાત્મ શાંતિ.	શા. રતનચંદ લાધાજી કાવીઠા બોરસદ પાસે.
૭ ચિંતામણિ. ૮ કન્યાવિક્રય નિષેધ. ૯ પૂજા સંગ્રહ.	જૈનોદય બુદ્ધિસાગર સમાજ. સાણંદ.
૧૦ બુદ્ધિપ્રકાશ ગાયન સંગ્રહ.	શા. મણિલાલ વાડીલાલ સાણંદ.
૧૧ બુદ્ધિપ્રકાશ ગાયન સંગ્રહ ભાગ બીજો.	અમદાવાદ સંભવ જિનમંડલ.
૧૨ સમાધિશતક.	શેઠ. જગાભાઇ દલપતભાઈ. મુ. અમદાવાદ.
૧૩ તત્ત્વવિચાર. ૧૪ સત્યસ્વરૂપ.	જ્ઞાન પ્રસારક મંડલ. મુંબાઈ.ઝવેરી બજાર.
૧૫ આત્મ પ્રકાશ.	શા. વીરચંદ કૃષ્ણાજી. મુ. માણસા. પુના-ચેનાલપેંઠ.
૧૬ ભજન સંગ્રહ ભાગ પહેલો. ૧૭ ભજન સંગ્રહ ભાગ બીજો. ૧૮ ભજન સંગ્રહ ભાગ ત્રીજો. ૧૯ ભજન સંગ્રહ ભાગ ચોથો. ૨૦ અધ્યાત્મજ્ઞાન વ્યાખ્યાનમાળા.	અમદાવાદ. જૈન બોર્ડીંગ નાગોરીસરાહ.

૨૧ આત્મપ્રદીપ. ૨૨ અધ્યાત્મગીતા. ૨૩ આત્મસ્વરૂપ. ૨૪ અનુભવ પચ્ચીશી. ૨૫ પરમાત્મ દર્શન. ૨૬ પરમાત્મ જ્યોતિ. ૨૭ ગુરૂબોધ.	અમદાવાદ જૈનશ્વેતાંબર બોર્ડીંગ નાગોરીશરાહ.
૨૮ પ્રાચીન ન્યાય ગ્રંથ ઉદ્ધાર. સંસ્કૃત સ્યાદ્વાદ મુક્તાવલી.	ઝવેરી ભોગીલાલ તારાચંદ. અમદાવાદ રોશીવાડાનીપોળ.
૨૯ તત્ત્વબિંદુ (યાને સંક્ષિપ્ત સિદ્ધાંત રત્ન.	જૈન બોર્ડીંગ નાગોરીશરાહ અમદાવાદ.

૩૦ ચેતનશક્તિ ગ્રન્થ–(ભજન સંગ્રહ ત્રીજા ભાગમાં)

૩૧ વર્તમાનકાલ સુધારો–(ભ. ત્રીજા ભાગમાં)

૩૨ પરમબ્રહ્મ નિરાકરણ–(ભજન સં. ૪ ચોથામાં)

૩૩ અધ્યાત્મ વચનામૃત ગ્રન્થ (ભજન સંગ્રહ ભાગ ચોથો)

નહીં છપાવેલા ગ્રંથોની યાદી.

૩૪ તત્ત્વ પરીક્ષા વિચાર

૩૫ ધ્યાન વિચાર

૩૬ સુખસાગર

૩૭ ગુરૂમાહાત્મ્ય.

૩૮ શ્રીમંત સરકાર ગાયકવાડ સયાજીરાવની આગળ આપેલું ભાષણ

૩૯ પત્ર સદુપદેસ.